हिन्दी अनुवाद ।

वार विवेचन अपनी निज की भाषा में अच्छी तरह हो
है । भाषान्तर करने से तो भाषा की असली खूबी में अंतर
ता है । गुजराती से इसका हिन्दी अनुवाद कराया गया है
हेन्दी में ही इसकी स्वतन्त्र रचना होती तो विशेष आकर्षक
में अपनी शक्ति अनुसार जैसा कर सका वैसा पाठकों के
ता हुं । अनुवादक की त्रुटी के लिये मूल लेखक जिम्मेवार
सकता ।

अनुवाद अनुभवी श्रावकों के पास भेजा गया था, उन महा-
की सलाह अनुसार कम-ज्यादा किया गया है । उन महा-
का आभार मानते हुवे, सुज्ञ पाठकों की सेवा में नम्र अर्ज
हुं कि, हिन्दी की दूसरी आवृत्ति शीघ्र ही निकालनी पड़ेगी,
र इस अनुवाद में कम वेशी करने अथवा सुधारने के लिये
नाएं मिलेंगी उनका सादर स्वीकार किया जावेगा ।

न महात्मा का यह जीवन चरित्र है उनका मुख्य आदर्श
हकता था, पुस्तक पढने वाले सब गुणग्राहक बुद्धि से ग्रन्थ
लोकन करेंगे तो मेरा श्रम सार्थक होगा और लेखक का
शय समझ में आवेगा ।

दुरस्त मनुष्य शक्कर खाता है कोई नमकीन सोडा पीता है
बीमार को तो वैद्यराजजी कुनाइन जैसी कड़वी औषधी

ते हैं उससे उसका आशय केवल बीमारी को दूर करना हो
स जीवन चरित्र में से अपनी २ प्रकृति अनुसार मिश्रान, नम
कुनाइन लेने का अधिकार पाठकों को है । अमूल्य औषधि
ा यह भंडार है, शारीरिक, मानसिक सब रोगों के लिये
मिलेगी, समभाव से, दृष्टिरहित दृष्टि से देखने से निर्मल च
ो अद्भुत दृश्य मिलेगा ।

संयम सरिता का वेग शिथिल होने से श्रद्धा में भी शिथि
आजाती है, परिणाम में श्रावकों को उदासीनता होजाती
चतुर्विध संघ का, भविष्य श्रेय के लिये इस जीवन चरित्र में र
शुद्धि के लिये जोर दिया है और पुष्टि के लिये पवित्र सूत्रे
सिवाय अनुभवियों के विवेचन उद्धृत करके साधु जीवन की
जड़ मजबूत की है। जिस महात्मा का जीवन ही चारित्र का आदर्श
नमूना था, जिन्होंने चारित्र के लिये रात्रि दिवस उजागरा किया
था, जिनके रग २ में संयम शोणित बहता था, उनके जीवन चरित्र
में चारित्र के लिये जितना भी लिखा जावे उतना कम है,

मैं साफ दिल से जाहिर करता हुं कि चारित्र के लिये जो
लिखा है वो समुच्चय ही लिखा है किसी खास व्यक्ति व समाज को
अपने ऊपर घटाने की संकोच वृत्ति नहीं रखना चाहिए, कान्फ
्रन्स प्रकाश का ता० ३१ जुलाई का २० वें अंक में जाहिर कर
चुका हुं कि "पूज्य श्री के जीवन चरित्र में किसी की निन्दा व
आक्षेप कारक कुछ भी नहीं लिखा गया है. अजमेर वगैरह स्थानों
की सत्य घटनायें भी मैंने शान्ति के लिये जीवन चरित्र में नहीं दी
है. सिर्फ चारित्र संरक्षण के लिए आगमोक्त आज्ञानुसार वे विद्वानों

; वचनामृत उद्धृत किये हैं जो सब के लिये मान्य व हितकर है किसी खास व्यक्ति व समाज के लिए यह सामग्री नहीं है. गुण ग्राहक बुद्धि व कृतज्ञता की दृष्टि से शुभ व सत्य आशय समझ में आवेगा. निर्दोष केवलो हरिः" और फिर भी पाठकों से अर्ज करता हूँ कि इतना खुलासा करने पर भी इस पुस्तक में कोई भी विषय लेख, वाक्य, शब्द आदि अरुचि कर समझे तो उसकी सूचना अवश्य प्रदान करे। ताकि दूसरी आवृत्ति में उन सूचनाओं का अमल किया जावे।

पत्रकारों को बहकाने के लिये जो विज्ञापन छपवाकर भेजे गये हैं वो विज्ञापन के प्रत्युतर में मेरा ऊपर का खुलाशा काफी है। गलत अर्थ से असत्य भ्रम होता है लेकिन जो सत्य है वो आखिर तक सत्य ही रहेगा। परमात्मा सबको सन्मति दे।

जैपुर	श्रीसंघ का सेवक
आषाढ़ शुक्ला १५ सं० १९८०	जौहरी दुर्लभजी
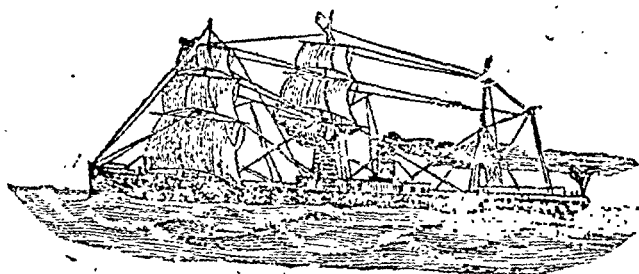
निवेदन ।

इस क्रान्तियुग में आर्यावर्त को ऊपर चढ़ाने के लिए सच्च
रित्र्य के सबल आलम्बन की अधिक आवश्यकता है। जड़वाद
समय में उन्नति के शिखर तक नहीं पहुंचने के कारणों में भी चा
त्र्य की शिथिलता ही प्रधान है, इस परिस्थिति में अनुभवी लो
यही राय देते हैं कि और सब उपायों को पीछे हटाकर सिर्फ प्र
को चारित्र सम्पन्न बनाने की कोशिश को ही प्रधान मानना चाहिए
हरएक समय के महापुरुषों ने चारित्र्य सुधारणा ही अपना मुख
जीवनोद्देश्य मानी है, उत्कृष्ट चारित्र्य वाले महात्मा ही जगत
लिए महान् आशीर्वाद रूप मानेजाते हैं, वे जब जीते रहते
तब उनका चारित्र्य ही जगत को कर्तव्य पाठ पढ़ाता है और प्रज
का नवीन उत्साह, नवजीवन, नवचेतन आदि उत्पन्न करता है
और उन महात्मा पुरुष की अनुपस्थिति में उनका जीवनचरि
भी प्रजा में सात्विक प्राण का संचार करता है तथा प्रजा के उन्नि
मार्ग में दौड़ाता है।

वर्तमान काल में साहित्य के अन्दर गल्प, कादम्बरी, नाटक
आदि की पुस्तक अधिक संख्या में निकल रही हैं, जिससे वि
सत्पुरुषों का सच्चा जीवन वृत्तान्त बहुत कम प्रसिद्ध होता है, सच्चे
जीवन वृत्तान्तों में कल्पनामय मनोरञ्जक वार्ता होती नहीं

गल्प और कादम्बरी आदि के रसिकों में जीवनचरित्र का पूर्ण आकर्षण नहीं होता है, लेकिन तोभी गुणान्वेषी सत्पुरुष तो इन जीवन चरित्रों के आनन्द से स्वागत करते हैं।

दूसरों का अनुकरण करना यह मनुष्यों का स्वभाव है इसलिए प्रजा के सामने अगर आध्यात्मिक और पारमार्थिक जीवन बिताने वाले महापुरुषों का चरित्र रक्खा जाय तो इससे लाभ ही हो सकता है, चरित्र नायक के गुण ग्रहण करने का जनता को इच्छा होती है और अपने गुणों के साथ तुलना करके अच्छा बुरा समझ कर पाठक उत्तम होने की कोशिश करते हैं, इस रीति से जीवनचरित्र इसलोक से परलोक तक सुख के मार्ग दिखाने के लिए सच्चा शिक्षक का काम देता है। श्री महावीर के जीवन चरित्र पढ़ने से आत्मिक शक्ति के विकाश होकर देहाभिमान कम होता है और आत्मा की अनन्त शक्ति काभान होता है। श्रीरामचन्द्रजी क वृत्तान्त बांचकर एक पत्नव्रत और एक रामराज्य क्योंकर होसकता है इसका ख्याल होता है। भीष्म पितामह के वृत्तान्त से ब्रह्मचर्य की महिमा समझ में आती है, राणा प्रतापसिंह के जीवनचरित्र से अटूटल धैर्य और दृढ प्रतिज्ञा पालन की शिक्षा प्राप्त होती है।

अपने जीवन काल में समय २ पर कुछ न कुछ संकष्ट आता ही रहता है, उस वक्त कईवार अपनी बुद्धि अपने को सहायता नहीं

देती है, वह सहायता और वह बल उस संकट को हटाने के वास्ते महापुरुषों के जीवनचरित्र देता है, उस जीवनचरित्र में उस संकट को हटाने के परिश्रम का, और यतन का दृष्टान्त अपने को अच्छी तरह हिम्मत बंधाता है। इस संसार सागर में जीवन जहाज को किस रास्ते से लेजाने से ठोकर नहीं लगकर सही सलामत पार पहुंच सकते हैं उस रास्ता को जीवनचरित्र बताता है। इस संसार रूपी वनमें से सही सलामत निकलने का मार्ग अनुकूल हो जाता है, तथा किस स्थल में चित्तको शान्ति देने वाला व अन्तःकरण को आनान्दित करने वाला आश्रम स्थान आवेगा इन सब बातों को बताने वाला जीवन चरित्र ही है।

सामाजिक, मानसिक और आत्मिक उन्नति के लिए महापुरुषों का जीवन चरित्र लिखने का प्रचार पूर्वापर से है, रामायण, महाभारत पुराण आदि में लिखे हुए सच्चे अथवा कल्पित जीवन चरित्र में अपने साहित्य प्रदेश में उच्च पदवी प्राप्त किया है। जैनागम में भी चरितानुयोग, कथानुयोग को भी इतना ही महत्व देनेमें आता है, जीवन चरित्र अर्थात् अमुक व्यक्ति की जिंदगी में क्रमसे बनी हुई वार्ता अथवा संक्षेप में कहें तो अमुक व्यक्ति के हृदय का प्रतिबिम्ब यही है महान् पुरुष जगत् में स्थल स्थल पर एकही समय में प्रगट हो जाय, इसतरह पैदा नहीं होते हैं, जिनके मन, वचन शरीर में पुण्यरूपी अमृत भरा है और जिन्हों ने कभी

ायिक, वाचिक, मानसिक पाप किया ही नहीं तथा जिन्होंने
पकार समूहों से संसार को उपकृत किया है, और जिन्हों ने
ाणुमात्र भी दूसरों के गुणको पर्वत के समान मानकर निरन्तर
ानमें प्रसन्न रहते हैं ऐसे सत्पुरुष संसार में विरले ही होते हैं,
ेसे चारित्र्यवान मनुष्यों का जीवन, जीवनचरित्र तरीके लिखने
का लायक है इस संसार में जन्म लेकर सिर्फ मौजमजा में, स्वार्था-
धता में, आलस्य में और जीवनकलह में जिसने अपना जीवन
बेताया है उसका जीवनचरित्र कभी भी नहीं लिखा जाता है,
ज्ञान चारित्र और श्रेष्ठगुणों से संपादित हुआ और मनुष्यों से
प्रशंसित जो क्षणभर भी जीया है उन्हीको विचारशील जन इस
संसार में जीवित कहते हैं।

प्रबल वैराग्य, घोर तपश्चर्या, निश्चलमनोवृत्ति, अनुपम सहन-
शीलता, इत्यादि उत्तमोत्तम सद्गुणों से जीवन को परम आदेश
रूप में परिणत कर भव्यजीवों के हृदयपट पर असाधारण असर
उत्पन्न करनेवाले और अनेक राजा महाराजाओं को अहिंसा धर्मके
अनुयायी बनानेवाले धर्मवीर सत्पुरुष पूज्यश्री १००८ श्रीलालजी
महाराज जैसे उत्तम रीति की आध्यात्मिक विभूति की जीवनचर्या
संसार के सामने शुद्ध स्वरूप में उपस्थित करते हुए हमें परम
आह्लाद होता है, श्री माहावीर भगवान की आज्ञारूप ध्रुवतारा के
ऊपर निश्चल लक्ष्य रख कर अपने ध्येय पहुंचाने के लिए इनका

जीवन प्रवाह सतत बहता था, आर्य प्रजा के आध्यात्मिक अवः पतन को देख कर इनकी आत्मा बहुत दुःख पाती थी, आर्य प्रजा के आध्यात्मिक जीवन को पुनरुज्जीवन करने के लिए पूज्यश्री दिन रात उद्यम में तत्पर रहते थे, उक्त पूज्यश्री ने अपनी पवित्र जीवन चर्या से जगत के उद्धार का मार्ग दिखाया है जैन अथवा जैनेतर समस्त प्रजा के ऊपर इनका समभाव था। और सभी के ऊपर उपदेश का समान ही प्रभाव पड़ता था बहुत से मुसलमान गृहस्थ इनको पीर के समान मानते थे, बड़े २ राजा महाराजा इनके चरण कमल पर शिर झुकाते थे, इसतरह के इस समय में एक आदर्श महा पुरुष की जीवन घटना हमें जिस प्रमाण में और जिस स्वरूप में मिली उसी प्रमाण में और उसी स्वरूप में हमने उस जीवन घटना को इस पुस्तक के अन्दर गूंथी है।

महात्मा गांधीजी के समकालीन पूज्यश्री १००८ श्रीलालजी महाराज साहब की समाज सेवा जैनप्रजा में जाहिर ही है, उन पूज्य श्री का पवित्र नाम उच्च से उच्च माननीयों में भी मान्य शब्द है, निर्मल चारित्र्य और अवर्णनीय गुण ग्राहक बुद्धि से पूज्यश्री का विजय विजयी और निराभिमानी थे, शुद्ध संयम की आवश्यकता वे श्वासोच्छ्वास के समान मानते थे।

सामान्य व्यापारी कुल में पैदा होकर न तो था विशेष वाग्‌ाभ्यास और न तो था विशेष अभ्यास, तोभी आप दिग्विजय

कर सके और राजा महाराजा भी आपके चरण कमल में शिर झुकाने में आनन्द मानने लगे। उन पूज्य श्री की गंभीरता, और वह विचारमय गहन मुखमुद्रा, अल्प किंतु मार्मिक वचन और विचार में सिद्धांत पर तथा कर्म क्षेत्र में साध्य सिद्धि पर, उनका अभेद्य, अखंड व अस्खलित प्रवाह और उनकी अपूर्व कार्यशक्ति, और उपद्रव से आए हुए असह्य दुःख में सन्तप्त होकर पार उतरा हुआ उनका विशुद्ध जीवन और उनका अगाध भक्तिभाव, तथा अपूर्व संघसेवा इन सब बातों का स्मरण जिन्हे पूरा २ होगा पूज्य श्री की जीवनी की भव्यता का यथार्थ ज्ञान उनको ही समझ में आवेगा, समकालीन कार्य-क्षेत्र में अमुक मतभेद हो जाने पर भी अभी भी जैन जगत एक स्वर से पूज्यश्री का गुणानुवाद करता है, यही बात उनके सपूर्ण गौरव का साक्षी है, इनका आत्मगौरव और इनका आदर्श पहचानने लायक शक्ति अपने में नहीं थी, इनकी तेज प्रभा में खड़ा रहने लायक पवित्रता अपने में नहीं थी, इनकी तपस्या की कीमत अपने को नहीं थी, उन पूज्यश्री के परलोकवास पर आंसू बहाना अथवा देश के शिरोमणि को पहचानना इस बात में अपने को बाधा आती है यह अपना हतभाग्य ऊपर आंसू बहाना चाहिए।"

चारोंतरफ अविश्रान्त विहार कर और निराशाका निकन्दन कर उत्साह के संचार करने में पूज्यश्री ने कुछ बाकी नहीं र

थी। धार्मिक शिथिलता और अज्ञानता के बदले श्रद्धा और धार्मिक ज्ञान की उन्नति की व करवाई है। कायरता के बदले चैतन्य फैलाये, सम्प्रदाय के कल्याण करने में एक क्षण भी व्यर्थ नहीं गमाये, शिथिलाचारियों को अपने उग्र आचार और संयमों से मौन उपदेश देकर चिताये, ऐसा महात्मा पुरुष के जीवन आदर्श पहचानने का अहोभाग्य प्राप्त हो इसको हमतो अपनी जिन्दगीमें एक अपूर्व लाभ समझते हैं।

चारित्र घटना के संग्रहार्थ मैंने खुद प्रवास किया है, इसके अलावा चारित्रनायक की जन्मभूमि तथा जहांजहां विशेष आवागमन रहा, वहां वहां मैंने अपने सहायकों को भेजे, सभी घटना समूहों को संगृह करने लायक श्रम उठाये इसी लिये पुस्तक को प्रसिद्ध होने में कल्पना से बाहर विलम्ब हुआ है। प्रिय रखियाटेकरी की मुलाकात हमारे आर्टिस्ट मित्र. मि. तलसानियांजीने करके छायाचित्र तैयार किया है, कल्पित कथा से तथा असत्य घटनाओं से दूर रहने की पूर्ण कौशीस की गई है, चारोंतरफ फिरकर देखा, समझा, सुना, खोजा उन्ही सभोंका यह संग्रह है, पाठक हंस चोंच के समान सार ग्रहण कर लेवेंगे।

व्यावर निवासी भाई मोतीलालजी रांकाने चरित्र लिखने का प्रयास शुरु किया, उनका विचार था कि जीवन चरित्र हिन्दीमें लिखें

किन इसी विषयमें वे हमारे प्रयास को देखकर वे भाई साहब ने पना संग्रह हमें देदिया और हमारे कार्य में सहानुभूति दिखाई, नकी इस सहृदयता ऊपर कृतज्ञता प्रगट करते हमें हर्ष होता है।

इस कार्यमें भाई श्री झवेरचन्द जादवजी कामदार की हमें हायता नहीं मिलती तो इस कार्य की सफलता शायदही होती, भाई शरीर तथा परिवार की परवाह नहीं करते हमें दी हुई सहा- ता की प्रतिज्ञा को पालने में और इस चरित्र को आकर्षक बनाने जो आत्मभोग दिये हैं उस आत्मभोग से हम उन्हें अपनी ार्थकता में भागीदार तरीके जाहिर कर इस पुस्तक में उनके नाम ोडने में आनन्द मानते हैं।

पूज्य श्री के परम अनुरागी शतावधानी पण्डित महाराज श्री ्नचन्द्रजी स्वामी तथा और मुनि महाराजों ने पुस्तक को सुशो- भित करने में जो श्रम उठाये हैं उन मुनिराजों के तथा हमारे मुरुब्बी श्री श्रीमान् कोठारीजी श्री बलवन्तसिंहजी साहब वगैरह शुभेच्छुको ने उपयोगी सलाह देकर हमारा प्रयास सरल बनाये हैं उन सभों के मेरे पर परम उपकार हैं।

साक्षरों में श्रेष्ठ शीघ्र कविवर श्रीयुत श्रीन्हानालालजी दलपतराम कवि एम. ए. ने इस पुस्तक का उपोद्घात लिखने की कृपाकर को विशेष पवित्र बनाई है इस उपकार का नोंध लेते र्ष होता है।

इस पवित्र पुस्तक के लिए कलम चलाने में बहुत सावधानी रखनी पडी है जो पवित्र पुरुष की जीवनी लिखने में योग्यता के बाहर साहस स्वीकारा, इस गुण ग्राहक महात्मा के जीवन प्रसंग लेखन में सहज भी किसी की जी दुखे ऐसा एक अक्षर भी नहीं लानेका ध्यान रक्खा है इसी सबब से कितनी सभी घटना का भी विवेचन छोडा गया है।

काठियावाड़ के दो चातुर्मास की बातें विस्तार पूर्वक लिखी गई है। वह बहुतों को पक्षपात रूप दीख पडेगा, लेकिन सच्चा कारण यह है कि, उन दोनों चातुर्मासों की सच्ची २ घटनाओं को अपनी नजर से देखने का अवसर हमें मिला था, इसलिए दूसरे स्थलों के लिए अन्याय नहीं होना चाहिए, अतएव दूसरी आवृत्ति और हिन्दी अनुवाद में उन बातों को संक्षेप करने की सलाह हमें मिली है।

अमूल्य मनुष्य जन्म संयम सार्थक सम्बन्ध में सूत्र, महात्मा और अनुभवियों का वचनामृत उद्धृत करके जो विचार और विनन्ति जाहिर किए गए हैं वे रूबके समान समझने के लायक हैं, कोई भी खास व्यक्ति अथवा किसी मण्डली के लिये समझ लेने का संकुचित विचार न करते हुए विशाल और गुणग्राहक बुद्धि से पठन करने के लिए सविनय प्रार्थना है।

निर्दोष केवलो हरि:

श्रीजैपुर	श्रीसंघ सेवक
ज्ञानपंचमी सं० १९७९	दुर्लभजी त्रि० जौहरी

उपोद्घात।

बाल्यावस्था में जब कभी वर्षा आदि होने से न्हाने में आलस्य
ोता था तब एक वाक् सूत्र सुन पड़ता था, 'जाजा रोया ढूंढिया'
सवक्त यह स्वप्न में भी क्योंकर आता कि सं० १९३३ से सं०
९७८ तक देखगये साधु समूहों में पुण्य-निर्मल परम साधूराज
ानियों में गुणसागर, परम ज्ञानवीर, सन्यासिओं में संन्यस्त भीष्म,
रमसंन्यासी के ढूंढिया सम्प्रदाय में से दर्शन होगा ? लेकिन ऐसा
ी हुआ, जो जिसको खोजे सो उसे मिलता है, नहीं खोजने
ाले को मिलता नहीं, ढूंढने वाले सब ढूंढिया ही कहाते हैं,
कलापी का प्रख्यात गजल का आध्यात्मिक अर्थ समझने वाला
नुष्य मात्र सिर्फ एक यही भावना पुकारते हैं।

पैदा हुवा हूं ढूंढनें तुझको सनम !
वैष्णव भक्तराज सिर्फ यही गाते हैं कि
बनमें भूल रहा हूं कहो कहां गयो कान,

वेदान्तिओं की सूत्रावली में पहला सूत्र यही है कि—
" अथातो ब्रह्मजिज्ञासा "
बाईबल भी कहता है कि ढूंढो तो मिलेगा

मनुष्य को ढुंढिया शोधक-साधक मुमुक्षु होना ही चाहिए ।
प्रभु को ही खोजना चाहिए ।

भरतखण्ड की आर्यवाटिका में जल, जमीन, हवा मान की
फलद्रुपता एक ही है, लेकिन महारम्य तरीका इस आर्यवाटिका
में उद्यान अथवा कुंज अनेक तथा जुदा २ हैं । इसमें चतुर माली
की बनाई हुई क्यारियां, लता मंडप, जल, फुवारा वगैरह तरह
के हैं, जिनसे कि सृष्टि सुन्दरी की चौखड़धारीके अनेक रंग और
अनेक तरह के दृश्य तथा तरह २ की लताओं से आच्छादित लता
मण्डप की अनेक पुष्प परिमल से शोभायमान घूंघट घटा के समान
भरतखण्ड की इस आर्यवाटिका में नानारंग वाली संसार रूपी
क्यारी के अनेक रंग वाला संस्कृति मण्डप है, श्री महावीर स्वामी
के रोपे हुए विकसित मञ्जरी युक्त विशालनी शाखा वाला जैन-धर्म
रूपी आम्रवृक्ष और उस आम्रवृक्ष की संस्कृति रूपी कुपल उस
में कवितारूप मंजरी, जिसमें धर्म ज्ञान, शील, तपस्यारूपी फल
से पृथ्वी यशस्वी हुई है धार्मिकता रूपी सरोवर से इस आर्यवा-
टिका अजब तथा अनोखी होरही है संसार के शास्त्रियों को तथा
मानव संस्कृति के मीमांसकों को वह धर्म सहकार भूलने लायक
नहीं है ।

१९ वीं सदी में महर्षि दयानन्द ने हिन्दू धर्म, हिन्दू शास्त्र
और हिन्दू संसार के लिए जो कुछ किया, उन सभी बातों को १५ वीं

दी में जैन धर्म, जैन शास्त्र और जैन संसार के लिए लोकाशाह ने
थी ई० सं० १४६८ में गुरू नानक का जन्म हुआ और तुरंत
१५१७ ई० में धर्मवीर मार्टिन ल्यूथर ने केथोलीक सम्प्रदाय
जन्म लेकर अन्ध श्रद्धा का समूल नाश करने का प्रयत्न किया,
रोपीय इस इतिहास से करीब ५० वर्ष पहले अर्थात् १४५२ में
नधर्म के ल्यूथर रूपी सूर्य गुर्जरपाट नगरी में ऊगे, ई० सं० १४७४
लोकागच्छ की स्थापना हुई, इस गच्छ के संस्थापक ने महर्षि
यानन्द और ल्यूथर के समान मूर्तिपूजा का निराकरण किया। मूर्ति-
ज़ा को धर्म विरुद्ध साबित की, शिथिलाचारी साधुओं का व्रत संयम
दृढ किया, जादू टोना अध्यात्म मार्ग का अंग नहीं ऐसा समझाया,
धर्म सूत्रों को अपने हाथ से लिखकर धर्माभिलाषियों को सम-
झाया, चतुर्विध संघकी धर्म विरोधी भावनाओं को सत् धर्म रूपमें
लाई, भेद इतना ही रहा कि महात्मा ल्यूथर पादरी थे, दयानन्द
स्वामी सन्यासी थे, और लोकाशाह आर्य महा आदर्श दिखाने में
निपुण गृहस्थाश्रमी साधुराज थे, जनक विदेही के समान संसार
भार धुरन्धर संन्यासी थे। अदीक्षित किन्तु भाव दीक्षित थे, जैन
सन्त जिनप्रभुकी उपासना के लिए ४५ सन्यस्थ सुभटों को दीक्षा
दिलवाकर समस्थ आर्यावर्त में भ्रमणार्थ छोड़े, ख्रिस्त धर्म सु-
जर्मन ल्यूथर के ५० वर्ष पहले अमदावाद में यह घटना
ल्यूथर के समस्त ख्रिस्ती जगत् को संभार रहा है लोकाशाह

बाद भी आज उतनाही चमकार रहा है वो जैन प्रोटेस्टेंट सम्प्रदाय के साधुवर थे।

श्रीलालजी महाराज अर्थात् दर्शनप्रिय भव्यमूर्ति सिर्फ नेत्र को लोभाने वाले नहीं, किन्तु नेत्र में अद्भुत रस आंजने वाले, उनकी आत्मा के समानही उनके देह बंध भी सुदृढ, बलवान और ओजस्वी था, उनकी सामुद्रिक शास्त्रमें श्रद्धाथी, और उनकी आकृति ही उनके गुणों को साफ जाहिर करती थी, उनकी देह मुद्राही उनकी महानुभाविता जता रही थी, उनकी देहमुद्रा थी किसी सजावट से नटमुद्रा बताने वाली नहीं थी, किन्तु स्वभाविक मुद्रा थी सिर्फ दो श्वेत वस्त्र मात्र उनके देह ढाकने के लिए थे, ब्रह्मचर्य के सूचक शरीर सम्पत्ति से वे मनुष्यों में नर गजेन्द्र के समान शोभायमान थे। नगर के मुख्य दरवाजा के कपाट के अर्गल समान उनका भुजदण्ड था, देव दुर्ग के समान विस्तीर्ण वक्षस्थल था कमल पुष्प के पत्र के समान घेरा वाला भव्य मुख मण्डल और आम्र के नवीन पल्लव समान भालपत्र था, साधुता का शिखर समान कुम्भस्थलसा गण्डस्थल कुसुमपल्लव के भार से झुकी हुई लतासी भरी व झुकी हुई भ्रूलता और उस भ्रूवल्ली के नीचे नगर द्वार अथवा राजद्वार लिखे हुए सूर्य चन्द्र के समान नयन मण्डल था, इन सब के ऊपर ध्वजासी फरकती मेघ के समान वर्ण वाली लाल रेखा मानो वैराग्य की कलगीसी उड़रही थी, ज्ञान पाट

ऊपर लगाया हुआ विशाल पद्मासन और हस्ताङ्गुली की ज्ञान मुद्रा पैगम्बर भावना का पूर्ण अंश सूचित करती थी, श्रीलालजी महाराज का दर्शन होने पर सभी के मन में बुद्ध भगवान् की स्मृति जागृत होती थी, आठ २ दिन के उपवास करने पर भी दो २ हजार श्रोताओं में सिंह गर्जना के समान गर्जते हुए इस कालिकाल में श्री १००८ श्रीलालजी महाराज को ही देखे, व्याख्यान के बीच बीच में साधुपरिवार यह स्तोत्र गाते थे—

" चतुरा ! चेतजोरे।

ललना लेख जो रे ! के जोवन दो दिन रो झलकार।
अपने ही रंग में रंग दो
प्रभुजी ! मोको अपने ही रंग में रंग दो "

इस प्रकार के स्तोत्र जब २ उनके सन्त समूह उच्च स्वर में खींच कर ललकारते थे, तब २ राजगृही नगरी में नगर दरवाजा पर बुद्ध भिक्षुकों का नगर कीर्तन की भावना एक दम जागृत होती थी, कोई चतुर चित्रकार अगर बुद्ध भगवान की मूर्ति बनाने के लिये कोई मनुआदर्श (Model) खोजता हो तो श्रीलालजी महाराज की भव्याकृति से बढ़कर इस संसार में और कोई आकृति मिलना मुशकिल था, रतलाम में आचार्य श्री उदयसागरजी महाराज का कहा हुवा—" सागर वर गंभीरा " इस

भावना से श्रीलालजी महाराज साकार आत्मा की प्रतिमाही थे।
इस प्रकार के साधुदेव के दर्शनार्थ वि० सं० १९६७ में चातुर्मा
के अन्दर चोरवाड़ से पढ़ीआरजी राजकोट पधारे थे।

श्रीलालजी महाराज साहब की व्याख्यान भाषा हिन्दी, मा
वाड़ी, गुजराती इन तीनों का अजब संमिश्रण थी, जिसको सु
कर बड़े २ भाषा शास्त्रियों को अपने भाषा पांडित्य का गर्व निक
जाता था, यद्यपि उस भाषा की रचना व्याकरण नियमानुसार नह
थी तथापि उस वाक्य रचना में क्या ज्ञान, व क्या वैराग्य, क्य
तप और क्या संन्यास, ऐसे ही क्या इतिहास और क्या उदारत
सभी विराजमान थे। उदारमत वादियों की अनुदारता तथा सांप्र
दायिक छोटी २ बातों में तडफडाने वालों की युक्तिवाद बहुतस
सुना तथा देखा लेकिन उन सबों से हमारे पूज्य श्री की व्याख्या
शैली निराली ही थी; आधुनिक शिथिलाचारिओं से उलट साम्प्र
दायिक आचारों से व्रत, नियम, संयम पलवाते हुए साम्प्रदायिक
दृढव्रती महा तपस्वी इन सन्तदेव की हृदयहारिणी व्याख्यान
वाणी की उदारता सीमाबंध नहीं थी, किन्तु सिंह के विचरने लायक
वन की विस्तारता के समान निस्सिम थी। आकाश के समान विशाल
थी। ....

गणित विषय में पाश्चात्य गणित के अंदर बीली अनट्रीलिअन
से संख्या गणना की हद होती है, और आर्यगणित में परार्ध

संख्या आखिरी मानी जाती है लेकिन श्रीलालजी महाराज के लिये
परार्ध संख्या अंकमाला की मेरू नहीं थी, किन्तु बीच का ही मणका
थी, जिस वक्त आप संसार को आश्चर्यचकित करनेवाला राजस्थान
के इतिहास से वीर दृष्टांत का वर्णन करने लगते थे उस वक्त सभा
जनों में अद्भुतता छा जाती थी, यति मुनिओं की रासाओं से जिस
वक्त काव्य दृष्टान्त कहते थे और घोर अंधेरी रात के मध्य भागमें
हवेली के ऊपर से हाथी की सूंड़ ऊपर पैर रख कर शंकेत के स्थान
में जाने वाली अभिसारिका का शाब्दिक चित्र खींचते थे, उस वक्त
श्रोताओं को जितना ही काव्यश्रवण से आनन्द होता था उतना ही
व्यभिचार के ऊपर विषाद भी होता था। साधु जीवन की तपश्चर्या-
देखाने वाले वे सनातन धर्म से भिन्न जैन संस्कृति खड़ा करनेवाले
और सोने की खान के समान फीलसुफी की गहनता भरी ज्ञान
गुफा दिखाने वाले ऐसे संसारिओं में महात्मा गांधी और संन्या-
सिओं में पूज्य श्री १००८ श्रीलालजी महाराज ही दिख पड़े।
संसारी की अपेक्षा संन्यासी में तप विशेष होना तो एक प्रकार का
कुदरत का नियम ही है, जैसा ही देह रंग, वैसे ही इनका यम-संयम
भी आत्मरंग भी घेरे हुए थे, देह और देही की खाल खींचे
सिवाय ये दोनों भिन्न नहीं होते, वैराग्य तो नशों के अन्दर रक्त के
समान और हृदय की धकधकी और साधुता तो जीवन का
श्वास ही समझता था। बहुतों को तो श्रीलालजी महा-

अन्य दुनियां के ही हैं ऐसे दिन पड़ते थे, इस संसार में तो—
" न त्वत्समोऽस्त्यभ्यधिकः कुतोऽन्यः " आपका कोई सम
नहीं था, अधिक तो कहां से आवे ? ....यह दुनि
सदा ही सन्तों की भूखी ही रहती है।

वि० सं० १९६७ का चातुर्मास गुजरात, काठियाव
निष्फल हुआ था, श्रीलालजी महाराज ने श्रावकों में तथा श्रो
में जो दया की झरणा जीतेजी वहागये वह झरणा आज
निर्विच्छिन्न वह रहा है।

जैन संस्कार ने ही संसार को वीरत्वहीन किया, इस
दोष लगाने वाले को अगर उदयपुर के पर्वतों में और जो
बीकानेर की रणथली में तथा आरावली की भूलभुलैये में सि
समान विचरने वाले श्रीलालजी महाराज के दर्शन होजा
जरूर ही उनकी भूल लगजाती।

" पेट कटारीरे के पहेरी सन्मुख चाले "
हरिनो माग छे शूरानो, नहिं कायरने काम जोने।

स्वामी नारायण सम्प्रदाय के भक्ति वैराग्यों के इन की
भरी हुई वैराग्य की वीरता कुछ जैन सम्प्रदाय में कम नहीं
बुद्ध देव के अथवा महावीर भगवान के अथवा उनकी

साध्वियों के आत्मशौर्य देखने के लिए भी आत्मशौर्य के मार्ग में आने वाले ही चाहिये। वैराग्य की वीरता देखने के लिए आंख से स्थूल-वस्तु देखने वाले नहीं चाहिए, किन्तु सूक्ष्म पारखी की ही जरूरी है, संसारिओं में सत्वस्थ शोधक और वैराग्य पारख आंखें बहुतों की नहीं होती है।

श्रीलालजी महाराज साहब प्रभु नहीं थे, प्रभु के अवतार भी नहीं थे, धर्म संस्थापक भी नहीं थे, पेगम्बर भी नहीं थे, सिर्फ साधु थे, सन्त थे, आचार्य थे, ज्ञान भक्ति, शील, तप, वैराग्य की समृद्धि वाले आत्म समृद्ध धर्मवीर थे, जगत इतिहास के कोक वे नहीं थे, सिर्फ जगत कथाओं में से कुछ एक भाग वे थे, वे कुछ देव नहीं थे, सिर्फ साधु थे, संयम पालते और संयम पलवाते थे, लेकिन पोने तीन लाख की अमदावाद की वस्ती में और १२ लाख करीब बम्बई के मनुष्य समुद्र में तथा सत्तर लाख के लगभग लन्दन शहर के मानव महासागर में कितनेक सच्चे साधु साध्वी हैं ? अनुभवी कोई कहेगा ?

श्रीलालजी महाराज याने संतरूपी पर्वतों से घिरे हुए एक उच्च शिखर, बचपन में ये डोगरों में खेलते घूमते और कुदरत की गोद में क्रीडा करते हुए कितनी अपूर्व अदृष्ट वस्तु को देखते हुए ... शून्य वन में विचरते हुए टेकरी के शिखर सिंहासन के र' ... साधु शिरोमणि अद्भुत रस पीकर उछल पड़े और जगत

में अद्भुत बने ! उस वक्त उन्हें पर्वतों की तरफ से निमन्त्रण मिला कि आप नगर के बाहिर और संसार से बाहिर आवें ! आबू पर्वत से पैदा हुई तथा आरावली से पाली गई बनास नदी के जलप्रवाह में नहाते नहाते बचपन में ही पानी की आवाज आपने सुनी थी कि जैसे हम जलप्रवाह निर्विच्छिन्न बहाती हैं वैसे ही आप दया का प्रवाह समस्त संसार में बहाना, सिद्धार्थकुमार की यशोधरा रानी साध्वी दीक्षा लेकर बुद्ध संघ में मिली। इस बात को इतिहास में तथा काव्यों में बाचते हैं, स्वयं सन्यस्त दीक्षा लेने के बाद कुछ दिन बीतगये वि० सं० १९५४ में आपकी पूर्वाश्रम की पत्नी को साध्वी दीक्षा लेने के लिए प्रेरणा, प्रोत्साहन, उद्बोधन देते हुए तथा जय मिलाते हुए श्रीलालजी महाराज साहब को देखने वाले भी कई एक विद्यमान हैं, श्रीलालजी महाराज साहब की जीवन विजय के प्रसंग का वर्णन उनके जीवन चरित्र लिखने वाले के शब्दों में ही लिखेंगे "पति के पीछे पत्नी" इस शीर्षक छोटासा नवमा प्रकरण अद्भुत रस से भरा हुआ आर्यावर्त के धार्मिक इतिहास में अद्यापि कम नहीं है।

" क्रम से मेवाड़ मालवा की भूमि को पावन करते हुए पूज्य श्री महाराज रतलाम पधारे, × × रतलाम के श्री संघ ने परम उत्साह, अतिशय भक्ति तथा असीम आनन्द के साथ आपका सत्कार किया। करीब दो हजार मनुष्य आपके सामने गये। इस समय

ं आचार्य श्री १००८ उदयसागरजी महाराज ने शरीर के अन्दर व्याधि बढजाने से संथारा पचक लिये थे, यह समाचार फैलते ही सैकड़ों हजारों लोग पूज्य श्री के दर्शनार्थ आने लगे । टोंक से श्रीयुत नाथूलालजी बंब, उनके सुपुत्र माणकलाल और श्रीमती मान कुंवर बाई श्रीजी की संसारावस्था की धर्मपत्नी ये सब भी आये। हजारों आदमी के बीच में सिंह गर्जना से धर्म घोषणा करने से व श्रीलालजी महाराज साहब के प्रभावशाली व्याख्यान श्रवण करने से मानकुंवर बाई को वैराग्य उत्पन्न हुआ। पति के पीछे चलकर आत्मोन्नति साधने की उत्कण्ठा प्रबल हो उठी, अर्धाङ्गिनी की दावा रखने वाली को ऐसी ही सद्बुद्धि उपजती है, पूज्य श्री के पास मानकुंवर बाई ने प्रतिज्ञा की कि हमें अब एकमास से अधिक संसार में रहना नहीं है, ऐसी प्रतिज्ञा करके मानकुंवारबाई आज्ञा लेने टोंक गई।

सं० १९५४ माघ शुक्ला १० के दिन आचार्य श्री उदय-गरजी महाराज का स्वर्गवास हुआ।

सं० १९५४ फाल्गुण शुक्ला ५ के दिन श्रीमती मानकुंवरबाई ाताम शहर में दीक्षा ली, इस वक्त पूज्यश्री १००८ श्रीलालजी हाराज भी रतलाम में ही विराजमान थे, एकही तिथि में तीन ीक्षायें थीं।

धार्मिक संसार की उन्नति करने वाला चमत्कार से भरा संसार की जीवनवृत्ति को यह कथा साफतौर पर बोध देने वाली है!

ई० सं० १८९७ के इतिहास प्रसिद्ध यशस्वी वर्ष में भारत के विद्वान्मुकुट वीरपुत्र तिलक महाराज को देवकी वसुदेव के समान कारागृहवास दिया गया, उसके बाद थोड़े ही मास में यह घटना घटी, उनीसवीं सदी का अस्त और बीसवीं सदी का उदय ई० सं० १८९८ के प्रभात में आर्यावर्त में से यह संसार जीवन चित्र और यह धर्म जीवन चित्र, पाठक! "भरतखण्ड में अद्भुतता तो इतिहास में ही है, आज कुछ प्रगट होती नहीं, आर्यावर्त की आत्म-लक्ष्मी निकल चुकी है, भारतीय प्रजा तो संस्कृती के नीचे उतर कर बैठी है, ऐसे कहने वाले विदेशी लोगों का ज्ञान सीमा कितनी संकुचित है? श्रीलालजी महाराज की तथा मानकुंवर बाई की संसार जीवन कथा और धर्म जीवन वार्ता इतिहास प्रसिद्ध किसी भी संस्कृति की शोभा कारक ही है, दाम्पत्य जीवन तथा साधु जीवन संसार के अथवा संस्कृति के दो हृदयों के समान ही है अन्य संसार में अथवा संस्कृति में दाम्पत्य जीवन के लिए तथा साधु जीवन के लिए उपदेशों की जरूरी होती है किन्तु आर्य संसार में अथवा आर्य संस्कृति में उपदेश की जरूरी होती नहीं, अतएव और देशों की आत्मा से आर्यावर्त की आत्मा अधिक सजीव है, आज की बीसवीं सदी के भरतखण्ड अर्थात् महात्मा गांधीजी और कस्तूरबा

के तथा श्रीलालजी महाराज साहब व मानकुंवर बाई के तपोमय जीवन के तपोवन।

राजमुकुट उतार कर भेख लेने के बाद उज्जयिनी में और गाड पाट नगरी में पिंगला राणीजी अथवा मैनावती माताजी के समीप भिक्षा के लिए गये हुए भर्तृहरिजी को व गोपिचन्दजी को नाटकीय रंगभूमि पर बहुतों ने देखे होंगे गृहस्थाश्रम के वेश में जो श्रीलालजी महाराज साहब जन्मभूमि में ठहरते नहीं थे और वनमें तथा वैरागिओं में बारंबार भागजाते थे, वेही श्रीलालजी महाराज साहब साधुवेश में टोंक नगरी के अन्दर चातुर्मास करके उपदेश देते तथा गोचरी के लिए फिरते थे, उनको वैसे करते हुए देखने वाले कितने ही आज भी मौजूद हैं, आयुष्यवय में तथा दीक्षा वय में छोटे किन्तु गुण भण्डार में बड़े श्रीलालजी महाराज साहब को आचार्य पदपर स्थिर कर के " गुणाः पूजा स्थानं गुणिषु न च वयः " ऐसे सर्व शासनों में प्रधान महा सूत्र को जैन शासन ने भी सिद्ध कर रहा है, ऐसा देखने वालों को दिखाया।

.........श्रीलालजी महाराज वर्तमान काल से अज्ञ सिर्फ शास्त्र सम्पन्न साधु नहीं थे, किन्तु अनुभव विशारद थे, सिर्फ पण्डित ही नहीं थे, किन्तु सन्त थे।

युरोप में अद्वितीय सुभटनाथ नेपोलियन इटली के अन्दर विजयी के लोह मुकुट अपने हाथ से अपने शिरपर रख लिया था।

श्रीलालजी महाराज और उनके बाल मित्र गुलाबमलजी पोरवाड़
सं० १९४४ के मार्गशीर्ष मास में गुरु श्री साथ दीक्षा धारण
किये थे, सं० १९३६ के कार्तिक मास में श्रीलालजी महाराज के
सगे सहोदर कुटुम्ब परिवार मिलकर श्रीलालजी महाराज के लग्न
करने के लिए टोंक से दुनी गांव पधारे थे, श्रीलालजी के धर्मगुरु
तपस्वीजी श्री पन्नालालजी महाराज तथा श्रीभीमरमलजी महाराज
जैसे कि संसार में पड़ने का भूल से निकालने की चितावनी देने
के लिए पहले से ही दुनी में आबिराजे थे, लग्नोत्सव के बाद ३
वर्ष तक श्रीलालजी महाराज साहब की धर्मपत्नी मानकुंवर बाई
पीहर में ही रही, और सं० १९३९ टोंक आई, इस बीच में
श्रीलालजी ने अखण्ड ब्रह्मचर्य यही हमारी जीवन अभिलाषा है
ऐसी भीष्म प्रतिज्ञा करली थी, श्रीलालजी महाराज के, मानकुंवर
बाई के भाग्य में देवने वैराग्य लिखा था इसको कौन मिटा सकता
था, माता पिता, पत्नी, स्वजन सहोदर इन सबों का प्रयत्न निष्फल
गया, पतिने दीक्षाली, पति गुरुदेव के समीप में ही बाद पत्नी ने
भी दीक्षाली, धर्म दीक्षिता होकर छः वर्षतक सुन्दर संयम पालकर
फिर पति के पहिले ही स्वर्गजाने की आर्य महिलाओं की अभि
लाषा के अनुसार मानकुंवर बाई ने भी महासौभाग्य प्राप्त किया

क्या संयम में और क्या संसार में श्रीलालजी महाराज बद
नाष्ठिक ब्रह्मचारी ही रहे, और मानकुंवर बाई अखंड सौभाग्यवती

रही, संसार की ओर वैराग्य की सौभाग्य चुंदरी ओढ़कर ही मानकुंवर बाई मृत्यु निद्रा में सोई, पत्नीभावना या पतिभावना से हताश हुए भए अथवा जीवन के विध्वंश से भग्नांश अपने को मानते हुए तथा नैसर्गिक दुर्बल स्वभाव से या इन्द्रियों की आरजु का रुदन से संसार को धुजाने वाले अपने नवीन संसार के कितनेक प्रेमयोगिओं को इन योगी योगिनिओं के दाम्पत्य योगों में से क्या २ सद्बोध लेने लायक नहीं है? आर्य संसार का सफल दाम्पत्य यही है और आर्य सन्यास का सफल सन्यास इसीको कहते है। इन योगी-योगिन दोनों का यही परम दांपत्य और दोनों के यही परम नैष्टिक ब्रह्मचर्य, ईश्वर का शुभाशिर्वाद उतरे इस आर्यदाम्पत्य पर ऊर्मीये युगमें स्थूल पूजा व सुख पूजा का आज का नव जगत में दाम्पत्य जीवन कुं ये गयबी ईश्वरी आशीर्वाद की अति आवश्यकता है।

नवीन गुजरात के नवीन स्त्री पुरुष हमसे पूछते हैं कि अगर कल्पना देश निवासी जय-जयन्त मानव जगत में तुम्हारे देखने में हो तो दिखाओ, और तुरंत ही उत्तर दिया है कि " इस संसार में तो दाम्पत्य भावना सफलकरना मुश्किल ही है " यह बात सच्ची है कि कल्पना देश के इन पुण्य निवासिओं को जगज्जीवन दाम्पत्य ब्रह्मचर्य में उतारना मुश्किल है। महात्मा गांधीजी का दाम्पत्य ब्रह्मचर्य आखिर समय का है, लेकिन पूज्यश्री श्रीलालजी महाराज का और

श्री मानकुंवर बाई का नैष्ठिक ब्रह्मचर्य से परिपूर्ण पुण्य जीवन की साधु कथाओं से मैं आशा रखता हूं कि इन शंकाशील पूछने वालों का समाधान अवश्य हो जायगा। इस वक्त भी यह आर्य संसार सच्चे साधुओं से शून्य नहीं है आश्चर्य अभी भी मौजूद है Truth is strangor than fiction मानव सर्जीत कल्पना की सचाई से असली प्रभु सर्जीत सचाई अजब है. प्रभु कल्पना से पर और आकाश गुफाओं का विराट भंडार से भी न मिले वैसी कल्पना मनुष्य से ऐसे नहीं होती। जहां पर अन्धकारों से अन्धकार छिटक रहा है ऐसे आकाश में चमचमाती तेज पुंज तारागण की परम्परा का वाचकवृन्द जरूर देखेही होगें। पूर्वाकाश में मंगल या बुद्ध क्षितिज के पीछे से उगे और आकाशके मध्यभागमें आक चमकने लगे तथा गगनमंदाकिनी के समीप शनि अथवा गुरूचम चमाते हो, और फिर वे धीरे २ पश्चिमाकाश में उतर पड़े औ स्थिर होजाय, इसप्रकार तेजस्वी शनि की प्रकाशावली भर रा उगती और चमकती हुई आप लोगों ने रात भर में देखी होगी उनमें मध्य रात्री बीतने पर अमृतनौका सम पूर्व क्षितिज में उगत और धीरे २ तारकवृन्द में जाता हुआ चन्द्रमा दीख पड़ा होगा हमारे जीवनकाल में भी ऐसा ही हुआ, साधु संगति की हमें बड़ी तीव्र अभिलाषा थी और आज भी थोड़ीसी वह है, चमकती हु ताराओंमें छोटा बड़ा ग्रह उपग्रह जीवन भर देखें, अपने २ जग

अन्धकारों को थोड़ा बहुत यह सब तारा समान सन्त हटाये और हटावेंगे, लेकिन इन सबों में इस आंख से चन्द्रमा तो सिर्फ एक ही देखा, इस्लामी पंक्ति को तथा पारसी अध्वर्युओं को तो विशेष नहीं देखा है लेकिन सनातनी ब्रह्मसमाजी, आर्यसमाजी थियोसोफिष्ट, मुक्तिफौज, युनिटेरियन, प्रेसलिटेरिअन, इंग्लिशचर्च कथोलिसिझमन साधु संन्यासी धर्मप्रचारक पादरियों का परिचय अधिक किया है, बड़ोदा में सनातनियों का ज्ञानस्तम्भ रूप पंडित वर्य छोटूमहाराज का भी परिचय है फिलोसफी की कठिनता को सुखबोक करके समझाते हुए नरहरि महाराज का प्रवचनभी सुना है, मोरवी में महामहोपाध्याय संस्कृत शीघ्रकवि शंकरलालजी का भी सत्संग था। जूनागढ में मूलशंकर व्यासजी व्यास बापा के अष्टोत्तर शत परायण का भी दर्शन किया था, अहमदाबाद में दरवाजा पर विराजते हुए सर्यूदासजी के तथा चराचर की यात्रा में विचरने वाले जानकीदासजी के दर्शन से विमुख भी नहीं है, भजन की धुन में ही रमणेवाले मोहनदासजी के भजन भी बारसन सुने, छोटी २ पुण्य कथा से सत्संग मंडलीको रिझानेवाले और रिझाकर एक कदम ऊपर चढानेवाले जादवजी महाराजको भी बारंबार देखे, नर्मदातीर में गंगानाथ के केशवानन्दजी के साथ भी एकरात हमने बिताई, करनाली के गोविन्दाश्रमजी और चांदोद के वैद्य स्वामी का भी दर्शन किया है, गंगानाथ के ब्रह्मानंदजी व

वाघोड़िया के बापूरामजी और मालसर के माधवदासजी का दर्शन सौभाग्य नहीं मिला, यह बात नहीं. सांवतगढ़ के शिवानंदजी परमानन्दजी की अश्विनीकुमार समान देवकाया को भी जानता हूं; पुष्कर वाले ब्रह्मानन्दजी के भजन व वचन सुना, ८५ वर्ष के वयोवृद्ध लटकती चमड़ी वाले भक्त कवि [illegible] के भजन भी सुना है, अद्वैती वामदेवजी स्वामी व विशिष्टाद्वैती अनन्त प्रसादजी के प्रवचन और कीर्तन में बैठे हैं, नाटक की रंगभूमि पर भक्तराज नरसिंह महताको भी देखा है. इस जीवन में सिन्ध ब्रह्मसमाज के यह दो साधुजन भक्तराज डा० एडेन के बंबई प्रार्थना समाज में एकतारा की धुन में नृत्य भी देखा है, आर्य समाज का 'Intellectual Gymnast' न्यायवाद का महामल्ल आर्य फिलसुफ आत्मानंदजी का सहवास भी किया है, ब्रह्मसमाज के साधुजन प्रतापचन्द्र मजूमदार और बाबू विपिनचन्द्र पाल के धार्मिक व्याख्यान सुना है, मुक्ति फौज के सेनापति जनरल बूथ के ख्रिस्ताचार्य मुम्बई के बिशप के, डा० पेरवेने के डा० फारक्‌हार के, डा० सन्डरलैंड के व्याख्यान व धर्म प्रवचन एक २ दफा सुना है, हिमालय की कन्दरा में आसन लगा कर बैठे हुए स्वामीजी श्री श्रद्धानन्दजी को भी देखा है, करीब चार अंगुल चौड़ी सुनहरी किनारीदार साड़ी पहनी हुई और हाथ पर सोनेरी सांकल की पाकेट वाला ७५ वर्ष की विधवा मिसेस बेसेन्ट के और आर्य

साधु-वेष में विचरने वाले ब्रूकस के धर्म व्याख्यान में भी गये हैं, शंकराचार्य श्री माधवतीर्थजी, त्रिविक्रमतीर्थजी, श्री शान्त्यानंदजी, और खिलाफत शंकराचार्य श्री भारती कृष्णतीर्थजी से भी हम अपरिचित नहीं हैं, ऐसे ही सफेद, पीला, भगवावाले को यथामति चीन्हे जाते हैं, नवीन प्राचीन अनेक संप्रदाय के साधु संत को देखे हैं, लेकिन जगत् की अंधेरी महारात्रि को देखने से ये सबही छोटे बडे साधु तारा के सदृश जगमगाते हैं, इस संतरूपी तारकवृंद के मध्य में अमृत के निधान कलानिधि (चन्द्र) समान विचरने वाले पूज्य श्री श्रीलालजी महाराज को ही देखे ।

पाठक, आपकी अति तेजस्वी आंख से अगर साधुता का चन्द्रदेव किसी अन्य को ही देखे हो तो उसमें हमारी मनाई नहीं लेकिन वह साधुता के चन्द्रदेव आप अपने लिये ही देखे हों तो इतना हमारे लिये पर्याप्त है। पाठक ! हम आपसे विनय पूर्वक इतना ही चाहता हूं क्योंकि पृथ्वी भर में संसार की रात अंधारी है इसलिए संसार का मार्ग विकट तथा भयानक है ।

न्हानालाल दलपतराम कवि

विषयानुक्रमणिका ।

आभार.

यह पुस्तक लागत मात्र से कम कीमत में बेचकर अधिक प्रचार कराने के उद्देश्य से नीचे लिखे महानुभावों ने आर्थिक सहायता दी अतः उनका उपकार मानता हुं ।

२०००) शेठजी बहादुरमलजी बांठीया–भीनासर
५००) झवेरी अमृतलाल राइचंद–पालनपुर
२५०) झवेरी मोहनलाल रायचंद–पालनपुर.
१००) झवेरी माणेकचंद जकशी–पालनपुर
१००) महेताजी बुधसिंहजी वेद–बीकानेर.
१००) शेठजी जतनमलजी कोठारी–बीकानेर.
१००) झवेरी खूबचंदजी इंदरचंदजी–दिल्ली वगैरे.

नीचे के गृहस्थों ने अगाउ से संख्याबन्ध पुस्तकों के ... उत्साह को बढाया है इससे उनका उपकार मानता हुं ।

५०० श्री उदयपुर श्रीसंघ.
३०० रा. रा. हेमचन्द्र रामजीभाई–[illegible]
२७५ रा. रा. देवजीभाई प्रागजी [illegible]
२५० शेठजी चंदनमलजी [illegible]
२५० शेठजी देवीदास [illegible]
२०० शेठजी हस्तीमलजी [illegible]
१०० शेठजी गादमलजी [illegible]
१०१ श्रीमती [illegible]
१०० शेठजी [illegible]
१०० [illegible]
७५ [illegible]

पूज्य प्रभावाष्टकानि ।

लेखक—शतावधानी पंडितरत्न
श्री रत्नचंद्रजी स्वामी ।

नमस्काराष्टकम् ।

वसंततिलकावृत्तम् ।

संशुद्धसंयमधरं सरलस्वभावम्
मोक्षार्थसाधनपरं प्रथितप्रभावम् ॥
तत्वप्रचारपरिशामितदुःखदावम्
श्रीलालजिद्गणिवरं नितरां नमामि ॥ १ ॥

भावार्थः—सम्यक् रीति से शुद्ध संयम के पालने वाले, स्वभाव से ही अत्यन्त सरल, मोक्ष रूपी उत्कृष्ट पुरुषार्थ साधने में सदा निमग्न, देश देशान्तरों में विस्तृत ख्याति-प्रभाव वाले, जैन तत्वों का प्रचार कर अनेक जीवों के दुःख दावानल को ... नो

वाले आचार्य अवतंस श्रीमान् श्रीलालजी महाराज को मैं मन, वचन और काया की त्रिकरण शुद्धि से नमस्कार करता हूं ॥ १ ॥

दृष्टेः सदा स्रवति यस्य सुधासमूहो
यस्यार्द्रशुद्धहृदयात् करुणाप्रपूरः ॥
यस्यानने वहति सौम्यनदीप्रवाहः
श्रीलालजिन्मुनिवरं तमहं नमामि ॥ २ ॥

भावार्थः—जिनकी दृष्टि में से निरन्तर सुधा स्रवित हो[ता] था अर्थात् नेत्रों में अमृत भरा था जिससे हर ओर सुधा दृष्टि [से] विलोकन होता था; जिनके आर्द्र और पवित्र हृदय से दया [का] स्रोत बहा करता था जिनके मुख पर सौम्यता–नदी का प्र[वाह] प्रवाहित रहता था ऐसे श्री श्रीलालजी मुनिराज को मैं नमस्[कार] करता हूं ॥ २ ॥

विद्या विवादरहिता विनयेन युक्ता
चित्तं विरक्तमपि सर्वजनस्य रम्यम् ॥
मुद्रा तु यस्य निजशान्तिसमुद्रमग्ना
श्रीलालजित्कीतिवरं तमहं नमामि ॥ ३ ॥

भावार्थः—विनय से प्राप्त की हुई जिनकी प्रज्ञा [वि]... रहित थी, दूसरों को अपमानित करने की वृत्ति से तनिक भी

न थीं, जिनका अंतःकरण वैराग्य रस से पूरित था, परन्तु लुखा न था कि किसीको अरम्य हो, बल्कि सबको मनोहर लगता था, जिनकी मुखमुद्रा आत्मिक शान्ति के समुद्र में मग्न रहती थी; ऐसे विद्वानोंमें श्रेष्ठ श्रीलालजी महाराजको मैं नमस्कार करता हूं॥३॥

श्रीमज्जिनेंद्रमतफुल्लसरोजभृङ्गम्
शास्त्रीयतत्वशुभमौक्तिकराजहंसम् ।
विस्तीर्णकीर्तिधवलीकृतदिग्विभागम् ।
श्रीलालजित्सुकृतिनं शिरसा नमामि ॥४॥

भावार्थः—जो सब दर्शन की ओर साम्य भाव रखते हुए भी वीतरागमत—जैन दर्शनरूपी प्रफुल्लित कमल पर भृंग के सदृश लीन थे, शास्त्रीय तत्वरूपी सरस मोती को चुगनेवाले राजहंस थे। जिनकी विस्तीर्ण कीर्ति से दसों ही दिशाएं उज्वल थीं ऐसे सत्कृत्य-परायण श्रीलालजी महाराज को मैं सिर झुकाकर नमस्कार करता हूं ॥४॥

यस्याऽच्छचुम्बकदृषत्सदृशाप्रतापै
राकृष्यतेमतिविशारदराजवर्गः ।
संश्लाघ्यते सुमनसा गुणपुष्पवल्ली
श्रीलालजिद्यतिवरं मनसा नमामि ॥५॥

भावार्थः—स्वच्छ और बृहत् लोह चुंबक में अधिक से अधिक भारी लोहे को भी खींचने की शक्ति रहती है इसी

जिनके प्रताप-प्रभाव में उच्च पद प्राप्त मनुष्यों के भांपने की शक्ति थी इसी प्रताप द्वारा असाधारण विचारशील विद्वान राजा महाराजा जिनकी ओर झुकते थे इतनाही नहीं परंतु वे उनके गुण-पुष्प की लतिका की महक से प्रसन्न हो मुक्तकंठ द्वारा श्लाघा—प्रशंसा करते थे ऐसे यतिओंमें प्रधान श्रीलालजी महाराज को मैं अंतःकरण पूर्वक नमस्कार करता हूं ॥५।

दम्भोज्झितं निरभिमानिनमात्मलक्ष्यं
कंदर्पसर्पदशनोत्खनने समर्थम् ।
शांतं सदैव करुणावरुणालयं त्वं
श्रीलालजिद्गणिवरं प्रणमामि भक्त्या ॥६॥

भावार्थः—दंभ-मिथ्याडंबर जिन्हें लेशमात्र भी पसंद न था आचार्य पदप्राप्त एवम् प्रतिष्ठाप्राप्त सरदारों के पूजनीय होते जिन्हें अभिमान छुआ भी न था परंतु सिर्फ आत्माही की ओर जिनका लक्ष्य था, कंदर्प-कामदेवरूपी विषारी सर्प की दाढें उखाड़ने में जो विजयी हुए थे, जिनके चहुं ओर शांति स्थापित थी दया के तो जो सागर थे उन आचार्य शिरोमणि श्रीलालजी महाराज को मैं आंतरिक भक्ति से नमस्कार करता हूं ॥६॥

पाषाणतुल्यहृदया अपिकेचनार्या
नीताः स्वधर्मपदवीं कुशलेन येन ।

दृष्टांतयुक्तिरसगर्भित बोधशैल्या
श्रीलालजिद्गणिवरं गुरुकल्पमीडे ॥७॥

भावार्थः—कितनेही आर्यभूमि और आर्यकुल में उत्पन्न होते भी धर्म संस्कार हीन होने से पत्थर से हृदय वाले बन गए थे उनको भी जिन कुशल पुरुष ने दृष्टांत और युक्ति पूर्वक रसगर्भित उपदेश देने की रीति से उपदेश दे समझा निजधर्म की राह पर लगाये, धर्म परायण बनाये, ऐसे आचार्य शिरोमणि बृहस्पति समान श्रीलालजी महाराज की मैं मुक्त कंठ से स्तुति करता हूं ॥७॥

रोगेण पीडिततनावपि यस्तपस्या
मुग्रां समाचरितवान्मनसोजसा च ॥
व्याख्यं महत्तपसि नापि समाश्रयद्यो
बोधादिनित्यनियमे तमहं नमामि ॥ ८ ॥

भावार्थ :— पैरों में बात रोग और देहमें दूसरे त्रासदायक अनेक रोग अधिक समय उत्पन्न हो जाते थे तोभी वे दुःख और शरीर निर्बलता को न गिनते, सिर्फ मनोबल द्वारा चार २ आठ २ उपवास एकदम कर लेते थे जिसमें भी तुर्रा यह था कि ऐसी बड़ी तपस्या में भी हररोज व्याख्यानादि नित्य नियमों में तनिक भी मंदता – शिथिलता न होती थी ऐसे दृढ़ मनोबल वाले समर्थ महात्मा श्री श्रीलालजी महाराज को मैं बार २ नमस्कार करता हूं।

प्रतापसौभाग्य-वर्णनाष्टकम् ।

वसन्ततिलका वृत्तम् ।

सद्यस्त्वमेव पृथिवीप्रवरप्रदीपो
हर्त्तान्धकारपटलस्य हृदि स्थितस्य ॥
मन्येऽपरः प्रकटितस्तरणिर्नवीनो ।
धृत्वा तनुं शुभतरां चितिपादचारी ॥ १ ॥

भावार्थः—हे मुनिवर ! तीर्थंकर केवली प्रभृतिकी अनुपस्थितिमें वर्तमान समय में जैन समाजके हृदयके तमको नाश करनेवाले आप स्वतः ही पृथ्वी के श्रेष्ठ सूर्य (दीपक) हैं । मेरी मान्यता है कि मानुषिक देह धारण कर, आप पृथ्वी पर पादविहारी विलक्षण नवीन सूर्य प्रकट हुए हैं । आकाशमें भ्रमण करनेवाला एक सूर्य और पृथ्वी पर विचरने वाले आप दूसरे सूर्य हैं ॥ १ ॥

सूर्योदयस्य वैशिष्ट्यम् ।

बाह्यं स्तमस्ततिमलं प्रतिहन्ति भानु
र्नाभ्यन्तरां हृदयभूमिनतांनितान्तम् ॥
त्वं तु प्रबोधकजिनोक्तवचोवितानै
र्जाड्यं द्वयं हरसि भूमिरवे जनानाम् ॥ २ ॥

भावार्थः—आकाशीय सूर्य तो बाह्य स्थूलान्धकार का नाश करता है परन्तु मनुष्यों के हृदयभूमि पर विस्तृत अज्ञानांधकार को नहीं हटा सका, परन्तु हे भौमिकसूर्य ! पादविहारी सूर्यरूप मुनिवर ! आप तो तात्विक शिक्षा देने वाले वीतराग के वचन द्वारा जनसमाजकी बाह्य और आंतरिक दोनों तरहकी जड़ता हरलेते हो यह विशेषता है ॥ २ ॥

पुनर्वैशिष्ठ्यम्

साम्राज्यमस्ति दिवसे दिवसेश्वरस्य
सायं पुनर्भुवि तदस्तमुपैति नित्यम् ।
वृद्धिङ्गता निशिदिनं तरुणस्त्वदीयो
नव्यः प्रताप इह भाति विलक्षणो वै ॥ ३ ॥

भावार्थ :—आकाश विहारी सूर्य की महिमा सिर्फ दिन को ही होती है । प्रातः काल उदय होता है । मध्यान्ह में तरुण रहता है परंतु सध्या होते ही सूर्य का साम्राज्य विलीन हो इस पृथ्वी पर से अदृश्य हो जाता है परंतु आपका प्रताप तो रातदिन उच्च शिखर पर चढ़ता हुआ सदैव युवानहीं युवान रह कर प्रतिक्षण सुकीर्ति की चढ़ती कला में जाता प्रतीत होता है। सूर्य के साम्राज्यसे आपके साम्राज्य में यही विलक्षणता है ॥ ३ ॥

विजय लक्ष्मीः

संघाटके मुनिषु सत्सु महत्सु चान्ये
ष्वाचार्यपूज्यपदवीपदमाश्रिता ते ॥
मन्ये प्रतापतपनं ह्युदितं तवैव
दृष्ट्वा प्रसक्तिमभजत्त्वयि सा जयश्रीः ॥ ४ ॥

भावार्थः—स्वर्गीय पूज्य श्री —चौथमलजी महाराज के अवसान समय पर आचार्य और पूज्य पदवी का प्रश्न उपस्थित हुआ उस समय आपकी सम्प्रदाय में आपसे अधिक वयोवृद्ध और संयम में बड़े मुनिवर विद्यमान थे तोभी आचार्य पूज्य पदवी आपके चरण को ही वरी, इसका कारण मुझे तो यह प्रतीत होता है कि आपका प्रताप-सूर्य प्रकट होगया था उसे देखकर ही विजय लक्ष्मी आप पर मोहित होगई ॥ ४ ॥

साम्राज्यतारुण्यप्रदर्शनम् ।

वैज्ञानिकाः पदविभूषितपण्डिताश्च
नव्याः पुरातनजनाः द्विविधा महान्तः ॥
सन्मानयन्ति दृढभक्तिपुरःसरं त्वां
मध्याह्नकालसहिमैष धरारवेस्त्वं ॥ ५ ॥

भावार्थः—नई रोशनी-वाले विद्वान् और आचार्य तीर्थादि पदवी से मंडित पंडित नये जमाने के सुसंस्कार वाले युवा और प्राचीन पद्धति को मान देने वाले वृद्ध एवम् प्रतिष्ठित नरेश एक सी समानता से दृढ़भक्ति पूर्वक आपका सम्मान करते हैं और श्रद्धापूर्वक आपकी सेवा शुश्रूषा बजाते हैं यही आपसे भौमिक दिनकर के मध्याह्न कालकी महिमा है ॥ ५ ॥

सौराष्ट्रिका निजमताग्रहिणोऽपि सन्तो
श्रुत्वा तवाङ्घ्रिकजचुम्बनचञ्चरीकाः ॥
त्वां भेजिरेऽतिशयिनं प्रबलप्रतापं
मध्याह्नकालमहिमैष धरारवेस्ते ॥ ६ ॥

भावार्थः—जब आपका काठियावाड़ में पदार्पण हुआ तब भिन्न २ सम्प्रदाय वाले साधु साध्वियों में से कई तो एक वक्त के समागम से ही आपकी विद्वत्ता और आपके चारित्र्य का पूर्ण मान करने लगे परन्तु जो कोई मताग्रही थे वे भी आपके थोड़ेसे सहवास और परिचय के पश्चात् मताग्रह त्याग आचार्य के अतिशय सहित और प्रौढ़ प्रबल प्रताप वाले आपके चरण कमल को चुम्बन करने में भृंग से बन आपकी सेवा में प्रस्तुत होगए, यह भी पृथ्वी विहारी सूर्यरूप आपके मध्याह्न काल की महिमा का ही प्रताप है ॥ ६ ॥

यत्रागमस्तव महत्स्वपरेषु तत्र
विद्वत्सु सत्स्वपि न नायकमेव बोभम् ॥
श्रोतुं रता मुनिजना गृहिणश्च सर्वे
मध्याह्नकालमहिमैष धरारवेस्ते ॥ ७ ॥

भावार्थः—आपके प्रतापकी वास्तविक सूर्य सो यह थी कि इस भूमि–काठियावाड़ी भूमि में जहां २ आपने पदार्पण किया उस ग्राम में आपसे दीक्षा में और उम्र में बड़े एवम् विद्वान् मुनि विराजमान थे, परन्तु कोई व्याख्यान न देते सिर्फ आपके सामने एक ही सभा में सब साधु, श्रावक और अन्य मतावलम्बी लोग आपके व्याख्यान सुनने को उत्सुक रहते और आपके पास से ही व्याख्यान दिलाते थे और किसी मुनिके दिलमें लेशमात्र भी यह विचार नहीं आता था कि हमारे भक्त हमसे आपको अधिक मान क्यों देते हैं? यह भी क्षितिविहारी सुसूर्य रूप आपके मध्याह्न काल की महिमा ही है ॥ ७ ॥

येनैकदापि तव वाक्श्रवणीकृता वा
दृष्टं सकृत्तव सुभव्यमुखारविन्दम् ॥
आजीवनं मनसि तस्य छविस्त्वदीया
लग्ना विभाति महिमैष तवैव भूतेः ॥ ८ ॥

भावार्थः—जिस मनुष्य ने एक समय भी आपके व्याख्यान सुने हैं या आपके रमणीक मुखारविंद के दर्शन किये हैं उस मनुष्य के मनरूपी सेट पर आपके चेहरे का मानो भव्य फोटो खींच गया है और वह जीवन तक न बिगड़ते हमेशा ज्यों का त्यों प्रस्तुत रहता है। लेखक को अनुभव है कि एक समय परिचित हुआ मनुष्य आपको पुनः २ याद करता है और दर्शन करने को आतुर रहता है यह सब आपकी विभूति—चारित्रसम्पत्ति की अलौकिक महिमा है ॥ ८ ॥

अस्मदीयरत्नम् ।

विरहाष्टकम्

उपजाति वृत्तम् ॥

चिंतामणिर्यत्तुलनां न धत्ते
यन्मूल्यकं पार्श्वमणिर्न दत्ते ॥
एतादृशं जङ्गमरत्नमेकं
प्रसिद्धिमाप्तं मरुसाधुवर्गे ॥ १ ॥

भावार्थः—चिंतामणि रत्न जिसकी तुलना नहीं कर सका। और पार्श्वमणिभी मूल्य में जिसकी समानता नहीं कर सकता ऐसा जंगम अर्थात् चलता फिरता रत्न हमारे मारवाड़ की ओरके साधु समुदाय में से प्रसिद्ध प्रख्यात हुआ ॥ १ ॥

श्रीलालजित्तस्य च नामधेयं
दृष्टं मया प्राक् पुरवक्कनेरे ॥
तद्दर्शनं तत्र च पत्रमात्रं
लब्धं महाभाग्यवशेन नूनम् ॥ २ ॥

भावार्थः—उन नररत्न-उन मुनिरत्न का नाम अब किसी से गुप्त नहीं है तौ भी कहना होगा कि उनका नाम खिरेलालजी या श्रीलालजित् था। इस लेखकको सिर्फ उनके नामसे ही परिचय नहीं है, परन्तु संवत् १६६६ के प्रथम आषाढ मासमें वांकानेर शहर में साक्षात् दर्शनसे भी परिचय हुआ था जोकि उनका दर्शन सिर्फ १ पक्ष भर ही वहां पर मिला था उतने समय की दर्शनकी प्राप्ति भी महाभाग्य के उदयका फल है ॥ २ ॥

तृप्तिर्न या वर्षशतेन जन्या
तत्रास्ति पक्षः किमलं प्रमाणम् ।
तथाप्यभून्मेऽत्रभविष्यदाशा
हताधुना हा विगता वृथा सा ॥ ३ ॥

भावार्थः—जिनके दर्शन सौ वर्ष तक होते रहें तो भी तृप्ति न हो, तो विचारा एक पक्ष किस गिनतीमें है? एक पक्ष साथ रहने से दोनों के मनमें सम्पूर्ण चातुर्मास साथ रहने की प्रबल उत्कंठा हुई थी, परन्तु एकका मोरबी और दूसरेका भोराजी चातुर्मास नियत होजाने से अनाशा हुई, तो भी चातुर्मास में हेर फेर करने का प्रयत्न जारी रहा परन्तु संयोग न होने से परिणाम निराशा में परिणत हुआ। चातुर्मास पश्चात् संगम होने की आशा की थी परंतु चातुर्मास के पूर्ण होते ही अकस्मात् मार-

अस्मदीयरत्नम् ।

विरहाष्टकम्

उपजाति वृत्तम् ॥

चिंतामणिर्यस्तुलनां न धत्ते
यन्मूल्यकं पार्श्वमणिर्न दत्ते ॥
एतादृशं जङ्गमरत्नमेकं
प्रसिद्धिमाप्तं मरुसाधुवर्गे ॥ १ ॥

भावार्थः—चिंतामणि रत्न जिसकी तुलना नहीं कर सका और पार्श्वमणिभी मूल्य में जिसकी समानता नहीं कर सक्त ऐसा जंगम अर्थात् चलता फिरता रत्न हमारे मारवाड़ की ओरके साधु समुदाय में से प्रसिद्ध प्रख्यात हुआ ॥ १ ॥

श्रीलालजित्तस्य च नामधेयं
दृष्टं मया प्राक् पुरवक्रनेरे ॥
तद्दर्शनं तत्र च पत्रमात्रं
लब्धं महाभाग्यवशेन नूनम् ॥ २ ॥

भावार्थः—उन नररत्न-उन मुनिरत्न का नाम अब किसी से गुप्त नहीं है तौ भी कहना होगा कि उनका नाम खिरेलालजी या श्रीलालजित् था। इस लेखकको सिर्फ उनके नामसे ही परिचय नहीं है, परन्तु संवत् १९६९ के प्रथम आषाढ मासमें वांकानेर शहर में साक्षात् दर्शनसे भी परिचय हुआ था जोकि उनका दर्शन सिर्फ १ पक्ष भर ही वहां पर मिला था उतने समय की दर्शनकी प्राप्ति भी महाभाग्य के उदयका फल है ॥ २ ॥

तृप्तिर्न या वर्षशतेन जन्या
तत्रास्ति पक्षः किमलं प्रमाणम् ।
तथाप्यभून्मेऽत्रभविष्यदाशा
हताधुना हा विगता वृथा सा ॥ ३ ॥

भावार्थः—जिनके दर्शन सौ वर्ष तक होते रहें तो भी तृप्ति न हो, तो विचारा एक पक्ष किस गिनतीमें है ? एक पक्ष साथ रहने से दोनों के मनमें सम्पूर्ण चातुर्मास साथ रहने की प्रबल उत्कंठा हुई थी, परन्तु एकका मोरवी और दूसरेका भोराजी चातुर्मास नियत होजाने से अनाशा हुई, तो भी चातुर्मास में हेर फेर करने का प्रयत्न जारी रहा परन्तु संयोग न होने से परिणाम निराशा में परिणित हुआ । चातुर्मास पश्चात् संगम होने की आशा की थी परंतु चातुर्मास के पूर्ण होते ही अकस्मात् मार-

थाइ की ओर के विहार से वह आशा विलुप्त प्रायः हुई परन्तु हा ! खेद तो यह है कि अंतिम दुःखदाई समाचार उस आशा को बडा भारी धक्का लगा । अरे ! अब तो वह संभा बिल्कुलही निष्फल होगई ॥ ३ ॥

विलुप्तं रत्नम् ॥

वंशस्थवृत्तम् ॥

हा हा ! ! हृतं केन समाजभूषणम्
किंचिन्न यत्रास्ति विकारदूषणम् ॥
अलंकृता येन विराजते मही
रत्नं विलुप्तं तदिहोत्तमोत्तमम् ॥ ४ ॥

भावार्थ —: अरेरे ! जिनकी प्रकृति में कोई विकार न जिनके चारित्र में कुछ भी दूषण नहीं, ऐसा हमारा एक जंगम कि जो जैन समाज का देदीप्यमान भूषण था उसे किसने चु लिया ? अरे ! जिनसे सम्पूर्ण विश्व अलंकृत था ऐसा हमा उत्तमोत्तम रत्न इस पृथ्वी पर से कहां गुम होगया ? ॥ ४ ॥

उपजातिवृत्तम्

आन्तार्यभूमावबलोकयामः
स्थले स्थले रत्नमिदं महार्घम् ॥

न दृश्यते क्वापि तदस्मदीयं
न चापि तत्तुल्यमथापरं हा ! ॥ ५ ॥

भावार्थः—आर्यावर्त के देश देश ग्राम २ और स्थान २ घूम २ कर इस अमूल्य रत्न की प्राप्ति के लिये देखते फिरते हैं, छानबीन कर ढूंढते हैं परंतु वह अमूल्य जवाहिर कहीं भी नहीं दिखता। खेद है कि उसकी समानता वाला रत्न भी कहीं दृष्टिगत नहीं होता ॥ ५ ॥

कस्मात्तत्तुल्यमपरं न ?।

अलौकिकं सुन्दरमद्वितीय
मन्यूनकं कान्ततरं विशुद्धम् ॥
अमन्दमानन्दपदं निपद्धं
पुण्यौघलभ्यं हि तदस्मदीयम् ॥ ६ ॥

भावार्थः—वह हमारा जवाहिर लौकिक नहीं परंतु लोकोत्तर था। रमणीय से रमणीय और बिना जोड़ी का अर्थात् जिसकी समानता कोई न कर सके ऐसा एकही था-जिसमें कुछ भी न्यूनता न थी। अतिशय मनोहर और दूषण रहित विशुद्ध, था, जिसकी ज्योति कभी मंद न होती थी सबको आनंददाई था, विपत्तिविध्वंसक यह रत्न सचमुच समाजके पुण्योदय से ही यहां प्राप्त हुआ था ॥ ६ ॥

स्थातुं न योग्यः किमु मर्त्यलोकः
स्वर्गेऽथवावश्यकतास्य जाता ॥
क्लेशः स्वपक्षेऽरुचिकारणं किं
कस्माद्गतं स्वर्वसुधां विहाय ! ॥ ७ ॥

भावार्थः—क्या उस जवाहिर के रहने के लिये यह ...
मनुष्य लोक उचित न था ? या स्वर्गलोक में उसकी विशेष ...
...कता होने से कोई उसे वहां ले गया ? या वर्तमान ...
सांप्रदायिक क्लेश के कारण यहां रहने से उसे अरुचि हुई ? ...
लिये वह इस पृथ्वी पर कहीं न रहते स्वर्गलोक में ...
गया ? ॥७॥

हृतं न केनापि वृथाऽत्र शोधः
प्राप्तुं न शक्यं पृथिवीतलेऽस्मिन् ॥
गतं स्वयं तत्खलु दिव्यलोकं
प्रयोजनं किं तदहं न जाने ॥८॥

भावार्थः—हे मानवो ! तुम्हारा वह अमूल्य रत्न इस पृ...
पर किसीने नहीं चुराया, इसलिये उसे ढूंढना वृथा-निष्फल ...
इस पृथ्वी की समभूमि पर चाहे जितनी तलाश करो तोभी
कहीं न मिलेगा, वह स्वतः दिव्यलोक-स्वर्ग की ओर प्रयाण ...
गया है । "किस लिये" यह प्रश्न करोगे तो मैं इस का प्रत्युत्तर ...
में असमर्थ हूं कारण मैं इस विषय से विशेष विज्ञ नहीं हूं ।

प्राचीन इतिहास और गुर्वावली ।

ज्ञानियों का कथन है कि मनुष्यत्व ही ईश्वरता प्राप्तिका मूल धन है । क्योंकि वह ज्ञानी एवम् विचारवान है इसलिये सारासार, त्यासत्य, धर्माधर्म और आत्मअनात्म तत्वों का निर्णय कर सक्ता उन्नति के आकाशमें मनुष्य कितनी ऊंचाई तक प्रयाण कर सक्ता ! यह कोई नहीं बता सक्ता, स्वर्ग और मोक्ष के द्वार खोलने । सामर्थ्य मनुष्य ही रखता है, प्रभु के गुण वह अपनी आत्मामें काश कर प्रभुता प्राप्त कर सक्ता है । समस्त बंधनोंसे मुक्त होना वम् सच्ची और सर्वकाल व्यापिनी स्वतंत्रता प्राप्त करना, सर्व-:खों से मुक्त हो शाश्वत शांति प्राप्त करना यही उन्नतिका शिरो-बिन्दु है इसीको परमपद—परमात्मपद या मोक्ष कहते हैं, इस पद ो प्राप्त करने की सामर्थ्य मनुष्य के सिवाय अन्य प्राणी में नहीं ोती ।

परन्तु जबतक मनुष्य जन्मका उद्देश्य न समझ सके, स्व स्वरूप ा भान न होसके, जगत् जिस रूपमें है उसी रूपमें उसे न पहि-ान सके और मोक्षका यथार्थ मार्ग न ज्ञात कर सके तबतक म-ुष्य जन्म सार्थक नहीं । इसलिए प्रत्येक मनुष्यका कर्तव्य है कि ऐसा मार्ग ग्रहण कर उस मार्ग पर आगे बढ़े जिससे जन्म, जरा,

मृत्यु और रोग शोकादि दुःखोंकी निवृत्ति हो। परन्तु जिस ता किसी बन में भटकते हुए मनुष्य को राह दिखाकर बाहर निक लने वाले पथदर्शक की आवश्यकता है इसी तरह इस सांसारि विकट बन से पार हो मोक्ष नगर पहुंचाने के लिये भी कि सन्मार्गदर्शक पथिक की आवश्यकता है। इसलिये जो महा पुरुष इसके ज्ञाता हैं उनका अवलंबन करना उनकी आज्ञा मान और उनका अनुकरण करना सर्वोच्च उपाय है।

ऐसे महात्मा प्रत्येक युग में उत्पन्न होते हैं, अनादि क से ऐसी विश्व व्यवस्था है कि जब २ इन आत्माओंकी आवश्यक होती है तब २ उनका प्रादुर्भाव होता है, ये सांसारिक वासनाएं त्याग संसार को अपने जन्म समय की स्थिति अधिक उन्नत स्थिति में लाने का निष्काम वृत्ति से प्रयत्न कर हैं इनका समस्त ऐश्वर्य परोपकारार्थ लगता है। संसार कल्याणार्थ अपनी आत्मा समर्पण करते भी वे सदा तत्पर रह हैं और कर्तव्य पालन करते हुए अपने प्राणों की परवाह भी न करते, उनके आचार विचार, नीति रीति, जीवन के छोटे समस्त काम ध्रुव की तरह संसार सागर में अपनी जीवननौ चलाने के लिये दिशा दिखाने को अटल बने रहते हैं।

उपरोक्त महात्माओं में भी जो रागद्वेष से सर्वथा मुक्त

आत्मा के मूल गुणों में बाधक मोह ममत्व के परदे चीर डालते हैं, ज्ञानावरणीयादि चार घन घाती कर्म को समूल नष्ट कर आत्मा अन्तर्गत स्थित अनंत ज्ञान, अनंत दर्शन, अनंत चारित्र और अनंत वीर्य (शक्ति) उपार्जन करते हैं। परमात्मा के नाम से सम्बोधित होते हैं। वे राग द्वेष को जीतने वाले होने से जिन और साधु साध्वी श्रावक श्राविका चार तीर्थ के स्थापक होने से तीर्थंकर कहे जाते हैं।

अनंत करुणा के सागर सर्वज्ञ और सर्वदर्शी जिनदेव जगत उद्धार के निमित्त जो मार्ग दर्शाते हैं। द्रव्य, क्षेत्र, काल और भावके अनुसर जो २ नियम योजित करते हैं और जो २ आज्ञाएं फरमाते हैं उन्हें धर्म अथवा शासन ऐसी संज्ञा देते हैं। जिनेश्वर देव पंच महा विदेह क्षेत्र में सर्वदा विद्यमान हैं, परंतु भरत और इरवत क्षेत्र में नहीं। यहां जो कालचक्र घूमा करता है जैसे समुद्र का पानी छः घंटों तक ऊंचा चढ़ता और छः घंटों तक नीचे उतरता है सूर्य छः माह उत्तर में और छः माह दक्षिण में प्रयाण किया करता है, इसी अनुसार नियमित रूप से फिरते कालचक्र में भी धर्म, अधर्म और सुख, दुःख फिरा करते हैं, न्यूनाधिक हुआ करते हैं। बीस कोड़ाकोड़ी सागरोपम का एक कालचक्र के उत्सर्पिणी और अवसर्पिणी ये दो विभाग प्रत्येक के छः आरे कल्पित किये हैं, इन छः आराओं में से

तीसरे और चौथे आराओं में तीर्थंकरों का अस्तित्व रहता है। चढ़ती उत्सर्पिणी काल में २४ और उतरती अवसर्पिणी काल में २४ तीर्थंकर होते हैं। प्रत्येक काल चक्र में दो चौवीसी होती हैं। अनंत कालचक्र फिर गए और अनंत तीर्थंकर हो गए हैं।

अपने इस भरत क्षेत्र में वर्तमान अवसर्पिणी के चौथे आरे में ऋषभदेव से महावीर स्वामी तक २४ तीर्थंकर हुए। इनमें चरम तीर्थंकर श्री महावीर प्रभुका वर्तमान में शासन प्रचलित है।

श्री महावीर स्वामी का जन्म आज से २५२० वर्ष पूर्व (ई० सन् ५६६ वर्ष पूर्व) पूर्वस्थित बिहार के कुंडपुर नगर के क्षत्रिय कुल भूषण, ज्ञातवंशी, काश्यप गोत्री सिद्धार्थ राजा के घर हुआ था। उनकी माता का नाम † त्रिशला देवी था। प्रभु गर्भ में थे तबही से राजा सिद्धार्थ के राज्य बिस्तार में तथा धन धान्य

---

* सब तीर्थंकर क्षत्रिय कुल में ही जन्म लेते हैं और राज्य वैभव त्याग जगदुद्धार करने के लिये संयम लेते हैं। † त्रिशलादेवी सिंध देश के महाराजा चेटक (चेड़ा) की ज्येष्ठ पुत्री थी। उनका दूसरा नाम प्रियकारिणी था। उनकी बहिन चेलणा मगध देश के अधिपति राजगृही नगरी के महाराजा श्रेणिक जो भारतीय इतिहास में बिम्बसार के नाम से प्रसिद्ध है उनकी पटरानी थी।

क भंडार में अति अभिवृद्धि हुई इससे पुत्र का नाम, जन्म होने र वर्द्धमान दिया गया था। पश्चात् अपने अद्भुत पराक्रम के कारण महावीर के नाम से विश्व में विख्यात हुए। अनंत पुण्योदय से तीर्थंकर पद प्राप्त होता है पुण्य अर्थात् शुभ कर्म के पुद्गलों में शुभ ऽयों को आकर्षित करने का अतुल सामर्थ्य है जिससे तीर्थंकरों की शरीर सम्पदा, वाणीविभव, और मनोबल आदि असाधारण ोते हैं।

यौवनावस्था प्राप्त होने पर यशोमती नाम की एक सद्गुणवती और स्वरूपवाली राजकन्या के साथ महावीर का विवाह किया गया, जिससे प्रियदर्शना नामक एक पुत्री हुई। संसार में रहते भी श्री महावीर का चित्त संसार से जलकमलवत् विरक्त था, तत्त्व चिन्तन में जिनके समय का सद्व्यय होता था। दुःखी दुनिया के दुःख दूर करने, दुनिया में शांति प्रसारित करने, यज्ञयागादि में धर्म निमित्त होते असंख्य पशुओं के वध को रोक सर्वत्र अहिंसा धर्म की विजयपताका फहराने, विषय कषायादि की ज्वाला से जलते जीवों को बचाने और प्राणीमात्र को हितकर हो ऐसा कर्तव्य मार्ग जगत् को दिखाने के लिये गृहवास त्याग संयम लेने की बाल्यकाल से ही उनकी प्रबल अभिलाषा थी। तीस वर्ष की भर युवावस्था में उन्होंने राज्य-वैभव, विषय सुख और कुटुम्ब परिवार का परित्याग कर दीक्षा ली। घोर तपश्चर्या कर, कर्म जला, केवलज्ञान

प्राप्त करने को उद्यत हुए। राजमहल में रहने वाले सुकुमार राज
सिंह, व्याघ्रादि, हिंसक पशुओं के निवास स्थान भयानक अर
में अनेक उपसर्ग सहन करते विचरने लगे। अन्य परिग्रहों
परित्याग करने के साथ २ ही देह ममत्व रूप परिग्रह का भी उन्ह
सर्वथा परित्याग किया था इसलिये शिशिर ऋतु की कलकल
थंड में उत्तर हिन्द में जहां हिम पड़ता और शीत वायु बहती
वहां वे वस्त्र रहित समस्त रात्रि ध्यानावस्था में बिताते थे।
जब कायोत्सर्ग ध्यान में स्थित रहते थे तब कई समय ग्वाल अ
निर्दयता से उन्हें पीटते थे। एक समय एक निर्दय ग्वालने प्रभु
कान में खीले ठोक दिये, दूसरे ग्वाल ने उनके दोनों पैर को म
की पोलाई में अग्नि जला उस पर खीर पकाई, तो भी प्रभु ध्यान
विचलित नहीं हुए। इसके सिवाय चंडकौशिक नाग, शूलपाणिय
संगम देवता प्रभृति की ओर से प्राप्त परिसह तथा अनार्य
के विहार समय अनार्य लोगों के किये उपसर्गों का वर्णन सुन
रोमांच हो आता है।

परंतु क्षमा के सागर श्री महावीर स्वामी ऐसे विषम स
को भी कर्मक्षय का कारण समझ आनंदपूर्वक सहन कर लेते
उपसर्ग करने वालों का भी श्रेय चाहते अथवा श्रेय मार्ग की
उन्हें लगा देते थे। गोशालाने उनपर तेजोलेश्या छोड़ी तोभी

। उसे उपदेश दे स्वर्ग पहुंचाया । चंडकौशिक सर्प ने उन्हें काटा
रंतु उसे जातिस्मरण ज्ञान करा स्वर्ग का अधिकारी बनाया ।

प्रभु की घोर तपश्चर्या का वर्णन भी आश्चर्यकारी है कई समय
ो वे चार २ छः छः माह तक निराहारी रह कायोत्सर्ग ध्यान धरते
। शरीर पर से मूर्च्छाभाव त्याग, इच्छा का निरोध कर इन्द्रियों
की विषयासक्ति हटा आत्मभाव में अटल रहते । बारह वर्ष और
।। माह व्यतीत हुए, छद्मावस्था के ४५१५ दिनों में उन्होंने सिर्फ
१५० दिन आहार किया था ।

इस तरह तप्त प्रचंड दावानल द्वारा कर्म काष्ट का दहन कर
था शुक्ल ध्यान ध्याते चार घाती कर्मों का सर्वथा क्षय हुआ और
नादि कालसे गुप्त रहीहुई केवल ज्योति उदय हुई जिससे प्रभु सर्वज्ञ
ौर सर्वदर्शी हुए—लोकालोक को हस्तामलकवत् देखने लगे, आज
क प्रभु प्रायः मौन थे, परन्तु अब सम्पूर्ण ज्ञानी होजाने से करुणा-
सिन्धु भगवानने जगत् के उद्धारार्थ मोक्ष मार्ग की प्ररूपना की । पैंतीस
ुणयुक्त प्रभुकी अनुपम वाणी प्राणी मात्र को हितकारी, अनंतानंत
ाव भेदों से पूर्ण, तथा भाव समुद्र से तिराने के लिये नौका समान
ी । इस वाणी द्वारा प्रभुने मोक्ष प्राप्ति के चार साधन बताये—
ान, दर्शन, चरित्र और तप ।

ज्ञानः— ज्ञानद्वारा जीवाजीवादि वस्तुओं का यथ

समझा जाता है, स्व और पर द्रव्यकी पहिचान होती है। परवस्तु अर्थात् पुद्गल से ममत्व दूर हो, आत्मभावमें स्थिरता होती है। आत्माके अनंत ज्ञान और अनंत सामर्थ्य का भान होता है अनादि कालसे अविनाशी आत्मा विनाशक पौद्गलिक दशा में अहं ममत्व धारण कर राग द्वेष के बंधनसे बंधा हुआ है और उससे ही चतु- र्गति संसार के अनंत दुःख सहन करने पडते हैं। उसकी सत्य प्रमाणित होती है, देहादिक परवस्तु में ममत्व न रहने से दुःख नहीं सक्ता, शाश्वत सुख का अखूट भंडार तो अपनी आत्मा ही ऐसा उसे साक्षात्कार होता है सब आत्मा समान हैं ऐसा भान ही सर्वात्म पर समदृष्टि होती है सब जीवों को अपने समान सम- लगता है जिससे वैर विरोध और लोभ क्रोधादि दुर्गुण एवम् तज्जन्य दुःखों का सदंतर अभाव हो जाता है। जगत् के छोटे बड़े समस्त प्राणी के सुख की ही सतत् स्पृहा रहती है, सुख सबको सर्वदा प्रिय होता है, ऐसा समझकर वह सबको सुखी करने के लिये प्रेरित होता है इससे ज्ञानी पुरुष मैत्री, प्रमोद, कारुण्य और माध्यस्थ भावना भी मोक्ष की कुञ्जी प्राप्त कर लेते हैं; मैं अजर अमर अविनाशी देह के नाश से मेरा नाश नहीं, ऐसा समझ कर वह भय का न- निशान मिटा देता है और मृत्यु से नहीं डरता है। जो मृत्यु नहीं डरता वह क्या नहीं कर सक्ता? अर्थात् सब सिद्धियां प्राप्त सक्ता है इसलिये ज्ञानको मोक्षकी प्रथम पंक्ति का स्थान दे प्रभु फरमा-

कि "जे आया से विन्नाया जे विन्नाया से आया, जेण विजाणइ से आया" अर्थात जो आत्मा है वही ज्ञान है और जो ज्ञान है वही आत्मा है और जिससे बोध हो सक्ता है वही आत्मा है। श्री आचारांग-सूत्र में प्रभु ने ज्ञान का अपार महत्त्व दिखाया है, ज्ञान से ही वीतरागता प्राप्त होती है और वितराग दशाही सब सुखोंका आश्रय स्थान है।

दर्शन—ज्ञान द्वारा जो सूझा है उस पर श्रद्धा करना दर्शन कहलाता है। कई मनुष्य शास्त्र श्रवण या सद्गुरु के उपदेश से धर्मका स्वरूप समझते हैं परन्तु जबतक उसपर अटल विश्वास न हो तबतक उसी अनुसार व्यवहार होना अशक्य है, इसलिये सम्यग्दर्शन अथवा सच्ची श्रद्धा की पूर्ण आवश्यकता है।

चारित्र—मोक्ष मार्ग की तीसरी सीढ़ी चारित्र्य है, ज्ञान से मार्ग सूझा और श्रद्धा से उसे सत्य माना भी परन्तु जबतक उस मार्ग पर न चला जाय तबतक नियत स्थान पर पहुंचना असंभव है इसलिये ज्ञानानुसार व्यवहार होना उचित है। ज्ञानका फल ही चारित्र है "ज्ञानस्य फलम् विरतिः" चारित्र बिना ज्ञान निष्फल है।

प्राणातिपात अर्थात् हिंसा, असत्य आदि अठारह पा

करना, पंचमहाव्रत, तीन गुप्ति और पांचस्मृति धारण करना
चारित्र है।

तपः—मोक्षकी चतुर्थ सीढ़ी तप है। उसके छः अभ्यन्
और छः बाह्य, यं बारह भेद हैं। चारित्र से नये कर्मकी आमद रु
ती है और तपसे पूर्वकृत कर्म क्षय कर सक्ते हैं। सिर्फ भूखे रह
ही प्रभुने तप नहीं फरमाया, पापका प्रायश्चित्त करना, बड़ों
विनय करना, वैयावृत्य अर्थात् सबकी सेवा करना, स्वाध्य
करना, ध्यान धरना, और कायोत्सर्ग करना येभी तप के भेद है
इस तप को उत्तम अभ्यन्तर तप कहते हैं। उपवास करना, उण
दरी अर्थात् कम खाना, वृत्ति संक्षेप अर्थात् इच्छाओंका निरो
करना, रस परित्याग करना, देहका दमन करना, इन्द्रियों को व
करना ये छः प्रकारका बाह्य तप है।

आत्मा और कर्म के पृथक् करने के उपरोक्त चार प्रयो
प्रभुने फरमाये हैं। अनन्त ज्ञानी श्री वीर प्रभु की वाणी का स
लिखना दोनों भुजाओं द्वारा महासागर तिरने के समान उपहा
मात्र साहस है तोभी प्रवचन सागर में से बिंदुरूप दर्शाने
सिर्फ यही आशय है कि जैनधर्मकी भावना कितनी सर्वोत्कृष्ट है
ऐसी उदार और पवित्र भावनाओंका विश्वमें प्रचार करनेके समा
परमावश्यक और पारमार्थिक कार्य दूसरा क्या है?

श्री महावीर स्वामी को कैवल्य ज्ञान उपार्जन होनेके पश्चात
तम स्वामी आदि ग्यारह विद्वान् ब्राह्मण धर्मगुरू अपनी
ों का समाधान करने के लिये प्रभु के पास आये. उनकी
निवृत्त हुई और तत्त्वाववोध होने से वे प्रभु के शिष्य बन
प्रभुने उनको चारित्र मुकुट पहिनाया, त्रिपदी विद्या सिखाई
गणधर पद अर्पण किया, ये ग्यारह ब्राह्मण धर्माचार्योंके साथ
४४०० शिष्योंने श्रीप्रभु के पास दीक्षा ली, श्री महावीर
ने साधु, साध्वी, श्रावक, श्राविका इन चार तीर्थों की स्थापना
देशदेश में विचर कर, धर्मोपदेश द्वारा कई जीवों को प्रतिबोध
, अनेक राजा महाराजाओं को प्रभुने शिष्य बनाया। मगध
ा राजा श्रेणिक तथा उसका पुत्र कौणिक ये महावीर प्रभुके
भक्त हुए, इनके सिवाय चेटक, चन्द्रप्रद्योत, उदायन, नंदीवर्धन
णभद्र ※ जितशत्रु, श्वेतराजा, विजय राजा, तथा पावापुरी का
पाल नामक राजा प्रभृति अनेक राजा महाराजाओं ने श्री वीर
की वाणी सुनकर जैनधर्म अंगीकृत किया था। प्रभु तीस वर्ष
केवलपन से पृथ्वी को पावन करते विचरते अनेक जीवों को
ते रहे और चरम चौमास पावापुरी नगरी में किया। वहां
तीपाल राजा की प्राचीन राजसभा में दो दिन का अनश

नोट—जितशत्रु ये कलिंगदेश के यादव वंशी मह
नके साथ महाराजा सिद्धार्थ की बहिन का ब्याह किया

धारण कर प्रभु उत्तराध्ययन सूत्र फरमाते थे १८ देश के राज
भी छठ पौषध कर प्रभु की वाणी श्रवण करते थे, इस स्थिति
कार्तिक माह की अमावस्या की रात्रि को पिछले प्रहर चार
का क्षय कर ७२ वर्ष का पूर्ण आयुष्य भोग प्रभु निर्वाण-
पधारे-शाश्वत सिद्ध पद को प्राप्त हुए।

श्री वीर प्रभुके पवित्र शासन को विजयवंत चलाने वाले
शासन रूपी आकाश में उदय हो, सूर्यवत् प्रकाश करने
अथवा वीर प्रभु के लगाये हुए कल्पवृक्ष को जल सींचन
नवपल्लवित रखने वाले जो २ महात्मा उनके शासन में हुए उन
कुछ इतिहास अब देखते हैं।

श्री महावीर स्वामी के निर्वाण समय श्रीगौतम स्वामी
श्री सुधर्मा स्वामी ये दो गणधर विद्यमान थे। शेष नौ गण
प्रभु के प्रथम ही मोक्ष पधार गए थे, जिस रात्रि को महावीर
मोक्ष पधारे उसी रात को भगवान् पर से मोह दूर होने पर गौ
स्वामी केवलज्ञानी हुए। केवली को आचार्य पद नहीं मिलता
लिये श्री सुधर्मा स्वामी श्री महावीर स्वामी के आसन पर विरा
श्री गौतम स्वामी १२ वर्ष तक कैवल्य प्रव्रज्या पाल ६२ वर्ष
अवस्था में मोक्ष पधारे।

१ सुधर्मास्वामी:—एक समय राजगृही नगरी में पधारे।

ऋषभदत्त नामक एक धनाढ्य श्रावक तथा उनका पुत्र जम्बूकुवार जिनका आठ स्वरूपवती कन्याओं के साथ सम्बन्ध हुआ था, उपदेश श्रवण करने आये। अपूर्व उपदेश कर्णगोचर होते ही जम्बू स्वामी की आत्मा मोह निद्रा से जागृत होगई। उन्हें वैराग्य स्फुरित हुआ। संसार की अनित्यता का भान होते ही शाश्वत शांति की प्राप्ति के लिये उनका मन ललचाया। घर आ माता पिता से दीक्षार्थ आज्ञा चाही, अतिआग्रह के कारण माता पिता ने जम्बू स्वामी से आठों कन्याओं के साथ विवाह करने पश्चात् दीक्षा लेने का अनुरोध किया, जम्बूस्वामीने मंजूर किया, लग्न हुए, आठों तत्काल व्याही हुई स्त्रियों से जम्बू स्वामीने प्रथम रात को ही दीक्षा लेने का अभिप्राय दर्शाया. पति पत्नियों में वैराग्य और शृंगार विषय का बहुत समय संवाद शुरु हुआ, इतने में प्रभवा नामक एक राजपुत्र जो अपनी राजगादी न मिलने से लूट खसौट का धंधा करता था ५०० चोर सहित जम्बू स्वामी के घर में घुसा। चोरी का पाप कृत्य करते वैराग्य रस पूरित वचनामृत उसके कर्णपट पर पड़े, पड़ते ही उसे अपने अपकृत्यों का पश्चात्ताप होने लगा और वैराग्य उत्पन्न हुआ. आठ स्त्रियां भी संवाद में पतिसे पराजित हो वैराग्य रस में लीन होगई। उन्होंने तथा प्रभवादिक ५०० चोरों ने संसार परित्याग कर सुधर्मा स्वामी के पास दीक्षा ली। उस समय जम्बू की उम्र सिर्फ १६ वर्ष की थी।

जम्बूस्वामी को तत्त्वावबोध होने के लिये श्री म स्वामी की अर्थ रूप प्रकाशी हुई। अनंत भाव भेद मय वाणीमें से स्वामी ने द्वादश अंग और उपांग की योजना की। वर्तमान में आचारांगादि जो जिनागम हैं वे गणधर श्री सुधर्मा के ग्रथित किये हुए हैं प्रभु के निर्वाण के पश्चात् १२ वें वर्ष स्वामी को केवल ज्ञान उपार्जित हुआ और २० वें वर्ष १० की आयु भोगने पर मोक्ष पद प्राप्त हुआ।

२ जम्बू स्वामीः—श्री सुधर्मा के पश्चात् श्री जम्बूस्वामी पा पर विराजे। श्री वीर स्वामी के २० वर्ष पश्चात् उन्हें कैवल्य ज्ञा प्राप्त हुआ और ६४ वें वर्ष ८० वर्ष की आयु भोग मोक्ष पधा श्री जम्बूस्वामी के पश्चात् भरत क्षेत्र से दस वस्तुएं विच्छेद होंग १ कैवल्य ज्ञान २ मनःपर्यव ज्ञान ३ परमावधि ज्ञान ४ पुलाक लब्धि ५ आहारिक शरीर ६ क्षपक श्रेणी ७ उपशम श्रेणी ८ परिहारवि सूक्ष्म संपराय और यथाख्यात ये तीन चारित्र ९ जिनकल्पी साधु औ १० क्षायिक सम्यक्त्व।

३ प्रभवा स्वामी—श्री जम्बूस्वामी के पश्चात् श्री प्रभ स्वामी पाट पर विराजे, उन्होंने ज्ञानोपयोग द्वारा राजगृहीके वा शय्यंभवभट्ट को आचार्य पद योग्य समझ उपदेश दिया और उन दीक्षा ली, ८५ वर्ष की आयुष्य भोग कर वीर निर्वाण से वर्ष बाद श्री प्रभवास्वामी मोक्ष पधारे।

४—श्री शय्यंभव स्वामी—उनके पश्चात श्री शय्यंभव
[स्वा]मी आचार्य हुए उन्होंने दीक्षा ली उस समय उनकी स्त्री गर्भवती
[थी] उससे। मनक नामक एक पुत्र उत्पन्न हुआ। मनक ने नवें वर्ष
[प]िता के पास दीक्षा ली. परंतु पिताने उसकी आयु अल्प समझ
[क]र अल्प समय में श्रुतज्ञानी बनाने के आशय से पूर्व में से दशवै-
[का]लिक सूत्र का उद्धार कर मनक मुनि को अध्ययन कराया।
[अ]णगार धर्म आराधकर दीक्षा लिये पश्चात् छः महीने से ही मनक
[मुनि] ने स्वर्ग पधार गए और शय्यंभव स्वामी श्री वीर निर्वाण संवत्
[९]८ में स्वर्ग पधारे।

५ श्री यशोभद्र स्वामी—श्री शय्यंभव स्वामी के पाट पर
[यश]ोभद्र स्वामी विराजे—वे वीर प्रभु पश्चात् १४८ वें वर्ष में स्वर्ग
[पध]ारे।

६ श्री संभूति विजय स्वामी—यशोभद्र स्वामी के पश्चात् श्री
[सं]भूति विजय स्वामी आचार्य हुए। वे वीर संवत् १५६ वें वर्ष स्वर्ग
[पध]ारे।

७ श्री भद्रबाहु स्वामीः—दक्षिण देशके प्रतिष्ठानपुर नगर में
[भद्र]बाहु तथा वराहमिहिर नामक ब्राह्मण रहते थे, उन्होंने
[यशोभ]द्र स्वामी का उपदेश श्रवण कर वैराग्य पा दीक्षा ली।
[भद्रबाहु स्व]ामी चौदह पूर्व धारी हुए और संभूति विजय स्वामी [के]

आचार्य हुए। वराहमिहिर को इनसे ईर्षा हुई और जैन दीक्षा त
ज्योतिष विद्या के बल से लोगों में प्रसिद्ध हुए। उन्होंने वराह सं
नामक एक ज्योतिष शास्त्र बनाया है ऐसी कथा प्रचलित है कि
तापस बन अज्ञान तप से तप्त हो मरकर व्यंतर देव हुए और
को उपद्रव ग्रसित रखने के लिये महामारी रोग फैलाया, उस उप
की शांति के लिये भद्रबाहु स्वामीने 'उवसग्गहर' स्तोत्र
और उसके प्रभाव से उपद्रव शांत होगया। इतिहास प्रसिद्ध
वंशीय * चंद्रगुप्त राजा भद्रबाहु स्वामी का परम भक्त हुआ।

---

* श्रेणिक राजा का पौत्र उदाई अपुत्र मरने के पश्चात् प
पुत्र की गादी एक नाई (हजाम) के नंद नामक पुत्र को
हुई, इस राजा का कल्पक नामक मंत्री था। अनुक्रम से नंद वंश
नौ राजा हुए और उसके प्रधान भी कल्पक वंशी हु
चाणक्य नामक ब्राह्मणकी सहायता से चंद्रगु
पराजित किया जिससे वह पाटलीपुत्र का राजा हुआ। नंद
वंशजों ने १५५ वर्ष तक राज्य किया था, चंद्रगुप्त राजा जैनी
इसलिये धर्म द्वेष के कारण मुद्रा राक्षस आदि पुस्तकों में
शुद्र जातिका कहा है परन्तु क्षत्रिय उपकारिणी महासभाने अने
अकाट्य प्रमाणों द्वारा यह सिद्ध किया है कि चंद्रगुप्त शु
मौर्यवंशी क्षत्रिय था।

ग्रीस का राजा महान् सिकंदर (Alexander the great.) गुप्त के समय भारत पर चढ़ आया था. (ई० सन् पूर्व १ से ३२३ ग्रीक लेखक के कथनानुसार चन्द्रगुप्त के पास हजार घुड़ सवार, २ लाख सैनिक, २ हजार रथ तथा ४ हजार थे. सिकंदर के सेनापति सिल्युकस को चन्द्रगुप्त राजा ने युद्ध राजित कर भगा दिया था।

वीर-निर्वाण के पश्चात् १७० वें वर्ष श्री भद्रबाहु स्वामी स्वर्ग रे उनके पश्चात् चौदह पूर्वधारी साधु भरतक्षेत्र में नहीं हुए.

८ स्थूलिभद्र स्वामी—नवें नंद राजा का कल्पक वंशीय शकडाल क मंत्री था. उसके स्थूलिभद्र और श्रीयक नामक दो पुत्र थे, पाटली में कोशा नामक एक अतिरूप वाली वेश्या रहती थी। प्रधान स्थूलिभद्र उसके प्रेमपाश में फंस गया और हमेशा वहीं रहने ा. शकडाल के पश्चात् श्रीयक को प्रधान पद देने लगे परन्तु श्रीयक कहा कि मेरे ज्येष्ठ भ्राता स्थूलिभद्रजी १२ वर्ष से कोशा वेश्या के र में रहते हैं उन्हें बुलाकर मंत्री पद दीजिये, राजा ने स्थूलीभद्र को लाकर मन्त्रीपद लेने को निमन्त्रित किया, [illegible] स्थूलिभद्र [illegible] भा में नीची दृष्टि से देखता रहा और विचारकर उत्तर देने की . गहन विचार करते राज्य-[illegible] में रहना उन्हें [illegible] सार भी उन्हें अनित्य मालूम हुआ। वे वैराग्य

साधुवेष पहिन राजसभा में आये और कहा कि राजन् ! मैंने
ऐसा विचार किया है, फिर उन्होंने संभूतिविजय स्वामी के पास से दी
ली. चातुर्मास समीप समझ उन्होंने कोशा वेश्या के यहां चातुर्
निर्गमन करने की गुरु से आज्ञा मांगी. गुरुने श्रेयस्कर समझ आ
देदी. उसी समय तीन दूसरे मुनि भी सिंह की गुफा में, सर्प के
में और कुएं के रहँट समीप चातुर्मास करने की आ
ले निकले ।

स्थूलिभद्र स्वामी कोशा के घर गए, उन्हें आते देख कर वे
ने सोचा ऐसे सुकोमल देहवाले से इतने कठिन महाव्रतों का पा
किस रीती से होगा ? मेरा प्रेम अभी उनके दिल से नहीं हट
स्थूलिभद्र को समीप आते ही वेश्याने विशेष आदर सन्मान दे क
स्वामिन् ! इस दासी पर महत् कृपा की जो आज्ञा हो वह सुख
फमाईये. निर्मोही निर्विकारी मुनि बोले, मुझे तुम्हारी चित्रशाला
चातुर्मास व्यतीत करना है. वेश्याने चित्रशाला सुपुर्द कर दी। प
स्वादिष्ट भोजन बहिराये फिर उत्तम शृंगार कर उनके सामने आ
हुई। पूर्वप्रेम का स्मरणकर, पूर्व भोगे हुए भोगों को याद कर
वेश्या अत्यन्त हाव भाव दिखाने लगी। परन्तु मुनिराज तो मेरुके
अटल रहे। मनमें लेश मात्र भी विकार उत्पन्न न हुआ; वरन् उस
को भी उपदेश दे श्राविका बना लिया, चातुर्मास पूर्ण हुआ. वे
के पास आये, वहांतक सिंह गुफा वासी आदि तीनों मुनिव

पहुंचे थे। सब से अधिक सन्मान गुरुजी ने स्थूलिभद्रका किया, इससे अन्य शिष्यों को ईर्षा हुई और द्वितीय चातुर्मास लगते ही उन्हों ने भी कोशा वेश्या के यहां चातुर्मास करने की आज्ञा चाही। गुरुके इन्कार करने पर भी वे कोशा वैश्याके यहां गये, एकांत में वेश्या का अद्भुत रूप देखकर ही मुनिवरोंका मन चलायमान होगया, परंतु कोशा श्राविका ने उन्हें युक्ति से उपदेश दे गुरुके पास वापिस पठाया।

श्री भद्रबाहु स्वामी नेपाल देशमें विचरते थे, उनके पास जाकर स्थूलिभद्र मुनि ने १० पूर्व का अभ्यास किया और भद्रबाहुस्वामी के पश्चात् उन्होंने ही आचार्यपद दिपाया, श्रीवीरनिर्वाण के पश्चात् २१५ वें वर्ष स्थूलिभद्रजी स्वर्ग पधारे।

९ श्री आर्यमहागिरि---श्री स्थूलिभद्रजीके आसनपर आर्य-महागिरि तथा आर्य सुहस्ति स्वामी पधारे, इनके समय बड़ा भारी दुष्काल पड़ा तो भी अन्न की स्पृहा न करने वाले जैन मुनियों को लोग भाव से आहार वहराते थे. एक समय एक क्षुधा पीडित भिक्षुक गोचरी से वापिस आते समय मुनियों के पीछे २ अन्न के लिये घबराता हुआ उपाश्रय में आया, आर्यसुहस्तिजी ने कहा कि साधु के सिवाय हमारा आहार पाने का हकदार कोई नहीं हो सक्ता.. तत्काल उसने दीक्षा ली और अधिक दिन से क्षुधापीडित होने से

इतना अधिक आहार किया कि वह मरणांतिक कष्ट पाने ल
उस समय बड़े २ साहूकारों ने उस नवदीक्षित मुनि की औषधो
चार आदि से उचित वैयावृत्य की. सिर्फ जैन-मुनिका वेष पहि
से ही अपनी स्थिति में जमीन आसमान जैसा महान् अंतर ह
देख वह बहुत आनन्दित और आश्चर्यान्वित हुआ। और सम
से वेदना सह मरकर पाटली पुत्र के राजा चंद्रगुप्त का पुत्र बिंदु
बिंदुसार का पुत्र अशोक और अशोक का पुत्र कुणाल ,कुणाल
साम्प्रति नामक पुत्र हुआ।

साम्प्रति राजा को आर्य सुहस्ति महाराज के समागम
जाति स्मरण ज्ञान होगया उन्होंने श्रावक के बारह व्रत अंगी
किये और देश देशान्तरों में उपदेशक भेज जैन धर्म की
भावनाओं का प्रचार किया, अपने राज्य में अमरपटहा (ढिंढो
बजवाया। अनार्य देशों में भी गृहस्थ उपदेशक भेजकर
अहिंसा धर्म के प्रेमी बनाये;—

एक वक्त आर्य सुहस्तिजी उज्जैन पधारे और भद्रा से
की अश्वशाला में उतरे भद्रा का अवंती सुकुमार नामक एक
तेजस्वी पुत्र था—वह अपनी स्त्रियों के साथ महल में देव
सुख भोगता था। एक समय आचार्य महाराज पांचवें देवलो
नलिनी गुल्म विमान का अधिकार पढ़ रहे थे, वह सुनकर

मार ने सोचा कि पूर्व में ऐसी रचना मैंने कहीं साक्षात् देखी विचार करने पर उन्हें जाति स्मरण ज्ञान उत्पन्न होगया, माता आज्ञा ले आचार्य के समीप दीक्षा ली. अधिक समय तक साधुता घोर कष्ट सहन करते रहना उन्हें योग्य न जंचा जिससे गुरु अर्ज की कि आपकी आज्ञा हो तो अनशन कर जहां से आया हूं ां शीघ्र जाऊं।

गुरु की आज्ञा पाते ही स्मशान में जा कायोत्सर्ग ध्यान में स्थित राह में कंकर कांटे लगने से सुकुमार मुनि के पैरों से रक्त धारा ने लगी थी उस रक्त को चूंसती चाटती हुई एक सियालनी मय ों के ध्यानस्थ मुनि समीप आई और उनके शरीर को भक्ष या आत्मभाव में स्थित मुनि तनिक भी न डिगे समाधि पूर्वक कर नलिनी गुल्म विमान में देवता हुए दृढ़ मनो बल द्वारा ष्य क्या नहीं कर सकता ? एक प्रहर में पांचवें देवलोक की द्धि प्राप्त करने वाले कुमार ! धन्य है आपके धैर्य को ! वीर-ाण के पश्चात् २४५ वें वर्ष आर्य महागिरी और २६५ वें वर्ष पै सुहस्ति स्वामी स्वर्ग पधारे।

१० बलिसिंहजी (बालीसिंहजी) आर्य महागिरि के पाट पर शिष्य बलसिंहजी पधारे, उनके शिष्य उमास्वामी और उमास्वामी ष्य श्यामाचार्य हुए. इन्ही श्यामाचार्य ने श्री पन्नापना सूत्रको पर्व द्धृत किया, उनके पश्चात् अनुक्रम से ११ सोवन स्वामी

वीरस्वामी १३ स्थंडिल स्वामी १४ जीवधर स्वामी १५ आ
समेद स्वामी १६ नंदील स्वामी १७ नागहस्ति स्वामी १८ रे
स्वामी १६ सिंहगणिजी २० थंडिलाचार्य २१ हेमवंत स्वामी २
नागाजित स्वामी २३ गोविन्द स्वामी २४ भूतदीन स्वामी २
छोहगणिजी २६ दुःसहगणिजी और २७ देवर्धिगणिजी च
श्रमण हुए।

श्री वीर निर्वाण से ६८० वें वर्ष अर्थात् विक्रम संवत् ५१०
समर्थ आठ आचार्यों ने समय सूचकता समक्ष वर्तमान प्रची
अपने साधन संग्रह करने का योग्य विचार किया। वलभीपुर (काठि
वाड़ में भावनगर के पास वला स्टेट है) में टाडकृत राजस्थान
लिखे अनुसार जैनियों की घनी बस्ती थी और राज्य शासन शिला
के हाथ में था जैन धर्म की विजय ध्वजा फहराने वाले इस प्रसि
शहर पर वि० सं० ५२५ में पार्थियन, गेट और हूण लोग
हमला किया, जिससे तीस हजार जैन कुटुम्बी वह शहर त्याग मार
में जा बसे. इस भगाभगी दुष्काल के कारण लिखा हुआ पूर्ण
नहीं हुआ जिससे सूत्रों की शृंखला छिन्नभिन्न होगई फिर,
लोगों ने भी जैनधर्म के प्रतिस्पर्धी व प्रतिपक्षी बन जैन शासन
समुच्छेद उखाड़ डालने का प्रयत्न किया, ऐसे अनेक कारणों से
भद्रबाहु स्वामी के पश्चात् विक्रम संवत् आठसौ तक अनेक
विद्वान् हुए तो भी उनकी कृति हाथ नहीं लगती।

देवर्द्धिगणि क्षमाश्रमण के पाट पर अनुक्रम से २८ वीरभद्र संकरभद्र ३० यशोभद्र ३१ वीरसेन ३२ वीरसंग्राम ३३ जिनसेन हरिसेन ३५ जयसेन ३६ जगमाल ३७ देवऋषि ३८ भीमऋषि कर्मऋषि ४० राजऋषि ४१ देवसेन ४२ संकरसेन ४३ लक्ष्मी- ४४ राम ऋषि ४५ पद्मसूरि ४६ हरिस्वामी ४७ कुशलदत्त उवनी ऋषि ४९ जयसेन ५० विजयऋषि ५१ देवसेन ५२ सूरसेन महासूरसेन ५४ महासने ५५ गजसेन ५६ जयराज ५७ मिश्रसेन विजयसिंह ५९ शिवराजजी ६० लालजी ऋषि ६१ ज्ञानजी ऋषि हुए।

महावीर प्रभु से देवर्द्धिगणि क्षमाश्रमण तक के १००० वर्ष दरम्यान वीर शासन सूर्य अपना दिव्य प्रकाश विश्व में प्रकट कर रहा था, परंतु उनके पश्चात् से ज्ञानजी ऋषि के १०० वर्ष तक यह प्रकाश शनैः शनैः कम होता गया और ज्ञानजी ऋषि के समय तो दर्शन की ज्योति बिलकुल मंद होगई थी, निरंकुश और मानके साधुओं की उत्सूत्र प्ररूपना, श्रावक वर्ग की अज्ञानता और अंध श्रद्धा, राज्यविप्लाव और अराजकता से भारत में व्याप्त हुई अंधाधुंधी आदि गाढ काले बादलों ने इस सूर्य को चारों ओर से घेर लिया था,

साधु अध्यात्मिक जीवन विताते और व्यवहारिक खटपट से सदा दूर रहते थे परन्तु ज्यों २ उनका अध्यात्म प्रेम कम

गया त्यों २ बाह्यांडम्बर की वृद्धि होने लगी, वे तुच्छ २ मत भेदों
बड़ा २ स्वरूप दे नये २ गच्छ उत्पन्न करने लगे, जिससे जैन संघ
छिन्नभिन्नता हो एकता नष्ट होने लगी। अपना पक्ष प्रबल और दूसरों
अबल करने के लिए परस्पर निन्दा और मिथ्या आक्षेप लगाने
ही उनका समय और शक्ति का अपव्यय होने लगा, इससे जैन
के अन्य सिद्धान्तों पर ही जैन साधुनामधराने वालों के हाथ
ही बार २ कुठार प्रहार होने लगा, साधुओं में शिथिलाचार बढ़
कई तो महावलम्बी और परिग्रहधारी होगए यति का नाम जो
अति पवित्र गिना जाता था, उस शब्द की महत्ता में हानि पहुंच
श्रावकों को अपने पक्ष में लेने के लिये मंत्र, जंत्र और वैदिक आदि
बढ़ने लगे तथा हिंसादि निषिद्ध कार्य करने पर तत्पर हुए मन, वचन
काया के योग से भी हिंसा नहीं करना, नहीं कराना और करने
को ठीक नहीं समझना इस अणगार धर्म की मर्यादा का प्र
उल्लंघन होने लगा अन्य मतावलंबियों की प्रवृत्ति का अनुकरण
स्थान २ पर देवालय और प्रतिमाएं स्थापन कीं, अपने २ पक्ष के याति
लिये उपाय बंधवाये. वर घोड़े चढ़ना, उत्सव करना, नाच नच
इत्यादि प्रवृत्तियों के प्रेरक और नायक होना यति अपना कर्तव्य सम
लगे, सारांश यह है कि उस समय साधु वर्ग से चारित्रधर्म लोप होने
था और श्रावक समुदाय कर्त्तव्य से पदच्युत हो उनके पीछे २ उ

पर चलता था. ज्ञानजी ऋषि के समय जैन धर्म की परिस्थिति शोक थी।

ऐसा होते भी वीर-शासन साधु विहीन नहीं हुआ । अनुयायियों की अल्प संख्या होते भी अल्प संख्या में साधु सर्व काल विद्यमान थे, जब २ घोर तिमिर बढ़ जाता तब २ कोई न कोई महापुरुष उत्पन्न होता और जैन प्रजा को सन्मार्गारूढ करता था ।

जैन-शासन की मंद हुई ज्योति को विशेष उद्योत करने वाले अनेक नव युग प्रवर्तक समर्थ महात्मा इन दो हजार वर्षों में उत्पन्न हो चुके थे.

ज्ञानजी ऋषि के समय में भी ऐसे एक धर्म सुधारक महापुरुष की अत्यंत आवश्यकता उपस्थित हुई कि जो साधुवर्ग से अनेक ऐबों को दूर कर सत्य का प्रकाश फैलावे और जैन-समाज में बढ़े हुए संदेह और मिथ्या मान्यता को नष्ट करे. इतिहास साक्षी है कि जब २ अंधाधुन्धी बढ़जाती है तब २ कोई न कोई वीर नर पृथ्वी पर प्रकट हो पुनरुद्धार करता है, इसी नियमानुसार पंद्रह सौ के संवत् में ऐसा एक महान् धर्म सुधारक गुजरात के पाय तख्त अहमदाबाद शहर में ओसवाल (क्षत्रिय) ज्ञाति में उत्पन्न हुआ, जिनका नाम लोंकाशाह था, वे सराफी का धंधा करते थे. राज्य दरबार में उनका अधिक मान था, हस्ताक्षर उनके बहुत सुंदर थे.

बुद्धि तीव्र एवम् निर्मल थी. जैन धर्म पर उनका अप्रतिम प्रेम
एक समय वे ज्ञानजी ऋषि के समीप उपाश्रय में आये
समय ज्ञानजी ऋषि धर्म शास्त्र संभालने और उन्हें योग्य व्यवस्था
रखने में लगे हुए थे. उनके एक शिष्य ने सूत्र की प्राचीन जी
प्रतियां देखकर शाहजी से कहा, " आपके सुंदर हस्ताक्षर
पुस्तकों का पुनरुद्धार करने में उपयोगी नहीं होसके ? शाहजी
अत्यंत आनंद के साथ सूत्र की जीर्ण प्रतियों की प्रति लिपि क
का कार्य स्वीकार किया (विक्रम संवत् १५०८ ई० सन् १४५
अपने लिये भी उन्होंने सूत्र की प्रतियां लिख लीं लिखते
उन्हें विस्तीर्ण सूत्र ज्ञान होगया उनकी निर्मल और कुशाग्र बु
वीरस्वामी के पवित्र आशय को समझ गई, उनको ज्ञानचक्षु खु
जाने से वीर भाषित अणगार धर्म और वर्तमान में विचरने व
साधुओं की प्रवृति में जमीन आसमान का सा अंतर दिखा, साधु
की उत्सूत्र प्ररूपना उनसे असह्य होगई जैन समाज की गति उल
दिशा में देखकर उन्हें बहुत बुरा जंचा और सत्य का याथात
प्रकाश करने की उनके मानस मंदिर में प्रबल स्फुरणा हुई। प्रति प
दल अत्यंत बढ़ा और शक्ति तथा साधन सम्पन्न था तो
निर्भयता से वे जाहिर व्याख्यान — उपदेश देने लगे और स
में व्याप्त प्राकृतिक अद्भुत आकर्षण शक्ति के प्रभाव से उन
श्रोतृ समुदाय की संख्या प्रतिदिन बढ़ने लगी. भिन्न २ देशों,

मंत अग्रगण्य श्रावक वृहत् संख्या में उनके अनुयायी हुए. केवल श्रावक ही नहीं परंतु कितने ही यति भी उनके सदुपदेश के असर शास्त्रानुसार अणगार धर्म आराधने तत्पर हुए. लौंकाशाह स्वयम् वृद्ध होने से दीक्षित न होसके परंतु भाणाजी आदि ४५ भव्य जीवों ने उन्होंने दीक्षा दिला उनकी सहायता से आप जैन शासन सुधारने आपने इस पवित्र कार्य में महान् विजय प्राप्त की और अल्प समय में ही हिन्दुस्थान के एक छोर से दूसरे छोर तक लाखों जैनी उनके अनुयायी बने. जिस समय यूरोप में धर्म सुधारक मार्टिन लुथर हुआ और प्युरिटन ढंग से खिस्ती धर्म को जागृत किया. उसी समय या उसी साल अकस्मात् जैन धर्म सुधारक श्रीमान् लौंकाशाह का समय मिलता है ※

लौंकाशाह के उपदेश से ४५ मनुष्य दीक्षित हुए उन्होंने अपने गच्छका लोंकागच्छ नाम रक्खा. वीर संवत् १५३१.

※ About A. D. 1452 the Lonka sect arose and was followed by the sthanakwasi sect dates which coincile strickingly with the Lutheren and puritan movements in Europe.

Heart of joinism.

समय २ पर धर्मगुरु जन्म लेते हैं, होते हैं और जाते हैं परंतु समाज पर पवित्र और स्थिर छाप लगाने का सौभाग्य बहुत कम

लौंकाशाह के पश्चात् फिर से जब ये मेघछचढ़ आये तब
नष्ट करने के लिये गुजरात में किसी समर्थ महापुरुष
प्रादुर्भाव होने की आवश्यकता हुई उस समय प्राकृतिक नियमानु
धर्मसिंहजी लवजी ऋषि और श्री धर्मदासजी अणगार ए
पश्चात् एक यों तीन महा व्यक्ति उत्पन्न हुए. उन्होंने अद्भुत परा
दिखा लौंकाशाह के उपदेश का पुनरुद्धार किया. बल्कि शा
सुधारने का जो कार्य उन्होंने अपूर्ण छोड़ा था उसे इस त्रिपुटी
पूर्ण किया. उन्होंने महावीर की आज्ञानुसार अणगार धर्म
अराधना प्रारंभ की. उनके विशुद्ध ज्ञान, दर्शन, चारित्र और त
प्रभाव से तथा शास्त्रानुकूल और समयानुकूल सदुपदेश से ला

---

* एक अंग्रेज बानू मिसीस स्टीवन्सन् कि जो राज कोट
रहती थी अपनी Heart of jainism (नाम पुस्तक में इस समय
उल्लेख यों करती हैं।

Firmly rooted amongst the laiter, they were a
once hurricane was past to reappear oncemore and
gin to throw out fresh branches...many from the L
ka sceb. Joined this reformer and they took the na
of Sthanakwasi, whilst their enemics called th
Dhundhia Searchers. This tille has grown to
quite an honourable one...

तुष्य उनके भक्त होगए। उस समय से इन्होंने जैन शासन का पूर्व उद्योत किया, तब से लौंका गच्छ यति वर्ग और पंच महाव्रत री साधु ऐसे दो विभागों में जैन श्वे० पंथ बँट गया. लौंका च्छीय तथा अन्य गच्छीय जो श्रावक पंच महाव्रतधारी साधुओं मानने वाले तथा उनके दिखाये हुए मार्ग पर चलने वाले वे साधुमार्गी नाम से प्रख्यात हुए यह मार्ग कुछ नया न था नके प्रवर्तकों ने कुछ नये धर्म शास्त्र नहीं बनाये थे. सिर्फ शास्त्र रुद्ध चलती प्रणाली को रोक शास्त्र की आज्ञा ही वे पालने लगे, रवाड़ की सम्प्रदाय भी इसी मार्ग का अनुसरण करने वाली से वे भी साधुमार्गी नाम से पहिचाने जाते हैं। यहां इस प्रदाय के प्रभावशाली पुरुषरत्नों में से थोड़े से मुख्य २ चार्यों का कुछ इतिहास अवलोकन करना अप्रासंगिक नहीं गा।

श्री धर्मसिंहजीः — ये जामनगर काठियावाड़ के दशा माली वैश्य थे इनके पिता का नाम जिनदास और माता का शिवा था. लौंकागच्छ के आचार्य रत्नसिंहजी के शिष्य देवजी राज के व्याख्यान से १५ वर्ष की उम्र में धर्मसिंहजी को ग्य उत्पन्न हुआ और पिता पुत्र दोनों ने दीक्षा ली. विनय द्वारा कृपा सम्पादन कर ज्ञान ग्रहण करने के लिये प्रबल वैराग्यवान सिंहजी मुनि सतत उद्योग करने लगे, ३२ सूत्रोंके उपरांत व्याकरण

न्याय प्रभृति में भी वे पारंगत विद्वान् हुए. उनकी स्मरण
अत्यंत तीव्र थी. वे अष्टावधान करते थे, शीघ्र काव्य रचते
दोनों हाथ तथा दोनों पैर से कलम पकड़ कर लिख सके थे।
सूत्री होने के पश्चात् एक दिन धर्मसिंहजी अणगार सोचने लगे
सूत्र में कहे अनुसार साधु धर्म तो हम नहीं पालते तो
चिंतामणि समान इस मानव जन्म की सार्थकता कैसे सिद्ध हो
उन्होंने शुद्ध संयम पालने का निश्चय किया और गुरु
कायरता त्याग कटिबद्ध होने का आग्रह किया गुरुजी पूज्य प
मोह न त्याग सके

अंतमें उनकी आज्ञा और आशीर्वाद भी आत्मार्थी और सहाय
यतियों के साथ उन्होंने पुनः शुद्ध दीक्षाली (विक्रम सं. १६८
धर्मसिंहजी अणगार ने २७ सूत्रों पर (टब्बा) टिप्पणी लिखी
टिप्पणियां सूत्ररहस्य सरलता पूर्वक समझाने को अति उप
हैं। विक्रम सं. १७२८ में उनका स्वर्गवास हुआ, उनका सम्प्र
दरियापुरी के नामसे प्रख्यात है।

श्रीलवजी ऋषिः—सूरत में वीरजी वहोरा नामक एक
श्रीमाली साहूकार रहता था, उनकी लड़की फूलबाई से लव
नामक पुत्र हुआ. लौंकागच्छ के यति वजरंगजी के पास उनने शा
ध्ययन किया और दीक्षा ली. यतियों की आचार शिथिलता देख

वर्ष बाद इन से पृथक् हो उनने विक्रम संवत् १६८२ में
ामेव दीक्षा ली। अनेक परिषह सहन किये और शुद्ध चारित्र पाल,
धर्म दिपा स्वर्ग पधारे। मुनि श्री दौलतऋषिजी तथा अमिऋषिजी
ति उनकी सम्प्रदाय में हैं ।

श्रीधर्मदासजी अणगार—ये अहमदाबाद के समीप सरखेज
के निवासी भावसार ज्ञाति के थे । उनके पिता का नाम
न कालिदास था। विक्रम संवत् १७१६ में उन्होंने प्रबल वैराग्य
ीक्षा ली और उसी दिन गोचरी जाते एक कुम्हारिन ने राख
ाई । वह थोड़ीसी पात्र में गिरी और थोड़ी हवा में बिखर गई ।
वृत्तांत इन्होंने धर्मसिंहजी से कहा ।

इसका उत्तर धर्मसिंहजी ने फर्माया कि, जैसे छार बिन कोई
खाली नहीं रहता उसी तरह प्रायः तुम्हारे शिष्यों के बिना
ग्राम खाली न रहेगा और छार हवा में फैल गई इसी तरह
रे शिष्य चारों ओर धर्म का प्रसार करेंगे। धर्मदासजी के ९९
 हुए। जिन्होंने देश देशान्तरों में जैनधर्मकी अत्यन्त सुकीर्त्ति फैलाई
शिष्यों में से ९८ तो मालवा, मारवाड़, मेवाड़ और पंजाबमें विचरते
जैनधर्म की ध्वजा फहराते थे, सिर्फ एक मूलचंदजी स्वामी
रात में रहे उन्होंने गुजरात में घूम कर जैनधर्म का अत्यन्त
ार किया। मूलचंदजी स्वामी के ७ शिष्य हुए वे भी जैन शासन
दिपाते चले हुए, उनके नाम नीचे लिखे अनुसार हैं ।

१ गुलाबचंद्रजी २ पंचाणजी ३ वनाजी ४ इन्द्रजी ५ क
६ विठ्ठलजी और ७ भूपणजी उनके शिष्यों ने काठि
में १ लींबड़ी २ गोंडल ३ वरवाला ४ आठ कोटी कच्छ
चूड़ा ६ ध्रांगध्रा ७ सायला ऐसे ७ संघाड़े स्थापित किये।

गुलाबचंद्रजी के शिष्य बालजी स्वामी, बालजी स्वामी के
हीराजी स्वामी, हीराजी स्वामी के शिष्य कानजी स्वामी
कानजी स्वामीके सिष्य अजरामरजी स्वामी हुए। ये अजरा
महाप्रतापी और पंडित पुरुष हुए। उनके नाम से वर्तमान में ल
संप्रदाय (संघाड़ा) प्रख्यात है।

श्री दौलतरामजी तथा श्री अजरामरजी—थे
महात्मा समकालीन थे। दौलतरामजी ने सं। १८१५ में और अ
मरजी ने १८१६ में दीक्षा ली थी। श्री दौलतरामजी महारा
हुकमीचन्द्रजी महाराज के गुरु के गुरु थे, वे अति समर्थ
और सूत्र सिद्धान्त के पारगामी थे. मालवा, मारवाड़, में ये
रते और इसी प्रदेश को पावन करते थे, उनके असाधारण
सम्पत्ति की प्रशंसा श्री अजरामरजी स्वामी ने सुनी। अजरा
स्वामी का ज्ञान भी बढ़ा चढ़ा था तो भी सूत्र ज्ञान में
उन्नति करने के लिये श्री दौलतरामजी महाराज के पास अ
करने की उनकी इच्छा हुई। इस पर से लींबड़ी संघ ने एक

साथ दौलतरामजी महाराज की सेवा में प्रार्थना पत्र
ार्य प्रवर श्री दौलतरामजी महाराज उस समय बूंदी कोटे
थे। उन्होंने इस विज्ञप्ति को सहर्ष स्वीकृत कर काठियावाड़
विहार किया। वह भेजा हुआ मनुष्य भी अहमदाबाद तक
के साथ ही था परंतु वहां से वह पृथक् हो लींबड़ी संघ को पूज्य
ारने की बधाई देने आया। उस समय लींबड़ी संघ के आनंद
न रहा, लींबड़ी संघने उस मनुष्य को रु० १२५०) बधाई
देये। पूज्य श्री दौलतरामजी लींबड़ी पधारे तब वहां के संघ
ा अत्यन्त आदर सत्कार किया।
ींबड़ी संघ की अनुपम गुरुभक्ति देखकर दौलतरामजी महा-
ा भी सानंदाश्चर्य हुए। पंडित श्री अजरामरजी स्वामी पूज्यश्री
ामजी महाराज से सूत्र सिद्धांत का रहस्य समझने लगे।
त सार के कर्ता पं० मुनि श्री जेठमलजी महाराज इस समय
ुर विराजते थे वे भी शास्त्राध्ययन करने के लिये लींबड़ी पधारे
ा भी ज्ञान गोष्टी के अपूर्व आनंद का अनुभव करने लगे। भिन्न २
ाय के साधुओं में परस्पर उस समय कितना प्रेमभाव था
ाधुओं में ज्ञान पिपासा कितनी तीव्र थी यह इस पर
ट सिद्ध है। पं० श्री० दौलतरामजी महाराज के साथ २
ी समय तक विचर कर पं० श्री अजरामरजी महाराजने
ान में अपरिमित अभिवृद्धि की थी और पूज्य श्री दौलतरामजी-

महाराज के आग्रह से पूज्य श्री अजरामरजी महाराजने
में एक चातुर्मास भी उनके साथ किया था।

पूज्य श्री हुकमीचन्दजी स्वामी—पूज्य दौलतराम म
के पश्चात् श्रीलालचंद्रजी महाराज आचार्य हुए. और उनके
पर परम प्रतापी पूज्य श्री हुकमचंद्रजी महाराज हुए टोडा (रा
के) ग्राम के रहने वाले वे ओसवाल गृहस्थ थे उनका गोत्र च
था. बूंदी शहर में सं० १८७९ में मार्गशीर्ष मास में पूज्य श्री
चंद्रजी स्वामी के पास उन्होंने प्रबल वैराग्य से दीक्षा ली। श
तक उन्होंने बेले २ तप किया चाहे जितने कड़क शीत में भ
सिर्फ एक ही चादर ओढ़ते थे. शिष्य बनाने का उनके
त्याग था, उसने सब मिठाई भी खाना त्याग दी थी। सिर्फ
द्रव्य रखकर बाकी के सब द्रव्यों का यावज्जीव पर्यंत त्याग
था वे बिल्कुल कम निद्रा लेते और रात दिन स्वाध्याय
ध्यानादि प्रवृत्ति में ही लीन रहते थे. नित्य २०० नमोत्थुणं
थे, आप समर्थ विद्वान् होते भी निरभिमानी थे. कोई चर्चा
आता तो अपने आज्ञावर्ती साधु श्रीशिवलालजी महाराज के
भेज देते, अपने गुरु पूज्य श्री लालचंद्रजी महाराज शास्त्र
सख्त आचार पालने के लिये बार बार विनय करते रहते
अपनी विनय अस्वीकृत होने से पृथक् विहरने लगे औ
संयमादि में वृद्धि करने लगे, इससे गुरुजी उनका अति

र लगे. किसीने उसको आहार पानी देना नहीं, उपदेश
ना नहीं तथा उतरने के लिये स्थान भी नहीं देना ऐसे २
देश देने लगे. क्षमा के सागर श्री हुकमीचंद्रजी महाराज ने इस
तनिक भी लक्ष नहीं दिया वे तो गुरू के गुणानुवाद ही करते
र कहते थे कि मेरे तो वे परम उपकारी पुरुष हैं महा
यवान् हैं मेरी आत्मा ही भारी कर्मी है। इस तरह वे गुरु
सा और आत्मनिंदा करते थे तो भी गुरुजी की ओर
से वाक्बाण के प्रहार होते ही रहे यों करते २ चार वर्ष
गए. परंतु वे गुरु के विरुद्ध कदापि एक शब्द भी न
। चार वर्ष बाद गुरु को आप ही आप पश्चात्ताप होने
॥ और वे भी निंदा के बदले स्तुति करने लगे। अंत में
ख्यान में प्रकट तौर पर फरमाने लगे कि हुकमचंद्रजी तो चौथे
के नमूने हैं ये पवित्रात्मा और उत्तम साधु हैं वे अद्भुत
के भंडार हैं। मैंने चार वर्ष तक उनके अवगुण गाने में त्रुटि
रक्खी परंतु उसके बदले उन्होंने मेरे गुण ग्राम करने में कमी
की। धन्य है ऐसे सत्पुरुष को। श्रीमान् हुकमीचंद्रजी महाराज
गुण समूहरूप सूर्य स्वतः प्रकाशित था, जिससे लोगों की
से ही जनपरपूज्य भक्ति तो थी ही फिर आचार्य श्री के
द्गारों का अनुमोदन मिलते ही उनकी यशोदुंदुभी दशही दिशाओं
बजने लग गई। उन्होंने अपनी सम्प्रदाय में क्रियोद्धार किया

तब से यह सम्प्रदाय उनके नाम से प्रसिद्ध हुई और पहि
जाने लगी। उनके अक्षर मोती के दाने जैसे थे. उनकी हस्तलि
१६ सूत्रों की प्रतियां इस सम्प्रदाय में अब भी वर्तमान हैं।
१६१७ के वैशाख शुद्ध ५ मंगलवार को जावद ग्राम में देहो
कर ये पवित्रात्मा स्वर्ग पधारे।

श्रीयुत ग्योइट सत्य फरमाते हैं कि "काल से भी अति
हो ऐसा कोई प्रतापी और प्रौढ स्मारक मृत्युबाद छोड़ जाना
है कि जिससे देह नश्वर होने से नाश होजाय तो भी उस स्मा
के कारण हमेशा जीवित रहे और वही वास्तविक कीर्त्ति का
है ऐसे महाराज--महापुरुष विरले ही जन्म लेते हैं।

पूज्य शिवलालजी स्वामी—श्री हुकमचंद्रजी महारा
पाट पर शिवलालजी महाराज विराजे उन्होंने सं० १८६१ में दीक्ष
थी, वे भी महा प्रतापी थे, उन्होंने ३३ वर्ष तक लगातार अखण्ड ए
की. वे सिर्फ तपस्वी ही नहीं थे, परंतु पूर्ण विद्वान् भी थे, स्व प
के ज्ञाता और समर्थ उपदेशक थे उन्होंने भी जैन शासन का श्र
उद्योत किया और श्री हुकमीचंद्रजी महाराज की सम्प्रदाय
कीर्ति बढ़ाई सं० १६३३ पोष शुक्ल ६ के रोज उनका स्वर्गवास हु

पूज्य श्री उदयसागरजी स्वामी—इन महात्मा का
जोधपुर निवासी ओसवाल गृहस्थ सेठ नथमलजी की प

यणा भार्या श्री जीवु बाई के उदर से सं० १८७६ के पोष माह हुआ. सं० १८६१ में इनका ब्याह परमोत्साह से किया गया. ह होने के कुछ ही समय पश्चात् उन्हें संसार की असारता का र होते वैराग्य स्फुरित हुआ, सब सम्बन्ध परित्याग करने की भेलाषा जागृत हुई परंतु माता पिता कुटुम्बादिको ने दीक्षा लेने आज्ञा न दी। इसलिये श्रावक व्रत धारण कर साधु का वेष त भिक्षाचारी करते ग्रामानुग्राम विचरने लगे. कुछ समय यों ाटन करने के पश्चात् माता पिता की आज्ञा मिलते ही इन्होंने १६७८ के चैत शुक्ल ११ के रोज पूज्य श्री शिवलालजी ाराज के सुशिष्य हर्षचंदजी महाराज के पास दीक्षा धारण की र गुरु गम से ज्ञान ग्रहण करने लगे। इनकी स्मरण शक्ति अद्भुत र बुद्धि बल अगाध था। थोड़े ही समय में इन्होंने ज्ञान और रित्र की अधिक ही उन्नति की, इनकी उपदेश शैली अत्युत्तम थी लिये पूज्य श्री जहां २ पधारते वहां २ उनके मुख कमल की णी सुनने के लिये स्वमती अन्यमती हिन्दू मुसलमान प्रभृति धिक संख्या में आते थे. उनकी शारीरिक सम्पदा अति आकर्षक गौरवर्ण, दीप्त कांति विशाल भाल, प्रकाशित बड़े नैत्र, चंद्र ान मनोहर वदन और तत्वज्ञान सह अमृत समान मिष्ट माधुरी णी ये सब श्रोतृ समूह पर जादूमा प्रभाव डालते थे. पूज्य श्री ाब में अटक रावल पिंडी तक पधारे थे और उस अजान मुल्क

में थी अपना प्रभाव दिखाया था, कई राजाओं को सदुपदे
शिकार और मांस मदिरा छुड़ाई और अहिंसा धर्म की वि
ध्वजा फहराई थी।

पूज्य श्री के आचार विचारः— पूज्य श्री के हृदय
प्रतिच्छाया वर्तमान के उनके साधु हैं 'छिद्रेष्वनर्था बहुली भवन्ति
मोह, या प्यार में जो लेश मात्र स्वतंत्रता दीजाती है वही स्वतं
फिर स्वच्छंदता के स्वरूप में परिणित होजाती है और जि
फल भयंकर असह्य और अक्षम्यदोष उत्पन्न करता है. ये का
प्रत्यक्ष रखकर किसीभी शिष्य को स्वच्छंदी वनने न देते.

भिन्न २ प्रकृति के साधु एकत्रित हो उस सम्प्रदाय को
समय की सीमा में रखना सरल कार्य नहीं है। अनंतानुबंधी
चौकड़ी के बंधन में फंसते हुए मुनि को मुक्त करने के लिये वे
प्रयास करते थे। सूत्रों के रहस्य को न्यायपूर्वक यों सम
थे कि:--

* असंवुडेणं भंते! अणगारे, सिज्झई, बुज्झइ, मुच्चइ, प
व्वायइ, सव्वदुक्खाणमंतं करेइ गोयमा! नो इणट्ठे समट्ठे से के
भंते! जाव अनंत करेइ गोयमा! असंवुडे अणगारे आउयवज्ज

---

* भावार्थः—गृह भारका त्याग किया परंतु आंतरिक अ
द्वार जिसने नहीं रोके ऐसे पाखंड सची साधु भवबीजरू

त्तकम्म पयडिओ सिढिलबंधणबद्धाओ घणियबंधण बद्धाओ
करेइ रहस्सकालठिईआओ, दीहकालठीइआओ पकरेइ मंदाणु-
वाओ तिव्वाणुभावाओ पकरेइ अप्पपएसगाओ बहुपएसगाओ
करेइ······· श्री भगवती श० १ उ० १ इसके अनुसंधान में
उत्तराध्ययन से अ० १ गाथा ६ वीं कहकर भावार्थ गले उतारते
कि गुरु की हितशिक्षा प्रत्येक शिष्य को सम्पूर्ण ध्यान से सुनना,
चार करना, मन में ठसाना और उसी अनुसार वर्ताव करना
चाहिये. शिष्य के दुर्घृष्ट हृदय की गंभीर भूलों को क्षार करने के
लिये कदाचित् कठिन प्रहार युक्त हित शिक्षा हो तो भी विनीत शिष्य
को अपना श्रेय समझ कर वह शांति से श्रवण करना, परंतु तनिक
भी कोप या शोक न करना और शुभ विचारों से मन को समझा
कर क्षमा धारण करनी चाहिये। व्यवहार और मन से क्षुद्र मनुष्यों
का तनिक भी संसर्ग न करना और हास्य क्रीडा आदि प्रसंगसे दूर
रहना चाहिये।

परंतु सम्प्रदाय में थोड़े शिथिलाचारियों का समूह घुसा हुआ
है पतली दृष्टि से देख कर मन में सोचने लगे कि, साधु के नाम

प्रकृति, स्थिति, रस घटाने के बदले अधिक बढ़ाते हैं चीकने कर्म
बांधते हैं इसलिये अंतरिक रिपुओं से जय प्राप्त करना यही बाह्य
त्याग का मुख्य लक्ष होना चाहिये।

से लोगों को ठगना या ठगाने देना या फंसाने देना यह महा
अधर्म और निर्बलता है। सम्प्रदाय की यह वेपरवाही आगे गं
और भयंकर परिणाम पैदा करेगी.

शास्त्र सत्य कहते हैं कि, इंद्रिय और मनको वश रखनो
आत्मा की पहिचान का सरल और उत्तम उपाय है। मानसिक सं
से पापपुंज नहीं बढ़ता मन विकारी होकर दूषित हुआ कि, मानी
पाप हो चुका इसलिये साधुधर्म के संरक्षणार्थ नामित संयम के नि
योजित किये हैं इस अंकुश को दुःखरूप समझने वालों का दुःख
हालत से हाल हवाल हो जाते हैं अनेक आकर्षणों में फंस
से भव हार जाते हैं निरंकुश स्वतंत्रता से साधुओं में स्वच्छंद
कलह और दुःख सिवाय दूसरे परिणाम भाग्य से ही प्र
होते हैं।

ऐसे सबल कारणों का दीर्घ दृष्टि से विचारकर पूज्य श्री
सम्प्रदाय के कितने एक साधुओं के साथ आहार पानी का सम्बन्
तोड़ा था। जिसका चेप अभी तक वर्तमान है। चारित्र शिथिलता
चेप का फैलाव रोकने के लिए ऐसे रोगियों को ढूंढ चिकित्सा क
सच्चे रास्ते लगाने का पूज्य श्री का प्रयास कटु काढ़े के सदृश हो
से छूट छाट मांगने वाले मुनि नामधारी पूज्य श्री के वैयावृत्यसे भ
वंचित होने लगे।

१६५४ के आसोज शुक्ल १५ के व्याख्यान में रतलाम
। पर पूज्य श्री उदयसागर जी महाराज ने युवा चार्य पद
चौथमलजी महाराज को देना जाहिर किया । श्री संघ ने उसे
। स्वीकार किया. श्री चौथमलजी महाराज का चातुर्मास जावद
इस लिये चातुर्मास पश्चात् रतलाम से महाराज श्री प्यारचंदजी
(महाराज श्री इन्द्रचंदजी प्रभृति चादर लेकर जावद पधारे.
१६५४ के मंगसर शुक्ल १३ को जावद में महाराज श्री
मलजी को चादर धारण कराई। उस समय महाराज श्री
ालजी वगैरह २१ मुनिराज श्री जावद विराजते थे.

सं० १६५४ के महा शुक्ल १० के रोज रतलाम में पूज्य श्री
यसागरजी महाराज का स्वर्गवास हुआ. पूज्य श्री का निर्वाण
ात्सव अत्यंत चित्ताकर्षक और चिरस्मरणीय विधिसे हुआ था ।

पूज्य श्री चौथमलजी स्वामी:— सं० १६५४ के फाल्गुन
४ के रोज रतलाम पधार कर सम्प्रदाय की बागडोर आपने
ने हाथ में ली । पूज्य श्रीने सं० १६०६ चेतसुदी १२ को दीक्षा
थी पूज्य श्री महाक्रियापात्र और पवित्र साधु थे ।

उनकी नेत्रशक्ति क्षीण होगई थी और वृद्धावस्था भी थी ।
तु शरीर की अशक्ति का तनिक भी विचार न कर विहार करते
ते थे. पंजड़ कारण दिखा आनकी तरह धासपति

साधुतो फिरतेही अच्छे इस वाक्य को सत्य स वित कर दिखाते थे। पूज्य श्री का सूत्र ज्ञान बढ़ाचढ़ा था। मुंहसे ही व्याख्यान फरमाते थे. क्रिया की ओर भी पूर्ण लक्ष्य था. रातको एक दो दफे उठकर शिष्यों की सार संभाल लेते थे. सम्प्रदाय से अलग हुए साधुओं का अबतक सुधरने की ओर लक्ष्य न देखा तो उनसे आहारपानी का व्यवहार रक्खा ही नहीं।

उपदेशकों के चरित्र और आचरण का प्रभाव समाज पर पड़ता ही है. इस लिये वे भी श्रेष्ठ आचार वाले होने चाहिये। व्याख्यान देनेसे ही उपदेशकों का कर्तव्य इतिश्री तक पहुंच गया ऐसा समझना भूल है। सब दिन भर के उनके आचार विचार और उच्चार में गंभीरता, पापभीरुता, पवित्रता और प्रसन्नता झलकनी चाहिये।

कायदे या नियम काग़ज़ पर नहीं परंतु व्यवहार में भी लाने चाहियें प्रतिक्षण पापसे बचने की जिज्ञासा जागृत रहे तभी असंख्य आकर्षणों से आत्मा बच सकती है। महात्मा कह गए हैं कि:—

उपदेशकों के भक्तिभाव, श्रद्धा, सत्यवचन, और फकीरी वृत्तियों से ही शिष्यों की धार्मिक वृत्तियाँ खिलती हैं। धार्मिक रिवाज और संस्कार का जितना विशेष ज्ञान हो उतना ही अच्छा है। चाहे जैसा संकट आजाय, चाहे जैसा लालच अपने पास हो, तो

री अपने से धर्म न त्यागा जाय, यह खयाल और निश्चय सम्पूर्ण रीतिसे पैठ जाय तभी सफलता समझनी चाहिये।

धर्म कुछ पांडित्य का विषय नहीं। धर्म बुद्धि गम्य ही क्यों न हो परंतु वह हृदयग्राह्य है, क्योंकि वह श्रद्धा का विषय है। धर्म विहीन नीति शिक्षण भी श्रद्धा के अभाव से पूर्ण असर नहीं कर सका।

सब मनुष्यों को धर्म की ओर अत्यंत उदार व्यापक और शास्त्रीय शुद्ध खयाल लगाना हो तो धर्म द्वारा ही लगा सकते हैं, हार्दिक इच्छा स्वतः प्रकटित होनी चाहिये। दूसरों के डर या अंकुश का असर कुछ ही समय तक टिक सकता है। आत्मविश्वास के बिना प्रतिज्ञा नहीं निभ सकती आकस्मिक भूलोंका परिणाम को प्रायश्चित्त द्वारा नरम कर सकते हैं जो स्वेच्छा से शुद्धभाव द्वारा प्रायश्चित्त हो गया अल्पश्रम और अल्प त्याग से ही निवृत्ति हो सकती है। अगर ऐसा नहीं किया गया तो आगे क्या २ करना पड़ेगा उसकी कल्पना हृदय में लाते ही देह कंपने लगता है।

अपने शास्त्रों में हजारों वर्ष पहिले कहा गया है उसी अनुसार महात्मा गांधीजी अभी प्रेम और तपश्चर्या से ही दूसरों [illegible] डाल रहे हैं।

एक ने दूसरेपर मिथ्या कलंक लगाना, अनर्थ दंड सेवन करना यह जैन नाम को लजाता है, माहत्मा गांधीजी की सलाह तो के है कि, प्रेम से मनाओ, भूलें बताओ, खड्डे खोखलों से बचाओ और उन खड्डों में गिरने वालों का हाथ पकड़ो, दलील से समझाओ ममत्व का नशा उतारकर बात गले उतारो, सत्यमत की प्रबलता से उस वेग को रोको परंतु बलात्कार मत करो।

समाज की सुव्यवस्था यह साधुओं की पहरेदारी का ही प्रताप परिणाम है। समाज के नेता मुनिराज को निष्पक्षपात से उपराम सलाह देते रहने से ही साधुसमाज की कीर्त्ति ध्वजा पहराती रहेगी।

खुशामद यह गुप्त विष है। मनुष्य मात्र भूल का पात्र है भूल करने वाला फिर से ऐसी भूल न करे ऐसे समझाने वाले ऐसे कर्तव्य अदा करने वाले को अपना शुभेच्छुक समझना चाहिये परंतु पक्षांध हो, की हुई, भूल को छुपा गुन्हगारों को मदद करना गुन्हा बढ़ाने जैसा महापाप है. यह प्रवृत्ति तो अपराध करने वाले को उत्तेजना के समान है। यह पक्षपात मोह श्रेष्ठ से श्रेष्ठ और समर्थ मनुष्यों में भी गुप्त विष फैलाकर गिराकर कितना मत भेद उत्पन्न करता है जिसके शोचनीय दृष्टांत अपनी आंखा आगे मौजूद हैं।

रोगी को विश्वास दे पाल पपोल कर मुख्य अंश प्रकट करने

क श्रावक पना निभ सकता है परंतु खास अंश छुपा रोग को साध्य और जहरीला बनाना महापाप है। इस इंद्रजाल के शिकार ने से बचना श्रावकों का मुख्य धर्म है। धर्म की इज्जत को तिरस्कृत ष्टि से पददलित करने वालों को इस गुप्त विष को भयंकर भाव से सचेत कर देना चाहिये। सचेत करने वाले अपने इस धर्म । नहीं पालने से धर्मद्रोही हैं—शुद्ध श्रद्धापूर्वक आत्म यज्ञ करने ले शूरवीर ही शुद्ध संयम के संरक्षण करने का यश प्राप्त करेंगे माज की वाग डोर ऐसे शूरवीरों के ही करकमलों में शोभा ती है कि, जो इस विषीले फंदे से समाज को बचाते हैं।

हिन्दू समाज की ऐसी रचना है कि, प्राचीन काल से ही समाज और गुरु नेता हैं भोला भारत प्रजा धर्म के नाम से भूलावे में भूल जाता है धर्म अज्ञान वर्ग में भय या संदेह उत्पन्न करता है और समझदार समाज में श्रद्धा जागृत करता है। हमें पवित्र अपने स्थान निभाने के लिये उस स्थान के योग्य बनना ही पड़ेगा, और समाज श्रद्धापूर्वक मान दे ऐसी योग्यता रखनी ही पड़ेगी.

To err is human, to know that one has erred is super human, to admit and carrect the error and re-pair wrong is Divine. "भूल हो जाय मनुष्य का स्वभाव है। हम से भूल होगई उसका ज्ञान होना उच्च मनुष्यत्व है परंतु भूल मंजूर

कर उसे सुधारना बुरों का भला कर देना ये दैवी मनुष्य है, दिव्य इच्छाएं घमंड से नम्रता में उतरीं कि भूल सुधारने की इच्छ णाओं का मनका प्रारंभ हुआ।

" अपने देशमें समाज राज बल और तपो बल ऐसे दो बलों को पहचानती है और इसमें भी तपोबल की प्रतिष्ठा समझती है। यह अपने समाज की विशेषता है, मनुष्य वासना के अधीन जितना भी कम होगा उतना ही उसका सादा और संयमी होगा उतनी ही उसकी तपश्चर्या होगी, स्वा और विलास की पामरता जिस के हृदय पर कम है वह उतने प्रमाण में तपस्वी है। ज्ञान और तपश्चर्या इन दोनों का संपा ऐश्वर्य है।

कान के कीड़े खिराने वाले निंदक की निंदा न करते उस बंधन वाले पाप कर्मों के लिये दया लाना और उसे सद्बुद्धि उत्पन्न हो ऐसी भावना लाना और यह भावना सफल हो ऐसा प्रयास करना यही सच्ची वीरता, यही हमारे अरिहंत भगवंत का अनुभव किया हुआ सच्चा मार्ग है।

आसीद्यथा गुरु मनोहरण समर्था।
त्वत्प्रेम वृत्ति रनघा न तथा परेषाम् ॥
रत्ने यथा हरमाति मणि लक्षकाणां।
नैवं तु काच शकले किरणा कुलेपि ॥

शतावधानी पंडित श्री रत्नचन्द्रजी महाराज—मानिक-मोती-
, पन्ना, परखने वाले जौंहरी का मन कीमती रत्नों पर जैसा
र्षित होता है उतना सूर्य के प्रकाशमें प्रकाशित काच के टुकड़े
 इमिटेशन जो सच्चे से भी बाह्य दिखावट में विशेष सुंदर
ते हैं) के तरफ नहीं आकर्षित होता।

॥ ॐ ॥

पूज्य श्री श्रीलालजी।

अध्याय १ ला।

बाल्य जीवन।

राजपूताने के पूर्वीय बनास नदी के दक्षिण तट पर
नाम का एक नगर बहुत प्राचीनकाल से बसा हुआ है। जो
पुर से दक्षिण की ओर ६० मील दूर है। ई० सन् १८१७
जब प्रख्यात अमीरखां पिंढारी ने राजपूताने में एक नये राज्य
स्थापना की तब उसने राजधानी का शहर बनाया। राजपूताने
सबसे पीछे जो कोई राज्य स्थापित हुआ तो यही राज्य। दो ह
चौरस माइल का इसका विस्तार है। उसका कितना ही
राजपूताने में और कितना ही मालवा में है। टोंक के राज्य
अफगान जाति के रोहिला पठान हैं और वे नबाव की पदवी

टोंक में मिलाकर छोटी बड़ी १४ दुकानें थीं । जिसका ...
आता था तथा सरकार में तथा सरकारी फौज में लेनदेन का ...
था चुन्नीलालजी सेठ प्रमाणिक और धर्मपरायण थे । एक ...
हस्थ के समस्त योग्य गुणों से अलंकृत थे ।

लेख लगाया है और उसी भीम के पुत्र ने मारवाड़ में बहुत नगर बसाये और उसीके उत्तराधिकारी जैन क्षत्रिय ओ... कहलाये हैं ।

नोट नं० ५—मालवे के महाराज अवंति या उज्जैन अधीश्वर राजा भीम की बहुत सी प्रशंसा का वर्णन जैन ग्रन्थों ... पाया जाता है । उनके ही एक पुत्र ने मारवाड़ राज्य के ... स्थानों में नगर स्थापन किये और लूनी नदी से अरवली शि... तक स्थल के अनेक स्थानों में उनके द्वारा अनेक नगर स्था... हुए । किन्तु उन नगरवासियों में से सब ही जैन धर्म में दी... हुए । उनके उत्तराधिकारी लोग इस समय सब में अधिक ... शाली और वाणिज्य व्यवसायी महाजन नाम से विख्यात हैं ... राजपूत–रक्तधारी होने से सर्वत्र गर्व करते हैं और उनको ... राजकीय पद पर नियुक्त करने पर वे लोग लेखिनी चला... समान स्वच्छंदता से तलवार चलाने में भी समर्थ हैं । भाग ... हिन्दी अनुवाद पृष्ठ ११३७–३७ ।

चुन्नीलाल सेठ की धर्मपत्नी का नाम चांदकुंवर बाई था।
चरित्र घटना के संग्रहार्थ पांच दिन तक टोंक में रहे उस
य इन बाई के यशोगान इनके परिचित व्यक्तियों के मुख से
उतने विस्तार भय से यहां नहीं लिख सकते। ये बाई पवि-

२—रामसिंह जैनधर्मावलम्बी और 'ओस' जाति के हैं। इस
स जाति की संख्या सब रजवाड़ों में लगभग एक लाख के
ी और सबही अग्निकुल राजपूत वंश में उत्पन्न हुए हैं।
होंने बहुत काल पहिले जैन धर्मावलम्बन और मारवाड़ के
न्तर्गत ओसा नामक स्थान में रहना आरम्भ किया था तथा उस
न के नामानुसार ही ओसवाल नाम से विख्यात हुए।

अग्निकुल के प्रमार व सोलंकी राजपूतशाखा के लोग ही
सं पहिले जैनधर्म में दीक्षित हुए थे। भाग पहिला द्वि० खंड
ध्याय २६ पृष्ठ ७२४–३५।

भारतवर्ष के ८४ जाति के व्यवसायिओं में ओसवाल गिनती में
हुत ज्यादह तथा विशेष द्रव्यवान हैं। वे प्रायः १ लाख हैं। ये
ओसवाल इसलिये कहे जाते हैं कि इनके रहने का पूर्व स्थान
ओसिया था। ये सर्व विशुद्ध राजपूत हैं इनमें एक ही समुदाय के
ी हैं। परन्तु पंवार, सोलंकी, भाटी इत्यादि सब समुदाय

ज्ञता और पतिव्रता की साक्षात् मुर्त्ति थीं। उनका धार्मिक ज्ञा
जितना बढ़ा चढ़ा था उतना ही उनका चरित्र भी अत्यन्त विशु
था। इनका पिअर माधवपुर (जयपुर स्टेट) में था। इनके पि
सूरजमलजी और काका * देवचन्दजी देश विख्यात श्रावक थे
देवचन्दजी को २८ सूत्रों का अभ्यास था और सूरजमलजी
शास्त्र के अच्छे ज्ञाता विवेकी और कर्त्तव्य निष्ठ थे। उ
के ये गुण उनकी पुत्री को प्राप्त थे। दिन में दो वक्त सामायि
प्रतिक्रमण करना, गरीबों को गुप्त दान देना, तपश्चर्या करना, ज्ञा
भ्यास बढ़ाना आदि सत्प्रवृत्तियों से तथा शान्त स्वभाव, चतुरा
विवेक आदि सद्गुणों से चांदकुंवर बाई के प्रति सब का आ
भाव था। चुन्नीलालजी सेठ के बड़े भाई हीरालालजी बम्ब
वक्त कहते थे कि इनके पुण्य से ही हमारे कुटुम्ब चन्द्र की क
दिन प्रतिदिन बढ़ने लगी है और इनके इस घर में पांव रखते
ऋद्धि सिद्धि की भी वृद्धि हुई है।

चांदकुंवर बाई ने सामायिक प्रतिक्रमण तथा कितने ही थोक
तो लगन के होने पहिले ही सीख लिये थे। लगन होने के पश्चात्

---

* देवचन्दजी के पौत्र लक्ष्मीचन्दजी कि जो वर्तमान में वि
मान हैं उनने श्रीलालजी को दीक्षा की आज्ञा के निमित्त आ
फुआजी को समझाया था।

ायीजी के सहवास से उनने धार्मिक-ज्ञान में वृद्धि की। उनके
त प्रत्याख्यान चारों स्कन्ध उनकी जिन्दगी के अन्तिम कई
पों तक रहे। साधु साध्वियों के प्रति उनका अनुपम पूज्य भाव था।
दि आहार पानी वहराने के समय कदाचित् कुछ असूझता हो
ाता तो वे उस दिन आहार न करती थीं सारांश इन सती साध्वी
ी का चरित्र अतिशय स्तुतिपात्र था, स्तुतिपात्र ही नहीं परन्तु
किपात्र भी था।

इन निर्मलहृदय रत्नप्रसूता स्त्री के उदर से मांगावाई नामक
क पुत्री और नाथूलालजी नामक एक पुत्र का प्रसव होने के पश्चात्
विक्रम सं० १९२६ के आषाढ मास वद्य १२ को एक पुत्र का
जन्म हुआ। जगत् में पुत्र जन्म का असीम आनन्द तो कई
मालाओं को प्राप्त होता है परन्तु वही माता आनन्द सफल सम-
झती है कि जिसका पुत्र उसके दूध को दिपाता है और कुल को
प्रकाशित करता है।

श्रीमती चांदकुंवर वाई ने *शुभ स्वप्न सूचित एक ऐसे पुत्र का
प्रसव किया कि जो पवित्रात्मा, धर्मात्मा, महात्मा और वीरात्मा के

---

* श्रीलालजी को माता के गर्भ में उत्पन्न हुए तीन चार
महीने होने थे कि एक समय माजी साहिबा चांदनी में सोई थीं

सदृश विश्व में प्रख्यात हुआ। जबतक जीवित रहे इस पृथ्वी
चन्द्र की तरह अमृत बर्षाते रहे, शीतलता प्रवाहित करते रहे
अनेक भव्यात्माओं के हृदय-कमल को विकसित करते रहे
जिनका नाम धीलाल रक्खा गया। पुत्र के लक्षण पालने में दिखा
सूर्य के प्रकट होते ही उसकी सुनहरी किरणें ऊंचे से ऊंचे प
के मस्तक पर जा बैठती हैं इसी तरह इस बालक की प्रतिभा
आप्त जनों के अन्तःकरण में उच्च स्थान प्राप्त किया था। इस
तेजस्विता, मनोहर वदन, शरीर की भव्याकृति, विशाल भा
प्रकाशित नेत्र इत्यादि लक्षण स्वाभाविक रीति से ऐसी सूचना दे
थे कि यह बालक आगे जाकर कोई महान् पुरुष निकलेगा।

सूर्यास्त हुए थोड़ा ही समय बीता था। उस समय उन्हें स्वप्नावस्था
में एक देदीप्यमान कांतिवाला गोला दूर से अपनी ओर आ
हुआ दिखाई दिया। थोड़े ही समय में वह बिल्कुल समीप आ
पहुंचा। ज्यों २ वह समीप आता गया त्यों २ उसका प्रकाश भी
बढ़ता गया। माजी आश्चर्य चकित हो गई प्रकाश के मध्य स्थित
कोई मूर्त्ति मानो कुछ कह रही हो ऐसा भास हुआ। परन्तु असाधा
रण प्रकाश से उनके हृदय पर इतना अधिक क्षोभ हुआ कि मूर्ति
ने क्या कहा उसकी स्मृति न रही धड़कती छाती से वे जग पड़ी
और पति के पास जाकर सब हकीकत निवेदन की।

श्रीलालजी बालक थे तब उनकी माता उन्हें साथ लेकर
तक में श्रीमोताजी तथा गेंदाजी नामक विदुषी और विशुद्ध
त्र वाली सतियों के पास शास्त्राध्ययन करने के लिये निरन्तर
ा करती थीं। उनके पवित्र संवाद का पवित्र असर उनके हृदय
बाल्यावस्था से ही गिरने लग गया था। उस समय टौंक में
श्री हुक्मचन्द्रजी महाराज की सम्प्रदाय के सुसाधु तपस्वीजी
न्नालालजी (पूज्य श्रीचौथमलजी के गुरु भाई) तथा गंभीर-
ी महाराज विराजते थे। अपने पिता के साथ उनके पास भी
का अवसर श्रीलालजी को कभी २ मिलता था। पन्नालालजी
ाज बड़े आत्मार्थी, सुपात्र, समय के ज्ञाता और विद्वान् साधु
एक से लगाकर ६१ उपवास तक के थोक उन्होंने किये थे।
दोनों सत्पुरुषों का सत्समागम श्री श्रीलालजी के जीवन को
र्गाभिमुख करने में महान् आवर भूत हुआ।

बाल्यावस्था से ही साधु और आर्याजी की ओर अप्रतिम
ाग और अनुपम भक्तिभाव था। जब वे पांच वर्ष के थे तब
बालकों की रम्मत की तरह श्रीलालजी भी ऐसी रम्मत करते
 कपड़े की झोली बनाते, मिट्टी की कुलड़ियों के पात्र बनाते,
पर वस्त्र बांधते, हाथ में शास्त्र के बदले कागज लेते और
यान बांचते ऐसा दृश्य दिखाते थे। इस स्थिति में . . .

कर कोई प्रश्न करता कि श्रीजी ! लाड़ी परणोगा के दीक्षा तो प्रत्युत्तर में वे कहते कि " मैं तो दीक्षा लऊंगा श्र जन्म के संस्कार बिना लघुवय से ही ऐसे सुविचारों की होना अशक्य है । यह खबर उनके पिताजी को मालूम हो उन्होंने ऐसा खेल न खेलने को फरमाया और विनीत फिर से वैसा करना थोड़े वर्षों के लिये परित्याग किया ।

छठे वर्ष के प्रारम्भ में श्रीलालजी को व्यवहारिक शिक्षा प्रारम्भ किया गया परन्तु धार्मिक शिक्षा का प्रारम्भ तो पहिले उनकी सुशिक्षिता और कर्त्तव्यपरायण माता की ओर से हो था । छः वर्ष इतनी कम उम्र में उन्होंने माता के पास से साम प्रतिक्रमण सम्पूर्ण सीख लिया था सिर्फ श्रीलालजी को नहीं अपनी तीनों * सन्तानों को इसी तरह धार्मिक अ

---

* श्रीजी के ज्येष्ठ भ्राता श्रीयुत नाथूलालजी बम्ब वर्तमान हैं । उनके कुटुम्ब में आज भी कितना धर्मानुराग है किंचित् परिचय देना आवश्यक है । सं० १९७७ के द्वितीय श्रा वद्य ११ के रोज स्व० पूज्य श्रीजी की जीवन घटना के संग्र हम टोंक गये थे और श्रीयुत नाथूलालजी बम्ब के यहां पांच तक रहे थे । वे रात दिन हमारे पास बैठकर सोच २ कर

दीक्षा पश्चात् नीति अर्थात् सामान्य धर्म की उच्च शिक्षा चांदकुंवर
... दी थी। "एक अच्छी माता सौ शिक्षकों की आवश्यकता
... है"। इस कहावत को उन्होंने चरितार्थ कर दिया था।
...र्यावर्त ऐसी माताओं के पदरज से सदा पवित्र बना रहे ऐसी
...री भावना है।

... टोंक में सरकारी एवं खानगी दोनों प्रकार के स्कूल थे परन्तु
...नगी स्कूलों की शिक्षा विशेष व्यवहारोपयोगी समझ श्रीलालजी

... विगत सिखाते थे। उनके पास भी कई मुख्य २ बातें विगतवार
...र्गी थीं।

श्रीयुत नाथूलालजी एक आदर्श श्रावक हैं। उन्होंने चारों स्कंध
... हैं तथा और भी कई व्रत प्रत्याख्यान लिये हैं। रोज तीन
...मायिक करने का उनके नियम है। वे विवेकी, धर्मप्रेमी और मुला-
... (मृदु) स्वभाव वाले हैं। ५७ वर्ष की उम्र होते भी वे एक
... की तरह कार्य करते हैं। उनके चार पुत्र हैं, बड़े पुत्र माणिक-
... भी वैसे ही सुयोग्य हैं। श्रीयुत नाथूलालजी के पुत्र पौत्रों
... और कुटुम्ब का धर्मानुराग प्रशंसनीय है। टोंक में ...
... भी दुकान बहुत अच्छी चलती है तो भी सेठ नाथूला...
... व्यापार से धर्म व्यापार में विशेष लक्ष देते हैं।

को हिन्दी सिखाने के लिये पंडित मूलचन्दजी नामक एक अ
अध्यापक के स्कूल में रक्खा और उर्दू शिक्षार्थ हाजी अब्दुल
के स्कूल में भेजना प्रारम्भ किया। विद्याभ्यास की ओर
स्वाभाविक अभिरुचि बालवय से ही थी। इससे अपने स
यियों की स्पर्धा में श्रीलालजी नें आगे नम्बर मिला, अपने
का प्रेम सम्पादन किया। उनकी स्मरणशक्ति इतनी तीव्र
उनके शिक्षकों को बड़ा आश्चर्य होता था।

स्कूल में सत्यवक्ता, सरल स्वभावी और प्रामाणिक
की तरह इनकी कीर्त्ति थी। विद्यागुरुओं के वे प्रीतिपात्र
विश्वासी थे। श्रीलालजी के उच्च गुणों से मुग्ध हुए स
उनसे पुर्ण प्रेम रखते थे और सम्मान देते थे। इतना
परन्तु उनके नाना गुणों की सब कोई विशुद्धभाव से श्लाघ
थे। अपने विद्यागुरु की ओर श्रीलालजी का प्रेमभाव भी
पात्र था और शाला छोड़ने के पश्चात् भी वैसा ही प्रेम का
इसका एक उदाहरण यहां देते हैं।

सं० १९४४ में अपनी अठारह वर्ष की अवस्था
उन्होंने अपने मित्र गुजरमलजी पोरवाल के साथ स्वयं
अंगीकृत की तब उन्हें प्रायः सात तोले की एक सोने
अध्यापक महाशय को इनायत की थी।

श्रीलालजी स्कूल में हिन्दी तथा उर्दू अभ्यास करते थे और
का धार्मिक अभ्यास भी शुरू ही था तो भी आश्चर्य यह था
वे स्कूल में हमेशा उच्च नम्बर रखते थे और अभ्यास में भी
से आगे रहते थे। तपस्वीजी श्रीपन्नालालजी तथा गम्भीरमलजी
राज के पास निवृत्ति के समय वे जाते और पच्चीस बोल,
तत्व, लघुदंड, गतागत, गुणस्थान, क्रमारोह आदि अनेक विषय
साधु का प्रतिक्रमण प्रभृति कंठस्थ करते थे। धार्मिक अभ्यास
ने में उनके एक मित्र बच्छराजजी पोरवाल कि जो अभी विद्य-
न हैं उनके सहाध्यायी थे। दोनों साथ २ अभ्यास करते थे।
पुन बच्छराजजी कहते हैं कि जब हम साधु का प्रतिक्रमण
करते थे तब महाराज मुझे जो पाठ देते उसे सिर्फ सुनकर ही
लालजी कंठस्थ कर लेते थे और मुझे वही पाठ बारंबार रटना
पड़ता था इतनी अधिक उनकी स्मरणशक्ति तीव्र थी।

श्रीलालजी का शरीर नीरोगी और सुदृढ था। जन्म से ही वे
अपने दूसरे भाइयों से अधिक मजबूत थे। सहन शीलता, निर्भयता
साहसिकवृत्ति दृढनिश्चय किया हुआ कार्य पूर्ण करने की उत्कंठा
[illegible] और सत्याग्रह इत्यादि गुण बाल्यावस्था से ही उनमें प्रका-
शित थे, शुक्ल पक्ष के चंद्रकी तरह उनकी बुद्धि के साथ उपर्युक्त
गुणों का प्रकाश भी बढता गया जिसके अनेकान

उदाहरण इन महापुरुष के जीवनचरित्र में स्थान स्थान
दृश्यमान हैं ।

श्रीलालजी का स्वभाव बहुतही कोमल और प्रेम पूर्ण होने
उनके बालस्नेहियों की संख्या भी अधिक थी । उनके साथ इन
बर्ताव बड़ाही उदार था । श्रीलालजी के उत्तम गुणोंकी छाप मित्रस
पर जादूसा असर करती थी बच्छराजजी और गुजरमलजी पोरव
ये दोनों उनके खास मित्र थे । श्रीलालजी के वैराग्यसे इन
मित्रों के हृदय पट पर गहरी छाप लगी थी और इसीसे उन्होंने
उनके साथ संसार परित्याग कर आत्मोन्नति साधन करने का
संकल्प किया था. परन्तु पीछे से बच्छराजजी को आह्वान मिल
इसी तरह संयोगों की प्रतिकूलता होने से दीक्षा न ले सके
गुजरमलजी ने श्रीलालजी के साथ ही दीक्षा ली । श्रीलालजी के
इनका अत्यन्त पूज्यभाव था ।

स्कूल के श्रीलालजी के सहाध्यायी उन्हें इतना चाहते थे
जब वे स्कूल छोड़कर अलग हुए तब आंखों में अश्रु लाकर रु
करने लगे थे. उनके मित्र उनका वियोग सहन नहीं कर सके
उनकी सत्यनिष्ठा, कर्तव्यपरायणता, और प्रेम मय स्वभाव से उ
मित्रों का हृदय द्रवीभूत होता था । परन्तु उन्हें विशेषतः वशी
करने वाला कारण उनका क्षमागुण था. श्रीलालजीका हृदय इत

धिक कोमल था कि वे किसीका दिल दुखे ऐसा एक शब्द भी
ते डरते थे और कचित् उनके कोई शब्द या किसी प्रवृत्ति से
रों का दिल दुख गया ऐसा भाव होते ही तत्काल जाकर उनसे
मा प्रार्थी होते थे, ये श्लाघ्य सद्गुण उनकी वीर माता की तरफ
उन्हें प्राप्त हुए थे। श्रीलालजी की ऐसी उदार प्रवृत्ति से उनक
सीके साथ वैर भाव न था. शत्रुता थी तो सिर्फ मनुष्य के
रिमें मित्रकी तरह रहते हुए शत्रुका काम करने वाले आलस्य रूपी
ु से थी—श्रीलालजी का क्षमागुण उनकी महत्ता बढ़ाता था,
नाही नहीं किंतु ऊपर कहे अनुसार वशीकरण मंत्रकी आवश्य-
ा भी पूरता था। इस उत्तम गुण द्वारा वे परिचित व्यक्तियों पर
जय प्राप्त कर सकते थे। (क्षमावशीकृते लोके, क्षमया किं न-
ध्यति !) अर्थात् यह संसार क्षमा द्वारा वशी है अतः क्षमा
ा क्या सिद्ध नहीं हो सकता ? अर्थात् सब मनःकामना सिद्ध
ती है।

सं. १९३२ के भाद्र शुक्ल ५ के रोज जयपुर अंतर्गत डुनी
[illegible] निवासी चान्दमलजी नाम के सुश्रावक की पुत्री, मान-
[illegible] बाई के साथ श्रीलालजी का सम्बन्ध किया गया। उस समय
[illegible] की उम्र ६ वर्ष की और मानकुंवर बाई की उम्र ४
[illegible] थी।

अध्याय २२।

विवाह और विरक्तता

सं १९३५ में श्रीलालजी ने शाला छोडी और अब धार्मि
ज्ञान की अभिवृद्धि के लिए अधिक उद्यम करने लगे। इ
वर्ष अर्थात् सं १९३६ के आषाढ़ माह में इनके पिता से
चुन्नीलालजी स्वर्ग पधारे। पिताजी के स्वर्गवास के पांच मास पश्चा
सं १९३६ के मार्गशीर्ष वद्य २ को श्रीलालजी का व्याह हुआ
उस समय इनकी उम्र १० वर्ष की पूरी होकर ११ वां वर्ष ल
था और इनकी भार्याको ९ वां वर्ष लगा था। राजपूतानेमें बाललग्न
अत्यन्त हानिकारक रिवाज आज से भी उस समय अधि
प्रचलित था इस प्रथा को मिटाने के लिए श्रीलालजी ने दीक्षि
हुए पश्चात् सतत उपदेश दिया। जिसका कुछ ही परिणाम आ
जैनियों में दृष्टिगोचर होता है।

श्रीलालजी की बरात टोंक से डुनी आई। उस समय प्राकृति
किसी अदृश्य अकल आकर्षण के प्रभाव से उनके परमोपकारी
धर्मगुरु तपस्वीजी श्रीपन्नालालजी तथा गंभीरमलजी महाराज
भी इधर उधर से विहार करते २ डुनी पधार गए। ये शुभ संवाद

ते ही वरराज के रोमांच विकसित होगये और अति आतुरता
साथ गुरुश्री के दर्शनार्थ उपाश्रय गए।

मारवाड़ में वरराजा के हाथ मदनफल के साथ दूसरी भी चीजें
वस्त्र में लपेट कर बांधने की प्रथा प्रचलित है उसमें राई के
। भी होते हैं राई सचेत होने से साधु मुनिराजों का सचेत
तु सहित संघट्टा नहीं कर सके तो भी भक्ति के आवेश में आये
श्रीलालजी का हृदय गुरु के चरण स्पर्श करने का विवेक न
न सका। वरराज ने सचेत वस्तु सहित अपने गुरु के चरण
ल का स्पर्श किया इस अपराध (!) के कारण साथ वाले
विक भाई एक के पश्चात् एक इन्हें उपालंभ देने लगे, तब तपस्वीजी
राज ने कहा कि आप इनके भक्तिभाव, धर्मप्रेम और उत्साह
ओर तनिक ध्यान देओ और वरराज को बिल्कुल घबरा दी
जाओ। इस प्रकार लोगों को उपदेश दे शांत किये और वरराज
सम्बोधन कर कुछ बोधप्रद वचन कहे। इन वचनों ने श्रीजी
हृदय पट पर जादू सा असर उत्पन्न किया।

श्रीलालजी के लग्न समय चुन्नीलालजी के ज्येष्ठ भ्राता हीरा-
लालजी तथा श्रीलालजी के ज्येष्ठ बन्धु नाथूलालजी प्रभृति कुटुम्बी-
जन आमोद-प्रमोद में लीन थे। उनके हृदय आनन्द में मग्न थे,
श्रीलालजी के हृदयकमल पर उदासीनता छा रही थी। पूर्व

जन्म के शुभ संस्कारों के प्रभाव से बालवय में ही वैराग्य
बीज अंकुरित हुए थे और जिन वाणीरूपी अमृ। जल का या
सिंचन होने से अब वह वैराग्य वृक्ष विशेष पल्लवित हो बढ़ ग
और उसका मूल भी गहरा पैठ गया था तो भी अनिच्छा से
की आज्ञा चुप रह कर शिरोधार्य करते रहे। उनकी यह प्रवृ
शायद पाठकों को अरुचि कर होगी और यही प्रश्न मन में उठे
कि व्याह न करना ही क्या बुरा था ? परन्तु कर्म के अचल कार
के आगे सबको सिर झुकाना पड़ता है और प्राकृतिक सर्व कृति
सर्वदा हेतुयुक्त ही होती हैं। श्रीमती मानकुंवर वाई के श्रेयस्
मार्ग भी इसी प्रकार प्रकट होना विधि ने निर्माण किया होगा
श्रीमती को श्रीमती चांदकुंवर वाई जैसी सुशिक्षिता सास के पा
से उत्तम उपदेश (शिक्षा) सम्पादन करने का सुयोग प्राप्त हु
और पवित्र जीवन व्यतीत कर दीक्षिता हो छः वर्ष तक सं
पाल पति से पहिले स्वर्ग में पधारने का सौभाग्य प्राप्त हुआ,
भी इसी प्रवृत्ति से परिणाम हुआ ऐसा अनुमान करना अनुचि
ऐसा कोई कह सकेगा ? हां ! श्रीलालजी का हृदय उस
रंग से रंगा हुआ था और ज्ञानाभ्यास की उन्हें अपरिमित प्रि
थी यह बात निर्विवाद है परन्तु दीक्षा लेने का दृढ निश्चय
समय था या नहीं यह निश्चयात्मक रीति से नहीं कह सकते।

मेवाड़ के नामदार महाराणा श्री के मुख्य सलाहकार और
पूज्यश्री का परम भक्त श्रीमान् कोठारीजी श्री बलवंत-
सिंहजी साहिब, श्री उदयपुर.

टोंकनी रसीया टेकरीपर संसारी श्रीलालजी.

लग्न के समय मानकुंवर बाई की वय बहुत छोटी अर्थात्
ठ नौ वर्ष की थी। इसलिये वे उसी समय पिअर गईं और तीन
तक वे पिअर में ही रहीं। मारवाड़ में प्रथा है कि योग्य उमर
र के पश्चात् गोना देते हैं परन्तु जो लग्नादि कोई प्रसंग श्वसुर-
में हो तो थोड़े दिन के लिये नववधू को बुला लेते हैं। परन्तु
लालजी के लग्न हुए पश्चात् ऐसा कोई खास अवसर न आया
से मानकुंवर बाई तीन वर्ष पितृगृह में ही रहीं।

इधर श्रीलालजी का वैराग्य बढ़ता ही गया। संसार पर
रुचि हुई। व्यापारादि में उनका चित्त न लगता। ज्ञानाध्ययन
सत्समागम में और धर्मध्यान करने में ही वे निरन्तर दत्तचित्त
ने लगे। तपस्वीजी पन्नालालजी तथा गम्भीरमलजी के सत्संग
र सदुपदेश का इनके चित्त पर भारी प्रभाव गिरा। उनके पास
ज्ञानाध्ययन करने में ही वे अपने समय का सदुपयोग करने लगे।

श्रीजी बारह वर्ष के थे तब एक दिन वे सामायिक व्रत कर
न श्रीगंभीरमलजी का व्याख्यान प्रेमपूर्वक सुन रहे थे इतने में
[illegible] निवासी श्रीयुत चुन्नीलालजी शाह कि, जो रतलाम वाले
[illegible] श्रीपचन्दजी की टोंक की दुकान पर मुनीम थे
[illegible] में आये। चुन्नीलालजी शास्त्र के ज्ञाता, तत्वात, बुद्धि
[illegible] और वयोवृद्ध श्रावक थे। सामुद्रिक और ज्योतिष-

शास्त्र में भी उनका ज्ञान प्रशंसनीय था। वे भी श्रीजी की पं
में ही सामायिक करके बैठे थे। अकस्मात् उनकी दृष्टि श्रीलाल
पर पड़ी। श्रीजी के शारीरिक लक्षण को बार २ निरखने लगे
व्याख्यान पूर्ण होने पश्चात् अपनी कोठी पर गए और भोजनां
से निवृत्त हो दुकान पर आये। थोड़े समय पश्चात् हीरालाल
बस्त्र भी कार्यवशात् चुन्नीलालजी डागा की दुकान पर गए, त
चुन्नीलालजी डागा हीरालालजी से कहने लगे कि "श्रीला
आज प्रातःकाल व्याख्यान में मेरे पास ही बैठा था। उसके शा
रिक लक्षण मैंने तपास कर देखे। मुझे आश्चर्य होता है कि
तुम्हारे घर में गोदड़ी में गोरख क्यों? यह कोई साधारण मनु
नहीं। परन्तु बड़ा संस्कारी जीव है। सामुद्रिक शास्त्र सच्चा
और मेरे गुरु की ओर से मिली हुई प्रसादी सच्ची हो तो
छाती ठोककर कहता हूं कि यह तुम्हारा भतीजा आगे जा
कोई महान् पुरुष निकलेगा। जहां तक मेरी बुद्धि पहुंच सकी
तक मैंने गहन विचार किया तो मैंने यही सार निकाला कि
रकम तुम्हारे घर में रहना मुश्किल है।" श्रीयुत हीरालालजी
ये शब्द सुनकर स्तब्ध ही हो गए।

कई समय श्रीजी शहर के बाहर निकलकर पास के प
पर चले जाते और वहां घंटों ठहरते। वहां के नैसर्गिक दृश्य

अपार लीला देखते २ मस्तिष्क में एक के पश्चात् एक
विचार तरंगें लाते। वहां पर कोई २ समय तो तत्व
ऐसे निमग्न हो जाते कि कितना समय हुआ यह भाव
रहता। श्रीजी कहा करते कि पर्वत पर का निवास मुझे
ता लगता था। घर में भी वे अपनी तीन मंजिल वाली
वेली में * चांदनी पर विशेषतः अपनी बैठक रखते।
बिल्कुल समीप नेत्रों को परमोत्साह देने वाली पर्वतश्रेणियां
में भी दृष्टिगोचर होती थीं। टोंक के समीप की ऊंची
सिक रसिया की टेकरी मानो तत्ववेत्ताओं का सिंहासन हो
आभास दिखाती और अपनी पीठ पर आराम लेने के वास्ते
को पुनः २ आमन्त्रित करती हुई मालूम होती थी। श्रीजी
स आमन्त्रण को पुनः २ स्वीकारते और उत्साह से उसके
शृंग पर चढ़ते। आसपास का अनुपम सृष्टिसौंदर्य उनके
मस्तिष्क को शांति देता। विशाल वृक्षों के पल्लव पंखे का
कर आतिथ्य धर्म बजाते, कोयलों की मीठी कुहुक और मयूरों
... रूपी संगीत आगत मिहमान का मनोरंजन
... फैलाता हुआ ठंडा स्वच्छ समीर चारों ओर फैली
... शांति और प्राकृतिक अद्भुत कलाओं का प्रदर्शन

---

* ... मकान का चित्र।

श्रमित मगज़ को तर कर देने में परस्पर स्पर्द्धा करते थे। श्राबू
उद्‌पन्न और अरवली तथा उदयपुर ※ के तालाब का पानी पी
पुष्ट हुआ बनास नामक विशाल सरित्प्रवाह अनेक आश्रितों
शान्ति देता। अपने उभय तट पर खड़े आम्रादि वृक्षों को पो
और परोपकार परायण जीवन विताने का अमूल्य बोध
सिखाता, धीमी गति से बहता था। आम्रवृक्ष फल आने पर अ
नीचे झुक विनय का पाठ सिखाते और अपने मिष्ट फलों
दुनियां में परमार्थ बुद्धि की प्रभावना करने को ही उत्पन्न हुए हों ऐ
प्रतीति दिलाते थे। एक बाजू पर लगे हुए बट वृक्ष पर दृष्टि गि
ही यह सूचना मिलती थी कि राई जैसे बीज से ऐसी बड़ी व
हो जाती है। संसार में जरा फंसे तो अंगुली पकड़ते पहुं
पकड़ेंगे।

संसार में फंसते हुए को बचाने का उपदेश देने वाले वट
का आभार मानते। श्रीजी के तात्विक विचार भावी जीवन
इमारत की नींव दृढ करते थे। कठिन पत्थरों से टकरा कर आ
करने वाली सरिता के तट पर रसेन्द्रिय की लोलुपता के कारण

※ उदयपुर के सरोवर से निकली हुई बडच नदी बन
जा मिलती है।

ो भोग दी हुई तड़फती मछलियां कदाचित् उनके दृष्टिगत होतीं
े इन्द्रियों के वश न करने वाले विचारों को पुष्टि मिलती थी।

सूर्यास्त पहिले पहुंचने की तेजी में नीचे उतरते सामने ही
ल झाड़ दिखते, फैला हुआ पराग मगज़ को तर करता, परन्तु
टे हुए अंकुर, खिली हुई कलियां, फूले हुए फूल और नीचे गिरे
ए, मिट्टी में मिले कुम्हलाये हुए पुष्प जीवन की बाल, युवा,
ढा और वृद्धावस्था तथा जीवन मृत्यु का प्रत्यक्ष चित्र खड़ा करते
ौर श्रीजी प्रकृति की समस्त कलाएं देखते, पास के पत्थर पर बैठ
ाते थे। प्रत्येक पत्थर, प्रत्येक पान और भूविहारी प्रत्येक पक्षी,
ानो स्वार्थमय और परिवर्तनशील संसार का नाटक करते हों ऐसा
ालूम होता था। समीप में बहते हुए झरने को मानो जीभ आई
ो इस तरह पत्थर के साथ का विवाद इस नाटक में संगीत का
[illegible] था "जैसी दृष्टि वैसी सृष्टि" इस नैसर्गिक नियमानुसार
[illegible] सब दृश्य और सब घटनाएं श्रीजी को वैराग्य की ही शिक्षा
[illegible] थी।

प्रकृति की रचनाओं ने मस्तिष्क के परमाणुओं पर इतनी
[illegible] सत्ता जमा ली थी कि राह में भी वे ही विचार स्फुरित
[illegible] रहते थे।

"सुशोभित ने सुगंधी छे छता कांटा गुलाबे छे,
पूरा प्रेमी पपैयाने, तृषातुर केम राखे छे।
मनोहर कंठनी कोयल करी कां तेहने काली ?
हलाहल झेर छे जेमां सफेदी सोमले मूकी
रुडो रजनी तणों राजा, कलंकित चन्द्र कां कीधो,
जनाल्यों केम क्षयरोगी ? अरे अपवाद कां दीधो

मणिकांत

प्रकृति की अमूल्य शिक्षा से श्रीजी के हृदय में वृद्धि प
हुआ वैराग्य भाव उनकी कोमलता और सत्यप्रियता के का
वचन और व्यवहार में भी व्यक्त होने लगा। केवल मित्रों से
नहीं परन्तु अब तो माता और भ्राता के समक्ष भी मानवज
की दुर्लभता, संसार की असारता और साधु जीवन की श्रेष्ठता इस
आशय के वाक्य श्रीजी के मुखारबिंद से पुनः २ निकलने लगे
गृहकार्य में तनिक भी ध्यान न देते केवल सत्समागम श
ध्ययन और एकान्तवास में ही वे समय बिताने लगे।

श्रीलालजी की यह सब प्रवृत्ति और संसार की ओर से
सीन वृत्ति देख उनकी माता प्रभृति सम्बन्धीजन के चित्त चि
ग्रस्त हुए। जो माता अपने पुत्र का धर्म पर अति अनुराग दे

स आल्हादित होती थी, वही माता पुत्र के वैराग्यमय वचनामृत
आज सुनना नहीं चाहती । उनका धर्ममय व्यवहार उन्हें अति
चिकर–अस्वस्थकर मालूम होने लगा । साधु साध्वी की सेवा
रणा तथा उनकी सत्संगति में रहना ही जिसने अपना कर्त्तव्य
। लिया है वही साध्वी स्त्री सांसारिक मोह के कारण अपने
। का साधुओं के सत्संग में रहना नहीं देख सकती । उनका
न्तःकरण उनका सत्संग छुड़ाना चाहता है । सांसारिक प्रेम गांठ
के मन में घोटाला किया करती है परन्तु वे अपने अभिप्रायों
। स्पष्ट शब्दों में पुत्र के सामने व्यक्त नहीं कर सकती थीं ।
हा ! यह संसार के राग का कितना अधिक प्राबल्य है ।

अध्यापक गेटसे के किये हुए प्रयोगों से सिद्ध हुआ है कि:—
[illegible] वृत्तियां पुष्टिकारक रासायनिकतत्त्व उत्पन्न करती हैं । शरीर
परमाणुओं को शक्ति उत्पन्न करने के लिये उत्तेजित करती
[illegible] है । क्रोध, घृणा और दूसरी दुर्वृत्तियां शरीर में हानिकारक
[illegible] पदार्थ उत्पन्न करती हैं जिसमें से कितने ही अत्यन्त
[illegible] होते हैं । प्रत्येक दुर्वृत्ति शरीर में रासायनिक हेरफेर करती
। मन में उत्पन्न हर एक विचार मस्तिष्क के परमाणुओं की
[illegible] में हेरफेर करते हैं और यह परिवर्तन कुछ न कुछ अंश में
[illegible] रहता है ।

माता और भ्राता इत्यादि कुटुम्बी जनों को इस समय [illegible] एक ही विचार आश्वासन देता था। वे ऐसा मानते थे कि, इन[illegible] बहु के यहां आने पर इनके विचारों में परिवर्तन हो जायगा[illegible] इसी आशा में वे योंही दिन बिताने लगे।

आशा यही रागपाश में फंसे हुए प्राणियों की प्राणदा[illegible] बूटी है। यह मनुष्य के मानसिक प्रदेश में प्रविष्ट हो भविष्य[illegible] लिये नई २ रम्य इमारतें चुनती है और आश्रितों को आश्व[illegible] देती रहती है।

सं० १६३६ में श्रीजी की धर्मपत्नी मानकुंवर बाई को [illegible] से गोना ले टोंक ले आये, उस समय उनकी उम्र १२-१३ [illegible] की थी। पुत्रवधू के आगमन से सास का हृदय आनन्द से [illegible] गया और उन्हें उनके विनयादि गुण और योग्यता देखक[illegible] अपनी आशा सफल होने के संकेत मालूम हुए। श्रीजी के [illegible] स्थायी मित्र भी उसकी परीक्षा करना चाहते थे कि, श्रीजी का [illegible] पतंग के रंग जैसा क्षणिक है या मजीठ के रंग जैसा है [illegible] परीक्षा का क्या परिणाम होता है तथा श्रीजी के कुटुम्बादि[illegible] की आशा कितने अंश तक सफल होती है यह अब देखना [illegible]

श्रीजी ने कई वचनामृत जेब में रखने की छोटी पुस्त[illegible]

ार लिये थे उनमें से नीचे के वचनामृत का स्मरण वे बारम्बार या करते थे।

प्रियास्नेहो यस्मिन्निगडसदृशो यामिकभटो
यमः स्वीयो वर्गो धनमभिनवं बन्धनमिव ।
सदाऽमेध्यापूर्णं व्यसनबिलसंसर्गविषमं
भवः कारागेहं तदिह न रतिः क्वापि विदुषाम् ॥

भावार्थ—संसार में स्त्रियों का स्नेह श्रृंखला के बंधन जैसा ा भटकते हुए योधे जैसा है। अपना कुटुम्बी वर्ग यमराज के ान, लक्ष्मी नई जात की बेड़ी के समान है और संसार अप- त्र वस्तुओं से लीन दुःखदाई दीनों के संसर्ग जैसा भयंकर है। संसार यह सचमुच कारागृह ही है और इसीलिये विद्वान् मनुष्यों प्रीति इसके किसी स्थल पर भी नहीं नजर आती।

अध्याय ३ रा.

भीषण प्रतिज्ञा ।

श्रीजी नित्य की तरह अपने परोपकारी गुरुवर्य का व्याख्यान आज भी प्रेमपूर्वक सुन रहे हैं। वीर प्रभु की अमृत मय वाणी के पान से श्रोताजनों के हृदय भी आनंद से झलकने लगते हैं। व्याख्यान में आज ब्रह्मचर्य का विषय है। ब्रह्मचर्य सब सद्गुणों का नायक है, ब्रह्मचर्य स्वर्ग मोक्ष का दायक है, ब्रह्मचारी भगवान के समान है, देव, दानव, गंधर्व, यक्ष, राक्षस, किन्नर और बड़े चक्रवर्ती राजा भी ब्रह्मचारी के चरण कमल में सिर झुकाते हैं और उनकी पूजा करते हैं इत्यादि सार से भरी हुई सूत्र की गाथाएं एकके पश्चात् एक पढ़ी जाती है और रहस्य समझाया जाता है। बीच २ में नेमनाथ, राजेमती, जम्बू कुंवार विजय सेठ, विजयारानी इत्यादि आदर्श ब्रह्मचारियों के दृष्टान्त भी दिये जाते हैं और उन यशोगान गाये जाते हैं।

एक ब्रह्मचारी पूज्य पुरुष के मुखारविन्द से ब्रह्मचर्य धर्म इस प्रकार अपार महिमा सुन श्रीजी के हृदय सागर में इच्छा की उमंगें उठने लगीं, तरंगों से क्षुभित महासागर की तरह उ

ःकरण विचारतरंगों से भर गया और व्याख्यान पूर्ण होते ही
मपान की परवाह त्याग अपनी पूर्व परिचित-प्रिय टेकरी की ओर
ाण किया, वहां एकांत में एक शिला पट पर बैठ कर वे
ार करने लगे " एक छोटी बाल वय की सुकुमार कन्या का
। पकड़कर मैं यहां ले आया हूं, मुझे समझाते हैं कि उनका भव
ाड़ना महा पाप है तो जम्बूकुमार का मोक्ष होना असंभव है
र्थंकर पद प्राप्त श्रीनेमिनाथ भगवान् ने भी ऐसा क्यों किया ?
हृदय में उस पर दया है, अनुकम्पा है। मेरे संसार त्यागने से
ो कितना महान् कष्ट होगा यह सब मैं जानता हूं, परन्तु एक ही
ी की दया के कारण अनंत पुण्योदय से प्राप्त और अनंत
ी अपगुला से मुक्त करने की सामर्थ रखने वाला यह मनुष्य
ी देवों को भी दुर्लभ है मुझे हार जाना चाहिये क्या?
भोग रूपी कीच में इसे नष्ट भ्रष्ट कर डालना मेरू जैसी भूल
ा है। जिंदगी का पल भर भी विश्वास नहीं और यौवन तो
दिन की चांदनी है यह विद्युत् के चमत्कार की नांई क्षणिक
भर चमक लुप्त हो जायगा, एक पुल पर से वेग से जाने
ी जाते हुए देर नहीं लगती, इसीतरह इस युवावस्था
न लगेगी काल की अनंतता का विचार करते
आयुष्य भी विद्युत् के चमत्कार जैसा ही है। इतने से
के लिये मेरे या इनके क्षणिक सुख दुःख का मुझे

क्यों विचार करना चाहिये ? हाड, मांस, चर्म और रक्त से बने हु
इस क्षणभंगुर शरीर पर के मोह भाव ही बंधन और दुःख
कारण हैं जैसे कमल पत्र पर पड़ा हुआ तुषार बिंदु थोड़े समय त
मोती माफिक शोभा दे अदृश्य हो जाता है उसीतरह यह श
यौवन, स्त्री और संसार के सर्व वैभव भी अवश्य अदृश्य हो जा
इन सब के लिये मैं अपनी अविनाशी आत्मा का हित न बिग
दूं । यह समस्त संसार स्वार्थी है, जबतक वृक्ष पर फल होते हैं
तक ही सब पक्षी आकर उसका आश्रय लेते हैं और फल र
होते ही उसको त्याग सब चले जाते हैं. अगर मैं विषयों को
त्यागूं तौ भी यौवन वय का अन्त आते ही इन्द्रियों का बल ह
हो जायगा और ये विषय भोग भी मुझे छोड़ चले जांयगे. अ
मेरी आत्मा को अधोगति की गहरी खाई में ढकेलते जांयगे,
लिये इन विष सरीखे विषयों का मुझे अभी से ही त्याग क्यों
करना चाहिये ? इन विचारों के परिणाम से श्रीजी यही नि
कर सके कि बस ! मैं तो अब विषयों का परित्याग कर ब्रह्म
की ही सेवा ग्रहण करूंगा ।

उस समय ऊपर की वृक्ष-लतायों में से सुंदर सुगंधित
श्रीजी के शरीर पर गिर पड़े, वृक्षों परके पक्षी मानो श्रीजी की द
की तारीफ करते हों और प्रतिज्ञा अटल पालने का आग्रह करते

...और रु... मधुर संगीत अलाप आलापने लगे। सूर्य नारायण की किरणें
...बंधन ...वृत्तों को भेद श्रीजी के मस्तक पर विजय ताज पहिराती हों
...बिंदु धा... भास होने लगा, सृष्टि देवी ने श्रीजी के साथ सहानुभूति
...तिता ...ाने के लिये ही यह व्यवस्था क्यों न रची हो ?

...अहा ! कैसा मांगलिक शब्द ! कैसा अपूर्व व्रत ! कैसी दिव्य
...ना ! कैसा विशुद्ध जीवन ! बस बस मैं ऐसे ही पवित्र जीवन
...ाऊंगा. यही कल्याणप्रद मार्ग ग्रहण करूंगा और जन समाज
...भी इसी मार्ग पर खींचूंगा जिसके लिये मेरा हृदय चिंतातुर
...ा है. इसके लिये भी यही निर्भय और कल्याणकारी मार्ग
...ा । अखंड ब्रह्मचर्य, यही मेरे जीवन की अभिलाषा हो ।
...ित सुखों की अब मुझे तनिक भी इच्छा नहीं, इंद्रिय
...का विचार भी अब मुझे विष सम दुखदाई मालूम
... मैं अब इंद्रियों का दमन तप आदरूंगा, संयम
...करूंगा ब्रह्मचारियों का गुण कीर्त्तन करूंगा, प्रभु का ध्यान
...ान ...ादि गुण अपनी आत्मा में प्रकटाऊंगा, ब्रह्मचर्य
...ी ...ोनियों रत्नमाला को मैं अपने कंठ में धारण करूंगा
...मैं ब्रह्मचर्य का दिव्य प्रकाश फैलाऊंगा । विषय वासना
...र ...करी ...ंखला से मैं अपने शरीर
...न को ...त नहीं होने दूंगा शील के ...

का विनाश होता हो तो बेशक हो " नत्थि जीवस्स नासोत्ति
इस वीरवाक्य पर मुझे पूर्ण श्रद्धा है इसलिये मैं किसी भी
का स्पर्श तक नहीं करूंगा। अपने मन से प्रभु की साक्षी
श्रीजी ने ऐसे विशुद्ध ब्रह्मचर्य धर्म आदरने की भीषण प्रतिज्ञा
और वे अपनी आत्मा में नया उत्साह नया सतेज प्रकटा
तरफ फिरे। जुवानी में ऐसे विचार आना भी पूर्व पुण्योदय
ही फल है।

जरा जन जालवी लेजे, अरे झेरी जुवानी छे।
कलंकित कीर्त्ति ने करशे, खरे! वैरी जुवानी छे॥
अभिमाने करे अंधा करावे नीच ना धन्धा।
विचारो फेरवे सन्धा जुवानीतो गुमानी छे॥
बनाव्या कैकने कैदी, नखाव्या शीष कैक छेदी।
जुवानी शत्रु छे भेदी न मानो के मजानी छे॥
विकारो ने वलगनारी, बतावे पापनी बारी।
भुलाडे बुद्धि ना सारी, पीडा कारक पीछानी छे॥
समझ संसार ना प्राणी जुवानी मान मस्तानी।
अरे पण चार दाडांनी जुवानी जाण फानी छे॥
कथे शंकर झुठी काया झुठी संसार की माया।
जुवानीनी झुठी छाया झुठी आ जिन्दगानी छे॥
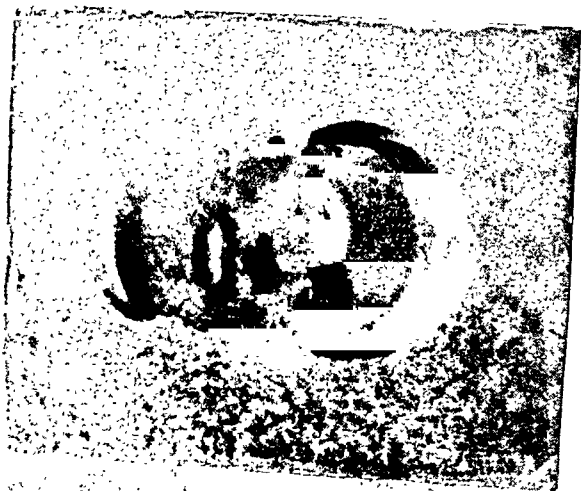
टोंकमां श्रीलालजीनुं मकान.
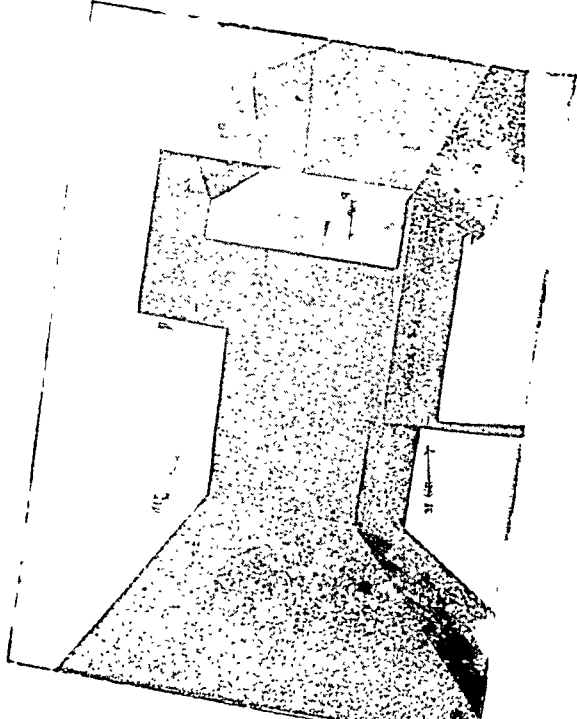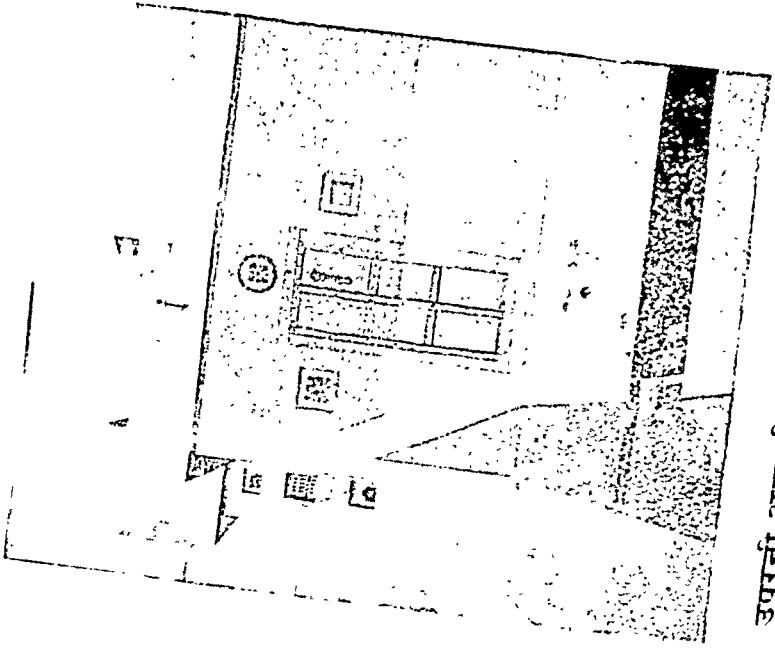
जे अगाशीमां श्रीलालजी बेसी वांचता ने ज्यांथी कूदी पड्या.

उपरनी अगाशीमांथी जे अगाशी...

मानकुंवर बाई को घर आये थोड़े ही दिन हुए। उनके विन-
रे उत्तम गुण तथा कर्त्तव्य परायणता ने घर के सब मनुष्यों
मन हर लिये। सब कोई वहु की मुक्तकंठ से प्रशंसा करता था
न्तु इससे मानकुंवर बाई को कुछ भी आनन्द न मिलता था।
ने पति की वैराग्यवृत्ति उनके हृदय को नोच खाती थी। जब २
अकेली रहतीं तब २ विचारमाला में गुंथाती और पति का मन
न तरह प्रसन्न करना तथा किन २ युक्ति प्रयुक्तियों द्वारा उनका
पात्र बनना ये उपाय सोचने में ही प्रायः वे अपना सब समय
ीत करती थीं। "विनय यही महा वशीकरण है" यह महा-
। बातें ही बात ने इन्हें सिखा दिया था, इसीलिये वे हर तरह
य, भक्ति द्वारा पति का मन प्रसन्न करने का प्रयत्न करतीं थीं
ु श्रीजी तो प्रायः इससे दूर ही रहना पसन्द करते थे।

विशेष कर वे पृथक् हवेली के पृथक् स्थान पर ही सोते, कचित्
ालाप करते और अधिक समय पढ़ने लिखने या धर्मानुष्ठान में
व्यतीत करते थे। ऐसा होते भी उनकी पत्नी को यह मान्यता
कि धीरे २ पति की मति को ठिकाने ला सकूंगी। उनके सासुजी
। प्रायः यही आश्वासन देते रहते थे, परन्तु आज का व्याख्यान
ने के पश्चात् मार्ग पर की हुई प्रतिज्ञा के कारण श्रीजी के विचार,
और व्यवहार में एकाएक बहुत परिवर्तन होगया। पत्नी के
ास हास्यकौतुक और वार्तालाप आज से हमेशा के लिये बन्द

होगया। इससे मानकुंवर बाई के हृदय में प्रज्वलित चिन्ता
घी होमा गया परन्तु वे बिल्कुल निराश न हुई अपनी प्राण
प्रिय सखी आशा का उनने सर्वथा परित्याग न किया।

पति की सेवा करने तथा अपने हृदय के उभार पति
हृदय का भार हलका करने की तीव्र अभिलाषा होते भी म
बाई कितने ही दिनों तक ऐसा अवसर न मिलने से सिर्फ
द्वारा ही हृदय का भार कम करती रहीं, कारण यह एक ही
इनके लिये खुला था। रातको तो श्रीजी उपाश्रय में या
दूसरी हवेली में संवर करके सोते। दिन में बहुत कम स
रहते। कुटुम्ब अधिक होने से दिन में एकान्त में वार्ताला
का समय मिलना दुर्लभ था और फिर श्रीजी भी दूर २
इसलिये मानकुंवर बाई के मन की सब आशाएं मन
जाती। श्रीजी के माताजी तथा उनके मित्र इत्यादि उन्हे
निवेदन कर कहते परन्तु श्रीजी के मन पर उसका कुछ
होता था।

एक दिन श्रीजी अपनी तीन मंजिली ऊंची हवेली की
में बैठे थे और जयपुर निवासी स्वर्गस्थ कवि जौहरी
चोरड़िया विरचित पद्यात्मक जम्बू चरित्र पढ़ने तथा उसक
कंठस्थ करने में लीन थे उस समय अवसर देखकर धीरे

" नजर से निरखो नाथ " इस गूंगी अर्ज का दिव्यनाद श्रीजी के श्रवणयुगल में गिरने ही न पाया---किसी भी स्त्री का स्पर्श न करना । इस प्रतिज्ञा का कहीं भंग हो जायगा इस डर से और अन्य राह न मिलने से तत्काल श्रीजी यहां से उत्तर की ओर की इस तीन मंजिल की हवेली के बरावर वाली पश्चिमी द्वार की अपनी दूसरी दो मंजिल वाली हवेली की चांदनी पर कूद पड़े * अपने इस व्यवहार पर पश्चात्ताप करती भय से धूजती मानकुंवर बाई एकदम सीढ़ियां उतर नीचे आई और यह क्या शब्दारव हुआ ऐसे सासुजी के प्रश्न का अश्रुपूर्ण नयन से खुलासा किया । तुरन्त माजी नीचे उतर दूसरी हवेली के मंजिल चढ़ पुत्र के पास दौड़ी आ पहुंचीं । खबर होते ही नाथूलालजी भी आये ।

चांदनी की समतल भूमि छोबंध होने से श्रीजी के एक पांव में सख्त चोट लगी, नस पर नस चढ़ गई । यह देखकर माजी की आंख से अश्रु बहने लगे । वे बोलीं बेटा ! ऐसा न किया कर, अब तू बालक नहीं है । इतनी ऊंचाई से कूदने पर कभी जीव की जोखम रहती है । उत्तर में श्रीजी ने कहा । माजी ! संसार की ज्वाला में जलने की अपेक्षा मैं मरना अधिक पसन्द करता हूं । उस समय हकीमजी को बुलाने के लिये नाथूलालजी चले गये थे ।

---

* देखो समीप का चित्र ।

ना साधुओं को सम्बोधन दे कहा है। श्रीजी भी गृहस्थ के वेष

साधु ही थे।

कामान्ध और विषयलुब्ध मनुष्यों को यह वृत्तान्त पढ़कर सोचना चाहिये, पश्चात्ताप करना चाहिये और अपनी आत्मा के हितार्थ इन महात्मा की सत्प्रवृत्ति का अनुकरण कर साफल्य जीवन करना चाहिये। विषयों के गुलाम न बन मन इन्द्रियों पर विजय प्राप्त करना सीखना चाहिये और ऐसा करने के लिये अनेक प्रकार के नियम निश्चय धार कर जीव की जोखम में भी वे पालने चाहिये।

अनादिकाल के अभ्यास से मन और इन्द्रिय स्वभाव से ही शब्द स्पर्शादि विषयों की ओर खिंचाकर वैषयिक सुखों में ही सर्वदा लीन रहती हैं और यही कारण है कि आत्मा की अनन्त शक्ति का भान नहीं रहता। मन बन्दर की तरह अति चंचल है। बन्दर जैसे वृक्षों पर कूदता फिरता है वैसे ही मनुष्य का मन भी नानाप्रकार के विषयों में वेग से दौड़ता रहता है। सर्व क्लेशों के नाश और परमानन्द की प्राप्ति के लिये मन की ऐसी चंचलता और विषयासक्त स्वभाव के ध्वंस करने की खास जरूरत है। कोई एक महाभाग विरले पुरुष ही ऐसा कर सकते हैं। श्रीलालजी ने बालवय से ही वैषयिक सुखों को परित्याग करने में अद्भुत परा-

जहा बिराला वसहस्स मूले न मूसगाणं वसही पसत्था।
एमेव इत्थीनिलयस्स मज्झे न बंभयारिस्स खमो निवासो॥

अर्थ—जहां बिल्ली रहती हो वहां चूहे का रहना ठीक नहीं
इसी तरह जहां स्त्री का निवास हो वहां ब्रह्मचारी का रहना श्रेय-
कारी नहीं।

श्री दशवैकालिक सूत्र में कहा है कि :—

हत्थपायपडिच्छिन्नं कन्नं नासं विकप्पियं।
अविवाससयं नारिं बंभयारी विवज्जए॥

अर्थ—जिसके हाथ पांव छिन्न भिन्न हैं कान और नाक भी
कटे हैं और सौ वर्ष की बुढ़िया है ऐसी स्त्री का भी ब्रह्मचारी को
सहवास न करना चाहिये।

जहा कुक्कुटपोयस्स निच्चं कुललओ भयं।
एवं खु बंभयारिस्स, इत्थिविग्गहो भयं॥

अर्थ—जैसे कुक्कुट के बच्चे को हमेशा बिल्ली का भय रहता
है तैसे ही ब्रह्मचारी को स्त्री की देह से भय उत्पन्न होता है।

श्री वीर प्रभु ने पवित्र जिनागम में ब्रह्मचर्य की भूरी
प्रशंसा की है और ब्रह्मचर्य के भंग करने की अपेक्षा मरना भी

अध्याय ४ था

वैराग्य का वेग।

उपर्युक्त घटना के बीतने के थोड़े दिन पश्चात् श्रीजी ने अपनी माता के पास से विनयपूर्वक दीक्षा के लिये अनुमति मांगी। माजी के कोमल हृदय पर ये शब्द वज्राघात जैसे प्रहारी हुए तो भी इन्होंने धैर्य धारण किया कारण ऐसे ही मतलब वाले शब्द वे आज से पहिले कई समय पुत्र के मुख से सुन चुकी थीं इस समय उनने इतना ही उत्तर दिया कि " संसार में रहकर भी धर्म, ध्यान क्या नहीं हो सकता? हमारी दया न आती हो तो कुछ नहीं परन्तु इस विचारी के ऊपर तो तुझे कुछ दया लानी चाहिये इसका जन्म बिगाड़कर जाना यह महा अन्याय है। फिर भी अगर तुझे दीक्षा लेना है तो मेरा वचन मानकर थोड़े वर्ष संसार में ठिका।" इतना कहते २ उनका हृदय भर गया और आंख में से आंसू गिरने लगे। श्रीजी ने अपना दृढ निश्चय दिखाते हुए कहा कि " माजी! आप कोटि उपाय करो तो भी मैं अब संसार में रहने वाला नहीं हूं। मुझे अब आज्ञा देओ तो संयम आराधन कर अपनी आत्मा का कल्याण करूं। आयुष्य का क्षण भर का विश्वास नहीं है।"

क्रम दिखाया। इससे उनका चरित्र प्रत्येक मनुष्य के मनन करने योग्य, अनुकरण करने योग्य और स्मरण में रखने योग्य है।

दीक्षा लेने के पश्चात् श्रीजी के उपदेश में ब्रह्मचर्य के लिये हमेशा बहुत जोर रहता था। ब्रह्मचर्य के निर्वाहार्थ शिष्यों के आहार विहार की तरफ भी वे बहुत ध्यान देते थे और यही कारण था कि इनकी सम्प्रदाय में ढीला पोला साधु न टिक सकता था।
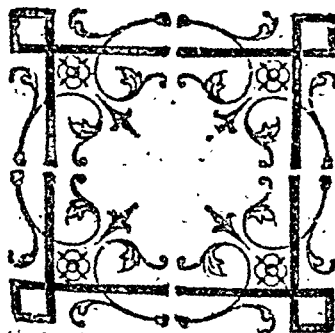
महाराज के दर्शन करने का अपने मन में निश्चय किया और ब
को विनय-पूर्वक अपना अभिप्राय दर्शाया । परन्तु उन्होंने जाने
आज्ञा न दी । उस समय पूज्य श्री रतलाम शहर में विराजते थे
रेलवे में बैठने के लिये टोंक से ६० मील दूर जयपुर स्टेशन प
उस समय जाना पड़ता था । श्रीजी ने एक दिन मौका देख घर
मनुष्यों से बिना कहे टोंक से जयपुर तक का २० रुपये किराय
ठहरा दूसरे मनुष्य को न बिठाने की शर्त से तांगा किराये किया औ
जयपुर से ट्रेन में बैठ सीधे रतलाम पहुंचे । पूज्य श्री के दर्शन क
नेत्र पवित्र किये और उनकी अमृत समान मिष्ट वाणी श्रवण क
कान पवित्र किये । यहां सेठ नाथूलालजी वगैरह को यह हकीकत
मालूम हुई तो वे बड़े चिन्ताग्रस्त हुए । सेठ हीरालालजी घर आ
श्रीजी की माता चांदकुंवर बाई को उपालंभ देने लगे कि "तुमने
छोटी वय से अपने पुत्र को धर्म का रंग जोरशोर से लगाया इसीका
यह नतीजा तुम देख रही हो !" सारांश श्रीलालजी को छोटी उम्र
से ही धर्म में लगाया जिसका यह दारुण परिणाम तुम्हारे आंखों के
सामने है ।

दूसरे दिन नाथूलालजी टोंक से रवाना हो जयपुर होकर
रतलाम पहुंचे । यहां पूज्य श्री को वन्दना कर बैठ गये । तब पूज्य
श्री ने पूछा 'कहां रहते हो' नाथूलालजी ने कहा 'टोंक रहता हूं
महाराज !' तब पूज्य श्री ने कहा 'कल ही टोंक से एक भाई

माजी के कहने से इस बात की खबर नाथूलालजी को और फिर सेठ हीरालालजी को हुई। सेट हीरालालजी ने श्रीलालजी को बुलाकर कहा कि, खबरदार! दीक्षा का किसी दिन नाम भी लिया है तो! आज से तूने साधु के पास भी किसी दिन नहीं जाना। साधु तो निठल्ले बैठे २ लड़कों को चढ़ा मारते हैं।" इन शब्दों से श्रीलालजी के हृदय में बहुत दुःख हुआ। उन्होंने बोलने का प्रयत्न तो किया, परन्तु कुछ बोल न सके। अपने पिता के बड़े भाई हीरालालजी की आज्ञा का उनने कभी उल्लंघन नहीं किया था तो उनके सामने बोलना भी उन्हें दुःसाध्य था। सेठ हीरालालजी ने नाथूलालजी से भी कहा कि "इसकी बहुत संभाल रखना और साधु के पास इसे बिल्कुल मत जाने देना"।

हीरालालजी सेठ की सख्त मनाई होने पर भी श्रीलालजी गुप्तरीति से अपने गुरु के पास जाने लगे। सद्गुरु का वियोग वे न सह सके। सत्संग में कोई अनोखी आकर्षण शक्ति रहती है। श्रीजी की उत्तम ज्ञानाभिलाषा और सत्संग के आकर्षण के समीप सेठ हीरालालजी की ओर का भय कुछ गिनती में न था।

एक दिन श्रीजी ने परमप्रतापी पूज्य श्री उदयसागरजी *

---

* इन महापुरुष का जीवन-चरित्र गुर्वावली में दिया है।

जी कस्तूरचन्दजी तथा मगनलालजी महाराज विराजते थे
के दर्शन किये मुनि श्री मगनलालजी महाराज कि जो विद्यमान
चार्य श्री जवाहिरलालजी महाराज के गुरु थे उनको सज्झाय
रने की अनुपम और अति आकर्षकशैली ❋ देख श्रीलालजी
नन्दाश्चर्य हुए और इनकी सेवा में थोड़े दिन रहना मिले तो
या अच्छा हो ? ऐसा सोचने लगे, परन्तु भाई की इच्छा के
ारण वे दूसरे दिन जावद आये। वहां श्री तेजसिंहजी महाराज
मूलि मुनिराज विराजते थे, उनके दर्शन किये और फिर दोनों
ाई टोंक आये। नाथूलालजी का अपने छोटे भाई (श्रीजी) पर
हुत प्रेम था। उन्हें हरतरह खुश रखना ऐसी उनकी खास इच्छा
थी। इसीलिये राह में श्रीजी की मर्जी सम्पादन करने के लिये वे
उनको महन्त पुरुषों के दर्शन तथा उनकी वाणी श्रवण करने कराने
[illegible] थे। उस समय नाथूलालजी की और २० श्रीजी की १५ वर्ष
की उम्र थी।

टोंक आये पश्चात् श्रीजी बाहर की हवेली में अकेले रहते
और पठन पाठन तथा धर्मानुष्ठान से जीवन सार्थक करते थे। उन्हें
संसार कारागृह लगता था। दीक्षा ले आत्महित साधने की उनकी प्रबल

❋ सज्झाय करने की ऐसी ही शैली श्रीजी महाराज को भी प्राप्त
हो गई थी और यह प्रतापी मगनलालजी महाराज की ओर से ही
[illegible] हुई है ऐसा वे कहा करते थे।

श्रीधर भी आया है विशेषता में पूज्य श्री ने फरमाया कि उसका नाम तो श्रीलाल है परन्तु उसके गुणों की ओर ध्यान देते श्रीधर कहना मुझे बड़ा अच्छा लगता है ' अपने छोटे भाई की ऐसे महापुरुष के मुंह से प्रशंसा सुनकर नाथूलालजी को कुछ आनन्द हुआ परन्तु पूज्य श्री के मुंह से ऐसे शब्द सुनकर उन्हें यह भी भास हुआ कि श्रीजी अब अपने घर में रहेंगे यह होना अशक्य है।

थोड़े ही समय में श्रीजी आकर अपने भाई से मिले और मिलते ही प्रश्न किया कि " भाई ! क्या आज ही तुम्हारे साथ मुझे पीछा घर जाना पड़ेगा ? मुझे यहां थोड़े दिन पूज्य श्री की सेवा का लाभ नहीं लेने दोगे ? नाथूलालजी ने कहा 'बड़े स्थानक में पूज्य श्री धर्मदासजी महाराज की सम्प्रदाय के मोखमसिंहजी महाराज विराजते हैं उनके दर्शन कर रवाना होना है। उस समय कुछ आनाकानी न कर अपने बड़े भाई के साथ वे चल पड़े, यह उनके हृदय की मृदुता और विनय गुण की पराकाष्ठा की सूचना है। चलते समय उन्होंने बड़े भाई से एक वचन मांग लिया था कि, मैं घर तो आता हूं परन्तु जिस हवेली में आप सब रहते हो उसमें मैं नहीं रहूंगा। बाहर की हवेली में अकेला ही रहूंगा। भाई ने उनकी यह बात मंजूर की।

रतलाम से रवाना हो वे जावरे आये। वहां मुनि श्री राज-

लिये इनके प्रवास समय में इनके कुटुम्बीजनों ने ऐसी चिन्ता-
त स्थिति में अपने दिन निर्गमन किये. यह आगे देखिये।

आपश्री टोंक से रवाना हुए उसके दूसरे ही दिन इनके भाई
नाथूलालजी उनकी तलाश में निकले और जयपुर स्टेशन आये
परन्तु अब किधर जाऊं यह राह उन्हे नहीं सूझी ; बहुत सोच
विचार के पश्चात् उन्होंने निश्चय किया कि जहां २ विद्वान्
मुनिराज विराजते होंगे वहां जाकर तपास करना चाहिए। ऐसा
सोच के अजमेर, नयेशहर, रतलाम बीकानेर, नागोर, जोधपुर,
दिल्ही, आगरा आदि २ कई शहरों में घूमे, परन्तु किसी भी स्थान
पर भाई का पता न मालूम हुआ। फिर निराश हो घर आये। माजी
[illegible] को श्री धीलालजी का पता न मिलने के समाचारों से बड़ा
दुःख हुआ नाथूलालजी ने रोज चारों ओर पत्र लिखना प्रारंभ
किये थे। एक महीने बीते पश्चात् एक समय माजी ने सजल
नयनों से नाथूलालजी को कहा।

[illegible] का कहीं पता न लगा ऐसा कह कर तूं चुपचाप
[illegible] बैठा रहता है यह ठीक नहीं यह सुनकर नाथूलालजी का
[illegible] भर आया। मातु श्री की ओर इनका अतुलित पूज्य भाव था,
[illegible] किसी भी तरह से न दुखाना यह इनका दृढ निश्चय
[illegible] इसलिये मातु श्री के ये शब्द कर्णपट्ट पर गिरते ही वे फिर

उत्कंठा थी । इसके विरुद्ध उनके कुटुम्बीजनों की इच्छा किसी भी तरह किसी भी युक्ति प्रयुक्ति से या अन्तमें बलात्कारसे भी संसारमें रखने की थी । जैनशास्त्र का ऐसा क़ायदा है कि जबतक बड़ों की आज्ञा न मिले तबतक दीक्षित न हो सके । श्रीजी ने बहुत २ प्रयत्न किये, परन्तु आज्ञा नहीं मिली । इससे श्रीजी को बहुत दुःख हुआ और ऐसा निश्चय किया कि अब तो किसी दूर देश में जाकर सन्त महन्त की सेवा कर जैन सूत्रों का अभ्यास कर आत्महित साधना चाहिये ।

ऐसा विचार कर एक समय वे गुपचुप घर से निकले और जयपुर आ रेल में बैठ गुजरात काठियावाड़ की ओर चले गए और वहां कई साधु-महात्माओं से समागम हुआ । श्रीजी का विनय गुण, ज्ञानवृद्धि के लिये आधारभूत हुआ । काठियावाड़ से कच्छभुज की तरफ हो रण रस्ते थराद होकर वे फिर गुजरात में आये और वहां से मुनि श्री चौथमलजी महाराज मेवाड़ में विचरते हैं ऐसी खबर पा ज्ञानाभ्यास की तीव्र जिज्ञासा से मेवाड़ तरफ गए और नाथद्वारा में मुनि श्री चौथमलजी महाराज की सेवा में रह ज्ञानाभ्यास करने लगे । वहां से किसी ने यह खबर टोंक पहुंचाई ।

श्रीजी ने टोंक छोड़ी तब से आजतक टोंक पत्र न लिखा था तथा किसी साधन द्वारा भी कुटुम्बियों को इनका पता न मिला था ।

के लिये चाहे जैसी सचोट युक्तियां भिड़ाई जातीं तो भी प्रत्युत्तर श्रीजी बहुत उत्तम रीति से देते थे। मोह की उपता और उत्कृष्ट वैराग्य आत्मा में स्थित प्रज्ञापना प्रकटाता है। पुरुषों के सामने प्रकृति हमेशा नानावस्था में ही खड़ी है। सत्य उन्हें कहीं ढूंढने नहीं जाना पड़ता। वे स्वतः ही की साक्षात् मूर्त्ति रहते हैं। श्रीजी महाराज ने मोह—रिपु को से पराजित किया था, इसलिये उनकी मति अति निर्मल थी और यही कारण था कि, श्रीजी के उपदेशात्मक और शब्द प्रहारों से माजी के मन पर गहन असर होता था; सेठ हीरालालजी की इच्छा के प्रतिकूल वे निश्चयात्मक रीति भी कहने की हिम्मत न कर सकतीं थीं।

अध्याय ५ वाँ.

विघ्न पर विघ्न ।

ऐसी संकटमयी हालत में दो एक वर्ष व्यतीत होगए । श्रीलाल की उमर १७ वर्ष की हुई । आज्ञा के लिये उनके सफल प्रय निष्फल गए और दिन पर दिन अधिक सख्ती होने लगी । मुनिराजों के दर्शन, शास्त्र श्रवण और पठन पाठन में उनके कुटु जनों की ओर से होते हुए विघ्न उन्हें अतिशय असह्य होगए बिन अपराध कैद में डाल रखना यह बड़ों का अन्याय अब उन्हें किसी तरह सहन न हो सका । अपनी स्वतंत्रता अपहरण हो देख श्रीजी के दिल में अधिक चोट लगी । सत्य कहा है कि "मुमु प्राणी को उन्नति के लिये बाहर निकलने के प्रथम अपनी अन्त दशा को उन्नत बनाना च[illegible]" ।

अध्याय ५ वां.

विघ्न पर विघ्न।

ऐसी संकटमयी हालत में दो एक वर्ष व्यतीत होगए।
की उमर १७ वर्ष की हुई। आज्ञा के लिये उनके सफल
निष्फल गए और दिन पर दिन अधिक सख्ती होने लगी।
मुनिराजों के दर्शन, शास्त्र श्रवण और पठन पाठन में उनके
जनों की ओर से होते हुए विघ्न उन्हें अतिशय असह्य होग
बिन अपराध कैद में डाल रखना यह बड़ों का अन्याय अब
किसी तरह सहन न हो सका। अपनी स्वतंत्रता अपहरण
देख श्रीजी के दिल में अधिक चोट लगी। सत्य कहा है कि "
प्राणी को उन्नति के लिये बाहर निकलने के प्रथम अपनी
दशा को उन्नत बनाना चाहिये"।

एक दिन सुबह शौचकर्म से निवृत्त होने के मिस वे ऊपरी
से नीचे आये। उस समय सख्त ठंड पड़ रही थी। तो भी
कपड़े लत्ते न लिये फकत एक चादर डाल ली और इसी
में वे टोंक त्याग रवाना हुए। एक दिन में २२ कोस की
मंजिल पार कर शाहपुरा के समीप कादेड़ा ग्राम पहुंचे। भूख

और ठंड से उनके शरीर में व्याधि उत्पन्न हो गई। और एक [illegible]म भी आगे चलने की शक्ति न रही। पास में एक पाई भी न- तथा वहां कोई पहिचान वाला भी न था। समभाव से वेदना [illegible] ठंड से थर २ धूजते वे खादेड़ा ग्राम में आये। दुःख, भय [औ]र चिन्ता के विचार ही मनुष्य की शक्ति को शिथिल करते हैं। [विश्वा]स और श्रद्धा से कार्य करने वाले को प्राकृतिक सहायता [मि]लती रहती है। ऐसी दुःखितावस्था में यहां उनकी सार संभाल- [करने] वाला कौन था? परन्तु पुण्य प्रसाद से नाथूलालजी के श्वसुर [illegible]रामजी अग्रवाल (घटयाली निवासी) किसी कार्य से खादेड़ा [आ]ये थे। उन्होंने श्रीलालजी को राह चलते देख लिया और [illegible] २ जहां आप ठहरे थे वहां लेगए। वहां खानपान शयनादि की [सुव्य]वस्था करने के पश्चात् औषधोपचार द्वारा शान्ति होने के अनेक [उपाय] किये। प्रकृति की गति कृति भिन्न है। पवित्र वृत्ति वाले [पुण्य]शाली पुरुषों को अनुकूल संयोग अकस्मात् मिल ही जाते हैं। [इसीलिये] ज्ञानी कहते हैं कि:—

वने रणे शत्रुजलाग्निमध्ये, महार्णवे पर्वतमस्तके वा।
सुप्तं प्रमत्तं विषमस्थितं वा, रक्षन्ति पुण्यानि पुराकृतानि॥

इस स्थान पर पहले पूर्व कर्म ही रक्षा करते हैं। जबतक [illegible] का क्षय नहीं होता तबतक किसी मनुष्य की सहन करने

की शक्ति का नाप नहीं हो सकता। आवश्यकता उपस्थित होती
तब ही प्राकृतिक अकलकला के प्रदर्शन निरखने का मौका
है। शिवदासजी ऋणवाल श्रीलालजी तथा उनके कुटुम्बीजन
पूर्णतया परिचित होने से सब हाल जानते थे। इसी
उन्होंने दूसरे दिन एक ऊंट किराये कर श्रीजी को
बुफ़ा टोंक की तरफ रवाना किया और जबतक तबीयत
तबतक टोंक में रहने की ही हिदायत की। तथा ऊंटवाले से
खानगी रीति से कहा कि तुम इन्हें टोंक पहुंचाकर चिट्ठी
तभी भाड़ा मिलेगा। उसी दिन शाम को श्रीजी टोंक पहुंचे।

श्रीजी—एक कपड़े से भगे उसकी खबर नाथूलालजी
मिलते ही वे तुरंत उन्हें ढूंढ़ने निकले। वे कपासन, निम्बाहेड़ा
खबर मिलते ही पीछे टोंक आये। उस समय श्रीजी भी टोंक
आ पहुंचे थे। नाथूलालजी ने श्रीजी से यह गद्‌गद कंठ से कहा "भाई
तुम इस तरह घड़ी २ चले जाते हो इसीलिये हमें बहुत हैरान होना
पड़ता है और तुम भी तकलीफ़ पाते हो,,

श्रीजी—यह तकलीफ दूर करना तो आपके ही हाथ है दीक्षा
आज्ञा दो कि, सब तकलीफ मिट जाय माजी (वहां हाजर थे) बोले
" दीक्षा लेनी थी तो ब्याह क्यों किया? तेरे गए बाद इस स्त्री
का रक्षक कौन होगा?,,

श्रीजी—क्षमा करना माजी ! आठ दस वर्ष के लड़के को बिना [illegible] अभिप्राय लिये माता पिता ब्याह देते हैं उसे ब्याह क्यों किया ? [illegible] कहने का हक तो होता ही नहीं मेरे ब्याह की (लहावा लेने की) [illegible] उतावल न की होती तो यह परिणाम भाग्य से ही आता सो [illegible] में आपका दोष नहीं मानता । सब उसके कर्मानुसार ही हुआ [illegible] है फिर मैं किसीके रक्षक होने का दावा भी नहीं करता । [illegible] करना न करना उसके शुभ कर्म का ही कारण है । काटेड़ां [illegible] भी मेरी रक्षा इसीने की थी ।

माजी—मैं बैठी हूं तबतक तूं संसार में रह और बाद में सुख [illegible] लेना । महावीर स्वामी ने भी माताजी को दुःखी न करने [illegible] लिये वे जीवित रहे वहां तक संयम न लिया था भगवान् जैसों [illegible] माता की इच्छा रक्खी थी ।

नाथूलालजी—(बीच में ही बोल उठे) और भगवान् ने बड़े भाई [illegible] इच्छा भी क्या नहीं रक्खी थी ? माता के लिये २८ वर्ष रहे तो बड़े भाई (नंदीवर्द्धन) के लिये दो वर्ष भी रहे ।

श्रीजी—महावीर प्रभु तो तीन ज्ञान के स्वामी थे और मुझे [illegible] एक क्षण में क्या होने वाला है उसकी भी खबर नहीं । [illegible] है, यह शास्त्र कहते हैं कि, समयमात्र का प्रमाद नहीं करना [illegible] ।

माजी—परंतु पुत्र ! मैं एक दिन भी तुझे नहीं देखती हूं मेरा आधा रुधिर औटा जाता है मुझे तेरी बहुत फिकर रहा क है। तुझे तो अपने देह की तानिक भी परवाह नहीं। ऐसी कड़कड़ाती पड़ती है उसमें एकही कपड़े से भूखा प्यासा २२ कोस तक गया और इतना दुःख उठाया (माजी की आंख में भर आये)

श्रीजी—एक ही बच्चा हो, मां को प्राण से भी प्यारा हो। उसके सिवाय उसे दूसरा कोई आधार न हो निर्दय काल उसे भी उठा ले जाता है ऐसे अनेक उदाहरण सामने प्रत्यक्ष हैं। यह शरीर छोड़ कर पुत्र चला जाता दुःख भी माता को सहन करना पड़ता है। मैं तो घर है कर जाता हूं यहां आप मेरी सार संभाल करते हो वहां मेरी सार संभाल लेंगे आप मेरे शरीर की ही चिंता करते तो मेरे शरीर की मन की और मेरी अविनाशी आत्मा संभाल लेंगे। इसलिये आपको दुखित होने का कोई कार राजी होकर मुझे आज्ञा दो, आपके आशीर्वाद से ही होऊंगा।

माजी—मैं प्रसन्न होकर किसी को अपने नयन नि की आज्ञा दे सकूं तो तुझे राजी खुशी से दीक्षा की आज्ञा

चतुर है इसीवे समझ ले। और मेरी दया आती हो तो मेरी [illegible]ओं के सामने रहकर चाहे जितना धर्म ध्यान कर। तुझे मैं [illegible]ाने को नहीं कहती। प्रभु की दया है और भाई जैसा भाई है [illegible] कुछ दुःख नहीं देगा।

भौजी—माजी! आगे पीछे मुझे यह घर छोड़ना पड़ेगा और लम्बे पांव पसार कर परवश दूसरों के कन्धों पर चढ़ [illegible] हवेली से निकलना तो पड़ेगा ही। तो अभी ही खड़े पांव से [illegible] मुझे इस बंदीखाने में से छूटने दो और सिंह की तरह [illegible] विचरने दो तो क्या बुरा है?।

श्री मृगापुत्र ने अपनी माता से कहा है कि:—

> जहा किंपागफलाणं परिणामो न सुंदरो।
> एवं भुत्ताण भोगाणं परिणामो न सुंदरो॥

श्री उत्तराध्ययन सूत्र, १६ अ०।

[illegible] वृक्ष के फल देखने में बड़े सुन्दर हैं परंतु परिणाम [illegible] हैं [illegible] संसार के सुख भोग भोगते मिष्ट हैं परंतु [illegible] दुर्गति में लेजाने वाला है। श्री कीर्तिधर मुनि ने [illegible] पुत्र सुकोशलकुमार को कुटुम्ब और

असार का सार समझा उसका जन्म सार्थक किया था, जिससे पु
श्रेय हो उसमें माता को अंतराय न देना चाहिये।

माताजी कुछ बोल न सके उनका हृदय भर आया, आंखों
अश्रु प्रवाह प्रारंभ हुआ। नाथूलालजी की चकोर चक्षुओं ने
माताजी का अनुकरण किया इस करुणा रसपूरित नाटक के
श्रीजी के हृदयसागर में तो ऐसी ही तरंगे उठ रहीं थीं कि

अनित्यानि शरीराणि, विभवो नैव शाश्वतः।
नित्यं सन्निहितो मृत्युस्तस्माद्धर्मं च साधयेत्॥

श्रीजी बाहर की हवेली में जाने के लिये उठ खड़े हुए।
मातु श्री को आश्वासन देते बोले— " मातु श्री ! आपके
मोह के अश्रु आपकी मस्तिष्क की गर्मी को शांत करते हैं
भी उन्हें देखकर मुझे दुःख होता है।

परन्तु मातु श्री ! आप क्या नहीं जानते की बार २ होते
जन्म, जरा और मृत्यु के अनंत दुःखों के सामने यह दुःख
गिनती में है। आपको दुःख हुआ इसीलिये क्षमाता हूं। मा
यह तो आपका अनुभव किया हुआ आप भूल जावे हैं कि—

" नो मे मित्रकलत्रपुत्रनिकरा नो मे शरीरं त्विदम् "
मित्र, कलत्र, पुत्र, शरीर आदि में से कोई भी अपना ना

" लक्ष्मी तणो आ त्रास, ऐवी राज्य गादी ने तजी
भावे थेकी भिक्षुक थई, भागी गया कां भरत जी !

अपन तो किस गिनती में हैं। अपने भगवान्‌का
उपदेश है कि, क्षण मात्र भी प्रमाद मत करो कारण कि:—

इंद्रिय सर्व अखंडित छे, तन साव निरोगी अने बल पूरुं।
बुद्धि विचार, विवेक, सहायक, साधन, अन्य न कोई अधुरुं।
उठ अरे ? अभिमान तजी कर उद्यम केम रह्यो कर जोड़ी।
वेश घणा धरवा तुजने पण पाछल रात रही बहु थोड़ी।
सुंदर आ तन ते क्षण भंगुर भाई ! अचानक छे पड़वातुं।
'केशव' आलस आज करो पण पाछल थी नहिं कोई थवातुं।

उनके श्वसुर पक्ष के तथा माता पिता के पक्ष के कितने
सम्बधी उन्हें संसार में रहने के लिये शरमाते और समय २
दबाते थे परंतु श्रीजी इन भयों से डरने वाले नहीं थे।

शांति से सब को प्रसन्न करने वाले प्रत्युत्तर दे देते थे।
कितने ही मित्र अपने मां बाप की आज्ञा पालन करने के लिये
से आग्रह करते तब वे उनकी ओर बहुमान प्रदर्शित कर अ
निश्चय पर ध्यान दिलाते थे। उनके उत्तर एक साक्षर के शब्दों
कहें तो " मैं जानता हूं कि, माता पिता की आज्ञा पालना मेरा

कारण कि वे ही मेरे जन्मदाता और पालन कर्त्ता हैं। पिता की
में रमा हूं, माता के दूध से पला हूं उनके इशारे से विष तक का
प्याला पी सकता हूं। तलवार की धार पर चल सकता हूं और अग्नि
में कूद सकता हूं, परन्तु उनका दुराग्रह मेरे श्रेय कार्य में बाधक है
इसलिये लाचार हूं,,

लोकमान्य तिलक के लिये कहे हुए शब्द यहां स्मरण हो
आते हैं " नर रंक के पुत्र रत्नों को निराश होना योग्य नहीं ज्वलंत
स्वाभिमान, अचूक सावधानता, अचल श्रद्धा, अडग धैर्य, अखण्ड शौर्य,
और अनन्य भक्ति हो तो बाकी सब सरल है·······पास खड़े रहने
वाले न थे, सहायता करने वाले कम थे ऐसे संयोगों में भी वह
लोकमान्य तिलक निराश नहीं हुआ, श्रमित नहीं हुआ, विश्राम लेने
नहीं ठहरा, अनेक संकट सहे, अनेक यातनाएं सहन कीं परन्तु
... मंत्र ... तो प्रारंभ ही रक्खा काल उनके पात्र भर देगा।
... की रात व्यतीत हो कर प्रातःकाल भी होगा "।

उस समय (सं० १९४३) में पूज्य श्री छगनलालजी महाराज
... में विराजते थे। उनके पास श्रीजी शास्त्राध्ययन करने लगे परन्तु
... की आज्ञा न मिली और आज्ञा न मिले वहांतक श्रीजी से कुछ
... हो सके ऐसा न था।

एक दिन श्रीजी हवेली में जाकर अपनी पूज्य मातु

पांव लगे । माजी उस समय मानिकलाल को रमाती हुई खड़ी
श्रीजी ने उस छः माह के बालक (मानिकलाल) को प्रेम पू
माता के पास से ले लिया और अपनी गोद में बिठाया । थोड़े स
तक उसे रमाया और फिर माजी के हाथ में देकर श्रीजी बोले "इस
अच्छी तरह रखना" माजी बोले "बेटा ! इसकी और हमारी संभ
लेने का काम तो तुम्हारा है" श्रीजी मौन रहे । वैराग्य के वि
स्फुरित होने लगे ।

प्रियवाचक ! हम लोग भी एक तत्ववेत्ता के विचारों का म
करें "इच्छुक हृदय नहीं बोल सकते, अगर बोल सकते हैं तो उन्हें
नहीं सुन सकता । किसी को प्रवाह भी नहीं, शोक पूर्ण नयन दर्द
रो सकते" अगर रोते हैं तो लोग हंसी करते हैं.......

"आवाज और गति" की यह दुनिया तथा 'शान्ति और ए
का यह जगत् भिन्न २ होने पर भी बहुत समीप २ है........गुप्त
की कई इच्छाएं, हृदय के कई उभरते आंसू , बुद्धि की कित
प्रबल तरंगें हमें निष्फल होती मालूम पड़ती हैं । जिन इच्छा
परिपक्व होने के लिये संसार में स्थान नहीं , अश्रू के प्रव
रोकने के लिये जगत् की सहायता की आवश्यकता नहीं, तरंगों को
सान् बनाने के लिये दुनियां अनुकूल नहीं ।

—:०:○:०:—

किया तब खबर मिली कि, रामपुरा (भानपुरा) में मुनिश्री
[illegible]जी चिमनलालजी और बलदेवजी महाराज विराजते हैं
[illegible] वे अभ्यास करते हैं।

[illegible] खबर पढ़कर नाथूलालजी तथा गुजरमलजी के भाई
[illegible] ये दोनों जने उन्हें लिवा लाने को रामपुरा गए परन्तु वे
[illegible] खबर मिलने से वे सुनहेल (इन्दौर स्टेट) गए वहां
[illegible] के मकान में दोनों साधु के वेष में नजर आये। उस
[illegible]श्रीजी सदुपदेश सुना रहे थे श्रोताओं की संख्या १००से१५०
के करीब थी। सदुपदेश पूर्ण होने तक दोनों आगन्तुक चुप
[illegible]। व्याख्यान समाप्त होने पर उन्होंने कहा।

“ हमारी बिना आज्ञा के तुमने यह वेष पहिन लिया, सो
नहीं किया, अब हमारे साथ टोंक चलो ” उत्तर में उन्होंने
“अब [illegible] तो आवेंगे नहीं। कृपाकर आज्ञा दो तो हम संतों
[illegible] सकेंगे और हमारे ज्ञानाभ्यास में भी वृद्धि हो
[illegible]। और बिना मथे मक्खन निकलने की आशा नहीं है,
[illegible] अन्तराय कर्म क्यों बांधते हो।

[illegible]लालजी ने कहा “ आप एक समय टोंक आवें आप
[illegible] ”। वहां बहुत कहा सुनी हुई। श्रीजी तथा गुन-
[illegible] आज्ञा देने के लिये आग्रह किया और उनके भाइयों ने
[illegible] और दोनों को टोंक ले जाना निश्चित किया।

वां(—सबो नायक का नाम पाया है चक्रवर्ती के समान सब दे
किये और श्री चतुर्विध—संघ ने प्रीति कलश से प्रक्षालन क
ताज पहिराया ।

अंतिम निश्चय कर अपने मित्र गुजरमलजी पोरवाड़
श्रीजी एक दिन टोंक से गुप चुप निकल गये और अ
परिचित प्रिय रसिक पहाड़ी को देख उसके समझाये अमूल
को याद कर दीक्षा लिये बिना टोंक में पग देना ही नहीं यह
किया। यह गूंगा निश्चय वृक्षों को समझा यह संदेशा प्राकृतिक
लनों द्वारा अपने कुटुम्बियों को पहुंचाने को कह कर वे र
(बूंदी स्टेट) की तरफ चले गए। खबर मिलते ही नाथूलाल
बन्ध उनकी माता गुजरमलजी की मां तथा गुजरमलजी की बहू क
पीछे पीछे रानीपुर गए। वहां पूज्य छगनलालजी महाराज विरा
थे। पूछ ताछ करने पर विदित हुआ कि, वे दोनों यहां आये
परंतु एक रात रहकर चले गए हैं। यह समाचार सुन सब वहां
रवाना हुए। राह में खबर मिली कि, एक नाले के नीचे दोनों ज
ने स्वयं साधु के वेष पहिने हैं और साधु के भंडोपकरण ले को
की तरफ गए हैं। यह घटना सं० १९४४ में मगसर वद में घटी

फिर श्रीजी की मातु श्री प्रभृति सब कोटे आये वहां भी प
न चला। फिर निराश हो सब टोंक आये चारों ओर पत्र व्यवह

नाथूलालजी तथा हरदेवजी जब टोंक से रवाना हुए थे टोंक रियासत से दोनों को पकड़ लाने के लिये वारंट निकला था। वे वारंट के साथ सुन्हेल के सूबा साहिब को मिले। साहिब ने कहा तुम फिर से एक वक्त और समझाकर कहो कि, साहब का हुक्म है इसलिये चल पड़ो। अगर न माने तो मुझे कहो।

उन्होंने आकर वैसा ही किया परन्तु श्रीजी न माने। इस फिर सूबा साहिब से मिले। उन्होंने श्रीलालजी और गुजर को कचहरी में बुलाया। सुनेल के बहुत से श्रावक भी उनके थे। स्वाभाविक रीति से उन श्रावकों का श्रीजी पर पूज्यभाव रहा था। अल्प परिचय से तथा अल्प वय में ऐसी अ सदुपदेश शैली से श्रीजी ने उनके मन जीत लिये थे। विषय मलिनता से निर्मल होकर निकले हुए शान्ति के प्रभावशाली की और सहवास में रहने वालों की अंतरात्मा में गहनभक्ति से भर रही थी।

प्राकृतिक नियम है कि मानव जाति के सहायक शुभ और उपदेशक होना चाहते हों उन्हें याद रखना चाहिये कि, अनुभव पूर्वादि महात्माओं की तरह— क्राइस्ट के क्रोस की संकटों की शूली पर ही प्राप्त होने वाला है। जीवन का

स्वदेश का सच्चा तत्व इनकी आत्मत्याग की वेदी पर सोने की सार्थकता सिद्ध होती है। महात्मागान्धी इसी अभिप्राय को अनुमोदन देते हैं—फतह जब बिल्कुल समीप आकर खड़ी रहती है तब इसी राह से संकट भी सब से अधिक आते हैं। इस दुनियां में आजतक किसीको महान् फतह प्रारंभिक अनेक प्रयत्नों और संकटों को पीछे हटाने वाली एक अंतिम असाधारण कोशिश किये बिना नहीं मिली। प्राकृतिक चरम से चरम कसौटी बड़ी कठिन से कठिन होती है। शैतान का अंतिम से अंतिम लालच सबसे अधिक लुभाने वाला होता है। जो स्वतंत्रता अपने को प्यारी हो तो इस प्राकृतिक कसौटी में से अपने बिल्कुल शुद्ध पार उतरना चाहिये, शैतान के अंतिम लालच के लोभ से हरतरह अलग रहना चाहिये।

श्रावक समुदाय सहित श्रीजी तथा गुजरमलजी सूबा साहिब के आफिस के चौक में खड़े रहे। उन्हें देखकर सूबा साहिब ने कहा कि तुम दोनों इनके साथ टोंक जाओ इनके पास टोंक स्टेट का वारंट है तुम नहीं जाओगे तो कायदेसे गिरफ्तार कर तुम्हें टोंक भेजा जायगा।

यह सुन किसीसे न डरने वाले सत्याग्रही श्रीलालजी पग एक पग एक पांव से खड़े होगये और सूबा साहिब से कहा:—

"मैं यहां खड़ा हूं टोंक भेजना तो दूर रहा परंतु मुझे इ स्थान से भी हटाना दुष्कर है हम साधु हैं, बुलाने से नहीं आते भेजने से नहीं जाते, बैठते हैं तो लोहे की कील की तरह और ज हैं तो पवन के वेग की तरह। आप राजा के अमलदार हैं प साधुओं को सताने का अधिकार आपको भी नहीं होसकता".

एक विद्वान् के विचार सत्य हैं कि " किसी आपत्ति से तुम अपनी श्रद्धा कभी मत हिलने दो, जब तक तुम्हारी अपनी आत्मा पर दृढ़ आत्म श्रद्धा होगी, तबतक हमेशा तुम्हारे लिये आशा है। जो तुमने आत्म श्रद्धा नहीं खोई और आगे बढ़ते ही रहे तो संसा आगे पीछे कभी न कभी तुम्हारे लिये मार्ग देगा ही। श्रद्धा श्र को जन्म देती है, मनुष्य चारित्रबल से और अपने मस्तिष्क शक्ति से अत्यंत प्रतिकूल संयोगों में भी सफलता सिद्ध करते हैं श्रद्धा मानसिक सेना का महावीर है। यह दूसरी अनेक शक्ति को दुगुना तिगुना बल अर्पण करती है जब तक श्रद्धा नेता है तब समग्र मानसिक सैन्य स्थित है, प्रत्येक व्यक्ति में गुप्त अविनाशी शक्ति गर्भित है"।

भाग्यदेवी के लाड़ले पुत्र की दृढता और हिम्मत से उच्चा किये हुए वचन सुनकर सूबा साहिब दिग्मूढ बन गए और 'राजाका तुम्हें सिर चढ़ाना ही पड़ेगा' इतने शब्द कह भय से धूजते वे

बिना संयम लिये टोंक में पाँव भी न देंगे "।

अंत में निराश हो नाथूलालजी तथा हरदेवजी टोंक की तरफ रवाना हुए परन्तु जाते समय टोंक निवासी बालजी नाम के ब्राह्मण को वहीं रखगए और उसे कह गए कि, जहां २ श्रीजी विचरें वहां २ इनके साथ जाना इनकी सार संभाल लेना और इनके कुशल की भ्रान्त से हमें रोज २ स्थान २ सहित टोंक लिखते रहना।

नाथूलालजी ने टोंक आकर माजी प्रभृति से सब समाचार कहे और कहा कि, संसार में रहने की उनकी बिल्कुल इच्छा नहीं है। माजी ने कहा कि, मुझे यह बात नई नहीं मालूम होती अब उन्हें अधिक सताना मुझे ठीक नहीं जँचता।

श्रीजी तथा गुजरमलजी साधू के वेष में विचरने लगे, मुन्हेड़ मुकाम पर किशनलालजी बिसनलालजी महाराज (पूज्यश्री अमरचन्दजी महाराज की सम्प्रदाय के) से समागम हुआ और उनके पास से शास्त्राध्ययन करना प्रारंभ किया। वहां से पाचों ठाणों के साथ २ विहार कर रामपुरा (हो. स्टे.) में चातुर्मास किया संवत्. १९४६।

रामपुरा में केशरीमलजी नाम के श्रावक सूत्र के जाणकार और विद्वान् हैं उनके परिचय से श्रीजी के सूत्र ज्ञान में अधिक वृ

उनके साथ के ज्ञान संवाद में श्रीजी को अपार आनंद आता
अधिक ज्ञान सम्पादन होता था।

रामपुरा का चातुर्मास पूर्ण हुए पश्चात् झालावाड़ कोटा प्रभृति
ओर हो पांचों महात्मा पुरुष माधोपुर पधारे। पाठकों को विदित
कि, माधोपुर में श्रीजी का मोसाल था। और उनके मोसाल
का धर्मानुराग अधिक प्रशंसनीय था। श्रीजी को कैसे २ परि-
षहन करने पड़े यह सब वे जानते थे। श्रीजी के मामा के पुत्र
[illegible]चंदजी (देवदत्तजी के पौत्र) माधोपुर निवासी मायाचंदजी
[illegible] प्रभृति श्रीजी तथा गुजरमलजीकी आज्ञा के लिये कोशिश की
[illegible] इनके कुटुम्बियों को नाना विधि से समझा दीक्षा की
[illegible] देने बाबत कहा।

[illegible] श्रीजी की मातु श्री चांदकुंवर बाई को अरज करने पर
[illegible] कहा कि, बहू को (श्रीजी की अर्धांगिनी) पूछने दो।
[illegible] से क्या उत्तर मिलता है।

[illegible] ने फिर पुत्र वधू को बुलाकर पूछा कि, दीक्षा की आज्ञा देने
[illegible] क्या राय है? [illegible] बाई ने विनय तथा धैर्यपूर्वक
[illegible] आपने संसार में रहने के लिये जितने प्रयत्न
[illegible] निष्फल गए। अब तो आपके
[illegible] है इसलिये आप जो करना।"

करूंगी " । अपने पति को अपने समीप से टलने की आज्ञा न देने वाली मोह फांस में पति को फांसकर रखने वाली वर्तमान की अर्द्ध दग्ध अर्धांगनाओं को यह अवसर सोचना चाहिये ।

यह उत्तर सुनकर माजी का हृदय भर गया । आंखों से द अश्रुपात होने लगा । थोड़े समय तक विचार निमग्न रहे और फिर लक्ष्मीचन्दजी तथा नाथूलालजी से कहा कि, चि. मानिक (नाथूलालजी का पुत्र) को श्रीलालजी के नाम पर रक्खो. " न लालजी ने माजी की यह आज्ञा शिरोधार्य की, फिर माजी ने क "सुख से तुम आज्ञा देने जाओ । मेरा आशीर्वाद है कि श्र सुन्दर रीति से संयम पालें, आत्मा का कल्याण करें और मार्ग दिपावें " । धन्य है ऐसी उत्कृष्ट इच्छा वाली माताओं को इसी तरह गुजरमलजी पोरवाड़ की माता तथा उनकी स्त्री उनके भाई मांगीलालजी को समझा उनकी दीक्षा की आज्ञा प्राप्त की । पहिले से ही साधु का वेष पहिन लिया होने से वि

---

* माता के सम्बन्ध में एक कथा पूज्य श्री कहते कि पुत्र वाली एक माता के एक पुत्र की इच्छा दीक्षा लेने की से गुरु श्री ने माता को सदुपदेश दे अपने पुत्र की भिक्षा देने उस माता ने अपने अहोभाग्य समझ एक के बदले दो पुत्रों जी के शिष्य बनाये ।

[illegible] की धूम धाम की आवश्यकता न हुई। टोंक से पूर्व में ७ कोस [illegible] बरोठा ग्राम में उन्हें दीक्षा का पाठ पढ़ाया जाने वाला था। [illegible]पुर वाले लक्ष्मीचंदजी तथा मुनिराज वगैरह पहिले से ही वहां [illegible] गए थे। और टोंक से श्रीजी की माता की आज्ञा ले उनके [illegible] नाथूलालजी तथा सेठ हीरालालजी के पुत्र रामगोपालजी [illegible]चन्दजी प्रभृति तथा गुजरमलजी की माता की आज्ञा लेकर [illegible] भाई गांगीलालजी पोरवाड़ वगैरह चादर कपड़े आदि लेकर [illegible] आये।

संवत् १९४५ के माघ वद्य ७ गुरुवार के दिन सुबह आठ बजे [illegible] श्री अनूपचंदजी महाराज की सम्प्रदाय के पूज्य श्री किशन-लालजी महाराज ने श्रीलालजी तथा गुजरमलजी दोनों को विधि-पूर्वक दीक्षा दी। यहां यह बात सिद्ध हुई कि "हम परिस्थिति के दास नहीं" परन्तु हम जिसके लिये आग्रह पूर्वक विचार कर रहे [illegible] और जिसके लिये अखंड उद्योग करते थे वह प्रत्यक्ष प्राप्त हो ही [illegible] दीक्षा लेने के प्रथम गुजरमलजी ने श्रीलालजी से कहा कि, मैं आपकी नेश्राय में दिक्षूंगा अर्थात् आपका शिष्य होऊंगा। तब [illegible] ने कहा कि, मुझे शिष्य करने का त्याग है।

[illegible] और बहुत प्रश्नोत्तर हुए पश्चात् जब गुजरमलजी ने [illegible] शिष्य के समान अपने को स्वीकार करने की बहुत विनय [illegible] की, तब श्रीजी ने कहा—तुम मेरी आज्ञा में चलोगे ?

गुजरमलजीः– (सबके संमुख बोले) मैं सर्वदा आ
आज्ञा में ही विचरूंगा।

श्रीजीः–बस, तो अभी ही मेरी आज्ञा है कि, अपन
बलदेवजी महाराज की नेश्राय में रहें।

गुजरमलजी ने यह आज्ञा शिर चढ़ाई और दोनों को बल
मुनि (किसनदासजी महाराज के शिष्य) के शिष्य बनाये। आ
की इच्छा न होते भी किशनलालजी महाराज बोले कि, हमतो गु
रमलजी को आपकी नेश्राय में समझते हैं यह सुनकर गुजरमल
को अपार आनंद हुआ और वे बोले कि, मुझे सम्यक्त्व रत
प्रीति कराने वाले धर्म के मार्ग पर लगाने वाले सच्चे उपकारी गु
तो श्रीजी महाराज ही हैं।

यद्यपि श्रीजी की इच्छा पूज्य श्री हुकमीचन्दजी महाराज
सम्प्रदाय के सुप्रसिद्ध विद्वान् मुनि श्री चौथमलजी महाराज के
दीक्षा लेने की थी, तो भी उनके माता पिता के आग्रह से अपने
आमनाय की सम्प्रदायमें अर्थात् कोटे वाले की सम्प्रदाय में दी
देने की थी और इसी शर्त से आज्ञा मिली थी। इसलिये कोटा स
ाय में उन्होंने दीक्षा ली दीक्षा लेने के पहिले ही आचार सम्ब
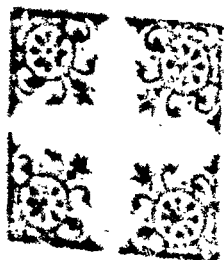
अध्याय ७ वाँ।

सरिता का सागर में प्रवेश।

पूर्व अध्याय में आपन पढ़ चुके हैं कि, श्रीजी की आं
अभिलाषा ज्ञान वृद्धि और चारित्र विशुद्धि विषय में अपनी
सिद्धि साधनार्थ श्रीमान् हुकमीचंदजी महाराज की सम्प्रदा
सम्मिलित होने की थी, चातुर्मास पूर्ण हुए पश्चात् अपना म
खुले दिल से गुरु की सेवा में निवेदन किया। मुनिश्री विशनला
तथा बलदेवजी ने कहा एकतो गुरु वियोग से हमारा हृदय
होरहा है और तुम भी हम से अलग होकर जले पर नमक छिड़
चाहते हो।

उत्तर में श्रीजी महाराज ने विनय पूर्वक कहा कि, जिस
से मैंने घर द्वार और कुटुम्ब परिवार त्यागा है उस हेतु को
से सिद्ध करना ही मेरा परम ध्येय है।

श्रीजी महाराज अपने उच्चाशय से न डिगे और अप
निश्चय को सिद्ध करने के लिये गुरुजी की शुभाशीष पाकर र
पधारे। वहां सुयोग्य सुश्रावक केसरीमलजी सुराना का स

ध्ययन में अत्यन्त उपयोगी हुआ। श्रीजी अविरत रीति से ध्ययन करने लगे। ज्ञानमें अधिक उन्नति की। इनकी व्याख्यान भी उत्तम और आकर्षक होने से श्रावकों में भी ज्ञानरुचि धर्म भावना बढ़ने लगी।

चातुर्मास पूर्ण हुए बाद रामपुरा से विहार कर श्रीकानोड़ र पर पंडित मुनि श्री चौथमलजी महाराज विराजते थे वहां और अपना अभिप्राय कहा। टोंक श्रीयुत नाथूलालजी बम्ब । यह खबर मिलते ही वेभी कानोड़ आये और श्रीजी महाराज निश्चानुसार उन्हें अपनी नेश्राय में लेने के लिये श्रीमान् चौथमलजी ाज को आज्ञापत्र लिखा दिया, तब उन्होंने अपने बड़े शिष्य ीरजी महाराज के शिष्य बनाकर श्रीजी महाराज को अपनी श्राय में ले लिया। यह घटना डुंगरा (मेवाड़) मुकामपर संवत् ७ के मगसर शुक्ला १ शनिवार को हुई। तत्पश्चात् वे श्रीमान् ल जी महाराजकी आज्ञामें विचरने लगे। यहां उनकी आत्मिक [illegible] विकास हुआ। ज्ञानी गुरुके समागम से सूत्र ज्ञान [illegible] उन्नति की, निरतिचार चारित्र पालन से वे गुरु के [illegible] होकर लोगों में पूजनीय और कीर्ति के केलिग्रह सदृश [illegible] " [illegible] किं न करोति पुंसाम् ?"

[illegible] का चातुर्मास सद्गुरुवर्य श्रीचौथमलजी महाराज के [illegible] में किया।

यहां विशेषतया व्याख्यान श्रीजी महाराज फरमाते थे जैसे हृदय को पिघलादे ऐसा उपदेश और उसका अद्‌भुत देख सब को बडा सानंदाश्चर्य होता और श्रोतृगण पर अ उपकार होता था।

इस चातुर्मास में वे जिस मकान में ठहरे थे वहां ए विकराल सर्प रहता था। एक दिन भी ऐसा भाग्य से ही होता जिस दिन सर्प देखने में न आता हो। आहार पानी के पा वह कई समय गरल डालता था। रात के समय रास्ते में पग देते या टालने जाते तो रजोहरण के साथ ठुकराता। तब दूसरी राहमें फूंकार मारता और सामने होता था। तथा कचित् समय पाद प्रहार करता था। दिन में भी वह निडर हो उस मकान में फि था। सांप साधुजी से निर्भय था। उसी तरह साधु भी सांप से भय थे। श्रावकोंने मकान बदलने के लिये महाराज से पुनः बहुत विनय की, परन्तु यह निष्फल गई। महाराज कहते थे कि ले के मुनि सिंहकी गुफा, सर्प के बिल और घोर श्मशान भूमि स्वेच्छापूर्वक जाकर उपसर्गों को निमंत्रित करते थे। यह सर्प हम कसौटी के लिये बिना आमंत्रित किये यहां आया है सो वे हमारे सत्संग का लाभ उठा पवित्र जिनवाणी का श्रवण कर रहे। पूर्ण चातुर्मास इसी स्थान पर सांप के साथ रहकर व्यती किया परन्तु पुण्यप्रसाद से तथा तपचारित्र के प्रभाव से

मिले कि, आचार्य महोदय श्री उदयसागरजी महाराज का त
ठीक नहीं, आचार्य श्री की ओर श्रीजी का अनुपम भक्ति भा
गृहस्थाश्रम में थे तब ही से था उपरोक्त समाचार मिलते ही उत्कं
न्तातुर हृदय और दर्शनातुर नेत्रों ने शीघ्र विहार करने के
प्रेरणा की और थोड़े ही दिनों में परम प्रतापी महान् आचा
उदयसागरजी महाराजकी सेवा में रतलाम पधारे।

श्रीलालजी महाराज का ज्ञानाभ्यास की ओर विशेष लक्ष
तदनुसार उत्तम आचार विचार देख आचार्यजी महाराज
प्रसन्न हुए और श्रीजी से पूछा कि अब कौन से सूत्र का अ
करते हो ? श्रीजी ने विनयपूर्वक उत्तर दिया:—" कृपान
अभी मैं श्री ठाणांगजी सूत्र का अभ्यास करता हूं " यह
कर श्रीमान् आचार्य श्री के मुख कमल से सहज ही ऐसे
निकल पड़े कि, ठाणांग समवायंग सूत्र का अभ्यास करने से '
वर गंभीरा ' होओगे। इस आशीर्वचन को महाराज श्री ने
आदर पूर्वक शिरसावंद्य कर कहा, कि कल्पवृक्ष की सेवा कर
इच्छित वस्तु की प्राप्ति हो उसमें आश्चर्य क्या ?

पाठक पहिले पढ़ चुके हैं कि, जब श्रीजी गृहवास में थे
उन्हें श्रीधर नाम देने वाले भी येही महापुरुष थे। ज्ञान और
रूपी श्री (लक्ष्मी) को धारण कर सचमुच श्रीधर बन फिर

आचार्य श्री के शरीर में व्याधि बढ़ती देख शरीरका भंगुर स्वभाव समझ उन्होंने सम्प्रदाय की रक्षा और उन्नतिके श्रीमान् चौथमलजी महाराज को युवाचार्य पद पर नियुक्त कि (संवत् १६५२) तत्पश्चात् वेदनीय कर्म के क्षयोपशम से पूज को कुछ आराम होने पर उनकी आज्ञा ले श्रीजी ने रतलाम से किया और संवत् १६५३ का चातुर्मास युवाचार्यजी महाराज साथ जावद में किया।

मार्गी भाई भी नित्य प्रति व्याख्यान श्रवण का लाभ लेते थे।
उनमें से कितने ही ने श्रीजी से सम्यक्त्व भी ग्रहण की श्रीजी
राज के अनुपम गुणों में सब लोग मुग्ध होते और कहते
सचमुच उस महात्मा का अस्तित्व जैन-शासन के पुनरुत्थान
लिये ही है।

अभी भी उदयपुर राज्य अपने सिक्के में 'दोस्त लंदन' जिसके
चारों ओर की उच्च पहाड़ियां प्राकृतिक कोट के रूप में विद्यमान
हैं। यहां की जमीन ऊंची होने से कई जगह यहां
पानी जाता है परन्तु कहीं से श्री उदयपुर में पानी नहीं आ
मेवाड़ की भूमि भी पवित्र गिनी जाती है। जैनियों के श्री ऋषभनाथ
श्रीकेशरियाजी, वैष्णवों के श्रीनाथजी और शैवों के श्री एकलिंग
इन तीनों धामों का राज्य की तरफ से पूर्ण मान सन्मान
जाता है। श्री ऋषभदेव स्वामी के पाटवी खानदान में होने से
तक ये "धर्मरक्षक" के समान अपना धर्म अदा करते हैं।
राज्य का मूलसिद्धान्त है कि, "जो दृढ राखे धर्म को तिह राखे कर्तार
चक्रवर्ती राजाओं की सेवा में सोलह हजार और बत्तीस हजार
रहते थे वैसा ही हाल श्री उदयपुर के महाराणा साहब का
भी अपने सोलह और बत्तीस उमरावों में सूर्य के समान शोभा
निकलते हैं। कचहरी सवारी तथा राज्य की दूसरी रीति रिवाज

नोहरा भी कहते हैं उसी बड़ी विशाल जगह में साधु चातुर्मास करते हैं वहां हमेशा २०००से ३००० मनुष्य व्याख्यान में एकत्रित होते थे। दोनों बड़ी २ धर्मशालाएं पर तीसरी भोजनशाला है वहां बैठना पड़ता था। श्रीजी की इतनी बुलंद थी कि सब श्रोतृसमुदाय बराबर श्रवण सकता था।

चातुर्मास में आमेट के रावतजी साहिब पंचायती न पधारे थे श्रीजी महाराज के सदुपदेश से उन्हें बहुत ही आनंद अहिंसा धर्म की रुचि हुई व्याख्यान के पश्चात् खड़े हो श्रीजी म के पास उन्होंने ऐसी प्रतिज्ञा की कि, नवरात्रों में बलिदान हो उसमें से दो पाड़े और चार बकरे हमेशा के लिये कम करा इसी तरह कोठारिया के रावतजी साहिब ने भी दो पाड़े और बकरे नवरात्रों के बलिदान में से हमेशा के लिये कम करने महाराज के पास प्रतिज्ञा ली थी. इनके सिवाय दूसरे भी कई जा लोगों ने तथा राज्यकर्मचारियों ने श्रीजी के अनुपम सद्भाव से त विधि की प्रतिज्ञाएं ली थीं।

चातुर्मास पूर्ण हुए पश्चात् कार्तिक वद १ के रोज वि कर आहड़ ग्राम कि जो उदयपुर से १॥ माइल दूर प्राचीन स्थान है वहां श्रीजी महाराज पधारे यहां श्रीमान्

धर्म पर उनकी दृढ श्रद्धा हो गई और श्रीजी महाराज के वे
न्य भक्त बन गए. तत् पश्चात् वहां से विहार कर मेवाड़ के
में विचरते समय लोगों ने उनसे हजारों स्कंध, तपश्चर्या तथा
प्रत्याख्यान किये ।

शान से अधिक समय तक संसार में रहने के प्रत्याख्यान है।
ऐसी प्रतिज्ञा ले मानकुंवरबाई सबकी आज्ञा लेने टोंक गई।

सं० १६५४ माघ शुक्ला १० मी के दिन आचा
उदय सागरजी महाराज का स्वर्गवास हुआ उनकी
दैहिक क्रिया रतलाम के श्री संघ ने बहुत ही उदारत
समारंभ से की।

पश्चात् सं० १६५४ के फाल्गुन शुक्ला ५ मी
श्रीमती मान कुंवर बाई ने रतलाम स्थान पर श्रीमती
महासतीजी की सम्प्रदायकी सतीजी श्री राजाजी के पास
अंगीकार की उस समय श्रीजी महाराज भी रतलाम
थे एक ही मिति को तीन दीक्षाएं हुई। दीक्षा उत्सव
ही धूम धाम से किया गया रतलाम संघ संत महंत
और धर्मोन्नति के कार्य में समय २ पर अतुलित द्र
कर जिनमत को दिपाते हैं तथा कर्तव्य पालन करते
अत्यंत ही प्रशंसनीय है।

श्रीमान् चौथमलजी महाराज आचार्यपदारूढ़ हु
सम्प्रदाय की सब तरह सार संभाल करने लगे प
वयोवृद्ध होने से तथा नेत्रशक्ति भी क्षीण हो जाने
विहार होना अशक्य था इसलिये वे भी रतलाम में

अध्याय १०वाँ

आचार्यपदारोहण।

———:o:———

श्रीमान् आचार्य महोदय श्री चौथमलजी महाराज की से
श्रीजी विराजते और अपने अमूल्य वचनामृतों द्वारा जनसमू
अपार उपकार कर रहे थे इतने ही में सं० १९५७ के कार्तिक मा
आचार्य श्री चोथमलजी महाराज के शरीर में व्याधि उत्पन्न
क्षमासागर उसे समभाव से सहन करते थे। कार्तिक शुक्ला
रोज रात को १०-११ बजे व्याधि बढ़ने लगी। श्रीजी महाराज
पूज्य श्रीजी सेवामें तन मन, अर्पण किया था। उनके हाथ में नाड़ी
न आने से वे बाहर आये। और श्री ऋषभदासजी श्रीमा
जो संवर कर वहीं पर सोए थे उन्हें यह हकीकत कही तुरंत
श्रीसंघ के अग्रगण्य सेठ अमरचंदजी साहिब पातलिया तथा श्री
छेजपालजी सचेती इत्यादि को यह खबर दे आये। इसपरसे वे दो
तथा और कितने ही श्रावक पूज्य श्रीकी सेवामें आये। सेठ अम
चंदजी साहिब ने नाड़ी देखी और पूज्यश्री को आवाज
सचेतन किया तुरन्त सचेतन हो उन्होंने उपस्थित साधु श्राव
के समक्ष प्रकट आलोचना निंदना की पुनः महाव्रत आरो

से अति नम्रभाव से आचार्यश्री की सेवा में सबके सामने यहां
की कि 'सम्प्रदाय में कई मुनिराज गुरु में शास्त्रों में संघ में ज्ञात
गुणों में अधिक हैं इसीलिये मुझपर यह भार न रक्खा जाय
मेरी अंतःकरण पूर्वक प्रार्थना है।

यह सुन श्रीजी महाराज के गुरु और आचार्य श्री के
शिष्य श्री हांसचंद्रजी महाराज कि, जो वहां विराजमान थे
से यों बोले कि " श्रीलालजी ! तुम्हें आनाकानी न करना
श्रीमान् आचार्यजी महाराज बहुत ही दीर्घदर्शी, पवित्रात्मा,
के ज्ञाता और चतुर्विध संघ के परमहितैषी हैं इनकी आ
शिरसा वंद्य कर श्रीसंघ की सेवा बजाओ और जैन-शासन
दिपाओ "। इन वचनों को चतुर्विध संघ ने बहुत २ अनुमो
दिया तब श्रीलालजी महाराज दोनों हाथ जोड़ सिर नमा मौन
पश्चात् आचार्यजी महाराज ने श्री चतुर्विध संघ की सम्मति
युवाचार्य पद प्रदान किया और चतुर्विध संघ को उनकी आ
पालन करने का हुक्म फरमाया, तब चतुर्विध संघ ने हर्ष
के साथ खड़े हो अत्यंत भक्तिभाव सहित नवयुवाचार्यजी महाराज
सेवामें वंदना की।

श्रीमान् आचार्य श्री चौथमलजी महाराजने अपना अव
काल समीप समझ संथारा किया संथारे की खबर बिजली की तरह

करना चाहिये और सम्प्रदाय की रीत्यनुसार दीक्षा में बड़े
को वे वंदना करेंगे और छोटे मुनि ... उन्हें वंदना करेंगे
को उनकी आज्ञा में चलना चाहिये" ये शब्द सुनकर
एक ही आवाज से पूज्य श्री को विश्वास दिलाया कि आप
की आज्ञा को प्रभु आज्ञा समान समझ हम आपको ...
दिखावेंगे ।

पश्चात् सद्गत आचार्य श्री के मृत देह को हजारों म...
समूह में मनोहर विमान में पधरा बड़े धूमधाम से जय
जय २ भद्रा के शब्दों से आकाश को गुंजाते शहर के मध्य ...
भूमि में ले गए वहां चंदन, काष्ट घृतादि से अग्निसंस्कार

आचार्य श्री चौथमलजी महाराज अंतिम तीन वर्षों से
में स्थिरवास थे. कारण कि उनकी नेत्र शक्ति क्षीण हो
इस कारण से और वृद्धावस्था होने से साधुओं की बहुत
वाली एक बड़ी सम्प्रदाय की भली भांति संभाल करने
आचार्य श्री चौथमलजी महाराज को मुश्किल मालूम
सम्प्रदाय की सम्यक् रीति से सार संभाल और उन्नति
लिये उन्होंने अपनी आज्ञा में विचरते साधुओं में से चार
को प्रवर्तक की तरह मुकर्र कर सब अधिकार उन्हें सौंप दि
चार प्रवर्तकों के नाम निम्नांकित हैं ।

कि चाहे जो मनुष्य चाहे जैसे विकट प्रश्न करता उसे वे
और खूबी तथा संतोष कारक उत्तर देते कि, प्रश्नकर्ता के
उठाने की प्राय: आवश्यकता न रहती थी, इस प्रकार
का उद्योत करता हुआ भव्यजनों के हृदयरूप कमल व
सित करता हुआ, पूज्य श्रीरूपपाद विहारी सूर्य भूमंडल में वि

रतलाम का चातुर्मास पूर्ण हुए पश्चात् पूज्य श्री
महाराज वहां से विहार कर मालवा और मेवाड़ की भू
करते २ अपने पूर्व पुण्य का प्रकाश फैलाते तथा श्री
महाराज की सम्प्रदाय का गौरव बढ़ाते आनुक्रम से उ
काल पधारे उस समय उदयपुर के मुख्य दीवान श्रीमा
साहिब व्याख्यान का लाभ लेते थे वे पूज्य श्री से व्याख
में ही खड़े होकर सं० १९५८ का चातुर्मास उदयपुर
प्रार्थना करने लगे इसके उत्तर में पूज्य श्री ने फरमाया
तो यहां चातुर्मास करने की अनुकूलता नहीं है परंतु
जवाहिर (जवाहरात) की पेटी समान श्री जवाहिरला
को उदयपुर चातुर्मास करने भेज दूंगा और उनके
आनंद मंगल होता रहेगा तदनुसार सं० १९५८ में श्री
लालजी महाराज को उदयपुर चातुर्मास करने को भेजा
उपदेश से बड़ा उपकार हुआ कई कसाइयों ने जी
तथा मांस भक्षण करने का त्याग किया इस वर्ष

अध्याय ११ वाँ

सदुपदेश–प्रभाव।

भीलवाड़ा—पूज्य श्री श्रीलालजी महाराज उदयपुर भीलवाड़े पधारे शेषकाल कल्पते दिन ठहरे। भीलवाड़ा के हाकिम महताजी श्री गोविंदसिंहजी साहिब ने श्रीमान् के सदुपेदश से सम्यक्त्व रत्न प्राप्त किया। वे व्याख्यान में पधारते थे, जैनधर्म का रंग उनकी हड्डी २ की मींजी में रम गया था, वे पूज्य श्री के अनन्य भक्त बन गए। उपरोक्त हाकिम साहिब ने जीवदया के अनेक कार्य किये हैं और जैनधर्म का बहुत उद्योत किया है।

श्रीयुत करोड़ीमलजी सुराणा कि, जो भीलवाड़े के एक सद्गृहस्थ थे उन्हें पूज्य श्री के सदुपदेश से वैराग्य उत्पन्न हुआ। उन्होंने धन, माल, जमीन इत्यादि त्याग कर सं० १९५८ के वैशाख वद्य १ के रोज बड़े ठाठ (धूमधाम) से दीक्षा ली।

श्रीजी के व्याख्यान में स्वमती अन्यमती, हिन्दू मुसलमान सब आते थे, डाक्टर हसमत अलीजी श्रीजी के पास आते थे उनका जीवदया की ओर पूर्ण प्रेम होगया था।

अध्याय ११ वाँ

सदुपदेश-प्रभाव ।

भीलवाड़ा—पूज्य श्री श्रीलालजी महाराज …
भीलवाड़े पधारे शेषकाल कल्पके दिन ठहरे । भीलवाड़ा …
हाकिम श्री गोविंदसिंहजी साहिब ने श्रीमान् के सदुपदेश …
कत्व रत्न प्राप्त किया । वे व्याख्यान में पधारते थे, जैनध…
उनकी हड्डी २ की मींजी में रम गया था, वे पूज्य श्री …
भक्त बन गए । उपरोक्त हाकिम साहिब ने जीवदया के अ…
कार्य किये हैं और जैनधर्म का बहुत उद्योत किया है ।

श्रीयुत करोड़ीमलजी सुराणा कि, जो भीलवाड़े के …
सद्गृहस्थ थे उन्हें पूज्य श्री के सदुपदेश से वैराग्य उ…
उन्होंने धन, माल, जमीन इत्यादि त्याग कर सं० १९५…
वैशाख वद १ के रोज बड़े ठाठ (धूमधाम) से दीक्षा …

श्रीजी के व्याख्यान में स्वमती अन्यमती, हिन्दू …
सब आते थे, डाक्टर हसमत अलीजी श्रीजी के पास आ…
उनका जीवदया की ओर पूर्ण प्रेम होगया था ।

भीलवाड़े से क्रमशः विहार करते २ नागोर से पूज्य
पधारे वहां के ठाकुर साहिब कालूसिंहजी राठोड़ पूज्य श्री
व्याख्यान में आते पूज्य श्री की प्रभावशाली वाणी सुन उन्हें
मित आनंद होता था। उन्होंने दारू, मांस हमेशा के लिये
दिया था, रात्रिभोजन का त्याग किया, उनका जैनधर्म पर
प्रेम होगया था। उनकी नवकार महामंत्र पर अतुल श्रद्धा
ई थी ये ठाकुर साहिब प्रति दिन छः सामायिक करते और
के छः पौषध करते थे यह सब प्रताप पार्श्वमणि—समान
पूज्य श्री के सत्संग और सद्बोध का था।

जोधपुर (चातुर्मास) सं० १९५७ का चातुर्मास जोधपुर में
इस चातुर्मास में पूज्य श्री की अमृतधारा वाणी से अनहद
हुआ। वैष्णव धर्मानुयायी प्रायः ४०—५० घर पूज्य श्री
के उपदेशामृत का पान कर जैनधर्मानुयायी बने जिनमें
वर श्रीयुत गुलाबदासजी अग्रवाल तो व्रतधारी श्रावक हो

नागौर:— जोधपुर से विहार कर सं० १९५८ के मगसर
में श्रीमान् हरिचंदजी महाराज के साथ पूज्य श्री नागौर
। यहां पूज्य श्री के उपदेशामृत का पान करते २ वैराग्य
[illegible] हुए भाई श्री [illegible] और [illegible] की दीक्षा
[illegible] मगसर बद १० के रोज हुआ।

बीकानेर: (चातुर्मास) सं० १६५८ का चातुर्मास पूज्य
ने बीकानेर किया वहां धर्म का अपूर्व उद्योत हुआ। यहां के
स्वधर्म परायण भाईयोंने अभयदान, ज्ञानदान, आतिथ्य-स
इत्यादि पारमार्थिक कार्यों में पुष्कल द्रव्य व्यय किया पूज्य श्री
कीर्ति दशों दिशाओं में विस्तृत होने से दूर २ देशावरों के
पूज्य श्री के दर्शनार्थ संख्याबद्ध आते, उनका स्वागत बीका
संघ बहुत उत्कंठा और उदारता पूर्वक करता था। साधु सा
के तपश्चर्या की तथा ज्ञानध्यान की खूब धूम मच रही थी।
श्रावक और श्राविकाएं भी व्रत, प्रत्याख्यान, दया, पौषध,
रंगी इत्यादि से अपनी आत्मा का कल्याण करने लगीं। व्य
में स्वमती अन्यमतियों की भारी भीड़ होने लगी। इस चा
में हजारों पशुओं को अभय दान मिला था।

कितने अन्य मतावलंबियों ने जैन-धर्म अंगीकार किय
सिद्ध सुश्रावक गणेशीलालजी मालू कि, जो साधुमार्गी जैन
कट्टर विरोधी थे पूज्य श्री के परिचय और सदुपदेश से दृढ
बन गए और चातुर्मास में श्रीजी के दर्शनार्थ आये हुए
श्रावक श्राविकाओं के आगत स्वागत तथा भोजन इत्यादि क
प्रबंध उन्होंने अपने खर्च से किया था। इतनाही नहीं पर
धर्म के उद्योत के लिये तथा जनसमूह के हितार्थ परमार्थ
उन्होंने लाखों रुपयों का सद्व्यय किया और वर्तमान

ाक पुत्र को भी द्रव्य के हक के साथ २ इस सद्गुण का भी हक़
ाम हुआ है।

इस चातुर्मास के दरम्यान एक बख्तावर नाम की वेश्या नें
पूज्य श्री के सदुपदेश से वेश्यावृत्ति का बिल्कुल त्याग किया था
तथा वह श्राविकावृत्ति धारण कर पवित्र और धर्ममय जीवन
व्यतीत करने लगी थी कि, जो अभी भी विद्यमान है।

बीकानेर के चातुर्मास के पश्चात् पूज्य श्री नें जोधपुर की तरफ विहार
किया। वहां श्री मुन्नालालजी महाराज का समागम हुआ परंतु किसी
आचार्य श्री की इच्छा के विरुद्ध वे पृथक् विचरने लगे। इस कारण
श्रीमान् के हृदय में जावरे वाले संतो को अपने साथ शामिल
करने की प्रेरणा हुई। फिर वहां से वे क्रमशः विहार कर मेवाड़ में
पधारे उदयपुर संघ की कई वर्षों से चातुर्मास के लिये विनन्ती थी
इसलिये सं० १९५९ का चातुर्मास उदयपुर में किया।

अध्याय १२ वाँ

अपूर्व—उद्योत।

———:o:———

पूज्य श्री का चातुर्मास होने के कारण उदयपुर सब आ-
न्दोत्सव छा गया पहिले कभी किसी स्थान पर पचीसरंगी
यिक होने का वृत्तान्त नहीं सुना था। वह पचीसरंगी यहाँ पा
इस संवर—करणी में ६२५ पुरुषों की उपस्थिति की आवश्यक
होती है। लोगों का उत्साह इतना अधिक बढ़ा था कि, चित्तौ
निवासी मोड़सिंहजी सुराना ने एक ही आसन पर एक साथ ११
सामायिक किये। एवं दिन रात खड़े रहकर सामायिक का सम
व्यतीत किया। इसी भांति घेरीलालजी महता ने १३१, तथा कन्है
यालालजी भंडारी ने १३१ सामायिक खड़े रहकर किये और
अति उत्साह-पूर्वक पचीसरंगी के ऊपर सामायिक की पचरंगी त
नवरंगी की। इस चौमासे में १०८ अठाइयाँ हुई थीं। इस
सिवाय सैकड़ों स्कंध तथा अन्य प्रकार की भी बहुतसी तपश्च
हुई थी।

कई खटीकों (कसाइयों) ने हमेशा के लिये जीवहिं
करने का त्याग किया। इस प्रकार त्याग करने वाले खटीकों में

ोर, गोकल बरधा, और नन्दा के चारों भाई तथा दूसरे भी खटीक और इनकी स्त्रियाँ, साधु मुनिराजों के पास उनके ख्यान (उपदेश) सुनने आती थीं। पूज्य श्री के उपदेश से कसाई का धन्दा छोड़ने के पश्चात् किशोर आदि की आर्थिक- स्थिति छी होने से बहुत सुखी हो गये थे। वर्तमान समय में भी ब्याज तथा हुंडी पत्री का धन्दा करते हैं, और बाजार में उनकी ख (पैठ) इतनी बढ़ गई है कि, उनकी हजारों रुपयों की हुंडियाँ आती हैं। इनके सिवाय दूसरे भी कई नीच (शूद्र) लोगों आजीवन मांस, मदिरा का उपयोग करना छोड़ दिया और कितने अन्यमतावलम्बी जैन-धर्मावलम्बी हो गये।

गोचरी करने के हेतु पूज्य श्री स्वयं जाते और सामुदायी चरी करते थे। अन्य धर्म (जैनेतर) तथा दीनावस्था वाले रयों के यहाँ जाकर मक्की तथा जौकी रोटी 'बेहर' लाते थे। स्त्रों में जिन जिन जातियों के यहाँ का आहार ग्रहण करने की ज्ञा है उन सब के यहाँ से आहार ले आने में पूज्य श्री अपने में जरा भी संकोच नहीं करते थे।

इस वर्ष भी बाहर से सैकड़ों लोग पूज्य श्री के दर्शनार्थ आते । उन सबों के भोजन आदि का प्रबन्ध संघ की ओर से बड़ी ि होता था।

अमीर, उमराव, आफिसर और राज्य-कर्मचारी गण आ
बहु संख्यक लोग व्याख्यान से लाभ उठाते थे, और उनमें
कई जैन धर्म के प्रेमी भी हो गये थे। उन सबों में श्रीमान् महा
णाजी साहिब के ज्यूडिशियल सेक्रेटरी लाला केशरीलालजी
का नाम उल्लेखनीय है। पूज्य श्री के सदुपदेश से उन्होंने जैन-
को स्वीकार किया, इतना ही नहीं किन्तु उन्होंने जैनशास्त्र
कोटी का ज्ञान सम्पादन करके, जो एक उत्तम श्रावक को शोभा
उस प्रकार का अनुकरणीय पारमार्थिक जीवन व्यतीत किया है,
हजारों पशुओं को अभय-दान दिया है। लाला साहिब अब
विद्यमान हैं। कुछ महीने पहिले (संवत्) १९७७ के श्री
श्रावण की ३ के दिनका मुकाम बीकानेर सभा में हमारे जाने
उनकी भेट का हमें लाभ प्राप्त हुआ था। वर्तमान आचार्य महा
श्रीमान् जवाहिरलालजी महाराज का चातुर्मास उस स
बीकानेर में था अतः उनके सत्संग का लाभ उठाने के लिये ही
बीकानेर में आकर रहे थे। इन महानुभाव का संक्षिप्त जीवन-च
उनके ही मुंह से श्रवण करने की हम को अभिलाषा होने से
ने निम्न लिखित जीवन-परिचय दिया था।

मेरा नाम केशरीलाल है और मेरी जाति कायस्थ माथु
है मेरा निवास स्थान (वतन) उदयपुर है। मैंने ५० वर्ष
मेवाड़ दरबार की नौकरी की है। जिनमें से २४ वर्ष तक ज्यु

ल सेक्रेटरी के पदपर रहकर स्वयं महाराणा साहिब श्री फते-
जी बहादुर के समक्ष मुकद्दमों की पेशी की है, और अब मैं
स श्री पूज्य १००८ पूज्य श्री श्रीलालजी महाराज के १६
के सत्संग और सदुपदेश से निवृत्तिपरायण-जीवन व्यतीत
ा हूं।

किशनगढ़ महाराज के सम्बन्धी (कुटुम्बी) सरदारसिंहजी
क एक राठोड़ राजपूत जो कि, वैष्णवधर्मावलम्बी थे और
ा दशा में रहते थे। वे योग विद्या के पूर्ण अभ्यासी थे।
नके पास उदयपुर मुकाम पर, योगाभ्यास करने के हेतु
. १६५२ में जाता था एक दिन उनने मुझे सामने के बगीचे
मेंहदी के झाड़ का फूल तोड़कर ले जाते देखा। उसी
तुरंत ही आवाज देकर मुझे बुलाया और कहा कि
ी डाली के ऊपर से यह फूल किस लिये तोड़ा? यदि कोई
ारी अंगुली फाड़कर ले जाय तो तुम्हें कितना दर्द हो? क्यों
नहीं जानते कि, जिस प्रकार तुम्हारे शरीर में दर्द होता है
प्रकार वृक्ष में भी जीव होने से उसको दर्द होता है?" इसके
ार उन्होंने फूल में के त्रसजीव (चलते फिरते) भी प्रत्यक्ष
मुझे बतलाये और कहा कि "मुझे मालूम होता है कि, तुमने
... ... महात्मा की सेवा नहीं की होगी इसी कारण से
... ..." । मैंने यह

आश्चर्यान्वित (विस्मित) हो अपने योगी गुरु से पाथाना
हम वैष्णव धर्मी हैं, हमको जैन साधु महात्माओं का सत्संग
की क्या आवश्यकता ?" इसके सिवाय मैंने यह भी सुना
हस्तिना ताड्यमानोऽपि न गच्छेज्जैनमन्दिरम्" ।

यह सुनकर उन योगी ने उत्तर दिया कि" यह व
किसी मूर्ख का है अब तुम अवश्य किसी जैन साधु महात्मा
संगति करो" । उन्हीं महात्मा की कही हुई बात है कि "तीर्थंक
से बड़े हैं और उन्होंने जो वाणी फरमाई है वह सत्य ही
कही है क्योंकि, वे सर्वज्ञानी और सर्वदर्शी हुए और इस
का मुझको पूर्ण विश्वास दिलाने के लिये जैनकी कई एक धर्म
द्रष्टान्तरूप से अवसर २ पर फरमाते रहे, मुझे उनकी कृपा
गाभ्यास में अत्यन्त लाभ हुआ था, और उनके वचनों प
पूर्ण श्रद्धा जम गई थी, उनकी प्रत्येक बात को मैं अन्तःकरण
सत्य मानता था । इस कारण उसी दिन से जैन साधु मह
के दर्शन और सत्संग की उत्कट अभिलाषा हो गई ।

इस अरसे में एक दिन एक मनुष्य गोभी का फूल
जाता था उसके पास से मेरे योगी गुरु ने गोभी मंगाई औ
थरिया (थाली) में खखेरी तो उसमें से बहुत त्रस जीव
वे प्रत्यक्ष बताये और गोभी खाने की मुझे शपथ (सौ
भी दिलाई ।

उपरोक्त कथनानुसार जैन साधुओं के दर्शन के लिये मेरी अभि-
दिनों दिन विशेष बलवती होती गई, और सौभाग्य से संवत्
६ में श्रीमान् पूज्यश्री १००८ श्री श्रीलालजी महाराज का
स्य उदयपुर होने से उनका पधारना हुआ। यह खबर मिलते
ने उनके चरणकमलों में आकर वन्दना की और व्याख्यान
ना। पूज्यश्री पूर्ण दयादृष्टि से मेरे समान अन्य धर्मी अजान
किक बात व्याख्यान द्वारा पूर्ण प्रेम के साथ स्पष्टीकरण करके
ने लगे। पूज्य श्री ने मेरे मन को जीत लिया और उसी दिन
अपने पहिले योगी महात्मा को यह सब वृत्तान्त निवेदन किया,
न्होंने अत्यन्त प्रसन्नता पूर्वक फरमाया कि, तुम प्रति दिन व्या-
न सुनते रहो। और जो सुनो वह मुझे भी यहां आकर कहते रहो।
स के चार महीनों में प्रायः सदैव मैंने व्याख्यान सुना, तब से
तक लगभग १७ वर्ष हुए, पूज्य महाराज तथा अन्य मुनिरा-
का जबजब उदयपुर में पधारना होता रहा, तब तब मैं बराबर
सेवा करता रहा हूं तथा व्याख्यान सुनता रहा हूं। और लाभ
पूज्य महाराज जहां विराजते हों वहां देश परदेश में रहकर
धर्म श्रवण करने का लाभ लेता रहा हूं। उनकी कृपा से
अलभ्य लाभ होने लगा है।"

प्रिय पाठक ! यह शब्द स्वयं लालाजी के ही कहे हुए
[illegible]) इस समय ६८ वर्ष की है, तो भी वह

(जुवान) के समान काम कर सकते हैं। धर्मोन्नति के काम में
अग्रगण्य रहते हैं, वे एक ही बार भोजन करते हैं, और
पदार्थों के सिवाय सब पदार्थों का उन्होंने त्याग कर दिया है
की दाल, रोटी, दूध, चावल, जल, एक शाक यह उनके
है। सब प्रकार की मिठाई खाना भी आपने छोड़ दिया है

संवत् १८६३ में वर्तमान आचार्य महोदय श्रीमान्
लालजी महाराज का चातुर्मास था। उस समय उनके सदु
लालाजी ने अपनी पत्नी के सहित (जोड़ी से) ब्रह्मचर्य
कार किया है।

लालाजी को अंग्रेजी, फारसी तथा कायदे कानून का
है। उनकी बुद्धि अत्यन्त निर्मल है। उनका जैनशास्त्र का
प्रशंसनीय है। वे उत्तम वर्ग के श्रोता हैं। प्रति वर्ष वे सैक
पशुओं को अभयदान देने आदि धार्मिक कार्यों में व्यय
और गत तीन वर्षों से उन्होंने अपना जीवन पारमार्थिक
के हेतु ही अर्पण कर दिया है। वे पूज्य श्री के अनन्य भ

संवत् १९६० के उदयपुर के चातुर्मास में उपरोक्त
नुसार, लालाजी केशरीलालजी जैन-धर्म के पूरे अनुरागी
प्रकार उदयपुर के एक बड़े वकील श्रीयुत हीरालालजी ता
जिनके पास हजारों रुपयों की स्थावर तथा जंगम स्टेट (गि

को पूज्य श्री के उपदेश से वैराग्य उत्पन्न हो गया; इस कारण
था जावर वाले एक गृहस्थ श्रीयुत हीराचन्दजी ने पूज्य श्री
'दीक्षा' लेने का निश्चय किया।

ातुर्मास पूर्ण होते ही संवत् १९६० की मंगसर वदि ३ के
र दोनों को कविराज श्री श्यामलदासजी की वाड़ी में बड़ी
म के साथ दीक्षा देने में आई। इस प्रकार का दीक्षामहो-
ससे प्रथम उदयपुर में कभी नहीं हुआ था।

श्रीमान् हीरालालजी पूज्य श्री के पास दीक्षा लेते हैं, ऐसी खबर
ही श्रीमान् हिन्दवा सूर्य महाराणा साहिब ने कृपा पूर्वक एक
ीक्षा लेने वाले को बैठने के लिये, तथा एक हाथी आगे रख-
लिये, तथा सरकारी बाजे इत्यादि सरकार में से भेज दिये
ीक्षित को पछेड़ी ओढ़ाने के लिये उत्तम दो थान मल मल
ा दिये।

श्रीयुत हीरालालजी नाहड़िया हाथी पर बैठे और दूसरे हीरा-
ी जावर वाले पालकी में बैठे। एक हाथी निशान सहित आगे
ा था। रास्ते में मनुष्यों की भीड़ लगी हुई थी। श्रीयुत हीरा-
जी नाहड़िया ने रुपयों की एक थैली अपने पास रख ली थी।
[illegible] वे उन्हें उछाल कर भीड़ में फेंकते जाते थे। [illegible]
स इस प्रकार से थैली को अंतिम माल पर इकट्ठा कर रुपये

दीक्षा का वरघोड़ा बाजार के बीच में होकर, घंटाघर के पास
हुआ हाथीपोल (दरवाजा) के बाहर की कविराजजी की ...
पहुंचा और वहां पर पूज्य श्री ने दोनों महानुभावों को ...
दीक्षा दी। पूज्य श्री को शिष्य करने का त्याग होने के कारण
ने दोनों मुनि श्रीहालचन्द्रजी महाराज के नेश्राय में कर दिये

तत्पश्चात् पूज्य श्री उदयपुर से विहार करके 'करणपुर'
उदयपुर से १० कोस 'ऊंटाला' नामक ग्राम की ओर ...
रास्ते में ऊंटाला की हद्द में एक कसाई ८० बकरों सहित
मिला। यह खटीक—कसाई ग्राम 'कपासन' में से बकरे खरी...
उदयपुर के कसाइयों के हाथ बेचने के लिये ले जाता था
श्री की दृष्टि उन बकरों पर पड़ी और कारुण्य भाव की छ...
के मुखकमल पर छा गई। 'ऊंटाला' के लोगों ने इसी ...
खटीक को १७५ रुपये देने का ठहराकर, ८० बकरों को
दिया और उनको उदयपुर के नगरसेठ के पास भिजवा...
प्रबन्ध किया। खटीक के हृदय में स्वाभाविक रीति से ...
श्री पर अतुलनीय पूज्य भाव प्रकट हुआ और वह पूज्य ...
में पड़कर पुनः २ अपने अपराध की क्षमा मांगने लगा ...
ने समयानुसार उसको अत्यन्त प्रभावोत्पादक और उपदे...
के वचन कहे। इसका 'निशाने' के समान ऐसा प्रभाव...
उसने स्वयं महाराज श्री के पास आकर इस प्रकार प्रतिज्ञा

राज ! मैं आसपास के गामों में से बकरे खरीद करके, उ-
के खटीकों के हाथ बेचता हूं, मेरा यही धन्दा है; किन्तु
। मैं जीऊंगा वहां तक यह धन्दा नहीं करूंगा "। ॐ

हां से पूज्य श्री कानोड़ पधारे। कानोड़ के रावजी साहिब
ड़ पट्टे के गामों में जहां जहां नदी, नाले और तालाब हो
र इसी प्रकार उनका खालसा गाम ' कुणनी ' के पास जो
वहां मच्छी मारने की हमेशा के लिये मनाही कर दी उस
की आज तक पालना होती है। इसके सिवाय पूज्य श्री के
से कानोड़ में ५० के लगभग ' स्कंध ' हुए।

ॐ कुछ मास पहिले उदयपुर वाले श्रीमलजी भटा भी इनको
मे मि. उसी हर्ष से यह धंदा बिल्कुल छोड़ दिया है।

अध्याय १२ वाँ

उपसर्ग को निमंत्रण।

कानोड़ से क्रमशः विहार करते हुए आचार्य श्री चि
हुए 'सांडलगढ़, पधारे और वहां से कांटे की ओर विहा
कोटे जाने के दो रास्ते हैं। एक मार्ग जंगल में होकर जात
महाभयंकर है। दूसरा रास्ता जंगल को चक्कर देकर जा
पूज्य श्री ने सीधा जाने वाला (पहिला) रास्ता पसन्द कि
सांडलगढ़ से विहार करके सिंगोली पधारे। वहाँ के लोगों
श्री से प्रार्थना की कि " इस रास्ते यदि आप न पधारो तो
क्योंकि, यह रास्ता भूल भूलावणी वाला ' याने इस रास्ते
भूल जाने का डर है) और लगभग १०, १२ कोस का
और उसमें सिंह, चीते, रीछ आदि मनुष्य को फाड़ कर
डाले हिंसक पशु बहुतायत से बसते हैं। दूसरे रास्ते हो
आप कोटे पधारेंगे, तो केवल १५ कोस आपको अधिक
पड़ेगा किन्तु इस रास्ते में किसी प्रकार का भय नहीं है।
शरीर की पर्वाह नहीं करने वाले, और आपत्तियों को
पूर्वक आमंत्रण देने वाले पूज्य श्री श्रीलालजी महाराज ने लो

। पर ध्यान नहीं दिया और सीधा मार्ग पकड़ा। यह दुराग्रह
किन्तु आत्म श्रद्धा का दृष्टान्त है पूज्य श्री के साथ आठ साधु
नों से अधिकांश साधुओं को उस दिन उपवास था।
किसी ने केवल छाछ (मही) पीने का आगार (छूट)
था। थोड़ा मार्ग व्यतीक्रम करते ही पहाड़ों में रास्ता भूल गये
दूसरी पगडंडी से चढ़ गये। ज्यों ज्यों आगे बढ़ते गये त्यों त्यों
ही भयावना और घना जङ्गल आने लगा। हिंसक पशुओं
पदपंक्तियें (पैरों के चिन्ह) दृष्टिगोचर होने लगीं,
बाघ इत्यादि के गगन भेदी शब्द श्रुतगोचर (सुनाई देना)
लगे, इस कारण एक साधुने पूज्य श्री से अर्ज की कि "महा-
राज यह जङ्गल सचमुच ही महाभयङ्कर है।" महाराज ने कहा
कि अपन साधुओं को किस बात का डर है? भय तो उसे
... जो मृत्यु को अपने जीवन का अन्त समझता हो,
... विनाश के साथ में अपना नाश मानता हो अथवा मृत्यु
... के जीवन को भय और आपदा का स्थान मानता हो।
... के प्रताप से जिनवाणी का ठीक ठीक रहस्य समझता
... जीवन और मरण में कुछ भी न्यूनाधिकता नहीं समझना
... जीने की आशा और मरने का भय इन दोनों को जला
... विचरने में ही अपने संयम-जीवन की सच्ची कसौटी
... ममता को हवा में फेंक दो और रटना धारण करो"।

अध्याय १२ वाँ

उपसर्ग को निमंत्रण ।

कानोड़ से क्रमशः विहार करते हुए आचार्य श्री चित्तौ[illegible] हुए 'मांडलगढ़, पधारे और वहां से कोटे की ओर विहार [illegible] कोटे जाने के दो रास्ते हैं । एक मार्ग जंगल में होकर जाता [illegible] महाभयंकर है । दूसरा रास्ता जंगल को चक्कर देकर जाता [illegible] पूज्य श्री ने सीधा जाने वाला (पहिला) रास्ता पसन्द किया [illegible] मांडलगढ़ से विहार करके सिंगोली पधारे । वहाँ के लोगों ने [illegible] श्री से प्रार्थना की कि "इस रास्ते यदि आप न पधारो तो उत्त[illegible] क्योंकि, यह रास्ता भूल भूलावणी वाला ' याने इस रास्ते में [illegible] भूल जाने का डर है) और लगभग १०, १२ कोस का जङ्ग[illegible] और उसमें सिंह, चीते, रीछ आदि मनुष्य को फाड़ कर खा [illegible] डाले हिंसक पशु बहुतायत से बसते हैं । दूसरे रास्ते होकर [illegible] आप कोटे पधारेंगे, तो केवल १५ कोस आपको अधिक च[illegible] पड़ेगा किन्तु इस रास्ते में किसी प्रकार का भय नहीं है । [illegible] शरीर की पर्वाह नहीं करने वाले, और आपत्तियों को आ[illegible] पूर्वक आमंत्रण देने वाले पूज्य श्री श्रीलालजी महाराज ने लोगों

पर ध्यान नहीं दिया और सीधा मार्ग पकड़ा। यह दुराग्रह
किन्तु आत्म श्रद्धा का दृष्टान्त है पूज्य श्री के साथ आठ साधु
उनमें से अधिकांश साधुओं को उस दिन उपवास था।
किसी ने केवल छाछ (मही) पीने का आगार (छूट)
था। थोड़ा मार्ग व्यतीक्रम करते ही पहाड़ों में रास्ता भूल गये
दूसरी पगडंडी से चढ़ गये। ज्यों ज्यों आगे बढ़ते गये त्यों त्यों
ही भयावना और घना जङ्गल आने लगा। हिंसक पशुओं
पादपंक्तियें (पैरों के चिन्ह) दृष्टिगोचर होने लगीं,
बाघ इत्यादि के गगन भेदी शब्द श्रुतगोचर (सुनाई देना)
लगे, इस कारण एक साधुने पूज्य श्री से अर्ज की कि "महा-
यह जङ्गल सचमुच ही महाभयङ्कर है।" महाराज ने कहा
भाई अपन साधुओं को किस बात का डर है? भय तो उसे
चाहिये जो मृत्यु को अपने जीवन का अन्त समझता हो,
के विनाश के साथ में अपना नाश मानता हो अथवा मृत्यु
बाद के जीवन को भय और आपदा का स्थान मानता हो।
सद्गुरु के प्रताप से जिनवाणी का ठीक ठीक रहस्य समझता
उसको जीवन और मरण में कुछ भी न्यूनाधिकता नहीं समझना
है। जीने की आशा और मरने का भय इन दोनों को जला
करके विचरने में ही अपने संयम-जीवन की सच्ची कसौटी
माया ममता को हवा में फैंक दो और दृढ़ता धारण करो

इतने में एक अन्य साधुने कहा "महाराज ! दूसरा तो आ
किन्तु रास्ता भूल गये हैं इससे बहुत ही हैरान होना पड़ा
श्रीजी महाराज ने फर्माया "कुछ पर्वाह नहीं, यकीन रक्खो
श्री नवकार मंत्र का ध्यान धरो,, सबों ने आगे चलना शुरु कि
डाबी फलका से रास्ता भूले थे लेकिन पूज्य श्री ने जो दिशा
थी उसको वे चूके नहीं थे उससे छः कोस दूर वड़दा नामक गां
वहां पर सब पहुँचे। वहाँ से छाछ मिली और सब कोई आगे
पैर थक गये थे तो भी आशा उत्साह नहीं थका था। आशा
को नया बल देती जाती थी। उस दिन कम से कम १२ को
की यात्रा हुई होगी।

मनुष्य स्वभाव का पृथक्करण करने वाले एक अनुभवी के
मान सत्य हैं कि: " जिस मनुष्य की वाणी, व्यवहार, चाल
(दिखाला) विजय का विश्वास बँधाने वाले होते हैं वही मनु
विजय के विश्वास का प्रचार कर सकता है और स्वतः के प्रा
किये हुए कार्य को पूर्ण करने में सामर्थ्यवान् है, इस प्रकार
श्रद्धा भी उत्पन्न कर सकता है। जो मनुष्य आत्म-श्रद्धा वा
निश्चयी एवं आशावादी है वह अपना कार्य सफलता मिलने
प्रतीति सहित प्रारम्भ करता है वह महान् आकर्षण शक्ति भी
है। शिथिल महत्वाकांक्षा अथवा अपूर्ण उद्योग से कभी भी
कार्य्य सिद्ध नहीं हुआ। अपनी आशा, श्रद्धा, निश्चय और उद्योग

क्ति) होना चाहिये । अपने कार्य को सिद्ध करने वाली शक्ति सहित निश्चय करना चाहिये ।

मट्टी के बर्तनों को पक्के करने के लिये सुवर्ण को शुद्ध कुन्दन के लिये, और धातुओं को आकृति के रूप में आने के लिये न की आँच सहकर उसमें से निकालना पड़ता है । इस दृष्टान्त अनेकों विषय की बातें विचार सकते हैं । साधुलोग आत्म-श्रद्धा और मन को दृढ़ रखने वाले हों तो विचारा हुआ कार्य पूर्ण सकते हैं । आधि, व्याधि और उपाधि के दास बने हुए डर साधुओं को बिल्कुल समीप दिखाते हुए गांवों के बीच में, छे दिन में विहार करते हुए भी, साथ में मनुष्य रखना पड़ता है निर्बलता का नमूना है ।

विशुद्ध संयम के प्रभाव के अदृश्य-आन्दोलनों द्वारा प्रकृति भी इतना अधिक असर पड़ता था कि, सूर्य की उष्णता से रण करने के लिये बादलों में भी स्पर्धा (ईर्षा) उत्पन्न होगई (याने आसमान में बादलों के आवागमन का क्रम नहीं टूटता और छाया बनी रहती थी) ठीक दुपहरी (मध्यान्ह के समय) शीतल वायु का अनुभव होता था और जंगली जानवर छिप छुप कर महात्माओं के दर्शन से कृतार्थ होते थे । बहुरत्ना सुन्धरा । श्री तीर्थंकरों के समोसरण में बाघ, सिंह, बकरे

एक साथ बैठकर क्रीड़ा करते, उन्हीं तीर्थंकरों के वारिसों (हा
में फूल (पुष्प) नहीं तो फूल की पांखड़ीरूप यह अद्भुत
हो तो उसमें आश्चर्य करने का कोई कारण नहीं है। योगी साधुओं
अपार लीला है। दूसरे प्राचीन समय में सब प्रकार की सुविधा होते
भी संयमी मुनिराज घोर श्मशान, सर्प की बांबी (बिल, दर) और
की गुफाओं के पास चातुर्मास करते थे। यह सब कुछ पोथियों
बाँध, पिटारे ले पूर अपने मनचाहे (इच्छानुसार) स्थान प
विराजना और परिसह—कसौटी का अवसर ही न आने देना
इस प्रकार की काल दोष की भीरुता ही है।
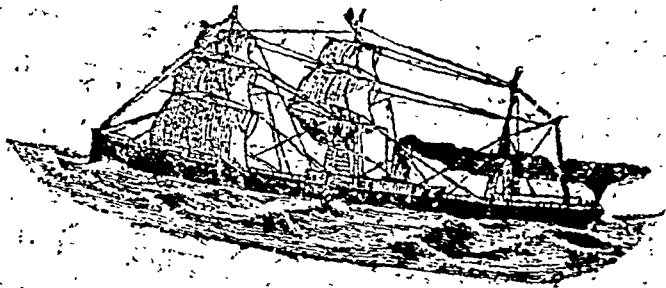
अध्याय १४ वाँ

जन्मभूमि में धर्म जागृति ।
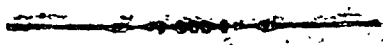
टोंक (चातुर्मास) मेवाड़ में से क्रमशः विहार करते हुए कोटे
र टोंक पधारे और संवत् १९६१ विक्रमी का चातुर्मास अपनी
भूमि टोंक में किया। यहां धर्म का अत्यन्त उद्योत हुआ। अजमेर
ीवान बहादुर सेठ उम्मेदमलजी साहिब लोढा आचार्य श्री के
नार्थ टोंक पधारे थे। ये वहां के नवाब साहिब की भेंट करने
गये, उस समय नवाब साहिब के समक्ष आचार्य श्री की दैवी
पम वाणी, और उत्तमोत्तम गुणों की मुक्त कंठ से प्रशंसा
हुए उन्होंने कहा कि "यह रत्न आपकी ही राजधानी में
म हुए होने से जैन इतिहास में टोंक का नाम भी स्वर्णाक्षरों में
ित होगा,,। यह सुन कर नवाब साहिब अत्यन्त हर्षित हुए
उन्होंने भी पूज्य श्री की प्रशंसा की।

पूज्य श्री की अपूर्व प्रशंसा सुनकर खान साहिब महम्मद इनूब
न पूज्य श्री के पास आने लगे और उनके हृदय पर श्रीजी
देश का इतना प्रभावोत्पादक असर पड़ा की,

" आजीवन शिकार नहीं खेलने तथा मांस नहीं खाने
प्रतिज्ञा की।"

एक गृहस्थ कायस्थ लाला बद्रीलालजी ने अपनी स्त्री वि
मान होते हुए भी ब्रह्मचर्य व्रत अङ्गीकार किया, श्रावकों के
का स्वीकार किया, सामायिक प्रतिक्रमण करना शुरु कि
और दृढ धर्मी जैन बन गये। पूज्य श्री के हंसते चेहरे पर
मंडल भव्य मालुम होता था। ज्ञान के प्रभाव से आंखें चम
थीं। चेहरे पर माधुर्य, गांभीर्य, भव्यता, सामर्थ्य और दैवी
का प्रकाश झलकता था। जिससे अपने सामने वाले मनुष्य
इच्छानुसार प्रभाव पड़ता था।

सरकारी मेम्बर बाबू दामोदरदासजी साहिब जो कि, काठि
वाड़ के ब्राह्मण गृहस्थ थे वे श्रीजी के मुखारविन्द की अमृत
सुन कर अत्यन्त हर्षित होते, समय समय पूज्य श्री के पास आ
कितनी ही बार तो वे व्याख्यान के प्रारम्भ में ही उपस्थित हो

और पूज्यश्री मंद मंद स्वर से—

सवैया—वीर हिमाचल से निकसी,
गुरु गौतम के श्रुत कुंड ढली है।
मोह महाचल भेद चली,
जग की जडता सब दूर करी है॥

सांसारिक लोगों में कहावत है कि „ घर यह दुनिया
अन्त है। मातृभूमि के उपकार अवर्णनीय हैं। संसार
प्राणियों का हित चाहने वाले जन्मभूमि को किस प्रकार भूल
हैं? किसीन ठीक ही कहा है:—

क्या ऐसा नर शून्य हृदय का, इसजग में पाता विश्राम
जो यह कभी नहीं कहता है 'यही हमारा देश-ललाम'
'मेरी प्यारी जन्मभूमि है' इस विचार से जिसका मन
नहीं उमंगित हुआ वृथा है, उसका पृथ्वी पर जीवन।

Breathes there the man, with soul so dead,
Who never to himself hath said,
This my own, my native land!

Sir Walter Scott.

उपकार का बदला न दे सकने के कारण सांसारिक दृष्टि
कृतघ्न गिने जाने की पर्वाह वे नहीं रखते थे किन्तु जहां
उपकार होने का सम्भव होता था वहां वे सब से प्रथम विच
थे। पूज्य श्रीके टौंक में चातुर्मास जैनशासन का बहुत प्रकार
उद्योत होने के सिवाय जैन, अजैन, हिन्दू मुसलमान एवं रा
प्रजा को व्याख्यान के निमित्त परस्पर दृढ सम्बन्ध लाने का हेतु
हुआ था। धर्म के समान नाजुक विषय में पृथक् २ धर्म की प्र

राजा परस्पर सहानुभूति रखते हों यह दोनों के कल्याण के आवश्यक है। एक व्यौपारी बनिये का युवा पुत्र, परमार्थ र कहां तक प्रयास कर सकता है यह प्रयत्न अनुभव होने से लोगों की मंडली बातें किया करती कि " पुरुषों के प्रारब्ध ागे पत्ता है, इसका यह प्रत्यक्ष प्रदर्शन श्री पूज्यजी महाराज रासिया के शिखर पर अकेले फिरते हुए भीखालजी में और समय के पूज्य भीखालजी में 'कीड़ी और कुंजर जैसा' अन्तर गया था, इस समय बड़े २ राजा महाराजा और नवाब रासियां शिखर के प्यारे लाल के पैरों में मस्तक झुकाते थे।

जिस व्यक्ति को हजारों लाखों मनुष्य मस्तक झुकाते हों, वैसी शी व्यक्तियां जिस समय एक वणिक् युवक के पैरों की रज मस्तक पर चढ़ाने को अपना सौभाग्य समझें उस समय े की मालूम न होने वाली कलाबाजी की अपूर्वता सिद्ध थी।

एक अनुभवी सत्य कहता है कि 'श्रद्धा गिरिश्रृङ्गों पर परि- ण करती है, इस कारण उसकी दृष्टि-मर्यादा बहुत बड़ी होती अन्य मनुष्य जिस वस्तु को देखने में असमर्थ होते हैं वस्तु श्रद्धावान् मनुष्य की दृष्टिगोचर होती है। इससे जिस य का प्रयत्न करना दूसरों को असम्भव प्रतीत होता है उ"

कार्य को करने में श्रद्धावान् मनुष्य विशेष प्रयत्न करता है। श्रीजीने इसी प्रकार का प्रयत्न अपने स्थायी धैर्य से आरम्भ कर निश्चय किया।

हम पहिले कह चुके हैं इस प्रकार जावरे के सन्तों को शामिल करने (अपने में मिलाने) की पूज्य श्री की इच्छा थी। पूज्य जब रतलाम पधारे तब अपना यह अभिप्राय वहाँ प्रकट किया। हकीकत (समाचार, हाल) जावरों के सन्तों तथा उनके श्रावकों को विदित होते ही वे आनन्दित हुए, कारण कि, उनकी इच्छा यही थी कि, पूज्य श्री की आज्ञा में विचरें। ये सन्त चन्दजी महाराज की ही सम्प्रदाय के हैं किन्तु श्री उदयचन्द महाराज के समय से उनके साथ का सहभोजन का व्यवहार बन्द करने में आया था जो आज तक कायम था। रतलाम पूज्य श्री विराजते थे उस समय उनकी सेवा में जावरा के की ओर से मुनि श्री देवीलालजी उपस्थित हुए। पूज्य श्री यथोचित समाधान का वार्तालाप होने के बाद उनका सहभोजन किया गया। इस समय उन सन्तों की ओर से मुनि देवीलालजी ने कहा कि, भूत काल में जो हुआ सो हुआ भविष्यत् काल में वैसा न हो इस बात का मैं सब सन्तों से विश्वास दिलाता हूं। उत्तर में आचार्य श्री ने न्यायानुसार साया कि, अपने धर्म की सगाई है अणगार धर्म की मर्या

साधुओं को ही मैं मेरे साधु मान सकता हूं। यदि इस
ा कोई उल्लंघन करे तो उसके साथ समाचारी के सं-
भङ्ग करने में मैं तनिक भी संकोच न करूँ इसका कारण
के, जिस कर्त्तव्य के लिये कुटुम्बियों और संसार के सम्बन्ध
ा है उस कर्त्तव्य में अन्तराय करने वाले का साथ और
त्याज्य है। परस्पर प्रेम पूर्वक संयम समाधान हो गया।

चित रीति से विचारें तो मालूम हो कि, सहकार की भी
ो सकती है। शास्त्र की प्रतिष्ठा और चारित्र्य के आदर्श
क उज्वल रहें तब तक ही सहकार सम्भव रह सकता है,
र उसकी हद पूरी होते ही असहकार ही आवश्यक है छाती
र बाँधकर अपार समुद्र नहीं तैर सकते। किस हेतु
और कौनसी नीति साधने से सहकार या असहकार करना
है इसका गम्भीर विचार किये सिवाय किसी प्रकार भी
न नहीं कर सकते। भारी और व्यवस्थित शासन के बिना
असम्भव ही है। किसी भी कार्य में अव्यवस्था घुसी, अंधा
और गड़बड़ बढ़ती गई। विष प्रचारक चेप रोकने का उत्तम
ाण उपाय असहकार है। समाचारी यह सहकार का माप
का थर्मामेटर यंत्र ही है।

शरीर से साधु होने के साथ ही मन से भी साधु हो। मस्तक
ने के साथ ही मन को भी मूँड़ा हुआ समझे यही त्याग का

जाषा ले सकते है । "श्वेत कपड़े पहिने हैं पर श्वेत दि॰ नहीं । सत्य कहता हूं मैं यारो ! निज धर्म की चिन्ता नहीं"

जो समाज को ऐक्यता का सबक सिखाने के लिये संसार हुए हैं उनको कतरकर खाने वाला अनैक्यतारूपी कीड़ा निक और पूर्ववत् सुख शान्ति के साथ शासन की विजय यह दृश्य देखकर किसका हृदय हर्ष से आल्हादित न हो ! इस हर्ष को सजीवन रखने के लिये महात्मा श्री गांधीजी के ङ्कित वचनामृत मुनिराजों को अपने हृदयपर अङ्कित क चाहिये । ये वचन ऐसे हैं मानों श्री महावीर प्रभु की प्रतिध्वनित हो रही हो ! समाधान कर्त्ता को बदले या रूप में मत समझो । मैत्री यह कुछ सदा नहीं है । केवल धर्म और प्रेम सम्बन्ध है । जो सेवा है वही है और जो धर्म है वही ऋण (फर्ज) है यदि उस को नहीं चुकाना है तो पापके भागी होइये । अपने सामने के व्यवहार की जिम्मेवारी उसीपर डालना योग्य है । क्यों जितना विशेष दबाव डाला जावेगा उतना ही विशेष विरोध (होना सम्भव है । इसलिये प्रतिपक्षी (सामने वाले) को की जिम्मेवारी उसके खानदान और कर्त्तव्य का खयाल करके विषय उसी पर छोड़ देने में 'ही' बड़ी से बड़ी सेवा भरी हुई है यह आत्म शुद्धि का मार्ग है । यह तपश्चर्या—आत्मयज्ञ है ।

ज्य श्री फरमाते थे कि, जैसे जहाज का आधार उसके योग्य पर, रेलवे ट्रेन का आधार एँजिन की ब्रेक पर, और घड़ी का आधार उसकी मुख्य कमानी पर है। उसी प्रकार मुनि-का आधार शुद्ध चारित्र पर है। जैसे आकाश में चन्द्र, सूर्य अपनी नियमित चाल से चल रहे हैं। उसी प्रकार ज्ञान, चारित्र और तप का नियत नियमानुसार ही साधुजीवन चाहिये।

पूज्य श्री सच्चे समयसूचक थे। उन श्रीमान् की गुण-ग्राहक कभी भी किसीके अवगुणों को याद करने का अवकाश ही थी। वे महानुभाव, इसी प्रकार मानते कि ' दीर्घ दृष्टि से पूर्वक समाधान करके समाज की रक्षा करना ' यह पहिला। आवेश के वेग में और पक्षापक्षरूपी अँधेरे में पड़कर अपना नहीं चूकना चाहिये। अपने विपक्षी के दोषों (अवगुणों का प्रदर्शन कराना (बताना) और उसकी निर्बलता के गीत रहना यह कुछ चतुराई और विचारशीलता नहीं है। सांसारिक की दृष्टि में किसीको गिरा देने की अपेक्षा, यह उस प्रकार भूलें (गलतियां) पुनः न करे, ऐसा धार्मिक या नैतिक दबाव यही बात साधुओं को शोभा देती है और अपने पूर्वजों की परिश्रम से रक्षा करके रखी हुई चारित्र-कीर्त्ति विशेष उज्ज्वल होती है।

शुद्ध संयम का पालना तलवार की धार पर चलने के है (वैराग्य-पंथ खड्गधार) घोड़े पर चढ़ने वाला पड़ता भी वश्य है भोजन बनाने वाला अग्नि से जलता भी है, खा काम करने वाले को डूबने का डर भी पहिले है इसी प्रका में आगे चलने वाले सेनापति को तीर, भाला, बन्दूक, तलवा शस्त्रास्त्रों के आघात भी सहन करने पड़ते हैं । आगे की हिम्मत धैर्य बहादुरी पर ही पीछे वालों की विजय है, आगे चलने वालों की बुद्धि की, पीछे वाले लोगों पर परछाई पड़ती है ।

आचार्य श्रीका जावरे के सन्तों को शामिल कर लेने कार्य, सर्व मुनिवरों की सम्मति पूर्वक नहीं हुआ था, इस सम्प्रदाय के स्वामी श्रीमुन्नालालजी आदि कितने ही मुनिरा अप्रसन्न हुए। इसका कारण यह है कि, वे उनको पूरी तौर से दिये बिना सम्मिलित करना नहीं चाहते थे । इससे कई पूज्य श्रीके इस कार्य को स्वीकार करने से इन्कार किया पूज्य श्रीकी सूक्ष्मसूचकता, सब को सन्तुष्ट रखने की प्रकार की कार्यदक्षता और समझावट से सभों को शान्त क वाले सन्तों के साथ सह भोजन आदि का व्यवहार शुरू करा में सर्वत्र शान्ति स्थापित की । संसार-व्यवहार में फंस प्राणी जो कुछ नहीं देख सकता है, उसी प्रकार की अपूर्व

ख सकते हैं। उनके अलिप्त रहने से वे सामान्य मनुष्य को
र हो ऐसे भी कुछ २ पदार्थों का अनुभव कर सकते हैं।
कि नियमों को स्वयं समझने एवं समझाने का उन्हें पूरा अवकाश
है उनको स्वयं अपनी ही आत्मा का विचार नहीं करने का है
जो सम्प्रदाय के सिंहासन पर विराजता है उसके श्रेय
ये भी प्राणपण से (जीतोड़, बहुत ही) प्रयत्न करना पड़ता
खिया की जवाबदारी दूसरे सबों की अपेक्षा सदैव विशेष
है।

जोधपुर—(चातुर्मास) संवत् १९६२ का चातुर्मास पूज्य श्रीने
र में किया स्वधर्मी, अन्यधर्मी, हिन्दू, मुसलमान हजारों मनुष्य
श्रीजी महाराज के वचनामृत का पान कर (श्रवण कर)
होते थे। और त्याग, प्रत्याख्यान, तपश्चर्या तथा संवर-
द्वारा आत्म साधन करते थे। कई मांसाहारी लोगों ने मांस
और मदिरापान का त्याग कर दिया और हजारों पशुओं को
दान दिया गया।

जोधपुर चातुर्मास पूर्ण करके श्रीमान् पूज्य श्रीजी महाराज ने
मेवाड़भूमि पवित्र की। मार्ग में पड़ने वाले कई ग्रामों में अत्यन्त
र, और बहुत ही त्याग पच्चक्खाण हुए। श्रीजी थाणेराव (
का एक ठिकाना, गादड़ी की ओर होते हुए [illegible]

तथा नाथद्वारा पधारे । उस समय कोठारिया के रावतजी साहिब भी दर्शनार्थ पधारे और उन्होंने पूज्य श्री अर्ज की कि 'मैंने प्रथम आपके पास से जो प्रतिज्ञा उसका मैं यथार्थ पालन कर रहा हूं ।'
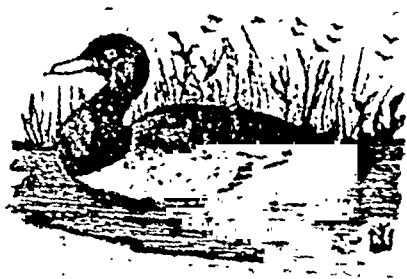
अध्याय १६ वाँ

तपुरी में रत्नत्रयी की आराधना ।

क्रमशः वहां से (कोठारीया नाथद्वारा से) विहार करते हुए
ी रतलाम कुछ समय के लिये पधारे । तब उनको श्री संघने
ास करने के लिये अति आग्रहपूर्वक प्रार्थना की, किन्तु वह
ृत हुई । और रतलाम से विहार करके श्रीजी पंचेड़ पधारे ।
ा संघ के कई अग्रगण्य श्रावक भी दर्शनार्थ पंचेड़ गये
हां के स्वर्गीय कैप्टन ठाकुर साहिब * रघुनाथसिंहजी ने

---

* ये स्वर्गीय ठाकुरसाहिब तथा उनके भाई साहिब वर्तमान
ाहिब श्री चैनसिंहजी साहिब दोनों पूज्य श्री पर इतना अधिक
ा एवं प्रेम) भाव रखते थे कि, उन श्रीमानों के फोटो इस
में यहां पर देना उचित होगा । 'पंचेड़' यह ग्राम मार्ग में ही
े कारण पूज्य श्री का वहां पर समय समय पर पधारना
और श्रीमान् ठाकुर साहिब पूज्य श्री के उपदेश का लाभ उठाकर
स्वभाव के होगये थे । पूज्य श्री,के दर्शनों का लाभ जिस
रतलाम में आते उस समय भी लिया करते थे ।

अर्ज की कि, यदि श्रीमान् रतलाम में चातुर्मास करें तो मैं आ
पर्यन्त हरिण का शिकार करने की सौगन्द करता हूं औ
सरहद में कोई भी मनुष्य हरिण, खरगोश इत्यादि का शि
कर सके इसका दृढ बन्दोबस्त करने को तैयार हूं।

मलवासा के ठाकुर साहिब की ओर से भी मलवासा
बड़ा तालाब है, वहां पर कोई भी मच्छी न मार सके इस
पक्का बन्दोबस्त हमेशा के लिये करने में आया, तत्सम्बन्धी
परवाने भी करने में आये।

इस प्रकार अत्यन्त उपकार का कारण समझकर
में चातुर्मास करने की रतलाम संघ की प्रार्थना श्रीजी महा
स्वीकृत की। इससे सब लोगों के हृदय में आनन्द स
तरङ्ग कल्लोलित होने लगीं।

रतलाम (चातुर्मास) मेवाड़ में से क्रमशः विहार
श्रीजी महाराज मालवा देश में पधारे और रतलाम के
की प्रार्थना स्वीकार कर संवत् १९६३ विक्रमी का चातुर्म
लाम नगर में किया। इससे पहिले जितने चातुर्मास
सबकी अपेक्षा अबका चातुर्मास अत्यन्त उपकारक सिद्ध हुआ
ही समय में आचार्य श्रीजी के ज्ञान, दर्शन और चारित्र के प
विमल होगये थे और पुण्य-प्रताप भी इतना अधिक बढ़

, रतलाम के बड़े २ वयोवृद्ध श्रावकों के मुख में से पुनः २ इस
र के वाक्य निकलते थे कि, "श्रीमान् उदयसागरजी महाराज
से महापुरुषों के आगमन और उपस्थिति के समान ही लोगों
हृदय पर उग्र प्रभाव तथा उत्कृष्ट उत्साह दृष्टिगोचर होता है"।
, ध्यान, त्याग—प्रत्याख्यान करने के लिए श्रीमान् कदापि
सीको भी आग्रहपूर्वक नहीं कहते थे, उसी प्रकार न किसीको
बूर करते थे, ऐसी स्थिति में भी उनका उत्कृष्ट चारित्र और
म शक्तिओं का आकर्षण इतना अधिक बढ़ गया था कि लोग
ं ही त्याग—पच्चक्खाण, धर्मध्यान, जप, तप, स्कंधादि विशेष २
ाह के साथ हार्दिक- उमंगों के साथ करने लगे। इस समय
र करणी, धर्मजागृति और ज्ञानवृद्धि इतनी अधिक हुई थी कि,
छले वर्षों से उसको चौगुनी कहने में तनिक भी अतिशयोक्ति न
ी।

इसके सिवाय विशेष चित्ताकर्षक बात यह है कि, राज्य कर्म-
ी गण साधु महात्माओं के सत्संग का लाभ बहुत कम उठाते
किन्तु श्रीमान् के विराजने से उनकी अनुपम प्रशंसा सुनकर
य के बड़े २ ओहदेदार, अमीर, उमराव, वकील इत्यादि पूज्य
की सेवा में आने लगे और उनके ऊपर पूज्य श्री का इतना
धिक प्रभाव पड़ने लगा कि, वे पूज्य श्री के पूर्ण गुणानु
ौर प्रशंसक बन गये थे।

रतलाम स्टेट के मुख्य दीवान श्रीमान् पी. बाबूराव साहिब ए. एल- एल. बी. जो कि, उस समय इन्दौर स्टेट में मुख्य कारी साहिब के पदपर सुशोभित हुए थे उन्होंने पूज्य श्री के का बहुत अच्छा लाभ लिया था। पूज्य श्री के विषय में तथा धर्म के मूल सिद्धान्तों के विषय में उनको बहुत अच्छा लग गया था। श्रीमान् दीवान साहिब केवल व्याख्यान में नहीं किन्तु मध्यान्ह-काल में (दुपहर के समय में) भी २ दिन आया करते थे। प्रेमपूर्वक व्याख्यान श्रवण करते, ही नहीं किन्तु अपनी धर्मपत्नी तथा बालबच्चों को भी पू का धर्मोपदेश श्रवण करवाने के लिए अपने साथ लाते थे। की विमल बुद्धि और स्मरण-शक्ति तीव्र होने के कारण थोड़े समय में जैन-धर्म के मुख्य २ सिद्धान्तों का उन्होंने उत्तम सम्पादन कर लिया। जिसके कारण तत्वज्ञान पर उनकी इत अधिक अभिरुचि उत्पन्न होगई थी कि, पूज्य श्री के विहार करजा पर भी (रतलाम से) वे श्रीमान् सर्व साधारण की सभा सम्मुख नय, निक्षेप, सप्तभंगी आदि महत्वपूर्ण विषयों पर म करने योग्य भाषण देते थे। ऐसे हो रतलाम स्टेट के चीफ साहिब श्रीमान् पंडित बीजमोहननाथ बी, ए. एल. एल. बी भी पू श्री के उपदेश का लाभ उठाते थे।

रतलाम के मे० पुलिस सुपरिण्टेण्डेण्ट मेहताजी बख्तासिंहजी साहिब तो दिन में कई बार पूज्य श्री की सेवा

...रते थे और खूब परीक्षा पूर्वक चातुर्मास के अन्त में पूज्य श्री ... पास से सम्यक्त्व रत्न प्राप्त करके दृढधर्मी श्रावक बन गये थे। ...त् १९६३ की मार्गशीर्ष वदी १ के दिन, रतलाम में ...हार करने के समय श्री जी से उन्होंने इस प्रकार अर्ज की कि, ...जूर ! आज तक मैंने किसीको भी गुरु नहीं किया था, इसका ...रण यह है कि, जहाँ तक आत्म–परितोष (आत्मा का समाधान) ...हो जाय वहाँ तक गुरु के समान किसी भी व्यक्ति को किस ...कार स्वीकार कर सकते हैं ? आज मैं आपको अन्तःकरण से ...द श्रद्धापूर्वक गुरु के समान स्वीकार करता हूं"। इस समय ...वे श्री जी के अनन्य भक्त बन गये। श्री जी महाराज से उनका ...संग होने के पूर्व उनकी श्रद्धा किसी भी सम्प्रदाय पर नहीं थी।

...संस्थान 'अमलेठा' के स्वर्गस्थ राव ब० महाराज रघुनाथसिंहजी ...पंचेड के ठाकुर साहिब केप्टन रघुनाथसिंहजी सदैव पूज्य श्री के ...स्थान में पधारते थे।

उपरोक्त चातुर्मास में हिन्दू, मुसलमान, इत्यादि लोग सहस्रों व ...संख्या में एकत्रित हो पूज्य श्री के व्याख्यान का अपूर्व लाभ ... ...ते थे। 'वहोरा' कौम (जाति) के भी एक ... ...तुल्लाजी कभी २ पूज्य श्री के व्याख्यान में आते ... ...ख्यान समाप्त होने के पश्चात् वे खड़े होकर परि... ...ण) के सामने कहने लगे "आप ...

पुरुषों के उपदेश सुनने वाले सचमुच भाग्यवान् हो,
महाराज के आज के उपदेश से मेरे हृदय पर जो प्रभाव पड़ा
वह ऐसा है जो कि, आजीवन स्मरण रहेगा। आज से मैं कभी
भी पशु- हिंसा नहीं करूंगा; इसी प्रकार मांस भक्षण भी नहीं
करूंगा, इतना ही नहीं, किन्तु अपने भाई बन्धु, इष्ट मित्रों को
यही मार्ग बतलाऊंगा। मेरे समान वे भी पूज्य श्री के ऐसे
उपदेश का लाभ लेते हों तो कितना अच्छा हो।

यह भाई दूसरे ही दिन अपनी जाति के तीन चार भाइयों
को अपने साथ पूज्य श्री के व्याख्यान में बुला लाये थे। और
वे अपने साथ के बैठने उठने वाले मित्रों को 'अहिंसा-धर्म' का
महत्त्व समझाने को अपना कर्तव्य समझने लग गये थे। (समझते थे)

चातुर्मास पूर्ण होने पर पूज्य श्री ने विहार किया, उस समय
स्वधर्मी, अन्यधर्मी हजारों मनुष्यों के सिवाय पुलिस सुपरिंटेंडेंट
साहेब अपनी पूरी पल्टन के साथ जन-समुदाय के आगे २ चल
रहे थे। और जैन शासन की प्रभावना करके पूज्य श्री के विषय
में अपना अप्रतिम पूज्यभाव प्रदर्शित करते थे

आचार्यश्री नगर के बाहर पहुंचे, उस समय श्रीमान् दीवान
साहिब की ओर से मेहताजी साहिब (पो. सु.) ने सरकारी
बाग में विराजने के हेतु अर्ज की उससे महाराज श्री बाग में विराजे।
दूसरे दिन प्रातःकाल के समय में पूज्य श्री विहार करने को उद्यत

में दीवान साहिब आ पहुंचे, एवम् पूज्य श्री से प्रार्थना की यदि आप एक दो दिन यहां विराजो तो बड़ी कृपा हो" पर से पूज्य श्री दो दिन तक सरकारी बाग में विराजमान रहे, कारी बाग में जैन साधु के विराजने का यह पहिला ही अवसर। यहां पर गुलाबचक्र के विशाल भवन में पूज्य श्री व्याख्यान राज्य के अधिकांश आफिसर लोग अपने स्टाफ के सहित ख्यान का लाभ उठाते थे। इसके सिवाय स्वधर्मी, अन्यधर्मी खों मनुष्य आते थे। यह प्रसंग भी रतलाम के इतिहास में म ही था। श्रीमन्महावीर प्रभु के समवसरण का जो वर्णन उववाई सूत्र, में है उसकी कुछ २ झांकी इस समय गुलाब- भवन में होती थी।

श्रीमान् रतलाम दरबार ने उस समय यह बात स्वीकृत भी की " पूज्य श्री के पुण्य-प्रताप* से ही रतलाम शहर पर प्लेग का र नहीं चल सकता।

रतलाम के चातुर्मास में अजमेर निवासी साधुमार्गी जैन-संघ माननीय नेता राय सेठ चांदमलजी साहिब तथा जैन-समाज

---

* ऐसा ही मौका मोरवी में भी मिला था जो कि केरो।

के अन्य अग्रगण्य श्रावक लोग श्रीजी महाराज के दर्शनार्थ
थे, वे तथा उसी प्रकार रतलाम कान्फरन्स सम्बन्धी विचार
के हेतु रतलाम मुकाम पर एकत्रित हुए थे, ये सब सज्जन
मान् दरबार श्रीकी सेवा में उपस्थित हुए और अर्ज की कि "
लाम शहर के आसपास सब स्थानों में प्लेग का बड़ा भारी
मच रहा है किन्तु रतलाम में ऐसे महात्मा के विराजने से र
में किसी प्रकार का उपद्रव नहीं है,, यह सुनकर श्रीमान् द
श्री ने कहा कि" रतलाम शहर के अहोभाग्य हैं कि ऐसे म
का यहां विराजना हुआ है। यहां पर शान्ति रही यह इ
पुण्य-प्रताप का फल है; इनके गुरुवर्य श्रीउदयचन्द्रजी महार
यहां पर कईबार विराजे थे और वे भी अत्युत्तम साधु थे

संवत् १९६३ के रतलाम के चातुर्मास में पूज्य श्री
ठाणा ४९ विराजते थे। उस अवसर पर आषाढ शुद्ध १४
शुद्ध ५ तक तपश्चर्या तथा संवरकरणी निम्न लिखे अनुसार हुई

सत्तरह १७ उपवास का थोक १६/२ १५/४ १३/५ १...

२

९/७१ ८/१८१ ७/२१ ६/२९ ५/६११ ४/७४९ ३/१३...

एक दिन के अन्तर से दो माह तक (एकान्तर)

दो माहतक दो दो दिन के अन्तर से (बेले बेले पारना)

२१

तीन तीन दिन के अन्तर से दो माहतक (तेले तेले पारना)

११

धर्म चक्रकी तपश्चर्या,

२१

खंध (चार पंकी)	खंध जमीकन्द के
७४	४१
पोषा कुल	संवत्सरी के पोषा
१०६८६	१६०१
तपस्याकी पचरंगी	दया की पचरंगी
२७	४

पूज्य श्री ने १ आठई, २ तेला, तथा १॥ डेढ महीने तक ान्तर उपवास, तथा इसके सिवाय फुटकल उपवास किये थे। ज्ञचन्दजी महाराजने ३४ उपवास का थोक किया था। ३४ के (के दिन स्वधर्मी अन्यधर्मी, लोगों ने व्यौपार धन्धा बन्द करके थाशक्ति व्रत, नियमादि किये। कसाईखाने की ४४ दूकानें दीं तथा कसेरा, तेली, कंदोई, मोची, रंगरेज इत्यादिकों का

धन्दा बन्द रहा। १०० बकरों को अभयदान दिया गया।
काम में श्री सरकार की ओर से बहुत मदद दी गई थी।

उपरोक्त लिखे अनुसार रतलाम के चातुर्मास में जैन-धर्म का
ही उद्योत हुआ।

अध्याय १७ वाँ
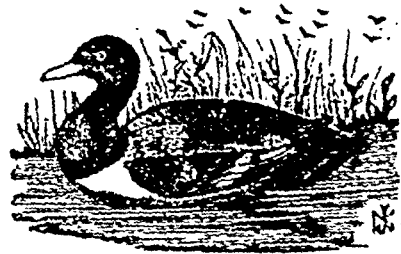
ड़ और मालवे की सफलता पूर्वक यात्रा

—:०:—

रतलाम से विहार करके श्रीमान् आचार्यजी श्री बड़ी सादड़ी
ाड़) पधारे वहां संवत् १९६३ पौष वद ३ के दिन श्री
चन्दजी महाराज जो कि, इस समय विद्यमान हैं, उनके
रिक अवस्था के पुत्र पन्नालालजी तथा रतनलालजी * ये दोनों
तथा पन्नालालजी की स्त्री हुलास्यांजी ऐसे एक ही कुटुम्ब के
जनों ने धन, माल, जीमन इत्यादि का दान करके प्रबल
यपूर्वक दीक्षा स्वीकार की ।

---

* भाई रतनलालजी का (सम्बन्ध (सगाई) हो चुका था
: विवाह होने की तैयारी थी, ऐसी दशा में भी उन्होंने दीक्षा
ी । रतनलालजी की उमर थोड़ी होते हुए भी वे अत्यन्त प्रति-
ाली, धीर वीर, गम्भीर और संस्कारी पुरुष थे, और उनकी
शक्ति भी अत्यन्त बढ़ी हुई थी । उनकी व्याख्यान शैली भी
यक प्रशंसनीय थी । कई श्रावकों का ऐसा अनुमान था कि
मीचन्दजी महाराज की सम्प्रदाय को यह महानुभाव प्र

तत्पश्चात् सादड़ी के मेहता कुटुम्ब के एक खानदानी घ... (उच्च कुल की) सावगणजी, नामकी एक श्राविका बहिन ने... दीक्षा ली थी। एक ही दिन चार दीक्षाएं हुई थीं। इस समय... दड़ी में साधु, साध्वी मिलकर कुल ८४ ठाणा विराजते... पंजाब के पूज्य श्री श्रीचन्दजी महाराज भी इस सम्मेलन... विराजते थे।

सादड़ी क्षेत्र इस समय तीर्थस्थान के रूप में होगया था। ... शुभ अवसर पर ९० ग्रामों के लगभग ५००० पांच सहस्र ... सादड़ी में एकत्रित हुए थे। दीक्षा महोत्सव बहुत ही धूमधाम... अत्यन्त समारोह पूर्वक हुआ था। राज्य की ओर से हाथी, ... मियाना चोवदार, चँवर इत्यादि सब प्रकार की सम्पूर्ण स... मिली थी। इस प्रकार की दीक्षा सादड़ी में इससे पहिले क... नहीं हुई थी। यह सब पूज्य श्री के बड़प्पन के कारण ही... पाया। कहा जाता है कि, बहुत से मुनिराजों के एकत्रित हो...

करेगा, उनसे श्रीमान् आचार्यजी महाराज को भी उम्मेद थी... आयुष्य कर्म की स्थिति न्यून होने के कारण ११ वर्ष त... पालकर, संवत् १९७४ विक्रमी के मगसर महीने में इस... संसार को छोड़ वे स्वर्ग को सिधारे।

आहार पानी की अन्तराय न पड़े इसलिये कई दिन तक सूखे आटे में जल मिलाकर आहारकर 'चउविहार' कर ।

ादड़ी की ओसवाल जाति में प्रथम कुछ अनैक्यता (फूट) ार तड़ें पड़ गई थीं । किन्तु पूज्य श्रीके सदुपदेश से सब त्रित होगये (याने चारों तड़ें एक होगई) और अनैक्यता का ऐक्यता ने ग्रहण किया । इसके सिवाय इस चिरस्मरणीय पर स्कंध त्याग पच्चक्खाण जीवों को अभयदान देना आदि अधिक उपकार हुआ कि, उसका सविस्तर वर्णन करना व है ।

दी सादड़ी के श्रीमान् राजराणा साहिब दुलेसिंहजी भी पूज्य र्शन तथा उनके वचनामृत का पानकर अपने को कृतकृत्य और पूज्य श्रीकी मुक्तकंठ से प्रशंसा करते थे, इतना ही नहीं उन्होंने जीवहिंसा न करने, तथा प्राणियों की रक्षा करने के के अनेक त्याग पच्चक्खाण किये । जो कार्य लाखों, करोड़ों से नहीं होता, सैन्यबल तथा तोपों की लड़ाइयों से नहीं होता, र्य रोब तथा भय से नहीं हो सकता, ऐसा कठिन-असम्भव और र दुष्कर कार्य भी निःस्वार्थी शुद्धसंयमी, सन्त के वचन से सिद्ध होता है । पूज्य श्री के सदुपदेश का ऐसा

सबही स्थानों में विजयी सिद्ध हुआ है। इस प्रकार के
के लिये आत्म—संयम और चरित्र की—शुद्धचारित्र की प्रथ
श्यकता है।

बड़ी सादड़ी से विहार करके माघ या फाल्गुन मास
श्री १६ ठाणा सहित रामपुरे (होल्कर) स्टेट पधारे।
जावरे के सन्त श्री बड़े जवाहिरलालजी (जो कि, इस सम
मान नहीं हैं) श्री हीरालालजी, श्री खूबचन्दजी, श्री चौथमलजी
भी श्री आचार्य श्रीकी आज्ञानुसार चलते हुए उनके स्थान
पर जितने समय तक उनको (धार्मिक नियम से) रहना
याने कल्पता था वहां तक रहे थे। जावरे के
सन्तों ने इस समय श्रीमान् आचार्य महोदय के गुणानुवाद
कई स्तवन, लावनी भजन इत्यादि बनाये थे उनमें से क
मुखाग्र करके श्रावक लोग गाते हैं।

इस अवसर पर श्रीमान् दीवान खुमानसिंहजी साहिब
के दिन जो प्रतिवर्ष इनके यहां पाड़े का वध होता था (म
था) वह हमेशा के लिए पूज्य श्री के सदुपदेश से बन्द
और उस विषय का पट्टा—परवाना भी करवा दिया।

राय बहादुर कोठारी हीराचन्दजी साहिब ने भी पूज्य
बहुत ही सेवा भक्ति की। इसके सिवाय अनेकों व्रत, प

बाहर निकले, थोड़ी दूर जाने पर एक मुत्सद्दी (सरदार) ने
की कि" हूजूर ! आज तो आपने जैन-धर्मी गुरु का व्याख्या
ना है । इसके स्मरणार्थ आज शिकार नहीं करना चाहिये"
शब्द सुनते ही बन्दूक का मुंह रुमाल से बांधते २ महा
साहिब ने कहा, अच्छा चलो ! आज शिकार नहीं ही खेलें,
कह कर महाराजा साहिब राजमहल की ओर पीछे फिर गये।

अध्याय १८ वाँ।

' मरुभूमि में कल्पवृक्ष '
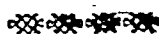
ोटे से विहार करके मार्ग में अत्यन्त उपकार करते हुए
ी नसीराबाद होते हुए नयानगर (ब्यावर) पधारे,
र अजमेर के श्रावकों की विनती पर से संवत् १९५९
तुर्मास अजमेर में करने का निश्चय किया।

अजमेर (चातुर्मास) संवत् १९५९ में श्रीमान् पूज्य श्री
ामजी महाराज के सम्प्रदाय के प्रतापी मुनियों का वियोग
था पूज्य श्री विनयचन्द्रजी महाराज का विराजना वृद्धावस्था
रण जयपुर होने से अजमेर की जैन-समाज में धर्म के
में कुछ शिथिलता उत्पन्न होगई थी, किन्तु आचार्य श्री के
से पुनर्जीवन प्राप्त हुआ। पूज्य श्री के प्रताप से बहुत से
ों को धर्म-ध्यान की रुचि उत्पन्न हुई, और बहुतसों की
चि विशेष रूप से दृढ हुई। त्याग पच्चखाण, तथा अत्याधिक
और तपश्चर्या आदि बहुत ही उपकार हुआ। तदुपरान्त
महाराज के सदुपदेश से बिरादरी में (जाति में) रात्रि
बिल्कुल (नितान्त) बन्द करनेमें आया। बनौरे वगैरह जो
के समय निकलते थे वे सब भी रात को निकलना बंद होगये।

बाहर निकले, थोड़ी दूर जाने पर एक मुत्सद्दी (सरदार) ने
की कि" हूजूर ! आज तो आपने जैन-धर्मी गुरु का व्याख्या
ना है। इसके स्मरणार्थ आज शिकार नहीं करना चाहिये"
शब्द सुनते ही बन्दूक का मुंह रुमाल से बांधते २ महा
साहिब ने कहा, अच्छा चलो ! आज शिकार नहीं ही खेलें,
कह कर महाराजा साहिब राजमहल की ओर पीछे फिर गये।

की । जिसका दीक्षा-महोत्सव अजमेर के संघने बहुत ही
ह पूर्वक किया । यह उत्सव अजमेर के " दौलतबाग " में
था ।

अजमेर के चातुर्मास में तारीख ३-११-१९०७के दिन श्रीमान्
नरेश सर बावजी बहादुर जी. सी. एस. आई तथा अज-
ज्युडिशियल आफिसर श्रीमान् खांडेकर साहिब पूज्य श्री के
ान में पधारे थे । श्रीमान् मोरवी नरेश पूज्यश्री के व्याख्यान
यन्त ही प्रसन्न हुए और उन श्रीमान् ने श्रीजी महाराज से
ी कि, जो आप काठियावाड़ की तरफ पधारेंगे तो बहुत ही
होगा । श्रीजी ने उत्तर दिया कि, जैसा अवसर ।

अजमेर का चातुर्मास पूर्ण होने पर श्रीजी महाराज नयानगर
र) की ओर पधारे । मार्ग में 'दोराई' मुकाम पर स्वामीजी
लालजी महाराज जोकि, नयानगर से अजमेर की तरफ
थे उनका समागम हुआ, वहां पर सायङ्काल का प्रतिक्रमण
पश्चात् स्वामी श्री सुन्नालालजी महाराज ने श्रीमान् आचार्य
न साहिब से अर्ज की कि, मेरी इच्छा पंजाब की ओर
की है, यदि आपकी आज्ञा हो तो मैं उस ओर विचरूं ?
श्रीने फरमाया कि " आपको जिसमें सुख हो, वैसा
स्वामीने सुन्नालालजी महाराज को पंजाब में पा-

इस वर्ष में संवत्सरी-पर्व के विषय में एक दिन का मत-भेद
श्रीमान् की गुरु आम्नाय के अनुसार एक दिन आगे संव
थी जब कि, दूसरे सम्प्रदाय की एक रोज पीछे थी लेकिन आप
श्रीने सब को सम्मिलित करके दोनों दिन अत्यन्त ही धर्म
कराया। बहुत से छट्ठे हुए बहुतसी दया पोषे हुए।
प्रकार का भेदभाव या राग द्वेष की वृद्धि नहीं होने
इतना ही नहीं, किन्तु परंपरा (पूर्वजों के समय) से
आती अपने सम्प्रदाय की रीति के अनुसार संवत्सरी पहिले
कर आगे दिन करने पर इस विषय को लेकर जैन पत्रों में
श्री के ऊपर कितने ही एक पक्षीय आक्षेप, पूर्ण लेख प्र
हुए किन्तु सागर के समान गम्भीर महात्मा श्री ने तनिक
न करते हुए उनके आक्षेपों का प्रतिवाद नहीं किया, यह
आपकी तपश्चर्या अत्यन्त ही कठिन है समर्थ पुरुषों का क्षमा
उपशम(शान्ति)भाव धारण करना, ये इनके समान महान् आ
महानुभाव का ही काम है। इसका प्रभाव गुजरात, काठिया
जैन बन्धुओंके ऊपर ऐसा पड़ा कि, वे श्रीमान् को महान् उच्च
समान मानने लगे। इस चातुर्मास में जोधपुर के भाई शोभा
को पूज्य श्री के सदुपदेश से वैराग्य उत्पन्न होगया और
पूज्य श्री के पास से दीक्षा ग्रहण की। तत्पश्चात् रतल
वासी श्रीयुत छजमलजी चपलोत के भतीजे तख्तमलजी
अल्पायु में ही प्रबल वैराग्य पूर्वक श्रीमान् के पास दी

स चौमासे में तपस्वी मुनि श्री धूलचन्दजी महाराज जो कि,
न पूज्य श्री जवाहिरलालजी महाराज के शिष्य हैं उन्होंने
रवास किये थे। इस अवसर पर सैकड़ों, सहस्रों मनुष्य
के लिए आते थे; उनका आतिथ्य सत्कार बीकानेर संघ की
रें भलीभांति होता था। श्रावकों ने भी बहुत ही तपश्चर्या
अत्यन्त ही व्रत नियम किये थे। पूज्य श्री के सदुपदेश से
निवासी ओसवाल गृहस्थ श्रीयुत ताराचन्दजी तथा उनके
ंदमलजी ने तथा बीकानेर के सुप्रसिद्ध सेठ अगरचन्दजी
नजी के छोटे भाई की विधवा स्त्री रतनकुंवर बाई को वैराग्य
हुआ और इन तीनों का एक ही दिन दीक्षा-महोत्सव
श्रीमान् बीकानेर नरेश ने दीक्षा महोत्सव के लिए अपना
तथा लवाजमा (घोड़े, नगारा, निशान, आदि अन्य सामान)
दिया था। संवत् १९६५ मगसर बद्य २ के दिन तीनों को
ी मुहूर्त में पूज्य श्री ने दीक्षा दी थी।

महाजनी हिसाब और लेखनकला आदि विषय सिखाये जाते
कन्याओं को भी व्यावहारिक और धार्मिक शिक्षा मिले इस मत-
से एक कन्याशाला भी उपरोक्त सेठ साहिब की ओर से थोड़े ही
र में स्थापित होने वाली है। बालकों के पास से कुछ भी फीस
ली जाती है। धार्मिक शिक्षण में सामायिक प्रतिक्रमण, अर्थ
त तथा शालोपयोगी जैन प्रश्नोत्तर इत्यादि सिखाये ज

विचरने की आज्ञा प्रदान की। श्रीमुन्नालालजी महाराज सरल
और सूत्रों के अभ्यास में पूर्ण विज्ञ हैं।

तत्पश्चात् आचार्य श्री मरु भूमि—मारवाड़ को पवित्र कर
अनेक उपकार करते हुए श्री बीकानेर श्री संघ की विनन्ति से
पधारे ओर संवत् १९६५ का चातुर्मास श्रीजी ने बीकानेर में

बीकानेर (चातुर्मास) संवत् १९६५ का चातुर्मास
महाराजने बीकानेर में किया, इस वर्ष बीकानेर के श्रावकों में
उत्साह छा रहा था। धार्मिक ज्ञान की अभिवृद्धि के लिये
ने अधिक उद्योग किया और बालकों तथा नवयुवकों को जै
के सर्वोत्कृष्ट (अत्युत्तम) तत्वज्ञान का लाभ मिलता
उद्देश्य (मतलब) से बीकानेर के संघ ने एक साधुमा
पाठशाला की स्थापना की ※

※ उपरोक्त पाठशाला एक वर्ष तक श्री संघ ने चलाई।
श्रीमान् सेठ भैरूदानजी सेठो ने अपने स्वतः के व्यय से
चलाना शुरू किया, उसमें दिनोदिन उन्नति होती गई और इ
भी वह पाठशाला बहुत अच्छी नींव पर (अच्छी तरह से
रही है। पाठशाला को उपयोग के लिये सेठ भैरूदानजी ने
मकान दे रक्खा है। लगभग ८० विद्यार्थी उससे लाभ उठ
सात अध्यापक नियत हैं। लगभग ४००) रुपये मासिक
है। धार्मिक शिक्षा आवश्यक है। इसके सिवाय हिन्दी,

पूज्य श्री को अपने वचन के लिये ८० कोस का विशेष
ार कर जोधपुर जाना पड़ा, कारण कि, जोधपुर श्रीसंघ ने पूज्य
की विनय की थी उस समय उन्हें जोधपुर स्पर्शने का वचन पूज्य
ने दे दिया था।

वहां से पूज्य श्री जोधपुर पधारे वहां भी फिर राय सेठ
मलजी साहिब विनन्ती करने पधारे और क्रमशः पूज्य श्री विहार
ते सं० १९६६ के चैत्र वद्य २ को अजमेर पधारे पूज्य श्री
मेर पधारने वाले हैं ऐसी खबर पहिले से ही देश देशान्तरों
फैल गई थी इसलिये बाहर के हजारों श्रावक उनके दर्शनार्थ
न्फरन्स के अधिवेशन के समय आये थे और साधु साध्वी भी
ं बड़ी संख्या में पधारी थीं, इसलिये श्रावक राग वश साधु के
मित्त आहार पानी अधिक निपजावें, अथवा कुछ दोष लगावें इस
: से महाराज श्री ने जाते ही वेला किया और पारणा करते ही
सरा तेला किया थोड़े ही साधु आहार पानी करते थे। उन्हें भी
ाज्ञा की कि, अन्य दर्शनियों के वहां से आहार पानी बहर लाया
रो। ऐसी तपस्या में भी पूज्य श्री बुलन्द आवाज से व्याख्यान
रमाते थे।

उस समय सब मिलाकर क़रीब १५० साधु अजमेर में थे
याख्यान श्रीमान् लोढाजी की कोठी में होता था और वहां हजारों
नुष्य एकत्रित होते थे पहिले दूसरे साधु बारी २ से

अध्याय १६ वां।

अजमेर में अपूर्व उत्साह।

श्रीजी महाराज कुचेरे विराजते थे तब अजमेर निवासी
सेठ चांदमलजी साहिब ने अर्ज की कि, आगामी फाल्गुन मा
अजमेर मुक़ाम पर कान्फरन्स का अधिवेशन है, इसी लिये स
हिन्दूस्थान के अग्रेसर स्वधर्मी बांधव वहां पधारेंगे, उस
आपकेसे समर्थ धर्माचार्य और धर्मोपदेशक वहां विराजते
बड़ा उपकार होने की संभावना है। इत्यादि शब्दों से बहुत ही
पूर्वक विज्ञप्ति की। इस समय पूज्य श्री का दिल वहां हाजिर
का नहीं था, परंतु सेठजी के अत्याग्रह और कितने ही सा
की प्रबल उत्कंठा से पूज्य श्री ने अपने साधुओं को सम्बोधन
जो यह शर्त तुम्हें मंजूर हो तो मैं अजमेर की ओर विचरूं। ए
साधुमार्गी भाइयों के घर से जबतक अधिवेशन होता रहे
आहार पानी न लाना और दूसरी शर्त यह है कि, अपने को
होकर वहां जाना पड़ेगा इससे लम्बे विहार करने से कदाचि
पांव में तकलीफ हो जाय तो तुम्हें अपने स्कंधों पर बिठाकर
अजमेर पहुंचाना पड़ेगा। साधुओं ने दोनों शर्तें स्वीकार की
पूज्य श्री ने सेठजी की विनय मंजूर की।

श्रीयुत शोभालालजी दोशी ने पूज्य श्री के पास दीक्षा ली, उस कान्फरन्स में आये हुए हजारों मनुष्य उत्सव में शामिल थे। श्रीमान् मोरवी और लींबड़ी नरेश भी विराजमान थे, दीक्षा देने के प्रथम पूज्य महाराज ने फरमाया कि, भाई तुम घर धन इत्यादि त्याग कर मेरे पास दीक्षित होने आये हो परन्तु साधु का कार्य महान् दुष्कर है। अनुभव हुए बिना कितनी ही बातें ध्यान में भी नहीं आती, इसलिए पूर्ण विचारकर यह साहस करो, फिर दूसरी यह बात भी याद रखना कि, जबतक तुम पंच महाव्रत शुद्धतापूर्वक पालन करोगे वहांतक मैं तुम्हारा साथी हूं, यदि उसमें जरा भी दोष लगाया कि, मैं तुम्हारा साथ छोड़ दूंगा, तुम्हारे और मेरे धर्म की ही सगाई है। यों पूज्य श्री ने सब संयम की दुष्करता दिखाई, उसके उत्तर में श्रीयुत शोभालालजी ने प्रार्थना की कि, महाराज श्री जबतक मेरी देह में प्राण है तबतक बराबर आपकी और आप मुझे जिसकी नेश्राय में सौंपोंगे उन गुरुदेव की आज्ञा का पालन सच्चे दिल से करता रहूंगा, फिर पूज्य श्री ने विधिपूर्वक दीक्षा दी।

शिष्यों की संख्या बढ़ाने का पूज्य श्री को बिल्कुल लोभ न था। उन्होंने अपनी नेश्रायका एक भी शिष्य नहीं किया एकदम मुंडन कर देने की पद्धति से वे बिल्कुल विरुद्ध थे। वे दीक्षा के उम्मेदवारों को अपने पास रखकर शास्त्राभ्यास कराते थे। जैन

तक व्याख्यान फरमाते थे। उस समय किसी २ साधु के व्याख्यान के समय बहुत ही हल्ला होता रहता तो पूज्य श्री के पाट पर जते ही शीघ्र सर्वत्र शांति हो जाती और सब लोग चुपचाप बराबर व्याख्यान सुना करते थे। पूज्य श्री का व्याख्यान श्रोताओं को शूरता चढ़ाने वाला था जब कहीं कुछ गड़बड़ जैसा प्रसंग उपस्थित होता तो उस समय शांत रखने के वास्ते पूज्य श्री प्रभु गुण या भक्तिरस मय काव्य छेड़ देते और लोग उसमें शामिल हो जाते थे। महात्मा गांधीजी की भी यही सलाह है कि, संगति का असर बिजली जैसा है गान अर्थात् सूरीली अवस्था यह तत्काल कोमलता और मुलायमपन पैदा करती है।

अहमदाबाद कांग्रेस के समय खादी नगर में निवास करने वालों ने भिन्न २ मण्डलियों के हृदयभेदक भजन सुने हैं जो जीवन पर्यंत याद करेंगे, इतनाही नहीं, परन्तु वह भावना भूलेंगे नहीं।

श्रीमान् मोरवी नरेश तथा श्रीमान् लींबड़ी नरेश कि जो खास कान्फरन्स का अधिवेशन दिपाने के लिए ही आये थे वे भी व्याख्यान में पधारते थे अजमेर कान्फरन्स सं० १९६६ के चैत्र वद ३-४-५ तीन रोज हुई थी।

सं० १९६६ के चैत्र वद ६ के रोज जोधपुर के वीसा ओस

ीयुत शोभालालजी दोशी ने पूज्य श्री के पास दीक्षा ली, उस
कान्फरन्स में आये हुए हजारों मनुष्य उत्सव में शामिल
। श्रीमान् मोरवी और लींबड़ी नरेश भी विराजमान थे,
देने के प्रथम पूज्य महाराज ने फरमाया कि, भाई तुम घर
इत्यादि त्याग कर मेरे पास दीक्षित होने आये हो परन्तु
का कार्य महान् दुष्कर है । अनुभव हुए बिना कितनी ही
ान में भी नहीं आती, इसलिए पूर्ण विचारकर यह साहस
कर दूसरी यह बात भी याद रखना कि, जबतक तुम पंच
शुद्धतापूर्वक पालन करोगे वहांतक मैं तुम्हारा साथी हूं,
समें जरा भी दोष लगाया कि, मैं तुम्हारा साथ छोड़ दूंगा,
और मेरे धर्म की ही सगाई है । यों पूज्य श्री ने सब सं-
दुष्करता दिखाई, उसके उत्तर में श्रीयुत शोभालालजी ने
कि, महाराज श्री जबतक मेरी देह में प्राण है तबतक
र आपकी और आप मुझे जिसकी नेश्राय में सौंपोंगे उन
देव की आज्ञा का पालन सच्चे दिल से करता रहूंगा, फिर
ी ने विधिपूर्वक दीक्षा दी ।

ाष्यों की संख्या बढ़ाने का पूज्य श्री को बिल्कुल लोभ न था ।
अपनी नेश्रायका एक भी शिष्य नहीं किया एकदम मुंडन
की पद्धति से वे बिल्कुल विरुद्ध थे । वे दीक्षा के उम्मेद
ा अपने पास रखकर शास्त्राभ्यास कराते थे । वे

अनुभव देते और कसौटी पर कसते थे। वैरागी की मानसिक, शा[illegible]
और सामुद्रिक चिकित्सा किये बाद उन्हें मुनि मार्ग में लेते[illegible]
प्रवृत्ति के समय महात्मा गांधीजी का अनुभव याद आता[illegible]
कहते कि, एक भी अकस्मात् आ खड़े रहने वाले को पूर्[illegible]
सेवक की तरह मैं तो दाखिल न करूं, ऐसा स्वयंसेवक मद[illegible]
के बदले अड़चन करने वाला ही होता है, यह सिद्ध है, [illegible]
लड़े हुए सैनिक कवायती (शिक्षित) सिपाई की हार में [illegible]
कवायती (शिक्षित) बिन अनुभवी नये सिपाई की कल्पना का[illegible]
एक क्षण भर में ही वह समस्त सैना को गड़बड़ में डाल [illegible]

इस अवसर पर पूज्य श्री की उदार वृत्ति का संख्याबद्ध [illegible]
को परिचय हो गया था. प्रायश्चित्त लेकर संभोग किये हुए [illegible]
में पुनः भूल करने वाले साधुओं को योग्य आलोचना क[illegible]
सम्प्रदाय में लिया, रतलाम के वयोवृद्ध संसारी वेष [illegible]
साधु जीवन बिताने वाले सेठजी अमरचंदजी पीतालिया और [illegible]
सेठ चांदमलजी रीयां वाले ने इस मामले में पूज्यश्री को सम[illegible]
सलाह दी थी। पूज्यश्री ने श्रोताओं को समझाया था कि[illegible]
का सख्त ताप और त्याग की दीव्य जोति आलोचना [illegible]
देदीप्यमान हो जाती है। गफलत करने से, आलसी रहने [illegible]
विदा होने लगती है और विद्या-हीनता से विवेक भ्रष्टता होवे [illegible]
उत्कर्ष को अंतराय लगती है।

साधु-जीवन को क्षीण करने वाली त्रुटियां जो संयम के आ-
के प्रतिकूल और संस्कृति की विघातक हों वे दूर करने की
उन्हें पुष्टि देने से तो असह्य अनर्थ उत्पन्न होता है। पुष्टि देने
और ऐसे साधनों की सरलता करने वाले श्रावक अपने कर्तव्य
गिर पड़ते और साथ में ही ऐसे शिथिल साधुओं को भी ले
हैं। कर्तव्य-बुद्धि की बेपरवाही, सहृदय हिम्मतवान श्रावकों
शिथिलता और ऐसी बातें टालने वाले बेफिक्र संसारी ऐसे
ाय को सुधारने का मौका देने की जगह बिगाड़ते हैं परिणाम
थर के साथ आप भी डूबते हैं।

'चलने दो' अपने को क्या करना है, ऐसे मंद विचारों और
वाही से समाज सड़ जाता है और फिर सड़े हुए समाज में हृदय
पें या तृप्ति न मिलने से छोटा समाज निचोवाता चला जाता
त के पाक को पूर्ण रीति से फलने देने के लिये पासही उत्पन्न
कचरे का नाश करना ही चाहिये। समाज को सड़ाने वाले
का नाश होना ही चाहिये।

भारत की धर्म भोली प्रजा 'साधुओं को' ईश्वर अंश समझ-
चाली है। यह दृढता, यह पूज्य भाव, प्राचीन समय से प्रचलित
और इस दैवी अधिकार की मान्यता ने प्रजा में इतने गहन मूल
हैं कि, इस दैवी हक की, खुमारी में समय २ पर असह्य व्यवहार
लिये भी आंख के ओट कान करने में धर्मभाव

जाता है । जयपुर में ऐसे दृष्टान्त प्रत्यक्ष देखकर लेखक था
जाते हैं ।

हिन्द अत्यन्त श्रद्धालु, धर्म प्रेमी-और आस्तिक देश है
भी सब कौमों की अपेक्षा पोची से पोची वनिक बंधुओं की
आस्तिकता तो अजब गजब में डाल देती है । प्राचीन समय के साधु
के शुभ संस्कार जो वंश परम्परा से गर्भित होते आये हैं
यह परिणाम है । ये पवित्र संस्कार जाज्वल्यमान बने रहें
अपन अंतःकारण पूर्वक चाहते हैं परन्तु अपनी इस भावना
भोलेपन या संदेह के वेगमें बहाने से 'देवांशी हक' का दावा क
वाले एक तरह से समाज को नीचा दिखाने जैसा काम
बैठते हैं ।

बहुत समय से स्थित रहे ये संस्कार वर्तमान समय में आव
श्यक हैं ऐसे गहन विचार में पैठने से दिल घबड़ा जाता है परन्
यह बात तो सत्य है कि, यह मान्यता जब प्रारंभ हुई होगी
तब तो सबके चारित्र अत्यन्त ही पवित्र और इस 'देवांशी हक'
पूर्ण योग्यता सिद्ध करने वाले होंगे ऐसा प्राचीन साहि
विश्वास देता है परन्तु साथही साथ उसी साहित्य में यह बात
मिलती है कि, इन हकों का दुरुपयोग करने वा
को असाधारण अपराधी से विशेष सजा मिलती थी । एक अज्ञ
मनुष्य और एक सब कानून का ज्ञाता वही गुन्हा करता है

। मनुष्य की अपेक्षा कानून जानने वाले को विशेष सजा ो है और वही अधिक तिरस्कृत होता है।

अपने समाजिक नियमों (Social Contract) के अनुसार चलने वालों के सामने सख्त कदम भरने की परवानगी है । इस दृष्टान्त से दूसरों को उलट सुलट चाल चलने की मिलती है एक दो को माफी दे देने से दूसरे बाईस जनोंको इस ी खुमारी में समाज में विषैला जल फैलाने तक का अधिकार । है। योग्य को योग्य मान देने में अपन अपनी श्रद्धा की सीमा उलांघते। संयम और साधु-धर्म की बहुमान्यता निभाने में को विनय-धर्म आदरना चाहिये परन्तु इस विनय से ऐसा न निकालना चाहिये कि, इस समुदाय की चाहे जैसी चाल हो लेना या प्रसन्नता, बड़ाई, करनी चाहिये अपने दैवी हक की ड़ के सहारे व्यर्थ घूमते हुए नामधारियों को कर्म के अचल ों का अभ्यास करना चाहिये। सत्य सनातन धर्म जिनमें वो जैसे उच्च सात्विक गुण हों उसे ही दैवी हक प्रदान करना करता है। साधु-वर्ग और श्रावक-समुदाय अपने २ कर्तव्य अपनी २ जवाबदारी समझ समय और भाव को सन्मुख रख न साधक करेंगे ऐसी लेखक की हार्दिक भावना है।

अध्याय २० वाँ।

राजस्थानों में अहिंसा धर्म का प्रचा

अजमेर से विहारकर राह में अनेक भव्य जीवों को उ
देश देते सं. १९६६ का चातुर्मास पूज्य श्री ने बड़ी सादड़ी
में किया। वहां जीवदया के महान् उपकार हुए। साधुमार्गी
कान्फरन्स के मेवाड़ प्रांत के प्रांतिक सेक्रेटरी नीमच नि
श्रीमान् सेठ नथमलजी चोरड़िया ने इन उपकारों की सविस्तु
सांवत्सरिक क्षमापना के साथ छपाकर प्रसिद्ध की है उ
खास बातें नीचे दी गई है।

विशेष आनन्ददायक समाचार यह है कि, जिस तरह
मोरवी नरेश सर वाघजी बहादुर जी० सी० आई० ई०
श्रीमान् लींबड़ी नरेश श्री दोलतसिंहजी बहादुर श्री जिन
अहिंसा धर्म की प्रीतिपूर्वक सेवना करते हैं और साधु मह
के आगमन के समय धर्मोपदेश श्रवण करने के लिए व्याख्य
पधारकर सभा को सुशोभित करते हैं उसी तरह यहां श्रीमा
सादड़ी राजराणा साहिब श्री दुलेहसिंहजी जिनकी पीढ़ी दर
से इस धर्म की संरक्षा होती आई है पूज्य श्री महाराज की

वाणी-अमृतधारा-वृष्टि से तृप्त हो अपने राज्य में नीचे लिखे
ार जीव दया का प्रबंध किया है ।

(१) नवरात्रि में जो आठ भैंसे तथा १० बकरों का वध
था वह हमेशा के लिए बंद किया ।

पाड़ा, हिंगलाज माता को पाड़ा १, पंडेड में पाड़ा १— गाजन
पाड़ा १, लक्ष्मीपुर में पाड़ा १, वरदेवरा कुजूं में पाड़ा २,
। फाचर में पाड़ा दो यों कुल पाड़े आठ ।

बकरा १ पालाखेड़ी में बकरे ४, वागला के खेड़े में बकरा १,
यों के खेड़े में बकरे ३, भैंतरडी में बकरा १ और बरिया
में १ यों बकरे कुल १० ।

कुल जानवर अठारह का वध प्रतिवर्ष होता था वह बन्द
कर दिया गया ।

(२) कसाई खाना बंद (३) तालाब में मच्छी मारना बन्द
(४) कस्बे में अगते मंजूर.

श्रीमान रावराणा साहिब की ओर से कसाईखाना बंद और
र में मच्छी मारने की मुमानियत हुई इसके सिवाय
 [illegible]सिंहजी ने शिकार करने तथा मांस भक्षण करने का
 [illegible] लिये त्याग किया । ठाकुर दलेलसिंहजी ने अपनी जागीर
[illegible] में जो पाड़े प्रतिवर्ष मारे जाते थे वे बंद कर दिये तथा

ही जानवरों के शिकार करने तथा मांस भक्षण करने का
किया, सिवाय उनकी रियासत के छड़ीदार, हवालदार,
इत्यादि ७० आसामियों ने शिकार करना तथा मांस भक्षण
छोड़ दिया ।

कस्बे के लोग यानी समस्त तेलियों ने एक मास में ६
घानी करना बंद किया । समस्त सुतार, लुहार, कुम्हार,
नाई, धोबियों ने एक मास में तिथी ५ यानि ग्यारस २
अमावस १ हमेशा के लिये अपना २ आरंभ त्याग कर दिया ।

राजस्थानों के ठिकाणदारों की तर्फ से जीव-दया के प्राबंधिक पट्टे परवाने ।

ठिकाना बान्सी—के श्रीमान् रावतजी श्री ५ तख्तसिंहजी ने
इलाके में श्रावण कार्तिक और वैशाख महीनों में जानवर और
वास्ते खुराक मारने की हरमास की ग्यारस व अमावस में
मारने की मुमानियत की व सनद परवाना नम्बरी ३८
फरमाया ।

ठिकाना भेदसर—के श्रीमान् रावतजी श्री ५ भोपालसिंहजी
आपने इलाके में उपरोक्त हुक्म निकालकर पट्टा नम्बरी
फरमाया ।

ठिकना बोरड़ा—के श्रीमान् रावतजी साहिब श्री ५ नाहर

तरफ से इस चातुर्मास में कसाईखाना बन्द, बाहर वाले को
शी बेचना बंद किया गया।

ठिकाना लूणदा--के श्रीमान् रावतजी साहिब श्री ५ जवानसिं-
की तरफ से चातुर्मास में कसाईखाना बंद, बाहर वाले को मवेशी
ना बंद, ग्यारस और अमावस को शिकार बंद, पट्टादस्तखती ३३
भेट फरमाया।

ठिकाना साटोला--के श्रीमान् रावजी साहिब श्री ५ दलपत-
जी की तरफ से उपरोक्त सिवाय श्रावण-कार्तिक और वैशाख में
दरों का मारना बंद, किया और पट्टा नं० ३३ भेट किया गया।

ठिकाना बंबोरी—के श्रीमान् ठाकुर साहिब के यहां समस्त कुम्हार
रह में ११ व अमावस का व्यापार बंद हुआ, इस चातुर्मास में
कार बंद किया और पट्टा नं० १६

ठिकाना जलोदिया—के ठाकुर साहिब श्री दौलतसिंहजी ने चंद
द के जानवरों का शिकार करना छोड़ा।

उपरोक्त ठिकानों के उमराव मुल्क मेवाड़ ने अपने २ इलाकों
जो परोपकार के कार्यों में सहायता दी है इसका कोटिशः धन्य-
द है व प्रभु से प्रार्थना है कि, इन नामदारों की दीर्घायुष्य व सदैव
जो परोपकारी कार्यों में उदारवृत्ति बनी रहे।

इलाके बड़ी सादड़ी के जागीरदारान की तरफ से जीव-दया के पट्टे परवाने।

१ गांव तलावदे-के ठाकुरसाहिब अमरसिंहजी ने अप में सदैव के लिये कार्तिक, वैशाख व चार महीने चातु शिकार करना या खुराक के लिये जानवरों का वध करना बंद व ठाकुर गिरवरसिंहजी ने सदैव के लिये शिकार करना, मांस करना व मदिरा पान करना त्याग दिया।

२ पालखेडी-के ठाकुर साहिब श्रीचतुरसिंहजी ने नवरात्रों हिंसा बंद की, नदी में मछलियां मारना बंद का हुक्म जारी ठाकुर श्री जालमसिंहजी व दूसरे लोगों ने शराब पीने व के जानवरों का वध व शिकार करना छोड दिया व जो २ ब जाते थे उनको अमरया करने का हुक्म दिया।

३ बागेला-के ठाकुर साहिब श्रीमोड़सिंहजी ने नवरात्रों हिंसा बंद की और बाहर वालों को अपने यहां से मवेशी बंद किया।

४ गुड़ली-के ठाकुर साहिब श्री प्रतापसिंहजी ने अप चातुर्मास में जानवरों का शिकार व वध बिल्कुल बंद श्रावण तथा कार्तिक तीनों मासों में खुराक वगैरह के लि वध बिल्कुल बंद किया।

इलाके मेवाड़ के अन्य ग्रामों की तरफ से जीवदया की तफसील ।

१ सरतला २ लीकोड़ा ३ चैनपुर ४ चीतोड़ ५ ... जिला (ग्रामवारा) ६ सरदारपुर ७ करारण ८ खोड़ीय ९ ... देवरा १० करजू ११ उम्मेदपुर १२ नांदोली १३ खेड़ा १४ ... खरा १५ जंताई १६ देवरी १७ सतीराखेड़ा ग्राम ४ १८ ... १९ ऊदपुरा २० फतेहसिंहजी का खेड़ा २१ पारड़ा २२ ... खेड़ा २३ संचरड़ीननाणा २४ फाचर २५ यादङ्या २६ चांदे... २७ तलाइखेड़ा वगैरह कुल ६५ ग्रामों में पांचसो पचीस (५२५) ... हिन्दू, मुसलमान, जागीरदारों ने पूज्य श्री महाराज के सदुपदे... प्रभाव से अनेक जात के परोपकार व दया के कार्य किये, जिन... सहस्त्रों मूंगे गरीब प्राणियों को दुःखजनक मृत्यु के मुख से ... अभयदान दिया गया है और भी किसान यानी खड़ूती लोगों ... जंगल में दव लगाने (लाय लगाने) व बहुत से लोगों ने मां... मांस का त्याग किया है ।

व्याख्यान में स्वमति अन्यमति हजारों की संख्या में ... होते हैं महाराज श्री के अमूल्य शास्त्रोक्त वचन श्रवण करते ... इस साल उपकार हुए हैं वे संक्षिप्त में ऊपर लिखे हैं त... कन्या-विक्रय, बाल-लग्न, आतिशबाजी इत्यादि की तथा ...

रने की कई लोगों ने प्रतिज्ञा ली है। इस आनन्दोत्सव में
ल होने तथा महाराज साहिब के अमूल्य व्याख्यानों का लाभ
के लिये बाहर गांवों से हजारों श्रावक श्राविकाएं आए थे।

तपश्चर्या साधुओं में—श्रीमान् पूज्यजी महाराज के १ अठाई
चोला १० तेला तथा एकांतर मास २ की। अन्य मुनिराजों
ी बहुत ही तपश्चर्या हुई थी।

तपश्चर्या श्रावक श्राविकाओं ने:— $\frac{२७}{१}$ $\frac{१७}{१}$ $\frac{१६}{१}$ $\frac{११}{१}$ $\frac{१०}{५}$

८	७	६	५	४	३	२	१	दया
२५	६	३१	१२१	१६१	२६६	३३१	१५०५१	३७१

सरी के	पौषध	एकान्तरउपवास	एकांतर बेला	स्कंध
	५५१	८१	३५	३०१

ंगी तपश्चर्या की,	पचरंगी दया पोषध की,
२५	१७

कानोड़ निवासी भाई धनराजजी को पूज्य श्री के सदुपदेश से-
ाग्य उत्पन्न हुआ और सं० १९६६ के मगसर बद १ के
ादड़ी स्थान पर श्रीजी महाराज के पास उन्होंने दीक्षा ली इस
ंग पर भी बाहर ग्राम के सैकड़ों स्वधर्मी बंधु जन पधारे थे
ा उत्सव बड़ी धूमधाम से किया गया था।

वहां से शेष काल उदयपुर पधारे बहुत धर्मोन्नति हुई

वहां से अनुक्रम विहार करते आचार्यश्री १३ ठाणों
गंगापुर हो कपासन पधारे, यहां श्रीजी के चार व्याख्यान हुए।
वैष्णव, मुसलमान इत्यादि सब धर्म वाले मिलाकर प्रायः २०
मनुष्य व्याख्यान में उपस्थित होते थे, जीव-दया का पूज्य श्री के
उपदेश सुनते २ वहां के श्री संघ के दिल में दया आई और
को अभयदान देने के लिये एक स्थायी फंड कायम करने का प्र
किया- तुरन्त ही उस फंड में १०००) रु० एकत्रित हो
व्याख्यान में कोठारीजी बलवंतसिंहजी साहिब तथा हाकिम सा
जोधसिंहजी तथा चित्तौड़ के हाकिम श्री गोविन्दसिंहजी प्रभृति
पधारते थे।

बड़ीसादड़ी का चातुर्मास पूर्ण किये पश्चात् आचार्य महा
रतलाम की ओर पधारे। वहां श्री जैन ट्रेनिंग कालेज के विद्या
भाई मोहनलाल मोरबी वाले ने उत्कृष्ट वैराग्य से पूज्य श्री
समीप दीक्षा ली, जिनका दीक्षा-महोत्सव रतलाम श्रीसंघ ने
ही हर्षोत्साहपूर्वक किया वहां से विहारकर मार्ग में अग
उपकार करते हुए पूज्य श्री मालवा मारवाड़ को पावन
विचरने लगे। कितने ही भव्य जीवों ने वैराग्योत्पन्न होनेसे दीक्षा

अध्याय २१ वाँ

एक मिति को पांच दीक्षा।

ब्यावर- (चातुर्मास) सं० १९६७ का चातुर्मास श्रीजी ने ब्यावर (नयेशहर) में किया। साधुमार्गी जैनों की वृहत् संख्या है। यह शहर पूज्य श्री स्वयं अतुलनीय पूज्य भाव रखता हुआ भी आजतक चातुर्मास से वंचित रहा था, इसलिये ब्यावर के श्रावकों की तरफ से अत्याग्रह पूर्वक की गई विनय को स्वीकारकर इस वर्ष पूज्य श्री ने ब्यावर पर अनुग्रह किया। पूज्य श्री का चातुर्मास होने वाला है ऐसी वधाई मिलते ही श्री संघ में आनंद मंगल छा गया। यहां के श्रावकों का धर्मानुराग पहिले से ही प्रशंसनीय था। आचार्य श्री के आगमन से अत्यंत अभिवृद्धि हुई, बहुत धर्म जागृति हुई, अति तपस्या, दया, पौषध, व्रत, नियम, और ज्ञान ध्यान की धूम मचगई। देशावरों से भी सैकड़ों लोग पूज्य श्री के दर्शन और वाणी श्रवण का लाभ लेने आने लगे।

पूज्य श्री की इच्छा कुछ निवृत्ति पाकर संस्कृत के अ... थी, उस समय ... पं० विहारीलाल ... वर्ष तक काशी में रहकर सिद्धांत कौमुदी ...

किया था, वे व्यावरही में थे और पूज्य श्री के पास आते थे
उन्होंने महाराजश्री को संस्कृत पढ़ाना अत्यंत हर्ष पूर्वक स्वी
किया और महाराज श्रीने भी पूर्ण जिज्ञासा पूर्वक संस्कृत-व्याक
का अभ्यास प्रारंभ किया और चार मास तक अभ्यास कर सारस्व
की तीन वृत्ति पूर्ण की उपरोक्त पंडितजी गत श्रावण मास में
के समय हमें बीकानेर में मिले थे, वहां पूज्य श्री जवाहिरलालजी
महाराज के दर्शनार्थ आये थे और संघ के आग्रह से चातुर्मा
दरम्यान वहीं रहकर महाराज श्री की सेवा की थी, पंडितजी क
थे कि, पूज्य श्रीलालजी महाराज की जितनी स्मरणशक्ति
कुशाग्र बुद्धि थी वैसी दूसरे व्यक्ति की आजतक मैंने नहीं देखी
नित्यनियम, व्याख्यान, शास्त्र पढ़ना, शास्त्र पर्यटन, स्वाध्याय, प्रति
लेहना, प्रतिक्रमण आदि २ प्रवृत्तियों में से उन्हें थोड़ा ही सम
बहुत कठिनाई से मिलता था। दूर २ के कई श्रावक उनके दर्शनार्थ
आते उनके साथ धर्म सम्बन्धी वार्तालाप करने में तथा जिज्ञासु
श्रावकों के साथ ज्ञान चर्चा करने में भी कितनाही समय व्यतीत
होता था। इतने पर भी उन्होंने चार महीने में सारस्वत-व्याकरण
की तीन वृत्तियां सम्पूर्ण सीख ली, यह देखकर क्या मुझे आश्चर्य न
हुआ। पंडितजी कहते कि, मुझे उनकी दिव्य शक्ति देख बड़ा आश्च
होता और समय २ पर ऐसा भान होता था कि, यह कोई मनु
है या देव है। अपने को अभ्यास करने के लिये विशेष समय

थे वे कई बार लाचारी दिखाकर कहते कि "मेरी आत्मिक उन्नति में अन्तराय मुझे दिवाल की तरह बाधक मालूम होती है" पूज्य के ये वाक्या कहकर पंडितजी उनके अतिशय निरभिमान-वृत्ति की कंठ से प्रशंसा करने लगे थे।

कवि कलापी यथार्थ कहते हैं किः--

कीर्तिने सुख माननार सुखथी कीर्ति भले मेलवो।
कीर्तिमां मुजने न कांइ सुख छे ना लोभ कीर्ति तणो॥
पोलुं छे जगने नकी जगतनी पोलीज कीर्ति दिसे।
पोलुं आ जग शुं थतां जगतनी कीर्ति सहेजे मले॥

इस चातुर्मास के दरम्यान एक ही मिति को पांच जनों ने प्रबल वैराग्य पूर्वक पूज्य श्री के पास दीक्षा ली थी इन पांचों में से चार तो एक ग्राम के निकले हुए थे जोधपुर स्टेट के बालेशर ग्राम के ओसवाल गृहस्थ १ हंसराजजी २ मेघराजजी ३ किशनलालजी और ४ गुलाबचंदजी ये चार तथा ऊंटाला (मेवाड़) निवासी ओसवाल गृहस्थ मुथा पन्नालालजी यों पांचों जनों ने दीक्षा ली जिनका दीक्षा-महोत्सव अत्यंत ही समारम्भ सहित करने में आया था और उसमें नागौर संघ ने अत्यंत ही उदारता दिखाई थी।

पूज्य श्री हुकमीचंदजी महाराज के पास बीकानेर एक पर पांच जनों ने दीक्षाली थी पश्चात् एकही साथ पांच

का यह प्रथम ही अवसर था। इनके सिवाय सं० १९६७ के कार्तिक शुक्ल ८ के रोज एक दूसरी दीक्षा भी हुई।

पूज्य श्री के व्याख्यान का लाभ स्वमति अन्यमति लोग बड़ी संख्या में लेते और उनके फल स्वरूप महान् उपकार होते। कई लोगों ने हिंसा करने का तथा मांस भक्षण और मदिरा पान करने का त्याग किया था। उपरांत सैंकड़ों पशुओं को अभय मिला था। श्रीयुत घीसुलालजी चोरड़िया तथा श्रीयुत सतीदासजी गोलेच्छा ने जीवरक्षा के कार्य में पूज्य श्री के सदुपदेश के कारण भारी आत्मभोग किया था।

अध्याय २२ वाँ
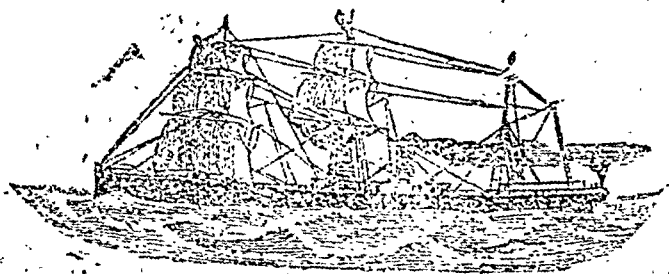
सौराष्ट्र की तरफ़ विहार।

काठियावाड़ के केन्द्रस्थान राजकोट शहर के श्री संघ की ओर
काठियावाड़ में पधारने के निमित्त पूज्य श्री से विनंती करने के
बारह व्रतधारी सुश्रावक सेठ जयचंद भाई गोपालजी* वडाली
पधार आये और उन्होंने पूज्य श्री की सेवा में अत्याग्रहपूर्वक
ना की कि, राजकोट संघ और काठियावाड़ के कइ श्रावक आप
दर्शनों के लिये तड़फ रहे हैं कितने ही उत्तम साधु मुनिराजों की
इच्छा भी ऐसी है कि, पूज्य श्री सौराष्ट्र की भूमि पावन करें तो
उपकार हो इत्यादि २।

---

*सेठ जेचंद भाई की राजकोट तथा सदन कॅम्प में बड़ी भारी
दुकानें थीं परन्तु केवल धर्म परायण जीवन बिताने के लिये उन्होंने
हजारों की आमदनी का सतत धंधा त्याग दिया और प्रतिमाधारी
श्रावक हो ज्ञानाभ्यास, धर्मानुष्ठान, समाजसेवा, प्राणिरक्षा और
त्यागी साधु सन्तों के सत्संग प्रभृति पारमार्थिक प्रवृत्तियों में
अपना समय, शक्ति और द्रव्य का सद्व्यय करने लगे

सेठ जयचंद भाई पहिले भी एक समय विनन्ती करने के लिये स्वयं आये थे। उसी तरह सं० १९६० में मोरवी निवासी देव चन्द राजपाल तथा लेखक पूज्य श्री के दर्शनार्थ तथा मोरवी कान्फरन्स में पधारने का उदयपुर श्री संघ को आमन्त्रण देने लिये उदयपुर गए थे। तब भी काठियावाड़ में पधारने की विनती थी, सिवाय अजमेर कान्फरन्स के समय काठियावाड़ से आये कई श्रावकों ने पूज्य श्री की असाधारण प्रभावशाली वक्तृता से मुग्ध हो काठियावाड़ को पावन करने की पूज्य श्री से बहुत ही आग्रह के साथ प्रार्थना की थी, उसमें श्रीमान् मोरवी तथा लींबडी नरेश भी शामिल थे। हर एक समय श्री जी महाराज ने कुछ न कुछ आश्वा सन रूप ही उत्तर दिये थे। इसलिये इस समग श्रीयुत जयचंद भाई की प्रार्थना स्वीकृत हो गई।

ब्यावर का चतुर्मास पूर्ण होने के बाद आचार्य महाराज क्रमशः विहार करते मरु भूमि को पावन करते पाली पधारे वहां पर फाल्गुण वदी १३ को श्री मनोहरलालजी की दीक्षा हुई। और पाली

थोड़े वर्ष पहिले ही उन्होंने दीक्षा ले ली है और वर्तमान समय में एक उत्तम साधु हो काठियावाड को पावन करते हुए विचरते हैं। वे अत्यंत आत्मार्थी और उत्तम आचारवान् साधु हैं। संसारावस्था में प्रत्येक चातुर्मास में वे पूज्य श्री की सेवा करते थे।

शिक्षित मुसलमान युवक ने मांस भक्षण करने का सर्वथा
किया था तथा दया, पौरुष और तपश्चर्या भी बहुत हुई थी।

वर्तमान की विलास-प्रिय प्रजा वैराग्य और भक्ति के नाम
भड़क भागती है। यह तरंगवश अमन चमन करने में ही अपना
जीवन सफल समझती है उसको वैराग्य, भक्ति और परोपका
मात्रा देने में पूज्य श्री अनुभवी वैद्य थे।

इन अरुचिकर दवाओं में असरकारक और उपदेशकारक
दृष्टांतों, काव्यों, श्लोकों, और श्री महावीर की आज्ञाओं, को ऐसी
से कहते कि, लोग बाँसुरी पर मुग्ध नाग की तरह नाचने लग
थे, लोगों को रुचिकर दृष्टांत संकलन करने में वे पूर्ण कुशल थे और
तथ्य पथ्य अनुपान वाली कटु दवा भी पूर्ण श्रद्धा से कंठ
उतार देते थे, श्रोताओं पर भारी प्रभाव गिरने से लाखों मन
लोह-चुम्बक की ओर खिंचाता था। गुजरात की पवित्र भूमि
होते ही महाराज श्री का उचित आतिथ्य श्री पालनपुर संघ ने
और Well begun is half done 'शुभ प्रारंभ अर्द्ध सफलता
जाता है यह सत्य अंत में सफल हुआ ऐसा आगे पाठक देखें

पवित्र समय में आरोपित भक्ति के इन बीजों ने अपूर्व फल
किया। पालनपुर आज भी शुद्ध संयमी और आत्मार्थी साधु

से सन्मान देता है पूज्य श्री श्रीलालजी की जीवन पर्यंत पा-
ने सेवा की है चाहे जितनी २ दूर पूज्य श्री के चातुर्मास
परन्तु पालनपुर के श्रावक वहां जाने से नहीं रुकते उनमें
मानिकलाल जकशी, जोहरी मोहनलाल रायचंद, जोहरी अ-
लाल रायचंद इत्यादि तो भिन्न मकान ले सपरिवार एक दो माह
श्री के सदुपदेश का लाभ लेने को वहां ठहरते और अब भी
रीति कायम रख वर्तमान पूज्य श्री की ओर ऐसे ही भाव ख
ता बताते रहे हैं। दुनिया को सिर्फ बताने के लिये ही यह ज्ञान
है परन्तु भक्ति-भाव के प्रत्यक्ष और अनुकरणीय दृष्टांत हैं।
चेगन के लिये 'नवजीवन' निम्नांकित मंत्र सिखाता है।

" स्वधर्म अग्नि के समान है इसके सहवास से अपने दुर्गुण
(क) जल जाते हैं और फिर वह अपने को अपने समान ही तेजस्वी
देता है आज इस अग्नि पर कुसंस्कार की छार ढक गई है
इसकी परवाह न करते उस पर पानी डालते अपने स्वतः
गों से फूंकार कर जागृत करो "।

वढ़वान से राजको ।ट जाने की जल्दी थी, परन्तु श्रीमान् पंडित मुनि श्री उत्तमचंद जी महाराज के अत्याग्रह से श्रीजी महाराज ।ी पधारे. इन दोनों महापुरुषों के इतने अल्प समय में परस्पर । अधिक धर्म स्नेह होगया था कि, मानो एक ही सम्प्रदाय के गुरु भाई हों, इतना । ही नहीं परन्तु लींबडी सम्प्रदाय के पूज्य ्यराजजी स्वामी तथा ।। पं० मुनि श्री उत्तमचंदजी स्वामी इत्यादि ास तौरपर अग्रेसर ः ावकों द्वारा ऐसा प्रबंध कराया कि, इस ों मारवाडी मुनि पधा रे हैं तो इस सम्प्रदाय के चातुर्मास करने ों में (काठियावाड़, कच्छ इत्यादि देशों में अपने मुनियों ी रसम प्रचलित है कि , किसी ग्राम में किसी सम्प्रदाय के कोई ातुर्मास में विराजते हों तो वहां दूसरे सम्प्रदाय के मुनि चातुर्मास र सकते) चाहे जिन स्थानों पर इन मुनियों को चातुर्मास ी छूट है इतनाही नहीं ं परन्तु श्रावकों ने भी इन्हें दूसरी ाय के समान भेदभाव न रखना चाहिये और सब तरह से ेवा करनी चाहिये । इ स प्रकार लींबडी सम्प्रदाय के समस्त दाय मुनिराजों ने भे दभाव त्याग भ्रातृभाव बढ़ाने की ं और अनुकरणीय शाह ।। की कि, शीघ्र ही वढ़वान में ी लींबडी संघवी सम्प्रदा य के महाराज श्री मोहनलालजी ग्रिंगढ़ी सम्प्रदाय के मह। राज श्री जसीचंदजी ने भी ऐसी ्रिया अपने देशों में जार ी ।

अध्याय २३ वाँ

काठियावाड़ के साधु मुनिराजों किया हुआ स्वागत।
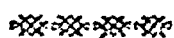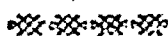
पालनपुर से विहारकर सिद्धपुर, मेसाणा, वीरमगाम, लखतर हो श्रीजी महाराज चैत्र माह में वढ़वाण पधारे। उस वढ़वाण शहर में ढोसा वोरा के उपाश्रय में लींबड़ी सम्प्रदा सुप्रसिद्ध मुनि श्री उत्तमचंदजी महाराज ठाणा ५ सुंदर वोरा उपाश्रय में मुनि श्री मोहनलालजी लक्ष्मीचंदजी ठाणा ७ ... रियापुरी उपाश्रय में मुनि श्री अमीचंदजी ठाणा ५ कुल मि... १७ मुनिराज विराजमान थे. ये सब मुनिराज पूज्य श्री के ... म पधारते थे। श्रोतृवर्ग में देरावासी श्रावक, गिराशिया, ... प्रभृति सब जाति और सब धर्म के लोग दृष्टिगत होते थे। ... के सुप्रसिद्ध करोड़पति सेठ गाढ़मलजी लोढ़ा तथा श्रीयुत वाड़ी... मोतीलाल शाह इत्यादि यहां पूज्य श्री के दर्शनार्थ पधारे थे। ... श्री पालनपुर विराजते थे तब राजकोट से सेठ जयचंद गोपा... इत्यादि श्रावक पूज्य श्री को राजकोट तरफ पधारने की विनय आये थे और चातुर्मास राजकोट का मंजूर हुआ था।

वढ़वान से राजको ाट जाने की जल्दी थी, परन्तु श्रीमान् पंडित मुनि श्री उत्तमचंद जी महाराज के अत्याग्रह से श्रीजी महाराज ी पधारे. इन दोनों महापुरुषों के इतने अल्प समय में परस्पर अधिक धर्म स्नेह होगया था कि, मानो एक ही सम्प्रदाय के गुरु भाई हों, इतन ा ही नहीं परन्तु लींबडी सम्प्रदाय के पूज्य वराजजी स्वामी तथ ा पं० मुनि श्री उत्तमचंदजी स्वामी इत्यादि स तौरपर अग्रेसर श ावकों द्वारा ऐसा प्रबंध कराया कि, इन सारवाडी मुनि पधा रे हैं तो इस सम्प्रदाय के चातुर्मास करने ों में (काठियावाड़, कच्छ इत्यादि देशों में अपने मुनियों रस्म प्रचलित है कि , किसी ग्राम में किसी सम्प्रदाय के कोई तुर्मास में विराजते हों तो वहां दूसरे सम्प्रदाय के मुनि चातुर्मास र सकते) चाहे जिन स्थानों पर इन मुनियों को चातुर्मास ी छूट है इतनाही नहीं परन्तु श्रावकों ने भी इन्हें दूसरी के समक्ष भेदभाव न रखना चाहिये और सब तरह से सेवा करनी चाहिये। इ स प्रकार लींबडी सम्प्रदाय के समस्त कार मुनिराजों ने भे दभाव त्याग भ्रातृभाव बढ़ाने की और अनुकरणीय आद र्श की कि, शीघ्र ही वढ़वान में लींबडी संघवी सम्प्रदा य के महाराज श्री मोहनलालजी यापुरी सम्प्रदाय के महा राज श्री अमीचंदजी ने भी पण। अपने चेलों में कर दी।

वढ़वाण से पंडित उत्तमचंदजी महाराज आदि लींबड़ी और वढ़वाण से दो डेढ़ घंटे बाद ही पूज्य श्री थे। लींबड़ी पधा उस समय लींबड़ी संघ का उत्साह अपूर्व था। पूज्य श्री के स्टेशन जितने दूर श्री उत्तमचंदजी स्वामी प्रभृति कई मु श्रीसंघ के सैंकड़ों स्त्री पुरुष गए थे।

लींबड़ी हाईस्कूल के वृहत् हाल में पूज्य श्री विराजते थे पूज्य श्री को गत सैके की उभय सम्प्रदाय की तमाम हुई (दौलतरामजी महाराज तथा अजरामरजी महाराज की गुर्वावली में लिख चुके हैं) श्री उत्तमचंदजी महाराज ने जाई। श्रीजी महाराज ने फरमाया कि, दौलतरामजी महार पीढ़ी में मेरे गुरु हैं। उन्होंने गुजरात काठियावाड़ में पांच मास किये थे। लींबड़ी में उन्होंने प्रथम चातुर्मास सं० १ किया था, पश्चात् लींबड़ी के सुप्रसिद्ध सेठ करमसी प्रेम अत्याग्रह से सं० १८५१ में लींबड़ी लाये थे और फिर ५८ में उन्होंने तृतीय बार लींबड़ी चातुर्मास किया था। चातुर्मासों में श्री दौलतरामजी तथा श्री अजरामरजी महार ही विराजे थे और दौलतरामजी महाराज के आग्रह से अज महाराज ने एक चातुर्मास जैपुर किया था और उस सम में अपूर्व आनन्द छा गया था।

ड़ी में भी वढ़वान की तरह दूसरे व्याख्यान बंद थे और
पूज्य श्री के व्याख्यान में पधारते थे। नामदार ठाकुर साहिब
नरेश) दीवान साहिब, अधिकारी समुदाय इत्यादि श्रीजी
के व्याख्यानों का लाभ ले अत्यन्त संतुष्ट हुए थे। श्रोतृवर्ग
। महाराज के व्याख्यान का ऐसा उत्तम प्रभाव पड़ा कि,
याख्यान के लाभ लेने की तीव्र जिज्ञासा हर एक को हुई
ना० दरबार साहिब ने ऐसा ठहराव किया कि " गरमी के
कोर्ट में सुबह का समय है इसलिये अधिकारी वर्ग को
न में आने में तकलीफ होती है इस कारण कोर्ट तथा
। समय थोड़े दिनों के लिये दुपहर का रक्खा जाय" उपरोक्त
। सबको व्याख्यान सुनने का समय मिलने के लिये जबतक
लींबडी विराजते रहे, कोर्टों का टाइम दोपहर का रहा। ठाकुर
दीवान साहिब तथा अन्य अमलदारों के साथ हररोज व्या-
में पधारते थे। नामदार श्री को आपके उपदेश से अत्यन्त
प्राप्त हुआ और प्रतिदिन उपदेश श्रवण करने की जिज्ञासा की
ती रही। नामदार के साथ उनके गादीवर कुंवर श्री दिग्विजय
भी पधारते थे। पूज्य श्री के समयानुकूल और सर्वमान्य
से हरएक धर्म वाले अत्यन्त आनंदित होते थे।

व्याख्यान में आर्य–विद्या और अनार्य–विद्या की उप
। पर विशेष विवेचन, गौरक्षा से देश को होते ने

इत्यादि दृष्टांतों के साथ समझाने से तथा विद्यादान और
इस लोक और परलोक में प्राप्त होने वाले महान् सुखों से
रखने वाले असरकारक उपदेश से महाराजा साहिब
हुए और कई मनुष्योंने अनजान मनुष्य के हाथ गाय, भैं
बेचने की प्रतिज्ञा ली। सिवाय बंदे छूटने से होते हुए
दिखाने से लींबडी के श्री संघ ने जनरल मीटींग बुला
होने छूटने का रिवाज बड़े अंश में बंद करने वाला ठहरा
किया था यहां नौ दिन ठहर कर पूज्य श्री चूडे पधारे। म
उत्तमचन्द्रजी के विशाल सूत्र ज्ञान और कितनी ही
श्रीजी ने लाभ उठाया और अपनी कई शंकाओं का
किया। महाराज श्री उत्तमचंदजी पर पूज्य श्री की आदर
से समय २ पर ज्ञान प्रश्नोत्तर होते रहते थे।

ता० १३-५-१९११ के रोज पूज्य श्री चूडे प
दरबारी कन्या-पाठशाला में ठहरे ता० ठाकुर साहिब
की अपनी कान्फरन्स में पधारे थे वे दीवान साहिब तथा
यों के साथ व्याख्यान में पधारते थे व्याख्यान में अनेक
ऐतिहासिक दृष्टांत आते थे और मनुष्य कर्तव्य सम्बन्धी अमू
होने से लोगों को अत्यंत रस आता था गुणानुरागी होन
त्यागना, पक्षपात न करना, समभाव करना सीखना, सब
समान दृष्टि रखना आदि उपदेशों से उनको बहुत आनन्द

अध्याय २४ वाँ

कोट का चिरस्मरणीय चातुर्मास ।

ज्य श्री रास्ते के विहार में बीमार होगये थे, पांव में वायु की बहुत बढ़ गई थी परन्तु वे समय २ पर कहते कि, मुझे चा- राजकोट करना है यह मेरा निश्चय है बाकी तो केवलीगम्य ात्मबल बहुत काम करता है । अष्टावक्र जिनके आठों अंग तोभी वे आत्मबल से कितने प्रभावशाली हुए यह सुप्र- ी है । आत्मश्रद्धा, आत्मबल के प्रमाण से ही कार्यसिद्ध होता अनुभव सत्य है कि, भाग्य के भोगी होने के बदले अपन को बदल सकते हैं और आगे क्या होगा उसका निर्णय भी ंश में अपन कर सकते हैं' श्रीयुत मार्डेन सत्य का समर्थन हुए कहते हैं कि "शिथिल महत्वाकांक्षा अथवा ढीले उद्योग भी कोई कार्य सिद्ध नहीं हो सकता, कार्य को सिद्ध करने वाली के साथ अपना निश्चय दृढ होना चाहिये ।

दूसरे कोई होते तो ऐसे समय विहार की तकलीफ न उठाते, द्वारिका' कर लेते, परन्तु राजकोट में व्याप्त जड़वाद को शि- करने का प्रकृति का निश्चय था । उस प्रकृति ने पूज्य श्र

राजकोट की ओर पयाण करता ! चूड़ा कि सुदामड़ा, पा
बोटाद और कुआडवा हो राजकोट पधारे, जिसके दूर से
निकाले ऊपर दृष्टिगत होते थे ।

राजकोट से चार पांच गाऊ दूर पूज्य श्री के पधारे
धाई मिलने पर इन महँगे यजमान का आतिथ्य करने
राजकोट ऊंचा नीचा हो रहा था । राजकोट के हर्ष की
उनके मुख मंडल पर प्रकाशित होने लगी । राजकोट शह
स्वच्छ आकाश में प्रभात की सूर्य किरणों ने सुनहरी
किलोल करते, घोंसले से उड़कर आते हुए पक्षियोंने बधाई
लम्बे समय से लगी हुई आशा सफल हुई समझ श्री संघ
के लिये प्रस्तुत हुआ । सूर्योदय होते ही जैसे कमल के
ल्लित होते हैं वैसे ही श्रीजी महाराज के पदार्पण से राज
श्रावकों के हृदय कमल प्रफुल्लित होगए ।

शहर के समीप वणिक भोजनशाला के मकान में श्राव
सं० १९६८ का चातुर्मास पूज्य श्री ने कितने ही संतों के
राजकोट में किया। दूसरे मुनिराजों को मूली तथा बोटाद चा
करने की आज्ञा दी और वहां भेजे। व्याख्यान भोजनशाला
होता था और निवास जैन पाठशाला में रक्खा ।

महाराज श्री का यह चातुर्मास राजकोट के इतिहास
समस्त काठियावाड़ के इतिहास में सुवर्णाक्षरों से अंकित

१६६८ का चातुर्मास निष्फल जाने से बड़ा दुष्काल पड़ा,
न से ही मेघराज की कुकृपा देख, दुष्काल संभव समझ, दया
परोपकार विषय पर महाराज श्री ने अपनी अमृत तुल्य वाणी
अमोघ प्रवाह रूप उपदेश देना आरंभ कर दिया। महाराज श्री
हरएक रोज के व्याख्यान में स्थानकवासी, देरावासी, जैन
यों के उपरांत दूसरे धर्म के भी संख्याबद्ध मनुष्य उपस्थित
थे और राजकोट वकील बरिस्टरों से भरपूर और सुधरे हुए
की पंक्ति में है, तो भी अमलदार वर्ग या दूसरे अग्रेसर गृह-
में शायद ही ऐसा कोइ निकलेगा कि, जिसने व्याख्यान का
न लिया हो। पूज्य श्री सरल परन्तु शास्त्रीय पद्धति से ऐसा
ोट उपदेश फरमाते कि, मध्य में किसी को कुछ प्रश्न करने की
वश्यकता ही न रहती थी। अनेक शंकाओं का समाधान होता
र अनेक प्रश्नों का निराकरण होता था।

पूज्य श्री के प्रभाव का डंका समस्त काठियावाड़ में बहुत दूर
क बज चुका था और राजकोट काठियावाड़ का केंद्र स्थान होने
बाहर से आये हुए अमलदार दरबार इत्यादिकों को व्याख्यान
वण करने का लाभ मिलता था। नामदार लींबडी के ठाकुर साहिब
जकोट पधारे तब व्याख्यान में उपस्थित हुए थे। पूज्य श्री के द
र्थ बाहर से आने वाले स्वधर्मी बन्धुओं का आतिथ्य
रने का खास प्रबंध किया गया था। भिन्न २ स्थान

राजकोट की ओर पधारा करता। चूड़ा से सुदामड़ा, ... चोटीला और कुआडवा हो राजकोट पधारे, जिसके दूर से ... निकाले ऊपर दृष्टिगत होते थे।

राजकोट से चार पांच गाऊ दूर पूज्य श्री के पधारने ... धाई मिलने पर इन महँगे यजमान का आतिथ्य करने ... राजकोट ऊंचा नीचा हो रहा था। राजकोट के हर्ष की ... उनके मुख मंडल पर प्रकाशित होने लगी। राजकोट शहर ... स्वच्छ आकाश में प्रभात की सूर्य किरणों ने सुनहरी ... किलोल करते, घोंसले से उड़कर आते हुए पक्षियोंने बधाई ... लम्बे समय से लगी हुई आशा सफल हुई समझ श्री संघ ... के लिये प्रस्तुत हुआ। सूर्योदय होते ही जैसे कमल के ... क्लित होते हैं वैसे ही श्रीजी महाराज के पदार्पण से राज... श्रावकों के हृदय कमल प्रफुल्लित होगए।

शहर के समीप वणिक भोजनशाला के मकान में श्री... सं० १९६८ का चातुर्मास पूज्य श्री ने कितने ही संतों ... राजकोट में किया। दूसरे मुनिराजों को मूली तथा बोटाद ... करने की आज्ञा दी और वहां भेजे। व्याख्यान भोजनशाल... होता था और निवास जैन पाठशाला में रक्खा।

महाराज श्री का यह चातुर्मास राजकोट के इतिहास ... समस्त काठियावाड़ के इतिहास में सुवर्णाक्षरों से अंकित ...

१९६८ का चातुर्मास निष्फल जाने से बड़ा दुष्काल पड़ा,
से ही मेघराज की कुकृपा देख, दुष्काल संभव समझ, दया
परोपकार विषय पर महाराज श्री ने अपनी अमृत तुल्य वाणी
अमोघ प्रवाह रूप उपदेश देना आरंभ कर दिया। महाराज श्री
एक रोज के व्याख्यान में स्थानकवासी, देरावासी, जैन
यों के उपरांत दूसरे धर्म के भी संख्याबद्ध मनुष्य उपस्थित
थे और राजकोट वकील बरिस्टरों से भरपूर और सुधरे हुए
की पंक्ति में है, तो भी अमलदार वर्ग या दूसरे अग्रेसर गृह-
में शायद ही ऐसा कोइ निकलेगा कि, जिसने व्याख्यान का
भ न लिया हो। पूज्य श्री सरल परन्तु शास्त्रीय पद्धति से ऐसा
ोट उपदेश फरमाते कि, मध्य में किसी को कुछ प्रश्न करने की
ावश्यकता ही न रहती थी। अनेक शंकाओं का समाधान होता
ार अनेक प्रश्नों का निराकरण होता था।

पूज्य श्री के प्रभाव का डंका समस्त काठियावाड़ में बहुत दूर
बज चुका था और राजकोट काठियावाड़ का केंद्र स्थान होने
बाहर से आये हुए अमलदार दरबार इत्यादिकों को व्याख्यान
वण करने का लाभ मिलता था। नामदार लींबडी के ठाकुर साहिब
ाजकोट पधारे तब व्याख्यान में उपस्थित हुए थे। पूज्य श्री के दर्श-
ार्थ बाहर से आने वाले स्वधर्मी बन्धुओं का आतिथ्य सत्कार
रने का खास प्रबंध किया गया था। भिन्न २ स्थान उतरने के

राजकोट की ओर प्रयाण करना। चूड़ा के सुदामड़ा, चोटीला और कुवाड़वा हो राजकोट पधारे, जिसके दूर निकाले ऊपर दर्शित होते थे।

राजकोट से चार पांच गाऊ दूर पूज्य श्री के धाई मिलने पर इन महँगे यजमान का आतिथ्य राजकोट ऊंचा नीचा हो रहा था। राजकोट के हर्ष की उनके मुख मंडल पर प्रकाशित होने लगी। राजकोट स्वच्छ आकाश में प्रभात की सूर्य किरणों ने सु किलोल करते, घोंसले से उड़कर आते हुए पक्षियोंने लम्बे समय से लगी हुई आशा सफल हुई समझ श्री के लिये प्रस्तुत हुआ। सूर्योदय होते ही जैसे कमल खिल होते हैं वैसे ही श्रीजी महाराज के पदार्पण से श्रावकों के हृदय कमल प्रफुल्लित होगए।

शहर के समीप वनिक भोजनशाला के मकान सं० १९६८ का चातुर्मास पूज्य श्री ने कितने ही राजकोट में किया। दूसरे मुनिराजों को मूली तथा बो करने की आज्ञा दी और वहां भेजे। व्याख्यान भोजन होता था और निवास जैन पाठशाला में रक्खा।

महाराज श्री का यह चातुर्मास राजकोट के इतिहा समस्त काठियावाड़ के इतिहास में सुवर्णाक्षरों से अंकि

है, मैं पैसे का (अन्न वस्त्र की शक्ति न होने से) दान न किया
ु समस्त समाज को अपनी देह दान में दे चुका हूं. मैंने सिर्फ
र में ही प्रभु को नहीं देखा, परन्तु अखिल विश्व में प्रभु की दिव्य
मा मैंने पूजी है। अन्य भक्तों ने पत्थर के पुतले में प्रभु माना,
हर एक मनुष्य में माना, दुनियां में दयानिधि देखे हैं और
की है। मैंने उन तीर्थों की तीर्थ यात्रा नहीं की परन्तु गरीब-
दुःखी-यात्रा मनुष्य-यात्रा की है, अर्थात् गरीबों की दीनता
मनुष्य की मनुष्यता का, दुःखियों का दुःख का विचार किया है
ान् को भजन के बदले मैंने अपने भोले भाईयों का भजन
ा है, भक्तों ने एक ही भगवान् माना होगा, मैंने तो अनेक भग-
माने हैं। प्रत्येक मनुष्य में एक २ प्रतिमा विराजमान है।
ष्य के हृदय में जान्हवी है व्रत, तप की शांति है तीर्थ-यात्रा
मा है, और मोटाई है मालिक के दान का अनन्त गुणा पुण्य
है। दूसरों ने पापियों के लिये धिक्कार बरसाया होगा परन्तु
भी मेरी दया के पात्र बने हैं......................अन्य के
ु पूछना ही मेरा धर्म है। सत्य मेरी शक्ति है और सेवा मेरी
क्ति है।

प्रभुजी—(दीन बन्धु के सिर पर हाथ रख कर) मेरे
। सेवा सच्ची सेवा है तेरी भक्ति सच्ची भक्ति है। तु
कृष्णचंद्र के रूप में देख, भक्ति करने की अपेक्षा

अपने संयम को प्रतिपालते, सम्प्रदाय की शोभा ब
श्रोताओं को उनके कर्तव्य का भान भासित करने वाली
कुशल बुद्धि राजकोट जैसे सुधरे हुए क्षेत्र में विजय प्राप्त
पूज्य श्री की योग्यता का सब से बड़ा प्रमाण है। श्री महा
वचनामृतों को अक्षरशः अनुमोदन देने वाले विद्वान् अनु
का एक काव्य इस मौके पर पाठकों को अति रस देगा
भारी है परंतु यहां पर उसका थोड़ासा अनुवाद दिया

"देवदूत—सत्य है ! मृत्यु लोक यही स्वर्ग लोकका
सीधा जाना पसंद करते हों—तो मेरे दूतों ने तुम्हें कभी
करते नहीं देखा, तुमने बड़े २ दान भी न किये, यात्रा
देहको सार्थक नहीं किया, प्रभु मंदिर में कभी पांव भी न
जीवनको क्या मैं अपने प्रभुके पास ले जाऊं ? नहीं २
नहीं हो सक्ता।

दीनबन्धु—दयालुदेव ! दिव्य नयनों से देखो यों मैंने अप
न भी किया हो परन्तु जगत् के दुःखी अज्ञान और दि
यों का दर्द दूर करने में मैंने अपना भाग दिया है, मैंने
करके देह दमन न किया हो, परन्तु प्रभो ! गरीबों के
अपनी देह उधारी है, मैं पाप धोनेवाली गंगा में
परन्तु दीनों की मीठी दुआओं से मैंने अपनी आत्म

है, मैं पैसे का (अन्न वस्त्र की शक्ति न होने से) दान न किया समस्त समाज को अपनी देह दान में दे चुका हूं. मैंने सिर्फ में ही प्रभु को नहीं देखा, परन्तु अखिल विश्व में प्रभु की दिव्य मैंने पूजी है। अन्य भक्तों ने पत्थर के पुतले में प्रभु माना, र एक मनुष्य में माना, दुनियां में दयानिधि देखे हैं और की है। मैंने उन तीर्थों की तीर्थ यात्रा नहीं की परन्तु गरीब-दुःखी-यात्रा मनुष्य-यात्रा की है, अर्थात् गरीबों की दीनता नुष्य की मनुष्यता का, दुःखियों का दुःख का विचार किया है र् को भजन के बदले मैंने अपने भोले भाईयों का भजन है, भक्तों ने एक ही भगवान् माना होगा, मैंने तो अनेक भग-माने हैं। प्रत्येक मनुष्य में एक २ प्रतिमा विराजमान है। । के हृदय में जान्हवी है व्रत, तप की शांति है तीर्थ-यात्रा ।। है, और मोटाई है मालिक के दान का अनंत गुणा पुण्य है। दूसरों ने पापियों के लिये धिक्कार बरसाया होगा परन्तु ी मेरी दया के पात्र बने हैं..................अन्य के पूछना ही मेरा धर्म है। सत्य मेरी शक्ति है और सेवा मेरी व है।

प्रभुजी—(दीन बन्धु के सिर पर हाथ रख कर) मेरे भक्त! सेवा सच्ची सेवा है तेरी भक्ति सच्ची भक्ति है। तुझे कृष्णचंद्र के रूप में देख, भक्ति करने की अपेक्षा

दर्दी अज्ञानी या पापी के स्वरूप में देख भक्ति करना अ...
है, गरीब या अनाथों का अनादर वह मेरा ही अनादर है, ...
सत्कार वह मेरा सच्चा सत्कार है। मेरा तमाम ऐश्वर्य प्रभु के ऐ...
के ही चरण में समर्पण है।

इस काव्य के पृथक् २ विचार भी पूज्य श्री के सदुपदे...
अनुमोदन देते हैं कि, जगत् में कल्याण का एक भी श्वास...
होगा, दया से एक भी अश्रु गिराया होगा, तो वही दिन सा...
है आज किसीका भला न किया हो तो प्रायश्चित्त कर और हे ...
तेरी बेपरवाही का बदला देने प्रस्तुत हो। कल गरीब का-स...
का छिप २ कर काम करना अर्थात् आज का देना चुकता
जायगा जो जीवन अपने पश्चात् कोई चिन्ह न रख सका ...
जीवन की ज्योति से अंधकार विलीन न हुआ, जिस जीवन
भूत-प्राणी को संतोष न दिया वह जीवन सचमुच देखा तो ...
खर ऋतु के जैसा ही व्यतीत हुआ समझा जाता है।

संवत्सरी के दिन ढोरों के निभाने के लिये फंड करते समय अ...
जैन भाईयों से ही रु० पांच हजार की रकम इकट्ठी की थी ...
राजकोट के नामदार ठाकुर साहिब के सभापतित्व में ...
वृहद् जाहिर सभा ढोर संकट निवारण फंड के लिये की ...
थी उसमें वह रकम न बताते ना. ठाकुर साहिब ने इसी स...

०७० सात हजार की रकम उस फंड में दें फंड का कार्य
किया था और सब जाति की एक कार्यकारिणी कमेटी मुक-
थी। दुष्काल में दुष्काल पीडित मनुष्यों को मदद करने, उसी
ढोरों की रक्षा करने में दूसरों के साथ जैन भाईयों ने भी अ-
ा भाग लिया था, मारवाड़ खारियों को खास सस्ते भाव से,
या मुफ्त घास और अनाज दे अपने जानवरों को निभाने
ा सरलता की थी, राजकोट के प्रसिद्ध वकील रा, रा. पुरु-
भाई मावजी ने दुष्काल के दस महिनों में अपना काम धंधा
त त्याग महाराज श्री के पास दुष्काल सम्बन्धी कामकाज
रने की प्रतिज्ञा ली थी। इस दुष्काल में मनुष्यों एवम् ढोरों
से उन्होंने बड़ा श्रेष्ठ कार्य किया था। राजकोट के प्रसिद्ध जैन
ों रा० रा० जयचंद भाई गोपालजी (वर्तमान जयचन्द्र जी
ी) रा० रा० बेचरदास गोपालजी, रा० रा० भाईदास बेच-
ा, रा० रा० न्यालचन्द्र सोमचंद, रा० रा० पोपटलाल कानकचन्द्
को साथ ले वे उस समय के दुष्काल के लिये बाकेर, धरमपुर,
ास, इन्दोर, उज्जैन, जावरा, मंदसौर, अजमेर, बीकानेर और
ापुर इत्यादि स्थानों पर ढोर संकट निवारण के लिये फंड जमा कर
ये। उस फंड में लगभग रु० ५०००० पचास हजार पशु-
ों का अच्छी तरह बचाव किया था, कर गृहस्थों
ने अपने पास से दिया था और फंड जाते से एक पैसा

राजकोट में इस समय सेवाधर्म का सिद्धान्त पूज्य साहिब ने श्रेष्ठ असरकारक रीति से समझाया था कि उनके व्याख्यान सुनकर उसका प्रत्यक्ष अनुभव लेने के लिये गतिस्पर्द्धिता चढे थे असं- संख्याबद्ध ढोर बिना मालिक के फिरते थे। पंजरापोल उपरान्त भिन्न २ स्थानों पर खास 'केटलकेम्प', पशुगृह खोलकर सेवकों ने बड़ी फिक्र के साथ सेवा की थी। सेठ और गृहस्थ क्रिये कपड़ों वाले अपने हाथों से बीमार जानवरों को बिठाते, दवा लगाते और उन्हें पुचकारते थे।

सेठ, गृहस्थ और युवा मित्र मंडल के साथ मौज उड़ाने में या हवा खोरीपर जाने के बदले या गप्प सप्प मारने, हंसी उड़ाने के बदले, अवकाश का समय 'सेवाधर्म' में व्यतीत करें यह वर्तमान समय के लिये अत्यावश्यक है। कमीज की बांहें चढ़ा कर एक मनुष्य जानवर का मुंह पकड़े। दूसरा मित्र नाल से उसके मुंह में दूध डाले। तृतीय मित्र डब्बे में से दवा ले उसके घाव पर लगावे और चौथा मित्र रेशमी रुमाल ले पशु की धाराओं पर बैठती हुई मक्खियां उड़ावे। यह दृश्य दूसरों को सेवाधर्म में लगाने के लिये काफी है। राजकोट 'केटल केम्प' का एक फोटो खिंचवाया है पास के पृष्ट पर देखें जिस में सोनी मोहनलाल केशवजी, ठाकरसी केशवजी इत्यादि स्वयंसेवकों का परिचय मिलेगा।

राजकोटमां छाशनी वहेंचणी.
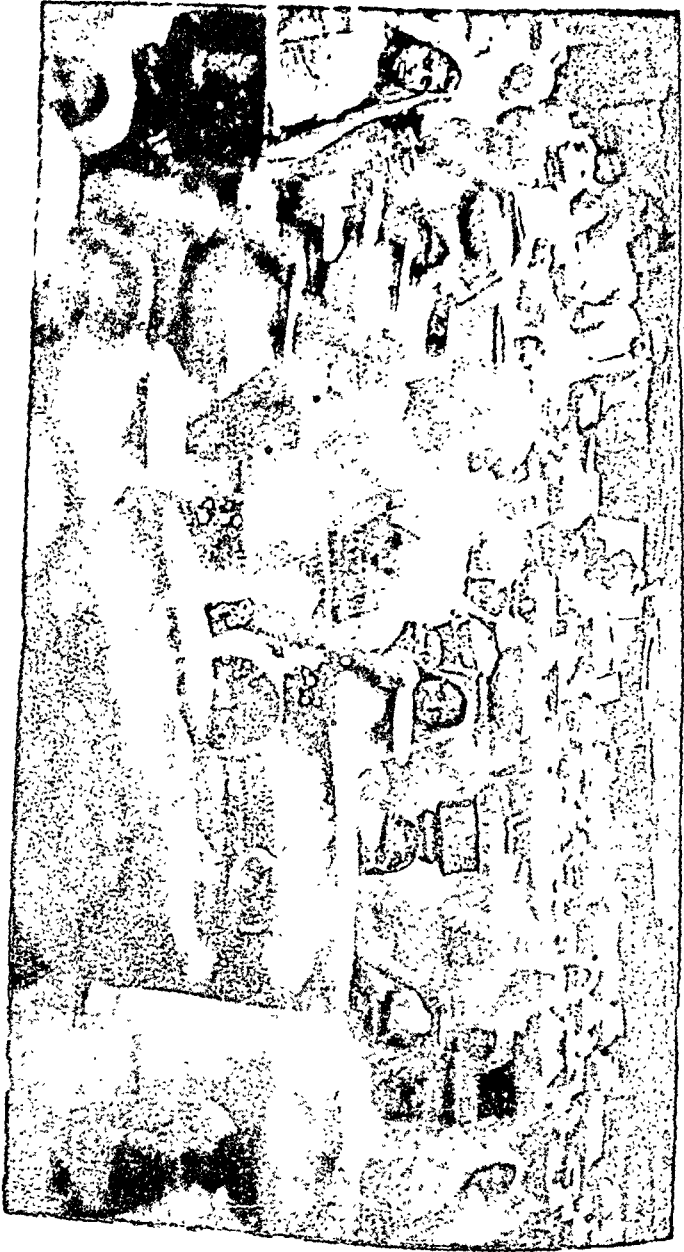
ाजकोट में ही मनुष्य जाति की सहायता में तथा ढोरों के लगभग रु० १२५००० (एक लाख पच्चीस हजार खर्च हुए थे।

काठियावाड़ में 'छाछ' खाने का रिवाज दूसरे देशों की ा अधिक प्रचलित है। छाछ करने के लिये कई जगह कुटु- ी गाय भैंस रखने की पद्धति प्रचलित है। अगर ऐसा प्रबन्ध ुआ तो सगे सम्बन्धी या अड़ोसी पड़ोसियों के यहां से लाने वाज है। दुष्काल जैसे समय 'छाछ' की तकलीफ होने के ; लोगों को छाछ की सुलभता कर देने से बड़ी मदद मिलती है ोट के सोनी मोहनलाल इत्यादि स्वयंसेवकों ने छाछ का भी ा प्रबन्ध कर दिया था। बम्बई की एक पारसी बाई ने 'छाछ' कितने ाह तक अपने खर्च से ही देने की इच्छा प्रकट की थी, इस- बहुत सी छाछ बनती थी। छाछ बांटने की संस्था का पास चित्र देखने से पाठकों को जरा खयाल होगा।

ता० १०। ६। १६११ के रोज पूज्य श्री के व्याख्यान का न लेने के लिये नामदार राजकोट के ठाकुर साहिब पधारे थे, र डेढ़ घंटे तक सावधानी के साथ पूज्य श्री के प्रवचन श्रवण ते थे। उस समय २००० से ३००० श्रोताओं की उपस्थिति पूज्य श्री ने 'मनुष्य कर्तव्य' समझाया था।

प्रथम श्लोक में प्रभु स्तुति किये बाद देवता मनुष्य तिर्यंच और की इन चार गतियों में मनुष्य क्यों विशेष उत्तम है सो

चार गतियों में से मात्र एक मनुष्य की गति ही से क्यों मोक्ष
हो सकता है वह समझाया। मनुष्य जन्म की दुर्लभता सम
और जब मनुष्य जन्म इन बोलों सहित प्राप्त हो गया है तो
किस तरह सफल कर सकते हैं इस पर विवेचन किया। अ
सत्य, अस्तेय, ब्रह्मचर्य और परिग्रह इन पांचों यमों के विष
महाभारत के शांतिपर्व में से कितने ही उदाहरण दे मनु
कर्तव्यों में वे किस रीति से गिने गए हैं यह समझाया। ब्रा
क्षत्री, वैश्य और शूद्रों के धर्म समझाते हुए क्षत्रिय राजाओं
चारित्र कैसा निर्मल होना चाहिये यह समझाया। एक धर्म के आ
दूसरे धर्म के आचार्य पर हमला करें तथा धर्म का भिन्न र
किस हेतु से घटित किया है वह न समझ अनेक शाखा, म
लोकों में जो भ्रांति उत्पन्न कर दी है और विसवाद बढ़ाया है
आपने को कितनी हानि पहुंची है यह समझा कर सम्प्र को
के कर्तव्य की श्रेणी में बिठा उसके कितने ही उदाहरण दे
निम्न श्लोक पर विवेचन कर तत्त्व, व्रत, दान और वाणी इन
पर विशेष विवेचन किया।

बुद्धेः फलं तत्त्वविचारणञ्च
देहस्य सारं व्रतधारणञ्च।
वित्तस्य सारं करपात्रदानं,
वाचां फलं प्रीतिकरं नराणाम्॥ १॥

गोरक्षा ※ तथा प्रजा के चारित्र की सुधारणा की तरफ अ
लक्ष देने के कारण ना. ठाकुर साहिब की योग्य बड़ाई क
श्रोताजनों को जीवरक्षा सम्बन्धी असरकारक उपदेश
ना व्याख्यान पूर्ण किया था। ना. ठाकुर साहिब ने व्याख्या
ाप्त होने के बाद ही अपनी जगह छोड़ी। उपस्थित सज्जनों
ादार का उपकार माना, फिर सब लोग उपरोक्त व्याख्यान व
यन्त तारीफ करते हुए बिखर गए।

गोंडल संघाणी संघाड़े की पवित्र पुण्यशाली तपस्विनी मह
ोजी जीवी बाई महासती ने मंदवाड़ में आचार्य श्री के श्रीमु
धर्म सुनने की इच्छा प्रकट की, वह श्रीयुत पोपटलाल केवलचं
हने आचार्य श्री से विनन्ती निवेदन की, तब पूज्यश्री वहां पध
ु उपाश्रय में बैठने की इच्छा न की। परम्परा अनुसार उन्हों
ा कहा, परन्तु इससे बीमार महासतीजी के तकलीफ में अधिक
गी ऐसा हमें समझा अंत में दूसरे दरवाजे पर महासती
। पाट तनिक उठालाया गया था और वहीं से आचार्यश्री ने उ

※ राजकोट नरेश गादी पर बैठे तब आपने अपने सम
ाज्य में तथा राजकोट सिविल स्टेशन के एजन्ट टु दी गवर्नर व
ाख कर गोवध हमेशा के लिये बंद कर दिया था।

साधुधर्म की अपेक्षा से अत्यंत सरल उपदेश दिया। महासती गुणवती और सिद्धांत रस की पिपासु थीं, उन्होंने 'तहेत्ति' कह उपदेश सिर चढ़ाया, ऐसी महासती वर्तमान समय में मुश्किल है। गोंडल संघाड़े के आचार्य श्री जसराजजी महा- जो उपाश्रय में विराजते थे, वह उपाश्रय मार्ग में होने से से सुख साता पूछ बहुजही धर्मालाप कर आचार्य श्री खुश हुए।

महाराज श्री के शिष्य मुनि श्री छगनलालजी महाराज ने चातुर्मास में पैंतीस उपवास की तपश्चर्या की थी और उनके उपवास के दिन तथा पारणे के दिन नामदार ठाकुर साहिब के हुक्म से कसाई खाने बंद रक्खे गए थे।

काठियावाड़ में राजकोट शहर इंग्लिश शिक्षा में सबसे आगे है। आधुनिक शिक्षा में धार्मिक शिक्षा का अभाव होने नई रोशनी वालों के हृदय में आर्यावर्त के अध्यात्म वाद की ओर पाश्चात्य जड़वाद की ओर विशेष लक्ष होने के अपन कई दृष्टान्त देखते हैं। वर्तमान की शिक्षा से शिक्षित हुए कई नवयुवक धर्म पराङ्मुख होते जाते हैं ऐसे कितने ही युवा पूज्य श्री के धर्मोपदेश तथा सत्समागम से धर्मप्रेमी बन आत्मोन्नति के मार्गारूढ हो गए पूज्यश्री के चारित्र और वाणी का प्रभाव ही ऐसा अलौकिक था। [illegible] भवति हि साधुना खलानाम् अर्थात् सत्सङ्ग से खल पुरुषों में

प्रकट हो जाती है। तो फिर पढ़े लिखे योग्य पुरुषों
ग से अपूर्व लाभ प्राप्त हो इसमें क्या आश्चर्य है।

ज्य श्री की प्रशंसा सुनकर उच्च इंग्लिश शिक्षा प्राप्त वकील
और सरकारी आफिसर इत्यादि उनके पास आने लगे। पूज्य
इंग्लिश का बिल्कुल अभ्यास न था। तो भी वे नई रोशनी
शिक्षित समाज पर अपने चारित्र बल से अपूर्व छाप डालते
धीरे २ वेही पूज्य श्री के प्रशंसक, अध्यात्म मार्ग के अनन्य
और धर्मपर सम्पूर्ण श्रद्धा रखने लग जाते थे। यों पूज्य
संसर्ग से कई विद्वानों ने बड़ा भारी लाभ उठाया। मिसिस
न नामक एक अंग्रेज युवती भी पूज्य श्री के व्याख्यान का
र्सी पर नहीं परन्तु नीचे बैठकर लेने लगी। पूज्य श्री के
र्मचर्चा में उसे बड़ा आनन्द प्राप्त होता। संवत्सरी के प्र-
ण में उपस्थित हो सब विधियों की वह ज्ञाता बनी थी।
ई व्याख्यान में मुंहपत्ति बांधकर बैठती। व्याख्यान के
ग उद्धृत कर लेती। इस विदुषी अंग्रेज युवती ने जैन धर्म
Heart of Jainism नामक एक पुस्तक लिखी है उसमें उसने
श्री के सम्बन्ध का उल्लेख यों किया है।

The present writer had the pleasure of meetin
Acharya of the Sthankwasi sect, a gentle man
Srilalji, whom his followers hold to be the

Acharya in direct succession to Mahavira. Many ... sects have risen amongst the Sthankwasi Jains ... each of these has its own Acharya but they unite ... honouring Shrilalji as a true Ascetic........when ... writer for instance had the pleasure in Rajkot of ... ing Shrilalji Maharaja (who is considered the ... learned Sthankwasi Acharya of the present tim... hh ead travelled thither with 21 attendants "Sadhus..."

भावार्थ:—लेखक को स्थानकवासी सम्प्रदाय के एक ... श्रीलालजी की मुलाकात का आनन्द प्राप्त हुआ था। जि... महावीर के गादी के ७८ वें आचार्य उनके अनुयायी मान... स्थानकवासी जैनों में जो कि, कई शाखाएं हैं तो भी श्री... महाराज को एक सच्चे त्यागी समझ बहुत से उन्हें मान देते ... श्रीलालजी महाराज जिन्हें वर्तमान समय के बहुत से विद्वा... नकवासी आचार्य गिनते हैं उनसे राजकोट में मिलना हुआ ... २१ मुनिओं के साथ पधारे थे।

इसके सिवाय गुर्जर भाषा के अद्वितीय कविवर जय... इंदुकुमार आदि अनुपम काव्यों के रचयिता सुप्रसिद्ध ... श्रीमान् न्हानालाल दलपतराम कवीश्वर M.A जिन्होंने इस ... की प्रस्तावना लिखने की स्वीकृति प्रसन्नतापूर्वक दी है, वे तथ...

अनेक लोकोपयोगी ग्रंथों के कर्ता साधुचरित श्रीयुत
सुंदरजी पढीयार आदि जैनेतर विद्वान् भी मुनिराज
का प्रेमपूर्वक लाभ उठाते थे। परस्पर ज्ञानचर्चा से अपूर्व
ाता था। उक्त विद्वानों के अतिगहन और तात्विक प्रश्नों के
चार्य श्री अत्यंत बुद्धिमत्ता पूर्वक और जैन--शास्त्र के अनु-
कि, जिन्हें सुनकर प्रश्नकर्ता सानंदाश्चर्य में हो जाते।
जन्म इत्यादि पूज्य श्री के श्री मुख से सुनते समय श्रीकृष्ण
को जैनों ने कितनी उच्च श्रेणी पर स्वीकृत किया है वह
था। कवि श्री न्हानालाल भाई कहते हैं कि, मुझे और
के सद्गत साधु अमृतलाल सुंदरजी पढ़ियार को ये महा-
परिव्राजकाचार्य से भी अधिक महान् अधिक उदार और
क्रियापात्र, अधिक तपस्वी एवम् अधिक वैराग्यवंत मालूम
। सुनने के अनुसार पूज्य श्री के विहार के समय कवि श्री
हीं समय साथ विताते और कठिन क्रिया एवम् संयम के
की बारीकी देख आनंदित होते थे।

ाश्मीर राज्य के दीवानजी श्रीमान् अनंतरामजी साहिब एल.
ी. जो एक स्थानकवासी जैन गृहस्थ हैं वे काश्मीर राज्य से
पुटेशन ले किसी कार्यवश राजकोट आये थे। दीवान अनं-
के सभापतित्व में आये हुए इस डेपुटेशन में कितने

दूत, अमीर तथा वजीर भी थे। चार दिन के उनके मुकाम में दररोज आचार्य श्री के व्याख्यान में पधारते थे।

पंजाब में उस समय विचरते पूज्य श्री की सम्प्रदाय के महाराज मुन्नालालजी के सम्बन्ध से पूज्य श्री ने दीवान साहिब के साथ बातचीत की थी, बीमार मुनिराजों की सुख साता पुछाई थी और मुनि की मदद की अवश्यकता हो तो मैं भेजने के तैयार हूं ऐसा कहा परन्तु दीवान साहिब के जम्मू पहुंचने पर किसी मुनि को वहां के लिये भेजने की आवश्यकता नहीं ऐसे समाचार आजाने दूसरे मुनियों को उधर नहीं भेजा थी।

राजकोट इत्यादि स्थलों में एक जाति के नहीं परंतु जाति के स्त्री पुरुष उनके व्याख्यान में आते परंतु यों मालूम नहीं था कि, हमारा ही धर्म हमें समझा रहे हैं।

आत्म-कल्याण की ही बातें कह रहे हैं ज्ञान, भक्ति, वै अनुभव, तप, आश्रम, धर्म का अखंडपालन हृदय की विशालता सब सद्गुण जन-समूह को स्वाभाविक रीति से श्रीजी की आकर्षित कर लेते थे।

सैकड़ों अनपढ़ ग्राम वालों की सभा को कथा, कवि अशक्य गप्पों से रिझा लेना सरल है परन्तु वाक्य वाक्य शब्द

दिखा दिया है कि, जैनियों में भी योग निष्ट महात्मा पुरुष हैं।

दिवाली के दिन वे छठ (दो उपवास) करते। एक अहोरात्र धर्मध्यान में बिताते, व्याख्यान सिवाय बाकी दिन के समय में और विशेष रात को वे योग समाधि में रहते थे। राजकोट में दिवाली की पिछली रात को संवर पौषध में रहे हुए तथा दूसरे श्रोताओं को श्री उत्तराध्ययन सूत्र पूर्ण तीन घंटे में श्री मुख से सुनाया था। दिवाली का दिन श्री श्रमण भगवान् महावीर प्रभु के निर्वाण का पवित्र दिन है। उन महावीर प्रभु ने शिष्यों को निर्वाण के समय जो उपदेश दिया था, सोलह प्रहर तक जो धर्मदेशना दी थी उस देशना को गूंथ कर गणधरों ने श्री उत्तराध्ययन सूत्र की रचना की है जिससे दिवाली के पिछली रात्रि को समर्थ पवित्र आचार्य के श्री मुख से उत्तराध्ययन सुना जाय तो ठीक हो—इस इच्छा से जब उनका दूसरा चातुर्मास मोरवी हुआ तब दिवाली के दिन मैं मोरवी गया, वहां मेरी समझ में आया कि, आचार्य श्री श्रावकों को श्री उत्तराध्ययन सुबह अर्थात् कार्तिक शुक्ला १ को सुनाने वाले हैं इससे मैं कुछ २ निराश हुआ, क्योंकि, श्रमण भगवंत दिवाली की पिछली रात्रि को निर्वाण पाये थे, वह उत्तराध्ययन पिछली रात्रि को पूर्ण हुआ था जिससे उस समय सुना जाय तो सामयिक गिना जाय। जिससे मैंने अपनी निराशा आचार्य श्री से निवेदन की। आचार्य श्री ने समझाया कि, राजकोट के श्रावकों को मालूम हो गया था कि

ात्रि को उत्तराध्ययन को सुनाया जावेगा जिससे कितने ही
र से शीघ्र उठ एकेन्द्रियादि जीवों की घात करके उत्तराध्य-
ा मेरे पास आये थे, इस लिये दूसरे दिन गुलाबचंद्रजी ने
थी कि इसमें तो लाभ की अपेक्षा हानि अधिक है।
द्रजी की टीका मुझे योग्य जची, इसलिये यहां मैंने श्रावकों से
दिया कि मैं सुबह व्याख्यान के समय ही उत्तराध्ययन
ा, परंतु हां तुम राजकोट से खास, इसी लिये आये हो तो
पौषध करना और धर्म जागरण करते हुए जगो तब ऊपर
करीब ३ बजे चांदमलजी को कहना, फिर मैं अपने ध्यानसे
होकर तुम्हे तुरंत बुलाऊंगा। इस उत्तर को सुनकर मैं बहुत
आ, परन्तु कहे बिना न रहा कि, पूज्यजी साहिब इससे आप
वक्त उत्तराध्ययन सुनाना पड़ेगा और दूना श्रम होगा। तब
ो ने फरमाया कि "मुझे स्वाध्याय का दुगुना लाभ होगा।
की रीत्यनुसार दिवाली की पिछली रात्रि को उत्तराध्ययन
य रूप मुंह से कहुंगा और श्रावक श्राविकाओं को सुनाने के लिये
सुबह याद करूंगा।

दिवाली के संध्या समय मोरवी में निर्मला बहिन ने महाराज
ी के गुणगान की कविता परिषद् में गाई। मैंने शास्त्री जी के श्लोक
ौर मेरी ओर से महाराज श्री के जीवन चरित्र की कुछ रूप रेखा"
ा वाली कविता गाये बाद श्रीयुत मगनलाल दफ्तरी, भाई क

जौहरी और मैंने समयानुसार कुछ विवेचन किया पश्चात् आचार्य
काठियावाड़ में और खासकर हालार में चातुर्मास करने से कित
कार हुआ यह बताया । पिछली रात्रि को मुझे तो उत्तराध्ययन सु
सौभाग्य प्राप्त हुआ और सुबह भी लाभ मिला । सुबह जब क
अध्यायों का स्वाध्याय होगया तब मैंने अपने समीप बैठे हुए श्रीयु
से कहा कि महाराज साहिब यह दूसरी बक्त स्वाध्याय कर रहे हैं
दूसरे वक्त के श्रम को मान देने के लिये समस्त परिषद् खड़ी
और जब महाराज ने सुना कि, खड़े २ सुनने का यह कारण
भी शिष्यों सहित खड़े हो गए, जिस तरह तीर्थंकर भी "नमोति
कह चतुर्विध संघ को मान देते हैं उसी तरह खड़े होकर पूज्यश्री
पूर्ण उत्तराध्ययन सुनाया, इतनी सी हकीकत ही आचार्य
कितने गुण सिखावेगी ।

गोंडल, जेतपुर, जामनगर, पोरबंदर जैसे शहरों में या
जैसे ग्रामों में जहां २ में महाराज साहिब के विहार में उन
नार्थ दूसरों के साथ २ मैं गया, वहां २ हिन्दू मुसलमान सब
से पूज्य श्री के लिये जो मानवाचक और पूज्यता प्रदर्श
बोले जाते थे उन्हें सुनकर मुझे बड़ा आनन्द होता और चाहत
अपनी जैन-समाज में ऐसे प्रभाविक महापुरुष अधिक
क्या ही अच्छा हो ? अहिंसा धर्म का कितना अधिक प्र
जाय, पोरबन्दर से हम राजकोट पिंजरापोल के लिये धन

को मारवाड़ की तरफ गए थे तब पोरबंदर के भाइयों ने तथा मांग
पुर के भाइयों ने उसी तरह मालवा मेवाड़ मारवाड़ में जो
। आदर सत्कार हुआ वह अबतक कृतज्ञता से स्वीकार करता
यह आदर सत्कार और मिली हुई आर्थिक मदद यह सब
भि महानुभाव आचार्य श्री के प्रभाव का ही प्रताप है ऐसा कहूं तो
अतिशयोक्ति न होगी।

राजकोट जैन-वणिक बोर्डिंग हाउस के स्थानकवासी विद्यार्थी
। पूज्य श्री के दर्शनार्थ और छुट्टी वगैरह की अनुकूलता से
ख्यान सुनने आते थे। पश्चिम के जडवाद की शिक्षा लेते युवा
में स्वधर्म-प्रेम प्रेरने वाले सद्गत त्रिभुवन प्रागजी पारेख का
स्मरण हुए विना नहीं रहता। सच्ची दिली इच्छा से गुपचुप
पकार के कार्य करने वाले ऐसे नर थोड़े ही होंगे। अपने परो-
ारी जीवन से उत्तम दृष्टांत छोड़ जाने वाले पूज्य श्री के इस भक्त
जीवन पर प्रकाश डालना यहां अनुचित नहीं होगा।

अन्य ग्रामों से राजकोट में पढ़ने के लिये आने वाले विद्यार्थियों की
तलीफ का अनुभव कर राजकोट में वणिक जैन बोर्डिंग प्रारंभ करने
ाले यही गृहस्थ हैं उन्होंने जीवन पर्यंत इसके लिए श्रम उठाया है।
उना ही नहीं, परन्तु साढ़े तेरह हजार वार जमीन बोर्डिंग के मकान
लिये अभी दी है और अब उसपर रु० २५०००) खर्च कर बोर्डिंग

का मकान तैयार किया गया है इस संस्था द्वारा आज से
विद्यार्थी लाभ ले रहे हैं और स्वधर्म के तत्वों का भी पालन
भाग्यशाली बन रहे हैं।

वे अनाथ या निराधार विद्यार्थी को अपने यहां रखकर
और सेवा-चाकरी करके पढ़ाते थे और उनकी पत्नी भी इस कार्य
उन्हें मदद देती थी। जहां २ उनकी बदली हुई वहां २ उन्होंने
पकार के कई कार्य किये हैं।

उनका इसके साथ दिया हुआ फोटो उनके शांत और नि
भिमानी परोपकारी जीवन की पाठकों को खात्री देगा। उनकी
पर अत्यंत दृढ श्रद्धा थी और वे पोषध संवर बहुत करते थे।
के ज्ञान के लाभ के साथ व्यवहारिक ज्ञान की सुविधा होजाय
अत्यंत लाभ हो, इसलिये उन्होंने एक बड़ी संस्था कायम करने
प्रयास किया था। रतलाम जैन ट्रेनिंग कालेज वहां से उठाकर राज
लाने के लिये वे रतलाम कमेटी में गए थे और कमेटी ने बहुत खुशी
यह संस्था उन्हें सौंपी थी, परन्तु समाज की ऐसी सेवा बजाने
उनकी इच्छा पूरी न हुई और सं० १९७४ के वैशाख वद
रोज उनका स्वर्गवास होजाने से रतलाम स्टेशन पर गया
कालेज का सामान पीछा लाना पड़ा था. परोपकार के कार्य के
ही उन्होंने भविष्य की शुभ आशाएं होते भी नौकरी से छु
परोपकारी जीवन बिताया था। उनके स्मरणार्थ उनके मित्रों

००) एकत्रित कर उनके नाम का राजकोट पिंजरापोल में एक बोर्ड
ाया है जिसकी नींव धर्मपुर के मर्हुम महाराणा श्री मोहनदेवजी
रखी थी ।

सद्गत त्रिभुवन भाई के जेष्ठ बंधु देवजी भाई मर्हुम का अनु-
ण कर अपने द्रव्य का सदुपयोग करते हैं लेखक की उनके साथ
मैंक सगाई थी और समय २ पर परस्पर मिलना जुलना होता था,
श्री संत समागम के लिए जैपुर भी पधारे थे और जहां २ पूज्य
का चातुर्मास होता था वहां २ पहुंचते थे ।

सद्गत की प्रेरणानुसार बोर्डिंग का निज का मकान और एक
ग्नीटोरियम ' राजकोट में शीघ्र तैयार हुए अपन देखेंगे । उनका
ुकरण करने को ललचाने के लिए ही इतना विस्तार किया है ।

पूज्य श्री ने राजकोट का चातुर्मास पूर्ण कर विहार किया तब
ताओं को बहुत धक्का पहुंचा था श्रीयुत सौभागचंद वीरचंद मोदी
'सुभागी के नाम से प्रसिद्ध हैं । उन्होंने गद्गद् कंठ से नीचे के
व्यों से श्रोताओं को धैर्य धराया था ।

सवैया

ूल बागथी उडी जशे, पण रागथी रागी जनों रिझवीने,
इंद्रधनुष समाई जशे, पण रंगथी सर्वनी आंख भरीने।
ारी अन्य अरण्य जशे, वीर हाकथी जंगलने गजवीने,
तेमज संत श्रीलाल जशे, बहु भेख अलेख अहिं ।

अध्याय २६ वाँ

सौराष्ट्र का सफल प्रयास।

राजकोट का चातुर्मास पूर्ण हुए पश्चात् संवत् १९९[illegible] अगसर वद १ के रोज विहार कर पूज्य श्री गोंडल पधारे। गों[illegible] में श्रीजी महाराज के व्याख्यान में बहुत से मुसलमान भा[illegible] आते थे। पूज्य श्री के सदुपदेश का सुंदर असर उनके हृदय [illegible] इतना अधिक हुआ था कि, जीवदया के लिये जो फंड किया गय[illegible] उसमें मुसलमान भाईयों ने भी अच्छी रकम दी थी। पूज्य [illegible] ने गोंडल से विहार किया तब मुसलमान भाईयों ने गोंडल मे[illegible] ठहर कर आपकी अमृतमय वाणी श्रवण करने का लाभ दे[illegible] बहुत आग्रह पूर्वक अर्ज की थी।

गोंडल से विहार कर गोमटा, वीरपुर, पीठड़िया, जेतपुर, जेतलसर हो धोराजी पधारे। यहां दशाश्रीमाली जाति के मकान में पूज्य श्री विराजते थे। और व्याख्यान में स्थ[illegible] हिन्दू मुसलमान तथा अमलदार इत्यादि हजारों की संख्या [illegible] स्थित होते थे। धोराजी से जल्द ही विहार करने का पूज्य [illegible] विचार था परन्तु पग में तकलीफ होजाने से एक माह धोरा[illegible]

। पड़ा था। जिसके फल स्वरूप वहां बहुत ही धर्मोन्नति हुई
बाहर से भी लोग बड़ी संख्या में पूज्य श्री के दर्शनार्थ आते थे।

कंठाल के श्रावक श्राविकाओं का अत्यन्त आग्रह देख एवं
धर्मानुराग की प्रशंसा सुन पूज्य श्री की इच्छा कंठाल
वल, मांगरोल और पोरबंदर) में विचरने की थी। इसलिये
जी से विहार कर जूनागढ़ पधारे। वहां भी धर्म का बहुत
त हुआ। वहां से अनुक्रम से विहार करते २ श्रीजी महाराज
ल पधारे और वहां बहुत उपकार हुआ।

वेरावल विहार कर चोरवाड़ हो श्रीजी महाराज महा वदी १०
ोज मांगरोल पधारे। उस समय मांगरोल में गोंडल सम्प्रदाय
ुनी श्री जयचन्द्रजी स्वामी विराजते थे। वे आचार्य श्री के
रने के समाचार सुन बहुत आनंदित हुए और लेने के लिये
गोल शहर के बाहर कितने ही दूर तक आये। श्रावक भी बड़ी
ा में सन्मुख आये थे। यहां भी स्वमति अन्यमति लोग बड़ी
ा में पूज्य श्री के व्याख्यान का लाभ उठाते थे और मुनि श्री
चन्द्रजी स्वामी इत्यादि भी आपके व्याख्यान में पधारते थे।
श्री यहां १४ दिन ठहरे थे।

वहां से विहारकर श्रीजी महाराज पोरबंदर पधारे थे और
के सदुपदेश से पोरबंदर वासी जैन अजैन प्रजा

सुंदर असर डाला था। मांगरोल, पोरबंदर और वेरावल के श्
के धर्म-प्रेम की पूज्य श्री ने अत्यन्त प्रशंसा की थी। और श्
काओं का ज्ञानाभ्यास बहुत संतोषकारक देख उन्हें आनं
हुआ था। स्त्री शिक्षा की ओर विशेष लक्ष देना चाहिये और
जैन-धर्म के रहस्य बहुत सुंदर रीति से समझाने चाहिये ऐसी
श्री की मान्यता थी।

पोरबंदर से अनुक्रमशः विहार करते भाणवड़ हो
महाराज जामनगर पधारे और वहां एक मास तक स्थिर
जामनगर के शास्त्र के ज्ञाता श्रावकों के साथ की चर्चा मे
श्री को बड़ा आनन्द आता और पूज्य श्री के प्रताप से श्राव
ज्ञान में भी बहुत अभिवृद्धि हुई थी।
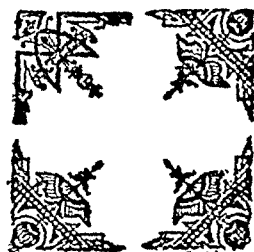
अध्याय २७ वाँ ।

मोरवी का मंगल चातुर्मास।

कुँए में हाथी ।

मोरवी के नामदार महाराज साहिब और श्रावकों के बहुत समय
त्याग्रह और इच्छाएं बहुत दिनों में सफल हुई । संवत्
६ का चातुर्मास मोरवी में हुआ, पाईलेट की तरह पहिले कितने
ाण्य पधारे थे जो जैनशाला में ठहरे थे। पूज्य साहिब का स्वागत
वद्ध श्रावक श्रविकाओं ने सन्मुख जाकर किया था, वे मंदिर-
भाइयों की धर्मशाला में ठहरे थे। जैनशाला के मकान में तथा
दूसरे भव्य मकान में मेरे लिये कुछ रिपेअर-काम हुआ यह सुन
श्री बड़े दिलगीर हुए और उसमें उतरे हुए शिष्यों को [illegible]
ये दोनों मकान चातुर्मास के लिये अकल्पनिक होने से [illegible]
ालजी मोनाजी के मकान में पधारे, परंतु [illegible]
वान और दर्शनार्थ बड़ी भारी गिरदी होने लगी।

मोरवी में पधारते ही पच्चीस लाख गाथाओं की स्वाध्याय करना
धारा था, बहुत समय तक पूज्य श्री एकांत में स्वाध्याय [illegible]
मस्त रहते थे। मोरवी के दो हजार तो संघ के ही [illegible]

के उपरांत मंदिर मार्गी तथा अन्य जैनेतर प्रजा भी व्याख्यान लिये आतुर थी, इन सबको लाभ मिले इसलिये बड़े मकान आवश्यकता थी जो रा० रा० हेमचंद रामजी भाई महेता एल० ई० इंजिनियर के सख्त श्रम से सफल हुई, उन्होंने महाराज श्री अर्ज कर दरबारगढ़ के पास के स्कूल के विद्यार्थियों को दूसरे मका भिजवाया। और स्कूल में पूज्य श्री ने चातुर्मास किया।

यह चातुर्मास इतना सफल हुआ कि, वृद्ध से वृद्ध श्रावकों मुंह से मैंने सुना कि, ऐसा चातुर्मास हमारी जिंदगी में हमने देखा। इन वृद्धों में से एक संघवी सांकलचंदजी कि, जो रतलाम पदवी के महोत्सव के समय भी हाजिर थे, वे समय २ पर कहते कि, कुँए में हाथी किसने डाल दिया' अर्थात् मोरबी जैसे कोने पड़े हुए ग्राम में पूज्य साहिब जैसे प्रसिद्ध विदेशी मुनिराज का चातुर्मा कैसा सफल हुआ ? विशेष आनंद की बात तो यह थी कि, दर्श निमित्त आने वाले तमाम श्रावकों का स्वागत करने का तमाम एक ही सद्गृहस्थ सेठ सुखलाल मोनजी ने उठा लिया था देशावरों से आने वाले स्वधर्मियों की स्वयंसेवक सब सहूलि कर देते थे, इतना ही नहीं, परंतु मोरबी के नगर-सेठ स्वयं सेठों के साथ हमेशा मिहमानों के निवास स्थानों पर उनकी लेने पधारते और भिन्न २ गृह का निमंत्रण दे कृतार्थ होते थे

ात् १९६८ के आषाढ में मोरवी में कालेरा का उपद्रव प्रारंभ
कितने ही श्रीमंत ग्राम छोड़ कर बाहर जाने की तैयारी में थे,
ज्य साहिब के पधारने से यह बीमारी नरम होगई थी। एक दिन
समय खिड़की के पास स्वाध्याय करते पवन बदला हुआ देख
कृतिक परिवर्तन का अनुभव रखने वाले पूज्य साहिब ने समीप
हुए मनुष्यों को तुरंत समझाया कि, यह पवन का परिवर्तन
की आशा दिलाता है ऐसे समय श्री शांतिनाथजी के जाप से
ाह शांति हुई है मित्र—मंडल के साथ युवावर्ग बहुत रात तक
ी के पास धर्मचर्चा कर धर्मज्ञान बढ़ाते थे। दूसरे दिन सोम-
ी रजा होने से श्रीशांति जाप की योजना की गई और ५१
ियों से उसी स्कूल में नीचे के शांत भाग में बरोबर बजे १२
ायिक ग्रहण कर जाप करने की खानगी सूचना इस पुस्तक के
 को मिली। परिणाम स्वरूप बारह का डंका लगते ही श्री शांति-
 का जाप प्रारंभ हुआ सवालाख जाप होने के पश्चात्
साथ मिल कर पूज्य श्री के पास मंगलिक सुनने गये।
जाप के समय की शांति और अलौकिक दृश्य तथा पवित्र
दोलन के फव्वारों ने उपस्थित सज्जनों के मस्तिष्क को
ना अधिक तर कर दिया कि, वे अपनी जिंदगी में ऐसा
ान प्रथम ही है और अपूर्व है ऐसा कहते थे। शुभ
ाम सब साधकों को नारियल दिये थे, पूज्य श्री के अ

धिक पवन बदलते बीमारी शांति हो गई और उच वर्ण से तो
भी भोग लिये बिना बीमारी भग गई।

अपनी जन्मभूमि में सद्भाग्य से प्रारंभ हुए उपदेशामृ
पान करने को लेखक भी चातुर्मास दरम्यान मोरबी रहा
देश के रिवाज मुताबिक मुझे वाकिफ करने के लिये पूज्य
चिताया था, उस मुताबिक पूज्य श्री प्रसंगोपात्त से की हुई विन
सहर्ष स्वीकृति देते थे। पूज्य श्री की वाणी इतनी मिष्ट और सर
कि, बोली हिन्दी होते हुए भी अपढ़ बाइयां भी बराबर समझ
थीं एक समय गोचरी के समय एक दरजी ने पूज्य श्री को अपने
पधारने बाबत आग्रह किया, मोरवी कि, जहां पर छः सो घर
के उपरांत बाणियां सोनी बाणियां कंदोई और ब्राह्मणों इत्या
बड़ी संख्या बसी होने से दरजी के वहां अपने धर्मगुरु वहरने जा
जरा इस तरफ गौरवपूर्वक न गिना जाता है ऐसा समझ पू
ने फिर ऐसे वर्णों की गोचरी खासकर न की, राजकोट में भी
सम्बन्धी सहज अर्ज की थी। इसके फल स्वरूप में शुद्ध वैष्ण
पूज्य श्री के पास बैठ उनके कपड़े का स्पर्श करने में नहीं हिचकते

मोरवी की अनुकूलता अनुसार सुबह साढ़े छः बजे एक
व्याख्यान प्रारंभ कर देते थे और पूज्य सवा सात से नौ ब
अखंडधारा से उपदेशामृत बरसाते थे, जैन और जैनेतर प्रजा

में से अपने ग्रहण करने योग्य बहुत ले जाते और लोग
ठ से कहते थे कि, यहां तो अभी 'चौथा आरा' वर्तता है।
म्बूचरित्र के ऊपर का पूज्य श्री का व्याख्यान हमेशा थोड़े
मनुष्यों की आंख तो गीली कराता ही था, चलती मां चीलती,
ो पापड, उदयपुरना राणाओ, जोधपुर के महाराजाओ, जैपुर के
राज पर एक कवि की लिखी हुई हुंडी, कच्छ के लाखा फुलाणी
ादि असरकारक तथा ऐतिहासिक दृष्टांतों से श्रोताओं पर बड़ा
ी असर होता था और व्याख्यान का लाभ चूकने वाले अपने
राय कर्म के लिए दिलगीर होते थे ! श्रावकों की दुकानें ते
ख्यान बाद ही खुलतीं थीं।

बनावटी और कल्पित कथाओं के वे कायर नहीं थे, सत्य कथा य
वहां तक अपने अनुभव में आई हुई या ऐतिहासिक दृष्टांतों
पूज्यश्री अपने सिद्धान्तों को पुष्टि देते थे। उन्होंने अपने काठियावा
प्रवास में इसके प्राचीन अर्वाचीन इतिहास का अभ्यास किर
, भिन्न २ राज्य के अनुभवी अमलदार और विद्वानों से काठियावा
कीर्त्ति का पान किया था। मैं हमेशा एक घंटे भर पूज्यश्री
तिहास पढ़कर सुनाता था- प्रसिद्ध वक्ता रा० रा० दफ्तरी मगनला
ाधना, नामक पुस्तक समझाते और देशाई वनेचंद राजपाल जै
ोमन्त श्रावक दोपहर की निद्रा को एक तरफ रख दोपहर को १
२ बजे तक इतिहास इत्यादि के पुस्तक पढ़कर सुनाते थे

हमेशा खस की टट्टी के पवन में दोपहर में विश्रान्ति लेने वाले
को याद न कर पूज्यश्री के प्रताप से खरी दोपहर में पढने
हो जाते थे, उनकी सुपत्नी अ० सौ० नानूबाई तथा उनकी
विलासी पुत्रियां भी पूज्यश्री की सेवा कर विविध रीति से
श्रद्धि करतीं थीं, गोंडल सम्प्रदाय की आर्याजी मणीबाई ने
को सूत्र सिखाये थे, मारवाड़ी श्रावक श्राविका दर्शन करने
उनके लिये पूज्यश्री के सामने प्रथम पंक्ति में ही जगह रिक्त
जाती थी और देशाई वनेचंद भाई जैसे आने वाले श्रावकों
हो सन्मान कर आगे बिठाते थे, श्रीमती नानूबाईने निडर हो
श्री से कह दिया था, कि " मारवाड़ी श्रावकों को आप चाहे
दृढ सम्यक्त्व धारी गिनो परंतु उनमें सैकड़ा ९० तो गले में
में या किसी जगह डोरियां या तावीज बांधने वाले हैं, श्री
देव की श्रद्धा या सम्यक्त्व के मादलिये ही धारण किया तो
कहना नहीं है परंतु जो दूसरों के हों तो स्वधर्म पर उनकी
श्रद्धा या विश्वास नहीं है ऐसा हम मानेंगे। श्रीमती नानु बाई की
प्रसंगोपात्त पूज्यश्री की स्तुति संस्कृत काव्य बना कर कहतीं और
लाभ लूट सकतीं थीं लूटती थीं। पूज्यश्री साहिब ने उनके शास्त्री
से मुनिश्री चांदमलजी इत्यादि को संस्कृत का अभ्यास करा

पूज्यश्री पंद्रह साधुओं सहित चातुर्मास रहे थे। पूज्यश्री का
मंडल स्वाध्याय और ध्यान में इतना अधिक लीन रहता

उनमें से दो चार को भी कभी एकत्रित हो गप्प सप्प मारते व्यर्थ हंसी दिल्लगी करते हमने नहीं देखा। स्वाध्याय और शास्त्र की धुन लगी रहती थी। संध्या को प्रतिक्रमण किये बाद ज्ञान और प्रश्नोत्तरों की धूम मचती थी। प्रतिक्रमण पूर्ण होते ही जैनश के विद्यार्थी पूज्य श्री को वंदना करते, और सब हाथ जोड़ बोलते थे। पूज्य श्री को प्रिय नीचे की स्तुति हमेशा की जाती उस समय पूज्य श्री नयन मूंद उसमें तल्लीन हो जाते थे। पूज्य उसे कंठस्थ याद किया था और पूज्य श्री के साथ वाले मुनि ने भी इस स्तुति को कंठाग्र करालिया था।

गुणवंती गुजरात (यह राग)

जयवंता प्रभु वीर, अमारा जयवंता प्रभु वीर।
शासन-नायक धीर, अमारा जयवंता प्रभु वीर।

शास्त्र सरोवर-सरस आपनुं, तत्व रसे भरपूर।
तेमां न्हानां तरतां नित्ये, शुद्ध थाय अम उर। अमारा

सात्विक भावे जेह प्रकाश्युं, वास्तविक तत्व-स्वरूप।
आस्तिकतामां रमिये एथी, आनन्द थाय अनूप। अमार

आप प्रकाशित ज्ञान-बगीचे, खील्या छे बहु फूल।
सुगंधी वायुनी सरस लहरथी, अमे छीए

आप विशाल-विचार भूमिए, उछर्या कल्प अंकूर।
रस-भर तेना फल चाखीने, रहीशुं आप हजूर। अमारा-

नाम आपनुं निशिदिन ध्यारूं, रमी रह्यू अम उर।
तेनी खातर प्राण अर्पवा, अपने छे मंजूर। अमारा-

मार्ग बतावा अम ऊपरजे, कर्यो महा उपकार।
अर्पण करिये सर्व तथापि, थाय न प्रत्युपकार। अमारा-

चरण आपनां शरण हमारे, मरण जन्म भय दूर।
(रत्नचन्द्र) जेम लोभी चातक, तेम दर्शन आतुर। अमारा

—शतावधानी पं० रत्नचन्द्रजी

जैन शाला के विद्यार्थी कि जिनपर पूज्य श्री का बड़ा भाव
था वे विद्यार्थी पास के चित्र में देख सकेंगे।

नामदार मोरवी महाराज साहिब के समीप के सम्बन्धी शि
सिंहजी व्याख्यान में समय २ पधारते थे उनका निम्नांकित काव
उनके भाव की खात्री देगा।

कवित्त।

मालवदेश पवित्र करी श्री मुनीशजी, मोरबी मांहि पधा
मोरबी संघ तणी जोड़ लागणी दीनदयाल दिले हरषा

श्रीलालजी स्वामी छो विद्या विशारद शास्त्र तणा प्रभु पारने पाम्य
अधम उधारी करीने कृपा मुनि आशिर्वाद अनेक पाम्या ।
महान् आभार 'मयुरपुरी' संघ आपतणो स्वामी दिलमां माने-
दर्शन आप तणां शिष्य-मंडली साहित थयां घणे पूरव दाने ।
एवा ग्रहरूप शिष्य संघाते चन्द्र-तुल्य गुरु पूर्ण-प्रकाशी ।
मोरवी संघ हृदय कुमुदो दर्शन थी प्रभु थाय विकाशी ।
पावन करी भूमि पाद—पद्मथी सहज दयालु दया दिले लावी
धर्मांकुरो करो जीवित, उपदेशामृत—वारि वरसावी ।
एज इच्छ आगमनथी आपना कल्याण-कारक अम उर भावी ।
संसार-सागर तारो 'शिव' कहे अरिहंत अरिहंत मुख भजावी ।
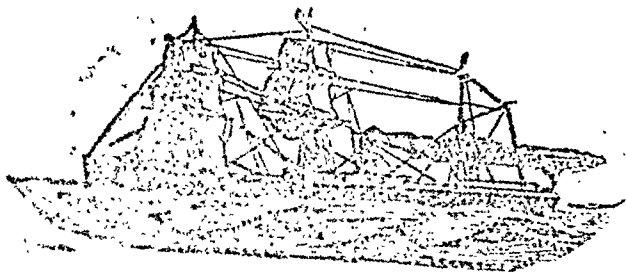
अध्याय २८ वाँ ।

मोरवी में तपश्चर्या-महोत्सव।

सोमवार था रजा (अवकाश) के दिन मोरवी में मुनियों के पास जैन और जैनेतर विद्वान् वकील और अमलदार ... कर ज्ञान चर्चा चलाते थे और हेडमास्टर तथा राज वैद्य उपरांत महामो पाध्याय साक्षरोत्तम श्रीयुत शंकरलाल माहेश्वर भी प्रसंगोपात्त पू० श्री के पास आते थे ।

पूज्य श्री के पधारने से हैजा बिल्कुल बंद होगया इसलिये तमाम नगर निवासियों की पूज्यश्री की ओर पूज्य-बुद्धि होगई और ... वृद्ध सबकी यह मान्यता थी कि, महात्माओं के पधारने से ही यह दुःख दूर हुआ। मार्ग में निकलते तब राजा महाराजाओं को भी नहीं ऐसा आन्तरिक मान सब कौम और सब धर्म के मनुष्यों की ओर से आपको मिलता था। तपस्वी मुनि श्री छगनलालजी ने ६१ उपवास किये थे ऐसी तपश्चर्या मोरवी में प्रथम ही होने से श्रावकों में भी अत्यंत उत्साह था। सुबह और दुपहर दोनों व्याख्यान के समय लगातार ६१ दिनतक प्रभावना अखंडित शुरु रही जिसमें सच्चा प्रभाव तो यह था कि, प्रभावना के लिये किसी को कुछ कहना न पड़ता था।

रणे के दिन पूज्य श्री तपस्वीजी के साथ गोचरी पधारे थे और चार घंटे तक फिरकर बीच में किसी गृह को न टालते सूझता मिला हुआ आहार पानी ले सबको लाभ पहुंचाया था। कितने ही मनुष्यों ने पारणे का प्रथम लाभ मुझे मिले तो मैं अमुक प्रतिज्ञा करता हूं ऐसी पूज्य श्री से विनय की थी परंतु पूज्य श्री तो पक्षपात त्याग कर रंक श्रीमंत सबके यहां पधारे थे।

तपस्वीजी के दर्शन करने के लिये देशावारों से कई श्रावक एकत्रित हुए थे। उनका योग्य स्वागत हुआ था, तपश्चर्या के पूर अंतिम दिन संवर पौषध अनेक हुए थे, और पारणे के दिन उत्सव जैसा दृश्य था। जीवों को अभय-दान दिया गया लूले लंगड़े जानवरों को गुड़ खिलाया गया और अनेक प्रकार के दान पुण्य हुए। जीव-दया का फंड हुआ था जिससे कई जीवों को शांति पहुंचाई थी।

पूज्य श्री का शिष्य-मंडल हमेशा संयम से सम्बन्ध रखने वाली क्रियाओं और स्वाध्याय में तल्लीन रहता था और परदेश में पत्र व्यवहार करना अकल्पनिक होने से ज्ञान चर्चा के सिवाय अन्य प्रवृत्ति में पड़ने का कोई कारण ही न था।

प्रतिक्रमण किये पश्चात् खास दोष या पाप के प्रायश्चित्त के लिये साष्टांग नमन हुए बाद दोनों हाथ जोड़ शुद्ध हृदय से आत्म-विशुद्धि की औषधी की याचना होती थी और पूज्य श्री

मोरवी के उस समय के नगर सेठ अमृतलाल वर्द्धमान की नम्रता और कार्य–दक्षता की पूज्य श्री तारीफ करते और मोरवी संघ का अनुकरण करने के लिये वे सबको उपदेश देते थे। पांच सौ घर का वृहद् श्री संघ फक्त एक ही अगेसर की आज्ञा चले सका अनुभव पूज्य श्री को मोरवी में ही हुआ। नगरसेठ की प्रमुखता के नीचे दूसरे चार सभ्य श्रीसंघ की ओर से चुने हुए रहते हैं इन पांचों को सब सत्ता दे रक्खी है ये पंच जो करें वह सकल संघ (पांच सौ घर ही) मान्य करता है।

अजमेर से राय बहादुर सेठ छगनमलजी भी मोरवी में पूज्य श्री के दर्शनार्थ पधारे थे और अपनी तरफ से स्वामी वत्सल कर एक ही स्थान पर सब भाईयों के दर्शन का लाभ लिया था। उस समय सेठ वर्द्धमाणजी पीतलिया भी वहां उपस्थित थे उन्होंने भी सक्कर की लहाणी कर लाभ लिया था। दर्शन करने आने वाले दूसरे २ श्रीमंतों ने भी जीव–दया इत्यादि में अच्छा खर्च किया था।

पूज्य श्री ने एक दिन 'जुवार के मोती बनने' का दृष्टांत दिया था। उस समय का लाभ ले मेरे रिश्तेदार ने सजोड़ शीलव्रत का स्कंध लिया था और इस धार्मिक वृत्ति की खुशी में 'नवकारसी' का जीमन करने का हमें अवसर मिला था पूज्य श्री को प्रातःकाल के समय आज्ञा देने का मुझे सौभाग्य प्राप्त होता था और इसी

। कुछ न कुछ त्याग व्रत का भी लाभ मिलता था पूज्य श्री
तुर्मास में चारों स्कंध मुझे कराये थे और आत्म प्रशंसा के
मुझे माफी दी जायतो मुझे यहां कहना ही पड़ेगा कि, पूज्य
मुझे विशेष प्रवृत्तियां त्याग निवृत्तिमय जीवन बिताना सिखाया
विस्तार वाला कुटुम्ब और विशाल व्यापार होने से दौड़ादौड़
पड़ती थी, परन्तु पूज्य श्री की अमिदृष्टि से इस चातुर्मास
आराम के साथ आनन्द का अनुभव लिया था। पूज्य श्री के
व्यान में हमेशा कुछ न कुछ नया ज्ञान मिलता था। शास्त्रों के
सरल कर खूबी से समझाते और बीच २ में काव्य और
तों से ऐसा अद्भुत रस उत्पन्न होता था कि, चाहे जितनी देर
ाय तो भी उठने की इच्छा न होती थी।

पूज्य श्री के विहार के समय का दृश्य मुझे जीवन पर्यंत याद
गा, बाजार में उच्च स्वर से 'जय २' के गगन भेदी आवाज
र 'घणी खम्मा' के मारवाड़ी पुकार जो बड़े २ महाराणाओं
सवारी में भी न सुने जांय पूज्य श्री की कीर्त्ति को प्रसारित करते
। मारवाड़ी स्त्रियाँ जहां पूज्य श्री के पांव गिरे हों वहां की रज खोले में ले
र चढ़ाती और मानो वह अमूल्य प्रसाद हो साथ ले जाने के लिये
ाल में बांधती थीं, पूज्य श्री ने मोरबी को इतना अधिक अ
ा दिया था कि, पूज्य श्री मो से विदा होते समय सं
धक श्रावक आंखों से अश्रुपात करते थे। नगरसेट कि

वर्द्धमान को तो मूर्च्छा तक आगई थी, मेरे पिता दो चार दिन
जीमे भी न थे और पीछे २ सनाला, टंकारा, तथा जामनगर
गये थे। स्वर्गवासी इंजिनियर गोकुलदास भाई भी सनाले में पू
से विदा होते रोने लग गए थे। इन सरलस्वभावी भोले भक्तों
फिर से लाभ देने के लिये काठियावाड़ में विशेष ठह
की इच्छा थी परन्तु वह पार न पड़ी।
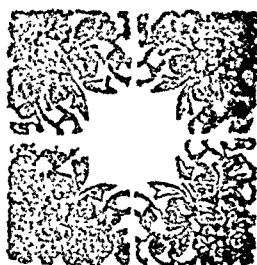
श्री मोरवी जैनशाळा—मास्तरो अने कार्यवाहको पूज्यश्री पासे धर्मशिक्षण श्रवण करे छे. परिचय—प्रकरण २७.

काठियावाड़ के दूसरे शहरों की तरह यहाँ भी पूज्यपाद ही
ख्यान दें, यह पहिले दिन ही ठहराव हो चुका था इसीलिये प्रभात
व्याख्यान होता था। वहां हम पूज्यपाद की वाणी को सुनने
रहते थे। किसी समय जब पूज्य श्री मुझे फरमाते, तब मैं
विषय पर बोलता था। सभा में बाइयों और भाइयों से
खूब भर जाता था। लोगों को पूज्यश्री की वाणी इतनी रु
थी कि, दो तीन घंटे तक या इससे भी अधिक समय तक
होता रहता था। तोभी किसी की इच्छा जाने की नहीं
और भी अधिक व्याख्यान होता रहे तो ठीक, ऐसी प्र
जिज्ञासा रहती थी। व्याख्यान में शास्त्रीय तात्विक उपदेश के
ऐतीहासिक दृष्टान्त बड़े प्रमाण में आते, उनका शास्त्रीय वि
साथ ऐसा मिलान किया जाता कि, श्रोतृगण उस समय त
बन जाते और करुणारस समय में अश्रुप्रवाह झरने लग जा
तथा वीर रस के समय रोमांच खड़े हुए दृष्टिगत होते थे। व्या
की इस शैली से क्या जैन क्या अजैन सब इतने फिदा
कि, दूसरे दिन सुबह कब हो कि, फिर से व्याख्यान प्रारंभ हो
ख्यान का मार्ग हर एक आतुरता से देखता था, सत्रह दिन ह
रहे, उनमें प्रथम से अंततक वृद्धिगत उत्साह देखने में आया।

हम गए उसी दिन पूज्यश्री ने फरमाया कि, मुझे चंद्र
सूत्र पढ़ना है। मैंने कहा आपको पढ़ाने योग्य मैं नहीं।

ने गुरुमुख से सुना है तो मुझे पढ़ाओ। मेरा यह नियम कोई भी सूत्र एक समय किसी से पढ़ फिर स्वतः पढूं जिसमें द्रपन्नत्ति जैसा शास्त्र गुरुगम से ही पढ़ना ऐसा मेरा इरादा । मैंने कहा, बेशक, आपका आग्रह है तो आप और हम दोनों ढ़ेंगे। उसी दिन से पढ़ना प्रारंभ किया। शास्त्र की एक २ । उनके पास रखते दूसरी एक प्रति टीकावाली लेकर दोपहर बजे से संध्या के पांच बजे तक पढ़ना प्रारंभ रखते थे। । पन्द्रह दिन में चंद्रपन्नत्ति सूत्र पूर्ण किया पूज्यश्री मझ और प्रज्ञा इतनी तो सरस कि, चंद्रपन्नत्ति से भी कदा-कोई गहन विषय हो तो भी वे स्वतः अच्छी तरह समझ लें, दूसरों को समझा दें, परन्तु एक साधारण सूत्र भी आप [illegible]

यह भावना कितने अधिक विनय और विवेक से [illegible] सहज ही ध्यान में आजाता है इसलिये उनकी [illegible] है कि,

" भियाविवादरहिता [illegible]

" प्राचीन या अर्वाचीन [illegible]

कितने ही वृद्ध प्राचीन [illegible] है तो किसे [illegible] नया २ हो इन [illegible] [illegible] हुए हैं। जूना [illegible]

खराब हो उसे त्याग देना यह समझदार मनुष्य का लक्षण है।
पाद पुरानी या नई पद्धति का आग्रह करने वाले न थे, परन्तु
जो मेरा ' इस मंत्र को स्वीकारने वाले होने से वृद्ध
युवावर्ग दोनों को एकसे प्रिय हो गए थे। राजकोट के
का बड़ा भाग धर्म की ओर अश्रद्धा रखने वाला गिना जाता है,
पूज्यश्री के राजकोट के चातुर्मास में नास्तिक कोटि में
युवावर्ग पूज्यपाद की ओर आकर्षित हो आस्तिक बन गया था, ऐसा
जनों के मुँह से सुना है। वाँकानेर में तो मुझे स्वतः को
हुआ है वाँकानेर की पब्लिक (प्रजा) की ओर से पब्लिक-व्याख्यान
के लिये जब मुझ से आग्रह हुआ तब वाँकानेर के जैन यु
स्कूल में आम व्याख्यान देने के लिये व्यवस्था की। वाँकानेर
राज साहिब को भी आमंत्रण दिया। तब दरबार अपने
सहित वहां पधारे। तमाम अमलदार तथा प्रत्येक वर्ग के लोग
सभा खूब भर गई। इस तरफ कुछ अंश में और मारवाड़
विशेष अंश में जूने विचारवाले आम व्याख्यान की पद्धति
नई कहकर ढकेल देते हैं जब पूज्यपाद उस रास्ते से निकले
से स्कूल में पधारने की प्रार्थना की गई, आप स्वयम् वहां
गए इतना ही नहीं परंतु चालू विषय को संजीवन बनाने के
आप इतने सरस बोले थे कि, उसे सुनने वाली सभा एक तान
हो गई थी। पुराने शास्त्रीय विषय की नई शैली से चर्चा

ऐसी खूबी थी कि, पुराने तथा नये दोनों वर्गों को वह रुचि-
। जाती थीं। दरबार तथा अन्य श्रोताओं ने दूसरे दिन फिर
यान के लिये आमंत्रण दिया, तब दूसरा व्याख्यान बीसा श्रीमाली
मशाला में दिया गया था। दोनों व्याख्यानों का असर आम
पर अच्छा हुआ। सारांश सिर्फ इतना ही कि, पूज्य श्री रूढि
गह मान देते तोभी आंतरिक योग्यायोग्य का विचारकर
से आत्मा के श्रेयाश्रेय विचार को अधिक मान देते थे। इसी
नये और पुराने दोनों पद्धति को पसंद करने वाले जल्दी अनु-
हो जाते और पूज्य श्री जिसमें अधिक श्रेय हो उसका अनु-
कर लोगों को लाभ देते थे।

पूज्यपाद का साहित्य पर शौक।

पूज्य श्री जैन-शास्त्र के समर्थ विद्वान् थे। बहुसूत्री, गीतार्थी,
वेत्ता, आगमवेत्ता जो २ उपनाम उन्हें लगाये जाँय वे उनके योग्य
मारवाड़ की ओर मुनिवर्ग में संस्कृत का अभ्यास करने की प्रथा
लित होती तो आचार्य श्री संस्कृत के समर्थ पंडित होते, परंतु
तरफ इसका रिवाज न होने से उनकी यह इच्छा मन में ही
गई थी। बीकानेर में थोड़े दिन के परिचय पश्चात् पूज्य श्री ने
[illegible] किया कि, अपना भावी चातुर्मास साथ हो तो तुम्हारे पास
के [illegible] छोटे साधु को संस्कृत का अभ्यास

और मैं भी संस्कृत के न्याय के पुस्तक सुनूं तथा उन पर विचार
पूज्य श्री की इस दरख्वास्त से मेरे मन में अत्यंत उत्साह
परंतु हमारे सांप्रदायिक कितनी ही रूढियां और श्रावकों की
का बंधन न होता तो एक चातुर्मास तो क्या परंतु प्रति वर्ष साथ
कर शास्त्र-विचार और साहित्य-सेवा का लाभ परस्पर
परंतु वर्तमान समस्या के बाबत तीन कठिनाइयों का विचार
था। एक तो धोराजी और मोरवी के चातुर्मास में हेरफेर
कि, जिसके लिये समय बहुत थोड़ा रहा था दूसरा इसमें
के संघ की और पूज्य श्री की सम्मति प्राप्त करना। तीसरा
ग्राम में रहना वहां के श्रावकों की भी सम्मति लेना चाहिये।
के कारण के लिये तो पूज्य श्री ने यहां तक कहा था कि, मैं
साधु लींबडी भेज कर मंजूरी मंगाऊं और मुझे विश्वास
लींबडी संघ के अग्रेसर मुझे मान देने के लिये
मंजूरी देंगे तो वह कठिनाई दूर हो जायगी, परंतु
एक तकलीफ यह थी कि, धोराजी खाली न रहे और सब
मास मुकर्रर होगए थे, इसलिये वहां जाने वाला कोई न
पूज्य श्री ने कहा कि, तुम्हारे चार ठाणों में से दो ठाणा
पधारें और दो ठाणा मोरवी चलें। मोरवी का चातुर्मास
ऐसा न था, इसलिये एक तीसरी कठिनाई दूर करने की थी
लिये कोशीश की गई परन्तु अन्तराय के योग से इच्छा

। चातुर्मास पूर्ण हुए पश्चात् एकत्रित हो और अमुक र तक साथ रह अभ्यास करना ऐसा विचार मन में धार प्रथम ाढ वद १ को पूज्य श्री ने मोरवी चातुर्मास करने के लिये ानेर से विहार किया और हमने धोराजी की ओर विहार या। मोरवी का चातुर्मास पूर्ण हुए पश्चात् कितने ही कारणों से य श्री का मारवाड़ की ओर पधारना होगया। अंतराय के योग फिर संगम न हुआ सो नहीं हुआ। मनकी इच्छा मन में ही ृगई। इस पर से पूज्य श्री का विद्या की ओर कितना शौक था सका कुछ खयाल हो सकेगा।

मिलनसार वृत्ति।

इस वृत्ति के लिये इस तरफ के कई मनुष्यों के मुंह से मैंने ना है और स्वयं भी अनुभव किया है कि। चाहे जैसा अनजान नुष्य आया हो तो भी वह मानो पूर्व का परिचित ही है उसी ार ह उसके साथ पूज्य श्री बातचीत करते थे। आचार विचार में ाहे जमीन आकाश जितनी भिन्नता हो तो भी दोनों के बीच में ानो तनिक भी भिन्नता न हो बिल्कुल कपट रहित उसके साथ ातचीत करते कि, वह मनुष्य अपने मन में रही हुई भिन्नता को दूर करना अपना कर्तव्य ही समझने लगता था।

गुण-ग्राहकता ।

इस तरफ मारवाड़ के कितने ही साधु आते हैं परन्तु उनमें अपने आचार की विशेषता बताने के साथ दूसरों की निन्दा करने का दोष विशेषता से देखा जाता है । पूज्य श्री में आचार इत्यादि की विशेषता होते भी अपने मुंह से उसे दर्शाना या उसकी महानता कर दूसरों की हलकाई या शिथिलता बताना या किसी की निन्दा करने का स्वभाव बिलकुल भी नहीं पाया गया। उसके प्रतिकूल उनकी गुण-ग्राहक वृत्ति का कई बार परिचय हुआ है । व्याख्यान के समय भी अपने परिचित साधु साध्वी श्रावक या श्राविका कोई गृहस्थ के गुणों का आपको परिचय हुआ हो तो उस गुण के कारण आप अपने मुक्तकंठ से उसकी प्रशंसा करते थे, चाहे वह अन्य रीति से अपने से हलके हों तो भी वे उसके उस गुण को ले उसकी प्रशंसा करने में तनिक भी न हिचकते थे। यह गुण-ग्राहक वृत्ति सचमुच प्रशंसनीय है । इस वृत्ति को हमारे मुनि और श्रावक मान दें तो समाज के क्लेश कितने ही अंश में दूर हो जावें। इन सब गुणों के कारण हमारा सहवास इतना रसमय होगया था कि, विदा होते समय दोनों के हृदय भर गए थे और सहवास के आनन्द बाग में आश्रय लेने का फिर कब समय उपस्थित होगा उसकी सोच करते थे। उस समय थोड़े ही दिनों में फिर मिलने की आशा का आश्वासन था परन्तु " दैवी विचित्रा गतिः "

ारता है और क्या होता है उसी तरह हुआ। विदा होने पर
ारीर रूप से तो इकट्ठे न हुए परन्तु “ गिरौ मयूरा गगने
” इस कहावत के अनुसार जिसका जिस पर प्रेम है वह
दूर नहीं है अर्थात् आंतरिक गुण स्मरण रूप सान्निध्य ही
फिर कभी संगम होगा यह भी आशा अवशिष्ट थी, परन्तु
समाचार ने यह आशा भी निराशा में परिणित कर दी।
सेर्फ उनके गुणों का स्मरण कर उनके लगाए बीजों का
ाकर उन्हें फलने फूलने देना है। उनकी यादगार में सब
देलें तो यह काम करना है कि, सम्प्रदाय में फैला हुआ क्लेश
भी तरह भोग दे दूर करना चाहिये। संयुक्त बल बढ़ा उन-
गाये ज्ञान और आनन्दरूपी बाग में से सुवासित पुष्पों की परि-
सुगंध दिगंत पर्यंत प्रसरती रहे उसमें हाथ बटाना है। पूज्य
के गुण अनेक हैं मुझ में वे सब वर्णन करने की सामर्थ्य
। अवकाश भी कम है अर्थात् इतने ही से संतोष मान पूज्य
की आत्मा को परम शांति मिले, ऐसी इच्छा करता हुआ यहां
ाम लेता हूँ, 'सुज्ञेषु किं बहुना' ॐ शांतिः।
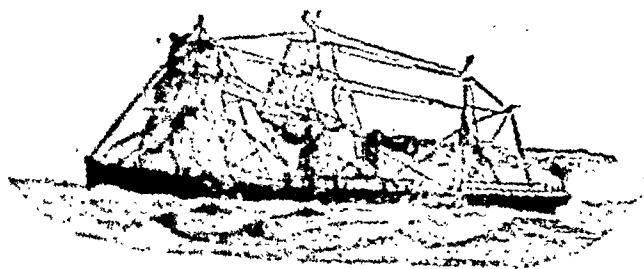
अध्याय ३० वाँ।

काठियावाड़ के लिये दिया हुआ अभिप्राय।

काठियावाड़ में अनुक्रम से विहार करते हुए आचार्य श्री भा
नगर पधारे। रास्ते में अनेक ग्रामों में अत्यन्त उपकार हुआ। भावनग
में उस समय लींबडी सम्प्रदाय के सुप्रसिद्ध वक्ता पं० मुनि श्री
नागजी स्वामी भी विराजते थे। परस्पर ज्ञानचर्चा और वार्तालाप
से आनंद होता था, व्याख्यान एक ही स्थान पर होता था। और पं
श्री नागजी स्वामी वहां पधारते थे। तब उनको योग्य आसना
का सत्कार तथा परस्पर विनय बहुत रखा जाता था। कई सम
पूज्य श्री अपना व्याख्यान बंदकर पं० नागजी स्वामी का व्या
ख्यान सुनने की आतुरता दिखाते और उन्हें व्याख्यान देने
लिये आग्रह करते थे। पंडितजी नागजी स्वामी लिखते हैं कि, हमने
गुणग्राहक साधु दूसरे नहीं देखे। व्याखयान में दृष्टांत देने
सिद्धांत के साथ उन्हें घटित करने की उनमें आश्चर्यज
शक्ति थी और जिससे लोग अत्यन्त आकर्षित होते थे। तथा
का गहन प्रभाव गिरता था, सचमुच कहा जाय तो इस सम्ब

नका अनुभव और सामर्थ्य अधिक थी। दोपहर के समय ज्ञान र्चा होती। उत्तराध्ययन, भगवती, सूयगडांग, इत्यादि सूत्रों सम्ब-धी अनेक गहन चर्चाएं होतीं। तब वे कहते कि, हमें यह बात नई ालूम हुई है, इसलिये आपकी आज्ञा हो तो हम धारण करें व मेशा आग्रह करते कि, आप मालवा मारवाड़ में पधारो, मैं रतलाम क सामने आऊं और साथ २ घूम कर देश का अनुभव कराऊं, ंके विद्वानों के लिये अत्यन्त मान है। हम दस दिन साथ रहे, ज्य श्री अपने विहार का समय किसी को न बताते थे, परन्तु मुझे (नागजी स्वामी) बताया था। मैं पौन कोस तक उन्हें पहुं-चाने गया था। वहां थोड़े समय तक बैठ प्रेम पूर्वक बहुत बातें कीं और जिसतरह अधिक समय से पास रहने वाले विदा होते हैं स तरह गद्गद होते विदा हुए थे। अंत में बतलाना यह है कि, नके सहवास से हमें अत्यन्त आनन्द हुआ। इनकी मिलनसार ाति और दूसरे मनुष्य को आकर्षित करने की शक्ति कोई अलौ-किक ही थी, इत्यादि २।

काठियावाड़ के प्रवास में आचार्य महाराज को अत्यन्त संतोष मिला। वे व्याख्यान में कई बार फरमाते कि, काठिया[illegible] के लोग सरल-स्वभावी हैं। शिक्षा में आगे बढ़े होने से से[illegible] गहन विषयों को अत्यन्त सरलता से समझ सकते हैं। [illegible] अत्यन्त आनंद होता है और मेरा श्रम सफल [illegible]

ओंका अभ्यास देख मुझे अत्यन्त संतोष हुआ है। दूसरे देशों की अपेक्षा काठियावाड़ में जीव–हिंसा बहुत कम होती है और मांसाहार का प्रचार भी कम है, यह संतोषदायक है। काठियावाड़ में विचरने वाले साधु, विद्वान्, मायालु, अवसर के ज्ञाता और विवेकी हैं, वे मारवाड़ की तरफ विचरें तो वे देश को अत्यंत लाभ पहुंचा सकते हैं। पूज्य श्री मारवाड़ मेवाड़ के लोगों से कहते हैं कि, काठियावाड़ इत्यादि वेश्याओं से दूर रहने वाले देश में बसने वाले गृहस्थों के आंगन बालकों के कल्लोल से शोभा बढ़ा रहे हैं। इसलिये वहां दत्तक या गोद लेने के रिवाज या कानून की आवश्यकता नहीं है। भाग्य से ही सैकड़े पांच मनुष्य कम नसीब वाले संतान रहित हैं। अपने देश की तरफ और मारवाड़ की ओर दृष्टि डालो। स... कितने हैं और दत्तक कितने हैं? यह सब अनर्थ वेश्याओं की ... का आभारी है। लग्न जैसे शुभ प्रसंग में भी तुम्हारे परम... उन कुलटाओं के नाच के अपवित्र पुद्गलों से अपवित्र होते रहते... गृहस्थाश्रम में प्रवेश करते कोमल बालकों के समीप ही उनका... कराने में तुम वरघोड़े और मंडप की शोभा समझते हो। इस... तुम विष–वृक्ष रोपकर उसका सिंचन करते हो यह भूल जाते...

संगीत का शौक हो तो घर की स्त्रियों को, बालिकाओं सिखाओ कि, तुम्हें गुलामगीरी में इतना तो आराम मिले ...जी जेल जैसी जन्म कैद में सुख प्राप्त समझो। संगीत का

हो तो प्रभु—भक्ति और परोपकारादि जीवन—कर्तव्य के काठ्य कम हैं ? कि, तुम भ्रष्ट, नीच और सड़े हुए परमाणु वाली नारियों को मकान तथा मंडप में बुलाकर तुम स्वतः अपने और ती स्त्रियों के जीवन तक बिगाड़ते हो ? भाइयो ! चेतजो, मेरे ो सच्ची कहने वाले थोड़े मिलेंगे । बहुत पुण्योदय से मनुष्य- म मिला है । उत्तम क्षेत्र उत्तम गोत्र, और नीरोगी काया ये सब थे न गमाते—एक क्षणमात्र भी प्रमाद न करते, महंगे मनुष्यभव सार्थक करना याद रखियो" ।

पूज्य श्री के प्रभाव से काठियावाड़ में बहुत से सज्जन श्रीजे अनन्य भक्त बन गए थे । जहां २ श्रीजी महाराज ने पदार्पण कया वहां २ के श्री संघ ने अत्यंत हर्षोत्साह से पूज्य श्री की वा—भक्ति की जिससे पूज्य श्री के चित्त में अत्यंत प्रसन्नता हुई, रंतु सम्प्रदाय का परिवार मालवा मारवाड़ में होने से उस ओर धारने की पूज्य श्री को आवश्यकता जची तथा मारवाड़ में वि- चरने वाली आर्याजी ※ श्री नानीबाई की तबीयत अत्यंत खराब

※ वे इस जमाने में एक लब्धिसंपन्न आर्याजी थीं । उन्होंने [illegible] में संसार की विचित्रता अनुभव की थी इस लिये [illegible] २ की आंजी वैराग्य रंग से रंगी हुई थी । वे [illegible] [illegible] से ही लीन रहती थीं, एक माह में भाग्य से [illegible]

हो जाने से एवम् पूज्य श्री के दर्शन की तथा उनके पास से आ
लोयणा प्रायश्चित्त लेने की प्रबलतर अभिलाषा है ऐसी खबर मिल

दिन आहार पानी लेतीं और वह भी नीरस सूत्रों के स्वाध्याय
ही हमेशा तल्लीन रहती थीं। मुझे इनका स्वाध्याय महामंदिर
सुनने का अवसर प्राप्त हुआ था। कितनी ही आर्याजी की आंखें
उन्होंने हाथ फिराकर मिटाई थीं। परंतु यह बात वे प्रकाशित
करने देती थीं, एक आर्याजी की आंखें अनुभवी डाक्टर भी अच्छी
न कर सके थे वे आखें आर्याजी ने अट्ठाई के पारणे के दिन
अपनी जिव्हा फेर कर दीपतुल्य कर दी थीं और उसी आंख
वे आर्याजी व्याख्यान वाचने लग गई थीं। ऐसे २ अनेक चमत्
अनुभव किये हैं परन्तु वे तमाम यहां प्रकाशित कर देने से भं
भव्यजन वर्ग प्रतिकूल अर्थ लगावेगा और शुद्ध संयम तथा तप
के फलस्वरूप ऐसी लब्धियों की इच्छा में रुककर अपना ध्
चूकेगा। इन आर्याजी की संसारावस्था के पति के पूर्व कर्मो
'पत' का रोग लग गया था और इसीसे उनकी मृत्यु हुई थी
कुष्टवद्ध मुर्दे के शरीर को श्मशान में ले जाने के लिये उनके
संबंधी भी न आये थे। नानूबाई ने कइयों से प्रार्थना की परन्तु
किसी को दया न आई तब मुर्दे में असंख्य जीव उत्पन्न हो
भय से आपने हिम्मत धारण कर कछोटा लगा अपने प्राण

पूज्य श्री ने मारवाड़ की तरफ विहार किया और भावनगर से
त थोड़े दिनों के मार्ग से वे धोलका धंधुका हो अहमदाबाद
ार ।

अहमदाबाद में शहर से १-१॥ माईल दूर सेठ कचरा भाई
हरा भाई का बंगला है वहां पूज्य श्री ठहरे थे, परन्तु व्याख्यान
लोग अधिक संख्या में उपस्थित होने लगे तब सेठ केवलदास
भुवनदास के विशाल बंगले में पूज्य श्री महाराज व्याख्यान देने
। व्याख्यान में मंदिरमार्गी भाई भी अधिक संख्या में हाजिर
े थे और महाराज श्री को अत्यन्त भाव युक्त आहार पानी
ाते थे। अहमदाबाद में आचार्य महाराज के दर्शनार्थ मारवाड़
ादि देशावरों से सैकड़ों स्वधर्मी आये थे। जिनका स्वागत सेठ
ाल भाई इत्यादि ने प्रेम पूर्वक किया था।

[illegible] के ठाकुर सरदार देवीसिंहजी रायसिंहजी जो
[illegible], गरासिया और ठाकुर हैं वे दर्शनार्थ आते। और व्याख्यान
[illegible] अत्यन्त संतुष्ट होते थे तथा कई गरासीयों से वे पूज्य श्री
[illegible] करते थे।

[illegible] को पीठ पर उठाकर स्वतः अग्निदाग दे आई थीं। उत्कृष्ट
[illegible] अनुभव का बड़ा भारी कृतज्ञ था।

अध्याय ३१ वां

मौलवी जीवदया के वकील

जोधपुर (चातुर्मास) पूज्य श्री के व्याख्यान में स्वमती अन्यमती बड़ी संख्या में उपस्थित होते थे। सरकारी तोपखाने के कर्त्ता माली नानूरामजी कि जो पूज्य श्री के परम भक्त हैं उन्होंने करीब २०० राजपूत लोगों को उपदेश दे उनमें से कितनों से जीवन पर्यंत शिकार छुड़ाया था और कइयों से अमुक वर्ष तक तथा कइयों से अमुक २ दिनों के लिये शिकार बंद कराया था।

जोधपुर के मौलवी सा० सैयद आसदअली M. R. A. (लंडन) F. T. C. कि जो राज्य में बड़े ओहदेदार थे वे नानूरामजी माली के साथ पूज्य श्री के पास आये। व्याख्यान सुन कर बड़ा आनंद हुआ और एक ही व्याख्यान से ऐसा असर हुआ कि, उन्होंने जिंदगी भर के लिये मांस भक्षण का त्याग किया तथा परस्त्री का त्याग किया और घर की स्त्री की मर्यादा की। मौलवी साहिब के साथ दूसरे भी पांच मुसलमान भाइयों ने जीवन पर्यंत मांस खाना छोड़ दिया था। मौलवी साहिब के और श्री नानूरामजी साहिब के संयुक्त प्रयाससे करीब १५० मनुष्यों

पूज्यश्रींचे मुसलमान भक्त.

मौलवी सैयद आनन्द अली M. R. A. S. (लंडन)
F. T. S. जोधपुर.

यहां चातुर्मास करने को पूज्य श्री पधारे इसके पहिले पू
शेषकाल में भी पधारे थे। उस समय जोधपुर के धर्म-परायण सु

खातिर तवज्जो करें ? तब सैयद आसदअली साहिब ने कहा
यहां सैकड़ों गायें कटती हैं उन्हें देख मेरा दिल बहुत घबड़ाता
किसी भी तरह इनका कटना बंद हो जाय तो अच्छा हो। अ
आणेज ने कहा कि, मैं बंध कराने की कोशिश जरूर करूंगा। इ
समय में वहां सेग चला और एक अंग्रेज अमलदार ने सेग की
उत्पत्ति का कारण डाक्टर से पूछा जिसके प्रत्युत्तर में उन्होंने
कहा कि, यहां सैकड़ों गायें कटती हैं. इनके परमाणु बहुत अशुद्ध
रहते हैं इसलिये उनसे अनेक प्रकार के विषैले जीव जंतुओं की
उत्पत्ति होजाना संभव है. उपरोक्त अमलदार ने गोवध बंद करा
सब कसाइयों की सद्धी ली सुना है कि, ये महाशय भी फलोदी में श्री
श्रीजी महाराज के दर्शनार्थ आये थे जोधपुर में गोशाला न हं
से मर्जी नानूरामजी ने रु० १०००) की जगह गोशाला के लि
अर्पण कर दी थी "महाराज सुमेर गोशाला" नाम रख
प्रारंभ किया गया और पूज्य श्री के दर्शनार्थ आये हुए गाम
गाम के मिल प्राय: २००० इकट्ठे होगए. जोधपुर कौंसिल
मेम्बर श्रीमान् श्यामबिहारी मिश्र आदि कई सज्जन गोशाला
कार्य में उत्साह पूर्वक भाग लेते थे—इसके सिवाय इस चातुर्मास
करीब दो हजार बकरों को अभय दान दिया गया था,

फिरतमलजी मूथा (चंदनमलजी साहिब के पिता) वे जोधपुर शहर के शनिश्चरजी के मंदिर में संथारा किये बैठे थे। एक समय पूज्य श्री फिरतमलजी मूथा को दर्शन दे पीछे फिरते थे तब जगत सागर तालाब पर एक मुसलमान हाथ में बंदूक लिये पक्षी को मारनें की तैयारी में था उसे श्रीजी महाराज ने दूर से पक्षी की ओर बंदूक तानते देखा तब पूज्य श्री ने बड़े आवाज से बुलाया " ओ अल्ला के प्यारे ! खुदा के प्यारे ! खुदा के प्यारे ! खामोश ! खामोश ! वह आवाज सुन । वह मुसलमान इधर उधर देखने लगा दूर से साधु को आता देख उसने संतोष पकड़ा. पूज्य श्री बिल्कुल समीप पहुंचे तब उसने नमस्कार कर कहा कि ' महाराज ' मेरी स्त्री बीमार है और उसकी दवा के लिये इस धनंतर पक्षी का मांस हकीमजी ने मंगाया है इसलिये उसे मैं मारता था । उस समय बहुत थोड़े में परंतु बड़े प्रभावोत्पादक बोध वचन श्री जी महाराज ने उस मुसलमान से कहे इसलिये इससे उसका कुछ हृदय पिघल गया परंतु उसने कहा कि, इस पक्षी को तो मैं अवश्य मारूंगा कारण न मारूं तो शायद मेरी स्त्री के प्राण न बचें । तब पूज्य श्री ने कहा कि " हम फकीर हैं हमारे वचनों पर विश्वास [illegible] तुम इस पक्षी की जान बचावोगे तो अच्छे कार्य का अच्छा [illegible] तुम्हें मिले बिना न रहेगा। दूसरों को सुख देने से [illegible] आप सुखी हो सकता है. इतने पर से वह मुसलमान महार [illegible]

आज्ञा सिर चढ़ा पत्तों को अभय दान दे अपने घर गया और बिना दवा किये ही उसकी स्त्री की तवियत सुधर गई. जिससे उसे अपार आनंद हुआ। और महाराज श्री के पास आकर कहने लगा कि, आपकी कृपा से मेरी स्त्री को आराम हो गया है—आप सच्चे फकीर हैं फिर वह मुसलमान जीव मारने की सौगंध महाराज से ले कृतकृत्य हुआ।

इस चातुर्मास में तपश्चर्या भी बहुत हुई. तपस्वीजी श्री छगनलालजी महाराज ने ६५ उपवास पन्नालालजी महाराज ने ४१ उपवास किये थे सती श्री सौभाग कुंवरजी ने ५१ उपवास किये थे तपस्वीजी सतीजी श्री नानकुंवरजी ने चार माह में १० दिन आहार लिया था पूज्य श्री ने तथा अन्य साध्वियों ने एकान्तर आदि विविध प्रकार की तपश्चर्या की थी।

तपस्वीजी महाराज छगनलालजी के ६५ उपवास के पारणा के दिन पूज्य श्री सरूपचन्दजी भंडारी के घर गोचरी गए भंडारीजी का पुत्र गौरीदासजी चार वर्ष से वाने के दर्द से पीड़ित थे उनसे बिल्कुल चला भी न जाता था। दो मनुष्य उनकी भुजाएं पकड़ पूज्य श्री के पास मेड़ी पर से नीचे लाये, गौरीदासजी को पूज्य श्री के दर्शन करते बड़ा प्रेम उत्पन्न हुआ गद्गद स्वर से वे पूज्य श्री के दर्शन कर कहने लगे महाराज। मैं चार २

से दुखी हूं मेरे जिसे मेरे पिताने दवाई में हजारों रुपये खर्च दिये हैं परन्तु आराम नहीं हुआ। तब पूज्य श्री ने कहा कि, ई त्याग दो नवकार मंत्र गिनो और श्रद्धा रक्खो। उसी दिन उन्होंने दवाई छोड़ दी और नवकार मंत्र गिनना आरंभ किया दे दी समय में उन्हें बिलकुल आराम होगया और वे पूज्य के व्याख्यान में पांव २ चलकर आने लग गये थे। पहिले णव-धर्म पालते थे परंतु पूज्य श्री के सदुपदेश से सब कुटुम्ब -धर्म पालने लग गया।

इस तरह जोधपुर के चातुर्मास में अनेक उपकार हुए। जोधपुर इस चातुर्मास का ध्यान दिलाने के लिये कायस्थ ज्ञाति के एक जैन डाक्टर रामनाथजी कि, जो अभी गढ़झालोर में हैं अपने मनः के शब्दों में लिखते हैं।

पूज्य श्री १००८ श्री श्रीलालजी महाराज का चातुर्मास मारवाड़ के मुख्य नगर जोधपुर में हुआ, उस समय इस दास को भी आपके दर्शन व सत्संग और उपदेश सुनने का गौरव प्राप्त हुआ। आपकी शांति, चित्त-शुद्धि और तपश्चर्या के परमाणु का प्रभाव इतना जबरदस्त पड़ता था कि, श्रोता लोग हर्षरूपी सुधा-समुद्र में लहराते हुए मानों तुरियावस्था का आनंद प्राप्त करते थे।

आपके सदुपदेश का लाभ उठाने की आकांक्षा के
नियत समय से पहिले ही राज्य के उत्साही कर्मचारी, पंडित
और व्यापारी समूह का मेला प्रातःकाल और सायंकाल ...
भर जाता था शरीर में खेद भी उन दिनों था परंतु इसका ...
पुतला व्याख्यान के समय तनिक भी विचार न कर आप समय ...
बराबर उपदेश फरमाते आपके उपदेश श्रवणार्थ केवल हिन्दू ...
नहीं किन्तु कई मुसलमान भाई भी लाभ उठाते और जीव-हिंसा
पर घृणा प्रकटकर "अहिंसा परमोधर्म" के अटल सिद्धान्त पर
विनय करते और अंगीकार कर स्वयं लाभ उठाकर ऐसे परोपकारी
योगीजनों के गुणाऽनुवाद गाकर धन्यवाद देते थे। आपके जोधपुर
विराजने से जो २ लाभ देश को, स्त्री पुरुषों को हुए हैं उनका
प्रकट करना तुच्छ लेखनी की शक्ति के बाहर है किन्तु इतना तो
स्पष्ट है कि:—

(१) कई अधिकारी आत्माओं का संशय दूर होकर जी...
...या पर परिपूर्ण विश्वास हुआ और कई पुरुषोंने बिना छाणा जल
...त्रि भोजन और जमीकंद इत्यादिकों को निशिद्ध समझ उनके त्याग
... लाभ उठाया।

(२) कई मांसाहारी क्षत्रियों और अन्यमती लोगों ने
...कार करना छोड़ दिया।

(३) इस दास को भी श्री श्री श्री १००८ श्री पूज्य वैकुंठ-
महाराज के उपदेश से उस साल ५१ मांस खाने वालों से
इलाज में आये) मांस के दोष दिखाकर उसका बुरा असर
हृदय व कलेजे पर होता है ऐसा समझा छुड़ाने का शुभ
र प्राप्त हुआ।

(४) मेरे मित्र सैयद अमदअली साहिब एम. आर. ए.
(जो जोधपुर में मुसलमान होते हुए भी हिन्दुओं में सर्व
हैं और खुद भी मांस भक्षण नहीं करते) ने भी महाराज के
श से कई मुसलमानों का मांस छुडवाया और उन दिनों घास
कमी में जो लूली, लंगड़ी, दुःखित गौ माताएं बिना रक्षक के थीं,
स्थान मुकर्रिर कर उनके कष्ट मिटाने का प्रबंध किया।
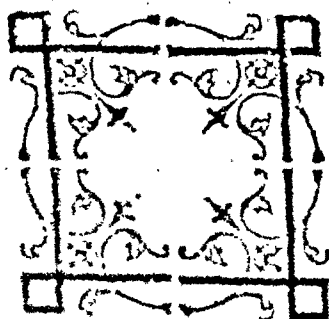
अध्याय ३२ वाँ ।

विजयी विहार ।

जोधपुर से अनुक्रमशः विहार करते पूज्य श्री नयेनगर पधारे वहां मुनि श्री देवीलालजी स्वामी का मिलाप हुआ जब काठियावाड़ पूज्य श्री विचरते थे तब जावरा वाले संतों के सम्बन्ध में पूछता की तो उन्होंने उत्तर दिया कि, मालवा में पधार आप उचित निर्णय करें परन्तु जयपुर के श्रावकों ने भीजी महाराज से जयपुर पधारने की प्रार्थना की थी उसके उत्तर में उन्होंने जयपुर पधारने के लिये कुछ आश्वासन दिया था इसलिए उन्होंने जयपुर हो फिर मालवे की ओर पधारने का विचार दर्शाया तब देवीलालजी महाराज ने भी जयपुर पधारने की इच्छा प्रकट की ।

नयेनगर में उस समय पूज्य श्री के पधारने से अपूर्व आनन्दोत्सव छा रहा था पूज्य श्री तथा देवीलालजी महाराज के सिवाय पूज्य श्री धर्मदासजी महाराज की सम्प्रदाय के पूज्य श्री नंदलालजी महाराज ठाणा ५ तथा श्री पन्नालालजी के वलचंदजी महाराज ठाणा ७ तथा आचार्य श्री के मुनिवरों में से मुनि श्रीलालचंदजी शोभालालजी आदि कुल ५४ मुनिराज तथा ३३ आर्याजी उस

वहां विराजती थीं पूज्य श्री की विद्वत्ता विचक्षणता तथा भिन्न २ ाय के छोटे बड़े सब मुनियों के साथ यथोचित वात्सल्यता सम्मान पूर्वक सबको संतोष देने की अपूर्व शक्ति के कारण ार जो आनन्द की वृद्धि और धर्म की उन्नति हुई वह अवर्ण- है ऐसे मौकों पर भिन्न २ मस्तिष्क के संख्याबद्ध साधु होने पर र वात्सल्यता रहना और एक ही स्थान पर व्याख्यान होना सब परम प्रतापी आचार्य महाराज की विचक्षणता और पुण्य ी का ही प्रताप है।

ीजी श्री सुलतानचंदजी महाराज के तपश्चर्या के पूर पर पूज्यश्री के ों वैराग्य युक्त सदुपदेश से तपश्चर्या स्कंध, दया, पौषध, त्याग, ख्यान, जीव-रक्षा आदि अनेक उपकार हुए। चार श्रावक भाइयों जोड़े से ब्रह्मचर्य व्रत अंगीकृत किया दूसरे भी अनेक नियम ।स्कंधादि हुए।

। इस समय एक मुनि ने २१ दो मुनिराजों ने १५ एक के १४ उपवास थे और तीन पचरंगी तपश्चर्या की हुई थी एक मुनिराज लगभग २० महीनों से रात्रि में शयन न कर ध्यान में बैठ रहते ाते और चाहे जैसी भी शीतऋतु हो तो भी एक ही पछेवड़ी ओढ़ने ाते थे।

उस मौकेपर खखा निवासी भाई घीसूलालजी सचेती ने पूर्णोत्सव पूर्वक श्री पूज्यजी महाराज के पास दीक्षा ग्रहण की उस दीक्षा महोत्सव के समय करीब ४ से ५ हजार मनुष्य उपस्थित थे।

श्रीमान् गच्छाधिपति के दर्शनार्थ पंजाब, राजपूताना, मेवाड़ मारवाड़, मालवा, गुजरात, काठियावाड़ आदि देशों के अनेक मनुष्य आये थे, जिनका तन, मन, धन से नयेनगर वालों ने अच्छी रीति से आतिथ्य सत्कार किया था।

पूज्य श्री के पधारने से ब्यावर उस समय एक तीर्थ स्थान की नाई होरहा था।

पूज्य श्री नयेनगर से अजमेर पधारे और जयपुर पधारने की जल्दी होने से अजमेर नगर के बाहर ही सेठ गुमानमलजी साहिब की कोठी में विराजे। परन्तु उनका पुण्य प्रभाव तथा आकर्षण शक्ति इतनी अधिक प्रबल थी कि व्याख्यान में साधुमार्गी श्रावकों के सिवाय सेकड़ों हजारों की संख्या में जैन अजैन सज्जन उपस्थित होते थे और सेठ गुमानमलजी साहिब की विशाल कोठी के बाहर के विशाल आंगन पर के चोक में भी पीछे से आने वाले को बैठने तक का स्थान न मिलता था। इस समय प्रसंगोपात पूज्य श्री ने प्राणिरक्षा के सम्बन्ध में उपदेश दिया उस पर से श्रीमान् राय सेठ चांदमलजी साहिब की प्रेरणा से रा० ब० सेठ सोभागमलजी

श्रीमान् दी० ब० उम्मेदमलजी साहिब लोढ़ा इत्यादि ने विचार
क पशुशाला स्थापन की। जिसमें आज भी कई अनाथ
। का प्रतिपालन होता है।

इसके सिवाय पूज्य श्री ने बाल लग्न नहीं करने का उपदेश
जिसके असर से कई लोगों ने १६ वर्ष के पहिले पुत्र के और
5 वर्ष पहिले पुत्रि के लग्न नहीं करने की प्रतिज्ञा ली।
अजमेर में पांच छः दिन ठहरकर पूज्य श्री जयपुर पधारे वहां
धर्मोन्नति हुई जयपुर के श्री संघने चातुर्मास करने के लिये
प्र पूर्वक अर्ज की उत्तर में पूज्य श्री ने फरमाया कि जैसा
र।

जयपुर से विहार कर श्रीजी महाराज टोंक पधारे वहां सं०
० के फाल्गुन शुक्ला २ के रोज उनके सदुपदेश से उनके
पक्ष के भाणेजा और भाणेजीपति श्रीयुत मांगीलालजी
ाया ने ३० वर्ष की भर युवावस्था में सर्वथा ब्रह्मचर्य व्रत
से अंगीकृत किया। पश्चात् उन भाई ने (पूज्य श्री के सं०
भाणेजी ने) रात्रि भोजन हरी तथा कच्चे पानी पीने का भी
ीवन के लिये त्याग कर दिया। इसके उपलक्ष में टोंक में
ा किया गया। बहुत से मुसलमान लोगों ने पूज्य श्रीके सदु-
ा के प्रभाव से जीव-हिंसा करने तथा मांस खाने का

किया। कितने ही शूद्र लोगों ने मदिरा पान का त्याग किया। में पूज्य श्री के व्याख्यान में हिन्दू मुसलमान बड़ी संख्या में और व्याख्यान का कई समय इतना प्रभाव गिरता था कि, श्रोताओं की आंख से अश्रु भी बहने लग जाते थे।

यहां से अनुक्रमशः विहार करते श्रीजी महाराज पधारे वहां शेषकाल लगभग एक माह तक ठहरे। बहुत और बहुत त्याग प्रत्याख्यान हुए वहां से विहार कर (होलकर स्टेट) पधारे वहां संवत् १९७० के चैत्र १-३ श्रीयुत गब्बूलालजी नाम के एक ओसवाल गृहस्थ ने छोटी वय में ही वैराग्य प्राप्त कर पूज्य श्री के पास दीक्षा ग्रहण की।

यहां से कोटा तथा शाहपुरा तरफ होकर पूज्य श्री पधारे वहां उदयपुर के श्रावकों ने चातुर्मास के लिये श्रीजी महाराज से बहुत प्रार्थना की जावरा के श्रीसंघ ने भी बहुत किया परन्तु पूज्य श्री की इच्छा रतलाम चातुर्मास करने की इसलिये उधर विहार किया।

पूज्य श्री के अपूर्व उपदेशामृत के पान करते मंदसौर निवासी पोरवाल गृहस्थ सूरजमलजी तथा उनकी स्त्री चतुरबाई को उद्भव हुआ और उन्होंने सं० १९७१ के वैसाख मास में ब्रह्मचर्य व्रत अंगीकार किया। उस समय सूरजमलजी की उम्र

...की थी। और इनकी स्त्री की उम्र फक्त २५ वर्ष की थी। वे ... भर युवावस्था में ऐसी भीषण प्रतिज्ञा लेने के लिये व्याख्यान ...स्थान में परिषद् के खड़े हुए तब उपस्थित सज्जनों में से बहुतों ... आंखों से अश्रु बहने लगे थे। और कई स्त्री पुरुषों ने इन दम्पती ... अद्भुत पराक्रम और वैराग्य जनक दृश्य देख फुटकर स्कंध तथा ...र्यां और विविध प्रकार के व्रत नियम किये थे। बाद चतुरबाई ... सं० १९७४ में और सूरजमलजी ने सं १९७६ में प्रबल वैराग्य ... दीक्षा ली थी।
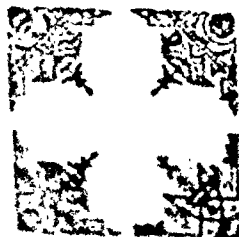
अध्याय २३ वाँ।

सम्प्रदाय की सुव्यवस्था।

रतलाम (चातुर्मास) सं १९७१ इस समय भी पूज्य श्री पधारने से रतलाम में आनन्दोत्सव हो रहा था, व्याख्यान में लोगों की मंडलियां की मण्डलियां आने लगी थीं। श्रीमान् ठाकुर साहिब पंचेड़ा से खास पधार कर व्याख्यान का लाभ उठाते थे उपरांत राजकर्मचारीगण इत्यादि तथा हिन्दू मुसलमान बड़ी संख्या में व्याख्यान श्रवण करते और उसके फल स्वरूप रतलाम में अवर्णनीय उपकार हुए त्याग प्रत्याख्यान स्कंध तपश्चर्या इत्यादि बहुत हुई।

इस मुताबिक चातुर्मास बहुत शांतिपूर्वक व्यतीत हुआ परंतु वेदनीय कर्म की प्रबलता से कार्तिक शुक्ला १० के रोज पूज्य श्री के पांव में एकाएक दर्द जोर बढ़ गया, इसलिये मगसर वद १ के रोज पूज्य श्री विहार न कर सके। जिससे श्रीजी के दिल में ऐसा विचार हुआ कि, मेरा शरीर पग की व्याधि के कारण विहार करने में असमर्थ है इसलिये सम्प्रदाय के संख्याबद्ध संतों की संभाल जैसी चाहिये वैसी नहीं हो सकेगी और एक आचार्य की संभाल से शुद्ध संयम पलाने की पूरी आवश्यकता है।

य सम्प्रदाय को चार विभागों में विभक्त कर योग्य संतों को योग्यतानुसार अधिकार देना चाहिये ऐसा विचार कर पूज्य श्री [illegible]दाय की सुव्यवस्था करने का यथोचित प्रबन्ध करना ठहराया [illegible]दिन तो पूज्य श्री के पांव में इतनी अधिक प्रबल वेदना हुई [illegible]क भी चलने फिरने की शक्ति न रही। उत्तम पुरुषों की [illegible]से चिरकाल तक नहीं रह सकती, इस न्यायानुसार थोड़े ही [illegible]में आराम होने लगगया। पग में दर्द तो अत्यंत परंतु पूज्य श्री की सहनशीलता जबरदस्त होने से वे [illegible] को बहुत थोड़ी वेदते थे। ता० १५-११-१९१४ के रोज श्री महाराज वेदना को नहीं गिनते हुए धीमे पांव से चलकर व्या[illegible]न में पधारे। श्रीजी के दर्शन कर श्रावकों के आनंद की सीमा [illegible]ही, उस समय श्रीजी महाराज ने व्याख्यान में फरमाया कि [illegible]चार ऐसा है कि सम्प्रदाय के संतों की सार संभाल तथा उन्नति [illegible] योग्य उपालंभ या धन्यवाद देना तथा संयम में सहायता [illegible]त्यादि आवश्यक काम सम्प्रदाय के कितने ही योग्य संतों के [illegible]करूं।

[illegible] श्रीजी महाराज की आज्ञा से तथा रतलाम श्रीसंघ [illegible] के बड़े कितने ही समझदार श्रावकों की सम्मति [illegible] [illegible] वकील ने आचार्य श्री के हुक्म [illegible] किया हुआ इकरार इस रूप से परिषद् में पढ़ [illegible]

ठहराव की अक्षरशः प्रतिलिपि।

श्री जैनदया धर्मावलम्बी पूज्य श्री स्वामीजी महाराज श्री १००८ श्री हुक्मचंदजी महाराजा के पांचवें पाट पर जैनाचार्य पूज्य महाराजाधिराज श्री श्री १००८ श्री श्रीलालजी महाराज वर्त्तमान में विद्यमान हैं, इनके आज्ञानुयायी गच्छ के साधु लगभग झाझेरा के करीब हैं उनकी आज तक शास्त्र व परम्परा सार सम्भाल आचार गोचरी वगैरह की निगरानी यथाविधि पूर्वक करते हैं, परंतु पूज्य महाराज श्री के शरीर में व्याधि वगैरह के कारण से इतने अधिक संतों की सार सम्भाल करने में परिश्रम वगैरह पैदा होता है इसलिये पूज्य महाराज श्री ने यह विचार कर गच्छ के संत मुनिराजों की सार सम्भाल व हिफाजत के वास्ते योग्य संतों को मुकर्रर कर प्रायः करतालुक संतों को इस सुपुर्दगी कर दिये हैं कि वह अग्रेसरी संत अपने गण की सम्भाल सब तरह से रक्खें और कोई गण की किसी तरह की गलती हो तो ओलम्भा वगैरह देकर शुद्ध करने की कार्यवाही का इन्तजाम करें फक्त कोई बड़ा दोष होवे और उसकी खबर पूज्य महाराज श्री को पहुंचे तो पूज्य श्री को उसका निकाल करने का अधिकार है सिवाय इसके जो जो अग्रेसरी हैं वे थोक आज्ञा चातुर्मास की पूज्य महाराज श्री से अवसर पाकर ले लेवें।

वार में श्री रत्नचन्दजी महाराज के नेश्राय के सन्तों की सुपु
श्री देवीलालजी महाराज की रहे।

(४) पूज्य श्री चौथमलजी महाराज साहिब के परिवार
सन्तों की सुपुर्दगी श्री डालचन्दजी महाराज की रहे।

(५) स्वामीजी श्री राजमलजी महाराज के शिष्य
घासीरामजी महाराज के परिवार में जवाहिरलालजी सार सम्
करें।

ऊपर प्रमाणे गण पांच की सुपुर्दगी अग्रेसरी मुनिराजों को
है सो अपने २ संतों की सार सम्भाल व उनका निभाव करते

यह ठहराव पूज्य महाराज श्री के सामने उनकी राय मु
हुआ है सो सब संघ मंजूर कर के इस मुताबिक वर्ताव करें

उपरोक्त ठहराव सुन कर श्री संघ में हर्षोत्साह की
वृद्धि हुई थी। उस समय रतलाम में मुनिराज ठाणा २५
आर्याजी ठाणा ६० के क़रीब विराजमान थे।

इस चातुर्मास में श्वे० मूर्तिपूजक जैनों के अग्रेसर सु
साहिब सेठ केसरीसिंहजी कोटावाला भी श्रीजी की सेवा में
चार वक़ आये थे और वार्तालाप के परिणाम स्वरूप अत्यंत

ात किया था दूसरे भी कितने ही मंदिरमार्गी भाई आते थे
प्रश्नोत्तर तथा चर्चा वार्ता कर आनंद पाते थे।

पूज्य श्री के पांव में कुछ आराम हुआ। सं० १९७१ के मार्ग-
शुक्ला ५ के रोज दोपहर को श्रीजी ने रतलाम से विहार
। वहां से जावरे पधारे। उस विहार के समय इस पुस्तक का
क उपस्थित था, रतलाम से एक कोस दूरी के ग्राम में पूज्य श्री
थे और संख्याबद्ध श्रावक वहां दर्शनार्थ पधारे थे और सुबह
उपदेश श्रवण करने के लिए रात भर वहीं ठहरे थे। छोटे ग्राम
स्थान की नो व्यवस्था थी रात को ठंड होते भी भविजन श्रावकों
[illegible] कतार की कतार श्रद्धा के स्थान में आनंद से निद्रा लेती
सो [illegible] भी सौभाग्य से यह दृश्य मुझे देखने का अवसर प्राप्त
। और आंसुओं से नेत्र भीज गए। तुरंत वकील मिश्रीलालजी
[illegible] गाड़ी में रतलाम पीछे आये और तीन चार
[illegible] के गोदड़े गए और जीव जंतु या ठंड की परवाह न
[illegible] सूती रेंगा, नारियों में सोई हुई कतार को जाजमों से ढांक
[illegible] की थी।
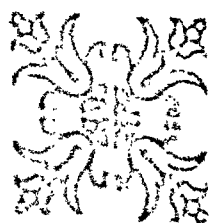
अध्याय ३४ वाँ ।

आत्म-श्रद्धा की विजय ।

जावरा के श्रावकों की चातुर्मास के लिए बार २
अर्ज करने पर भी उनकी विज्ञप्ति मंजूर न हो सकी थी,
वहां के श्रावक जनों के अंतःकरण बड़े दुःखित हुए थे,
प्रफुल्लित करने के लिये इस समय आचार्य महाराज जावरे
मास शेष काल विराजे थे ।

जावरे में जिस समय पूज्य श्री महाराज व्याख्यान
थे तब एक श्रावक ने खबर दी कि नबाव साहिब ने सब
बंदूक से मार डालने का पुलिस को आर्डर दिया है
बाजार में एक दो कुत्ते मारे भी गए हैं और अभी तक
मारने की फिक्र में बंदूक लिए घूम रहे हैं। श्रीजी महाराज
व्याख्यान में यह विषय उठा लिया और अत्यन्त
उपदेश दिया तथा श्रावकों से फरमाया कि तुम इस
रोकने का प्रयत्न क्यों नहीं करते हो ? अग्रेसर श्रावकों ने
महाराज ! हमने बहुत प्रयत्न किये परन्तु सब विफल
समय पूज्य श्री ने फरमाया कि जो तुम में दृढ़ आत्मबल

कलकत्ते की खास कांग्रेस में लाला लाजपतिराय ने अ
की हैसियत से जिन शब्दों की गर्जना की थी उन शब्दों का
रण यहां हो आता है " आप अपनी आत्मा में दृढ़ श्रद्धा
अपने हृदय में कितना ज्वलन होरहा है इसके ऊपर कितने अ
बलिदान होने को तैयार हैं, आम लोगों में से कायरता कितने
में भगी है। शुद्ध भाव से अग्रेसर होने और शुद्ध भाव
वाले अग्रेसरों के पीछे चलने की शक्ति अपने में कितने आ
आई है उन सब बातों पर अपनी विजय का आधार है।"

जावरा की यह बात जो कि बिलकुल छोटी थी तो भी
छोटी बातों से आत्मश्रद्धा की सीढ़ियां चढ़ने लगें तो मौका
पर परमात्मा के संदेश को भी झेल सकेंगे। एक विद्वान् का
है कि—आत्मश्रद्धा द्वारा ही मनुष्य प्रत्येक कठिनाई जीत
है। आत्मश्रद्धा ही रंक मनुष्य का महान् मित्र और उसकी
त्तम सम्पत्ति है। पाई की भी बिना सम्पत्ति वाले आत्मश्रद्धा
मनुष्य महान् से महान् कार्य कर सकते हैं। और बिना आ
श्रद्धा के करोड़ों की पूंजी भी निष्फल गई है।

पूज्य श्री जावरे में विराजते थे उस समय श्री देवीला
महाराज भी जावरे पधारे और श्रीजी महाराज से मंदसोर प
का आग्रह किया. [illegible]

सोर पधारना श्रीजी ने नामंजूर किया। उस समय श्रीमान्
जी अमरचंदजी साहिब पीतलिया पूज्य श्री की सेवा का अंतिम
[illegible] जावद पधारे थे। उन्होंने मौका देख इन साधुओं को
[illegible] आहार पानी इत्यादि व्यवहार पुनः प्रारंभ करने की विज्ञप्ति
। और मंदसोर पधारने के लिये पूज्य श्री से आग्रह किया।
पूज्य श्री वहां से विहार कर मंदसोर पधारे और जैनशास्त्र
रीत्यनुसार आलोचना कर प्रायश्चित्त लेने के लिये फरमाया,
तु पूज्य श्री के मनको संतोष हो उस अनुसार संतोषकारक
ति से उन साधुओं ने स्वीकृत नहीं किया। इसलिये पूज्य श्री ने
हां से विहार कर दिया। परन्तु धन्य है इन महापुरुष की गं-
भीरता को कि इतनी अधिक बात होते भी पूज्य श्री ने उक्त स-
म्प्रदाय में किसी तरह प्रकट निंदा स्तुति न की, इसी तरह इन साधुओं
को सम्प्रदाय से अलग किये हैं इसलिये इन्हें आन आदर न देने
इत्यादि भी कुछ कहा सुनी न की, न उनका बुरा चाहा। पूज्य महा-
राज श्री का इतना ही ख्याल था कि वे भी किसी प्रकार का
[illegible] शास्त्रानुसार समाधान कर अपना आत्महित साधें।

मंदसोर से क्रमशः विहार करते हुए पूज्य श्री मेवाड़ में पधारे
और श्री उदयपुर श्रीसंघ की विनन्ती स्वीकृत कर पूज्य श्री ने सं०
[illegible] का चातुर्मास उदयपुर में किया।

कलकत्ते की खास कांग्रेस में लाला लाजपतिराय ने अ
की हैसियत से जिन शब्दों की गर्जना की थी उन शब्दों का
रण यहां हो आता है " आप अपनी आत्मा में दृढ़ श्रद्धा
अपने हृदय में कितना ज्वलन होरहा है इसके ऊपर कितने म
बलिदान होने को तैयार हैं, आम लोगों में से कायरता कितन
में भगी है। शुद्ध भाव से अग्रेसर होने और शुद्ध भाव
वाले अग्रेसरों के पीछे चलने की शक्ति अपने में कितने अं
आई है उन सब बातों पर अपनी विजय का आधार है।"

जावरा की यह बात जो कि बिलकुल छोटी थी तो भ
छोटी बातों से आत्मश्रद्धा की सीढ़ियां चढ़ने लगें तो मौ
पर परमात्मा के संदेश को भी झेल सकेंगे। एक विद्वान् का क
है कि—आत्मश्रद्धा द्वारा ही मनुष्य प्रत्येक कठिनाई जीत स
है। आत्मश्रद्धा ही रंक मनुष्य का महान् मित्र और उसकी म
त्तम सम्पत्ति है। पाई की भी विना सम्पत्ति वाले आत्म श्रद्धा
मनुष्य महान् से महान् कार्य कर सकते हैं। और विना आ
श्रद्धा के करोड़ों की पूंजी भी निष्फल गई है।

पूज्य श्री जावरे में विराजते थे उस समय श्री देवील
महाराज भी जावरे पधारे और श्रीजी महाराज से मंदसौर प
का आग्रह किया, परन्तु उनके अमुक कौल क़रार को पक

सोर पधारना श्रीजी ने नामंजूर किया। उस समय श्रीमान्
जी अमरचंदजी साहिब पीतालिया पूज्य श्री की सेवा का अंतिम
भ लेने जावरे पधारे थे। उन्होंने मौका देख इन साधुओं को
कर आहार पानी इत्यादि व्यवहार पुनः प्रारंभ करने की विज्ञप्ति
। और मंदसोर पधारने के लिये पूज्य श्री से आग्रह किया।
पूज्य श्री वहां से विहार कर मंदसोर पधारे और जैनशास्त्र
रीत्यनुसार आलोचना कर प्रायश्चित्त लेने के लिये फरमाया,
न्तु पूज्य श्री के मनको संतोष हो उस अनुसार संतोषकारक
ति से उन साधुओं ने स्वीकृत नहीं किया। इसलिये पूज्य श्री ने
ां से विहार कर दिया। परन्तु धन्य है इन महापुरुष की गं-
रता को कि इतनी अधिक बात होते भी पूज्य श्री ने उक्त स-
न्ध में किसी तरह प्रकट निंदा स्तुति न की, इसी तरह इन साधुओं
ो सम्प्रदाय से अलग किये हैं इसलिये इन्हें आव आदर न देने
ाबत भी कुछ कहा सुनी न की, न उनका बुरा चाहा। पूज्य महा-
ाज श्री का इतना ही खयाल था कि वे भी किसी प्रकार का
ामत्व त्याग शास्त्रानुसार समाधान कर अपना आत्महित साधें।

मंदसोर से क्रमशः विहार करते हुए पूज्य श्री मेवाड़ में पधारे
और श्री उदयपुर श्रीसंघ की विनन्ती स्वीकृत कर पूज्य श्री ने सं०
१९७२ का चातुर्मास उदयपुर में किया।

अध्याय ३५ वाँ।

उदयपुर का अपूर्व उत्साह।

उदयपुर में पंचायती नोहरे के नाम से प्रसिद्ध एक विशा
मकान है, वहां हर वर्ष मुनिराजों के चातुर्मास होते थे परन्तु पूज्य
श्री के चातुर्मास की प्रथम उम्मीद न होने से तथा तेरापंथी के
पूज्य श्री कालूरामजी का उदयपुर चातुर्मास पहिले से ही मुकर्रर
होजाने से तेरापंथियों ने पहिले से ही पंचायती नोहरे की मंजूरी
लेली थी इसलिये पूज्य श्री के चातुर्मास के लिये ऐसा ही के
दूसरा आलीशान मकान ढूंढने के लिये उदयपुर श्री संघने प्रय
किया, कई उमराव लोगों ने हमारे मकान में "पूज्य श्री विराजें
ऐसी इच्छा दर्शाई, परंतु व्याख्यान के लिये चाहिए जैसी सोयर
जगह न मिलने से उदयपुर के महाराणा साहिब कुमलगढ़ विराजते
थे। वहां उनके चरणारविंद में अर्ज कराई उस पर से कम
पर के महलों के पास जो फराशखाना अर्थात् जूना हास्पिटल
उसके लिये उन्होंने आज्ञा देदी।

इस आलीशान मकान में श्रीमान् पूज्य महाराज श्री चातुर्मास
लिये पधारे वहां पधारते ही व्याख्यान के लिये पूज्यश्रीने फराशखा

प्रबंध कर बाकी के दिनों की सोय आने वाले ही कर लिया कें
जहां चातुर्मास हो वहां के श्रावक भी महात्मा के वचनामृतों
लाभ ले सकें।

कितने ही श्रावक तो यहां पूज्य श्री की सेवा में बहुत
तक अलग मकान लेकर रहे थे। श्रीमान् बालमुकुंदजी साहिब
वाले तथा श्रीयुत वर्द्धमानजी साहिब पीतालिया इत्यादि
श्रावक पूज्य श्री के साथ ज्ञानचर्चा कर अलभ्य लाभ उठाते थे।
एक समय सेठ बालमुकुंदजी साहिब "बावीश समुदाय गुणविला
नाम की एक पुस्तक, कि जो बीकानेर में छपी है, लेकर पूज्य
के पास आये और उसकी प्रस्तावना पढ़ सुनाई और श्रीजी
प्रश्न किया कि क्या यह सब आपकी सम्मति से लिखा गया
तब श्रीजी महाराज ने फरमाया कि यह पुस्तक किसने कब
और किसने छपाई, इस सम्बन्ध में मैं कुछ भी नहीं जानता,
पुस्तक की प्रस्तावना में पूज्य श्री के नाम का आश्रय ले एक
ने अपनी कितनी ही मानताएं पुष्ट करने का प्रयत्न किया है
से कितने ही श्रावकों के चित्त शंकाशील बन गए थे, परंतु
महाराज के इतने संतोषकारक रीतिसे खुलासा करने पर सब
का भ्रम दूर हो गया।

पूज्य श्री ने बाललग्न से कितनी २ हानियां होती हैं और
वय तक विशुद्ध ब्रह्मचर्य का पालन करने से कितने महान्

उसका ऐसा असरकारक विवेचन किया था कि, कई ने १८ वर्ष पहले पुत्र के और १३ वर्ष पहिले पुत्री के लग्न की प्रतिज्ञा ली थी।

इस वर्ष तेरहपंथियों के पूज्य श्री कालूरामजी तथा तपगच्छीय ... श्री विजयधर्म सूरिके चातुर्मास भी उदयपुर में थे। और कितने ही श्रावक हर प्रकार से क्लेशोत्पादक प्रवृत्तियां करते ...तु यह क्षमा का सागर कभी भी न झलका। श्रावक परस्पर ... ट्रेक्टबाजी करते थे, परन्तु आचार्य श्री ने चित्तशांति संपूर्णता ...र रक्खी थी। अपने श्रावकों को भी शांति में स्थित ... का शतत उपदेश देते थे। अपनी बहादुरी बताने के खयाल ...दूर रख पूज्य श्री संयम का संरक्षण करते थे। किसी भी तौर ...न्होंने क्लेश वृद्धि को उत्तेजन न दिया। उलटे ऐसा करने-... को समझा प्रतिज्ञा कराते थे। जिससे वे लोग स्वयं नम्र ... पूज्य श्री से विनय करने लगे थे, इतना ही नहीं परंतु जब उन ...वकों को पूज्य श्री का परिचय होता तब वे उन पर भक्तिभाव ...ाते थे।

श्रीमान् महाराणा साहिब भी पूज्य श्री की शांतवृत्ति की प्रशंसा ...न बहुत आनन्दित हुए और कभी २ अपने आफीसर लोगों से ...श्न करते कि, आज व्याख्यान में क्या फ़रमाया।

सं० १९७२ के मंगसर वद १ के रोज पूज्य श्री ने विहार
उस समय उनके पांव में असह्य वेदना थी, श्रावक लोगों ने
के लिए अत्याग्रह पूर्वक बहुत २ अर्ज की, परन्तु पूज्य श्री ने
माया कि "मेरी चलेगी वहां तक मैं कल्प नहीं तोडूंगा" इसलिये
अत्यन्त कठिनाई से चलकर सूरजपोल महंतजी की धर्मशाला
विराजे और वहां लशकर तरफके एक अग्रवाल श्रीयुत ब्रजमोहन
लाल ने उत्कृष्ट वैराग्य से पूज्य श्री के पास दीक्षा ग्रहण की,
महाशय दिगम्बर मतानुयायी थे सं० १९७२ के चातुर्मास
उन्हें पूज्य महाराज का परिचय हुआ था, दीक्षा बहुत धूमधाम
हज़ारों मनुष्योंकी उपस्थिति में हुई थी, संवत् १९७५ में ब्रजमोहन
लालजी का स्वर्गवास होगया है।

तत्पश्चात् महाराज श्री ने उदयपुर से चार कोस दूर गुरुड़ी
तरफ विहार किया, गुरुड़ी की ओसवाल समाज में दो तड़ें
पूज्य श्री के उपदेश से तड़ें मिट एकता होगई।

वहां से पूज्य श्री ऊंटाले पधारे वहां ४० बकरों को ऊंट
पंचों ने तथा १०० बकरों को ऊंटाले के पटैल दला नागड़ी
वाले ने अभय-दान दिया।

सं० १९७२ के उदयपुर के चातुर्मास दरम्यान एक
अमलदार कांटा वाले टेलर साहिब, कि जो समस्त मेवाड़के औ

ट थे वे पूज्य श्री के दर्शनार्थ कई समय आये थे और श्री का व्याख्यान बहुत प्रेम-पूर्वक सुना करते थे, इतना ही परन्तु व्याख्यान के पश्चात् दूसरे समय भी वे पूज्य श्री के आते और तात्विक विषयों पर प्रश्नोत्तर तथा धर्म-चर्चा चलाते स महानुभाव अंग्रेज ने पत्ती वगैर जानवरों को न मारने तिज्ञा ली थी।

दूसरे एक अंग्रेज़ पादरी रेवरंड डो जेम्स शेपर्ड एम. डी. डी. जो वयोवृद्ध और समर्थ विद्वान् हैं और अभी जो विलायत वे भी महाराज श्री के दर्शनार्थ आये थे। महाराज श्री के वार्तालाप करने से उन्हें अपार आनन्द हुआ और वे अपने की एक पुस्तक महाराज श्री को भेट करने लगे, परन्तु महाराज उसका स्वीकार न किया। साधु के कड़े नियमों से साहिब चकित होगए।

स चातुर्मास में एक दिन पूज्य श्री ने धार्मिक शिक्षा की कता दिखाते हुए बहुत असरकारक उपदेश दिया और लघु- ही बालकों के हृदय पर धर्म की छाप गिराने की आव- दिखाई। उपदेश के असर से [illegible] के सब बालकों को ने के लिए एक पाठशाला [illegible] [illegible]। [illegible] रतनलालजी परिश्रम से यह पाठशाला [illegible] [illegible] में अच्छी तर

चलती है । इस पाठशाला में धार्मिक के साथ व्यावहारिक शि
भी दी जाती है इसलिए मा बाप अपनी संतानों को ऐसी प
शाला में भेजने के लिए ललचाते हैं ।

शिक्षाखाते में कितना ही व्यर्थ भार इतना बढ़ गया है कि
खास धार्मिक शिक्षा देनेवाली शालाओं में भी विद्यार्थियों का
आकर्षित नहीं होता और उतना समय भी नहीं मिलता । मार-
वाड़ की जैन-शालाएं सम्पूर्ण सफल नहीं होती उसका यही कारण है।

धार्मिक व्यवहारिक और राष्ट्रीय शिक्षा एक ही स्थान पर
हो ऐसी पाठशालाएं स्थापित की जाय तब ही अपना आशय
होगा, तो भी धर्म के संस्कार बालवय से ही संतानों में सींचने
लापरवाही न रखनी चाहिए ।

द्रव्य, क्षेत्र, काल, भाव, देश कालानुसार व्यावहारिक शि
साथ धार्मिक शिक्षा की योजना होने से उच्च भावना की
रग २ में प्रसर जाती है । बारहव्रतादि जैन-नियम जो
वैद्यक और नीति शास्त्र के अनुसार ही योजित हुए हैं उन
रहस्य समझाने एवं इस अमृत के पान के कराने वास्ते ज
अनुकूल और आकर्षक शिक्षापद्धति बांधी जाय तो अपने
रत्न उसमें चंचुपात करने को अवश्य ललचायेंगे । श्री
ात्य कहते हैं कि मनुष्य उत्क्रांति पाकर पशु आदि प्रवृत्तियों

।-जीवन में दाखल हुआ है उसे दिव्य जीवन कैसे बिताना इस दिव्य जीवन को बिता सिर्फ आनन्दमय जीवन सत्‌चिद् ांदमय जीवन अंतमें किस रीतिसे प्राप्त करना, यही सिखाना है"।

धर्म-ज्ञान प्रचार की प्रभावना में महान पुण्य समाया हुआ लिये एक लेखक योग्य उद्‌गार निकालता है कि " It is duty of the thought-ful among the Jains to see a healthy knowledge of the valuable and basic iples of Janism is spread liberally." सर नारायण वरकर लिखते हैं कि "सिर्फ बुद्धि के खिलने की क़ीमत अंतःकरण भी खिलना चाहिये। समाज, देश तथा जगत्‌की के लिये हृदय की शिक्षा हृदय के विकास की आवश्यकता र जबतक प्रजा के हृदय विकसित न होंगे वहांतक सच्ची । कभी नहीं आसक्ती।

यूरोप में जड़-बल का जोर और आध्यात्मिक बल की अनु- सि लड़ाई के समय प्रकट होजाती है·········जड़बल पर ात्मिक बल का प्रभुत्व होना अवश्य जरूरी है, जब तक इस की सत्ता न झुकेगी वहां तक कायम की खुशद शांति हक़ि- र नहीं हो सकती।

अध्याय ३६ वाँ।

शिकार बंद।
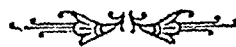
नयेनगर के आसपास का पहाड़ी प्रदेश, कि जो मगरे जि
के नाम से प्रसिद्ध है वहां के सैकड़ों ग्रामों के वाशिंदे मेर मे
जमीनदार और पशुपालक तथा अन्य जाति के हजारों मनु
होली के त्यौहारों में शिकार करते और तीन दिन तक पहाड़ों
घूम निरपराधी पशु पक्षियों को मारते थे। सब दिन भर व
पहाड़ियों में इधर उधर दौड़ते और छोटा या बड़ा, भूचर या खेच
जो प्राणी नजर आता उसे जान से मार डालते थे। वे जंगल
इधर उधर दौड़ते तो झाड़ झाड़ियों से उनका शरीर भी ल
लुहान होजाता था। यह घातकी और जंगली रिवाज बहुत स
से इन लोगों में प्रचलित था और जिसके कारण प्रतिवर्ष ल
निरपराधी जीवों का संहार हो जाता था।

सं० १६७२ के फाल्गुन मास में पूज्य श्री नयेशहर प
तब मगरे जिले के कितने ही जमीनदार भी श्रीजी के व्या
में आये। मौका देख पूज्य श्री ने जीवदया के सम्बन्ध मे
असरकारक और हृदय-विदारक उपदेश दिया कि जिसे

र जैसा हृदय भी पिघल जाय, इस उपदेश का उपस्थित जमी-
के हृदय पर भी बहुत भारी असर हुआ और उन्हें अपने
कृत्यों के कारण बहुत २ पश्चाताप होने लगा। व्याख्यान समाप्त
पर महाराज श्री ने तथा महाजनों के अग्रेसरों ने इन लोगों
ह पापी रिवाज बंद करने की कोशिश करने के लिए समझाया,
कितने ही लोगों ने तो ऐसा करने के लिए प्रसन्नता पूर्वक हां
परन्तु कितने ही जमीदारों ने महाजनों से ऐसी दलील की
ाप महाजन लोग हमारे पर तनिक भी दया नहीं करते, उधार
हुए रुपयों के व्याज में एक के दूने तिगुने दाम ले लेते हो
जब कर्जा वसूल करना हो तब भी दया नहीं रखते।
यह सुन उपस्थित महाजन लोगों ने ऐसी प्रतिज्ञा की कि हर
ति सैकड़ा १।।) रुपया से ज्यादा व्याज हम कदापि तुमसे
इसके उत्तर में जमीनदारों ने वचन दिया कि हम भी शिकार
े का बंदोबस्त करेंगे। दूसरों को उपदेश देने के पहिले अपना
ुद्ध होना चाहिए, 'परोपदेशे पांडित्यं' इस जमाने में नहीं
ा, पहिले अपने पांवपर घाव सहन करना सीखो।
उन जमीनदारों तथा महाजनों में से कितने ही उत्साही
संयुक्त प्रयत्न से थोड़े दिन बाद कई ग्रामों के मिल
जमीनदार व्यावर में आये, उन्हें महाजनों की

से प्रीतिभोज दिया गया, पूज्य श्री के अपूर्व उपदेश के असर से
लोगों ने जीवहिंसा न करने तथा शिकार न चढ़ने की प्रतिज्ञा
और तत्सम्बन्धी दस्तावेज भी महाजन की बही में कर दिये
महाजनों ने भी डेढ रुपये से अधिक व्याज न लेने का दस्
उन्हें लिख दिया ।

पश्चात् ' भाक ' नामके एक ग्राम को व्यावर से श्रीयुत
लालजी कांकरिया, श्रीयुत केसरीमलजी रांका इत्यादि
गए और वहां के जमीनदारों के हृदय में श्रीमान् पूज्य महाराज
उपदेश का असर पहुंचा ऐसा ठहराव किया कि मौजे 'भाक'
पटेल, नम्बरदार, ठाकुर, पन्ना, दल्ला, धीरा, इत्यादि तीन शि
में से एक शिकार आद औलाद (पीढी दर पीढी) तक न चढ़ें,
भाक के ताबे में शामगढ़, लुलवा इत्यादि करीब १०० ग्राम
सब में इसी अनुसार ठहराव हुआ उसके बदले में एक
(चबूतरा) बंधा देने तथा अफीम, तम्बाकू, ठंढाई एक दिन के
देने * बाबत महाजनों ने स्वीकार किया और परस्पर दस्तावेज
सही दी ली गई ।

---

* सं० १९७६ में श्रीमान् आचार्य महाराज शेषकाल
वर में पधारे थे, तब शिकार की निगरानी के लिये आहेड़
दिन पहिले महाजनों में से करीब ४०-५० स्वयंसेवक

उपरोक्त बंदोबस्त होने से हज़ारों लाखों जीवों को अभयदान
ने लगा और सैकड़ों लोग पाप की खाति में गिरते कई अंश
चगए।

इस मुजिब पूज्य महाराज श्री के यहां पधारने से अत्यन्त
कार हुआ। तथा यहां के ओसवाल भाइयों में कुसम्प थी
ससे तीन तड़ें होगई थीं और साधुमार्गी मंदिरमार्गी भाइयों
भोज सम्बन्ध में मतभेद हो परस्पर मन दुखित होगया था,
न्तु श्रीमान् आचार्यजी महाराज के पधारने से उनके व्याख्यान
लाभ शाह उदयमलजी तथा शाह धूलचंदजी कांकरिया इत्यादि
तने ही मंदिरमार्गी सज्जन लेते थे। महाराज श्री के सदुपदेश
प्रभाव से बिरादरी में एकमत हो तीन तड़ें इकट्ठी होगईं और
टे बड़े सब झगड़ों का परस्पर समाधान पूर्वक अंत हो बिरादरी
कुसम्प की जगह सुसम्प स्थापित होगया।

ीजे झाक गए और उन्होंने जमीनदारों से कहा कि तुम हताई
नवालो और उसमें जो खर्च लगे वह हम से लेओ, तब लोगों
कहा कि हमने हममें से चन्दा कर हताई बनाना ठहरा लिया
इसलिये महाजनों से इसका खर्च न लेंगे और जो आहेड़ श्री
ूज्यजी महाराज के उपदेश से हम लोगोंने छोड़ी है उसका हम
ाराबर अमल करते हैं और कराते रहेंगे।

अध्याय ३७ वां।

मारवाड़ में उपकारी विहार।

ब्यावर से पूज्य श्री अजमेर पधारे और सुजानगढ़ की तर[illegible]
बीकानेर के श्रावक पोखरमलजी कि जो हजारों रुपयों की [illegible]
सम्पत्ति त्याग प्रबल वैराग्यपूर्वक पूज्य श्री के पास दीक्षित होने [illegible]
वाले थे, उन्हें दीक्षा देने के लिये उधर पूज्यश्री जल्द पधारने वा[illegible]
थे, परन्तु श्रीमान् जैनाचार्य श्री रत्नचंद्रजी महाराजकी सम्प्रदा[illegible]
के आचार्य श्री विनयचंद्रजी महाराज का स्वर्गवास होगया था
उनकी जगह आचार्य स्थापित करने थे, इसलिये श्रीमान् पंडित[illegible]
राज श्री चन्दनमलजी महाराज ने यह कार्य श्रीमान् की सहा[illegible]
भूति से सफल करनेकी अर्ज की, इसलिये श्रीजी महाराज अजमे[illegible]
रुके और हजारों मनुष्यों की भीड़ में श्रीमान् शोभाचंदजी महारा[illegible]
को विधिपूर्वक आचार्य पदारूढ करने की क्रिया में उपस्थित र[illegible]
चतुर्विध संघमें अपूर्व आनंद मंगल वरताया। दोनों सम्प्रदायों [illegible]
साधुओं में परस्पर इतना अधिक प्रेमभाव देखा जाता कि [illegible]
देख अपना हृदय आनंद से उभराये विना न रहता। इस अ[illegible]
सर पर श्रीमान् आचार्य श्री श्रीलालजी महाराज ने आचार्य श्री

दारी, दीर्घदृष्टि और कर्तव्य विषय पर समय के अनुकू
...त उत्तम रीति से विवेचन किया और श्रीमान् शोभाचंद
...ाज ने स्थविर मुनि श्री चंदनमलजी महाराज द्वा
...ार्य की पछेवड़ी ओढ़े बाद समयोचित व्याख्यान दिया था
पूज्य श्री श्रीलालजी महाराज के अनुपम उदार गुणों की
...ठ से प्रशंसा की थी। आचार्य श्री शोभाचंदजी महाराज ने
...ूज्य श्री श्रीलालजी का ऋणी रहूंगा ऐसा कहा था। हम
...करते हैं कि पूज्य श्री शोभालालजी साहिब तथा उनकी स-
...के साधु और श्रावक अपने वचनानुसार पूज्य श्री के परि-
...र ऐसा ही भाव रक्खेंगे।

...जमेर से उग्र विहार कर श्रीजी महाराज बीकानेर
...ुजानगढ़ पधारें। और वहां सं० १९७२ के फाल्गुन
...२ को शुक्रवार के रोज श्रीमान् पनेचंदजी संघवी के बनाये
...दिर में बीकानेर निवासी श्रीयुत पोखरमलजी को दीक्षा
...ापकी उम्र उस समय सिर्फ २० वर्ष की थी। आपका
...ा पढ़ा था तथा वैराग्य भी अत्यंत उत्कृष्ट था। दीक्षा
...ाहिले उन्होंने बहुत सा द्रव्य दान पुण्य में खर्च किया
... दीक्षा महोत्सव में भी हजारों ... किया
...से भाई इस अवसर पर ... बीकानेर
... भी अनुकरणीय ... तेरापंथी
... इस स...

सुजानगढ़ में साधुओं के २५ ठाणे विराजमान थे और
जोधपुर, जयपुर, अजमेर, बीकानेर आदि शहरों के करीब
मनुष्यों दिक्षा महोत्सव में भाग लिया था। एक अपरिचित
इस मुजिब दिक्षा महोत्सव की सफलता हुई तथा धर्मो
यह पूज्य श्री के अतिशय का ही प्रभाव था।

सुजानगढ़ से श्रीमान् ने थली की तरफ विहार किया
के प्रदेश में साधुमार्गी भाइयों की वस्ती न होने से और
भाइयों का बहुत जोर होने से पूज्य श्री का इस तरफ
उनके हृदय में शल्य के समान खटकने लगा। तेरहपंथी*
ही साधुओं तथा श्रावकों ने पूज्य श्री के मार्ग में अनेक विघ्न
उनके लिये अनेक प्रकार की कल्पित तथा मिथ्या गप्पें
तोषियों ने फैलाना प्रारंभ की और किसी भी तेरहपंथी
उन्हें उतरने को स्थान न देना तथा आहार पानी न वहरा
हीलचाल प्रारंभ की। उपरोक्त रीति से तेरहपंथी भाइयों
श्री को परिषह देने में कमी न की, परन्तु पूज्य श्री
तनिक भी डरने वाले न थे। उन्होंने अपना विहार आगे
ही रक्खा और लाडनू, खादीसर, राजलदेसर, रतनगढ़,

---

* साधुमार्गी स्थानकवासी सम्प्रदाय में से भिन्न हुए
ने यह पंथ चलाया है। जीवदया इत्यादि बातों में वह
सम्प्रदायों से भिन्न मत वाला है।

आदि अनेक ग्रामों में विचर पवित्र दयाधर्म की विजय-
ा फहराई। बीकानेर के सुप्रसिद्ध सेठ हजारीमलजी मालू इत्यादि
में पूज्य श्री के दर्शनार्थ गए थे और कितने ही दिन उन
सेवा में रह अनेक ग्रामों में फिरे थे।

थली के विहार में महेश्वरी, अग्रवाल, ब्राह्मण इत्यादि वैष्णव
यों ने बहुत ही पूज्यभाव दर्शाया था और आहार पानी इत्यादि
ा कर अलभ्य लाभ उठाया था, वे पूज्य श्री के सदुपदेश
न्हें अपने साधु हों ऐसा मानते थे और तेरहपंथी साधुओं की
त्र प्ररूपणा से जैनधर्म के विषय में उन्हें तथा थली के कई
ं को ऐसी शंकायें थीं कि जैन लोग जीवोंको मृत्यु के पंजेमें*
छुड़ाना पाप समझते हैं, दान देने में पाप मानते हैं और
ाला जैसी पारमार्थिक संस्थाओं को कसाईखाने से भी अधिक
खाता समझते हैं। ऐसी २ शंकाओं के कारण वहां के निवा-
जैनधर्म की ओर घृणा की दृष्टि से देखते थे, परन्तु श्रीजी महा-
के सदुपदेश से उनकी भ्रमनाएं दूर होगईं। सब शंकाएं भाग

---

* तेरहपंथी साधु ऐसा उपदेश देते हैं कि [illegible]
रने में सिर्फ एक पाप (प्राणातिपातका) ही लगता है। परन्तु
े बचाने में अठारा पापस्थानक सेवन करने पड़ते हैं।

किसी साधु को न देखा था परन्तु सुना था। आज अपने थी के) साधु श्रावकों के सामने उनके सम्बन्ध में इस लेख कुछ कहना चाहता हूं, इसपर से कोई यह न समझे कि धर्मी हूं, अबतक मैं तेरहपंथी ही हूं और इसीलिए निम्नां- कीकत समक्ष पेश करता हूं।

० ७ वीं मई, १९१६ के रोज सरदारशहर निवासी बाल- सेठिया प्रथम 'आडसर' आये और हमारे तेरहपंथियों के ावकों द्वारा बाईस टोले के साधुओं को उतरने के लिए मकान का प्रबंध किया। फिर वहां से रवाना हो 'मुंशासर' आये और के छः बजे साध्वीजी के पास आये। वहां मैं भी हाजर था और ी २०-२५ गृहस्थ तेरहपंथी बैठे थे। तब बालचन्दजी सेठिया को कहने लगे कि "बाईस टोले के साधुओं का आचार ठीक ता, वे यहां आवेंगे उन्हें उतरने वास्ते मकान न मिले तो ठीक द साध्वीजी बोले कि उनके आचार विचारके कुछ हाल सुनाओ, लचंदजी बोले कि वे दोषीला आहार पानी लाते हैं अर्थात् रती से आहार मांग लेते हैं और उन्हें कोई प्रश्न पूछते हैं र भी नहीं देते और उत्तर न देने का कारण पूछते हैं तो हैं कि अभी अवसर नहीं है। तब हम पूछते हैं कि आपको र कब मिलेगा ? तो बोलते भी नहीं, फिर बालचंदजी बोले सरदारशहर में तो कालूरामजी चंडालिया ने

का मकान उतरने के वास्ते दिया, जो वे मकान नहीं देते तो वे
उतरते ? उन साधुओं के बाप दादों ने भी वैसा मकान न
होगा ' ऐसी २ अनेक बातें रात के छः बजे से साढ़े आठ
तक होती रहीं और साध्वीजी तथा श्रावक सब उसे सुनते
वे सब बातें लिखी जायँ तो एक छोटीसी पुस्तक बनजाय।
मैंने संक्षेप में लिखी हैं। फिर मैं तो उन सबको बातें कह
अपने मकान पर जा सोया । तत्पश्चात् ता० १४ को
सम्प्रदाय के साधु सुंबासर आये। मालचन्दजी तथा मालचन्दजी
जो बातें कहीं थीं वे सच्ची हैं या झूंठी, उसके परीक्षार्थ मैं
पानी में उनके साथ रहा और देखा तो गोचरी में कोई किसी प्रकार
जबरदस्ती नहीं करते । दोषीले आहार पानी न लेते। परिचय
ज्ञात हुआ कि मालचन्दजी इत्यादि की सब बातें मिथ्या हैं।
साधुओं को लोग स्थान २ पर आकर प्रश्न पूछते थे और वे
को यथार्थ उत्तर भी दे देते थे, परंतु गोचरी के समय कई लो
राह में उन्हें रोकते तो वे कहते कि अभी मौका नहीं है।

अब मेरे दिल में जो विचार उत्पन्न हुए, उन्हें जाहिर करता
सब तेरहपंथी भाइयों से प्रार्थना करता हूं कि इस तरह क
करना, साधुओं को मिथ्या कलंक देना, उन्हें उतरने के लिये म
न देना, लड़ाई झगड़े करना, चातुर्मास न करने देना, ये भले
[illegible]यों के काम नहीं हैं। अपने तेरहपंथी के साधुओं को तो

हलुवे वहराना और दूसरे साधुओं पर मिथ्या दोषारोपण
। क्या अपना धर्म है ? यह बात सोचना चाहिये, नहीं तो
। यह होता है कि परस्पर द्वेष भाव बढ़ता जाता है और
अपनी मूर्खता प्रकट होती जाती है । आप लोगों को तो
हिये कि सब से प्रेम रक्खें और अनुचित प्रवृत्ति से साधु
ो रोकें । तेरहपंथी साधु साध्वी कहते हैं कि तुम्हारे घर
सरी सम्प्रदाय के साधु आहार पानी लेगए तो तुमने क्यों
? इसलिये अब हम तुम्हारे यहां गोचरी न आवेंगे, जो
। ऐसी प्रतिज्ञा लो कि तेरहपंथी साधु के सिवाय अन्य
ो दान न देंगे, तभी हम तुम्हारे यहां आवेंगे । ऐसा कह
ो प्रतिज्ञा देते हैं । पाठक ! विचार करें कि जो साधु पंच-
लेकर भी राग द्वेष नहीं त्यागते और उलटे उसकी वृद्धि
तो फिर गृहस्थी का तो कहना ही क्या है ? इसलिये
ोगों से यह विनती है कि कुछ दिल में विचार करो [illegible]
ंग द्वार है और दया दान से ही गृहस्थाश्रम की [illegible]
ण है । महावीर भगवान का दया [illegible]
ंदकना जिन-वचनों की [illegible] है ।
ोग भविष्य कालका [illegible]
ाकी उन्नति करें [illegible]
[illegible]

[illegible]

पूज्य श्री का परिचय करानेवाला चाहे जितना उनके [illegible] हो तो भी प्रशंसा करने लग जाता था। थली में अपने [illegible] यों की वस्ती न होने से पूज्य श्री को बहुत कष्ट उठाना पड़ [illegible] उनके वहां विचरने से जैनधर्म का अपार उद्योत हुआ ※

सरदारशहर तथा रत्नगढ़ में अग्रवालों के हजारों [illegible] पूज्यश्री के उपदेशामृत का अत्यानंद पूर्वक पान करते थे [illegible] कहते थे कि हमारे अहोभाग्य हैं कि ऐसे महान पुरुषोंने हमा[illegible] में पदार्पण कर हमें पावन किया है ये केवल ओसवालों के [illegible] हमारे भी साधु हैं।

रतनगढ़ में पूज्यश्री के सदुपदेश से जीवदयाके लिये रु० [illegible] का फंड हुआ था।

※ पूज्य श्री के थली के विहार दरमियान कई जगह तेर[illegible] साधु तथा श्रावकों के साथ ज्ञानचर्चा तथा संवाद हुए, उस [illegible] पूज्य श्री ने अकाट्य प्रमाणों द्वारा दयाधर्म की स्थापना की [illegible] प्रश्नोत्तर मिलाने बाबत हमने बहुत प्रयत्न किया, परन्तु अंत[illegible] न मिलसके। वह प्रश्नावली प्राप्त कर बीकानेर के श्रावक [illegible] करेंगे तो जीवदया सम्बन्धी थलीमें भराया हुआ भूत भग [illegible] लेगा. साधुमार्गी मुनिराजों को भी थली की तरह विहार कर[illegible] [illegible]दया के लगाये हुए संस्कारों को संजीवन रखना चाहिये।

यजी के विहार दरम्यान बीकानेर के सैकड़ों श्रावक तथा
र से राय सेठ चांदमलजी साहिब तथा दी० ब० उम्मेदमलजी
इत्यादि दर्शनार्थ आये थे।

बड़े २ करोड़पतियों को इन महापुरुष की पदरज मस्तक
देख उनको अपमानित करने वाले कितने ही तेरहपंथी भाई
त लज्जित हुए थे।

महापुरुषों के तो ऐसे कष्ट ही कीर्ति कोट की दिवाल दृढ
में सीमेंट के समान है।
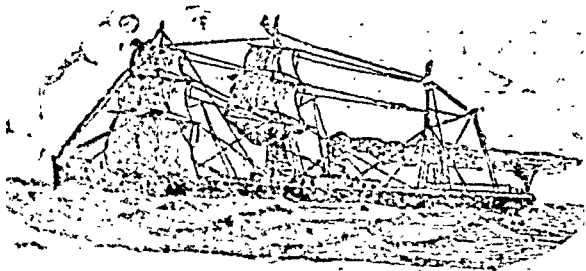
अध्याय ३८ वाँ।

श्री संघ का कर्तव्य।

पूज्य श्री जब थली में इस प्रकार जैन-धर्म की विजय
फहराते हुए विचर रहे थे, तब जावरा वाले साधु जोधपुर में इकट्ठे
हुए और अपने में से किसी को आचार्य पद देने का विचार
परन्तु जोधपुर संघ इस कार्य में सहमत न हुआ। तब उन
ने सात कलम लिख जोधपुर श्री संघ को दी। वे लेकर जोधपुर
श्रावक सरदारशहर में पूज्य श्री के पास आये। पूज्य श्री ने शुद्ध
करण से फरमाया कि शास्त्र के न्याय से और सम्प्रदाय की
नुसार सात तो क्या परन्तु सातसौ कलमें मुझे मंजूर हैं। इस
उस समय जोधपुर के संघ ने यह कार्य बंद रखाया। इसी तर
संघ के अन्य अग्रेसर श्रावक महाशयों ने भी सम्प्रदाय में
हो तथा पूज्य श्री हुक्मीचंदजी महाराज के सम्प्रदाय का
पूर्ववत् जाज्वल्यमान रहे इस हेतु से जोधपुर संघको और
में इकट्ठे हुए संतों को हित सलाह दे अपना कर्तव्य बजाया

एक विद्वान् अनुभवी के वाक्य इस समय याद आते
शांत रहता है तब जहाज लेजाने में अत्यंत होशियारी

ावश्यकता नहीं रहती, परन्तु जब जहाज भर समुद्र में
ौर डूबने की तैयारी में रहता है तथा बैठने वाले भय
हैं तब ही कप्तान के कार्य कौशल्य की सच्ची कसौटी होती
टाकटी के मामले में ही मनुष्य की चतुराई, अनुभव
कता की परीक्षा होती है और ऐसे समय ही मनुष्य अपनी
क्ति दिखा सकता है ·········· जबतक हम कसौटी पर
, जबतक गुप्त शक्ति सामान्य संजोगों के समय प्रकट नहीं
तक हमें अपने आंतरिक बल का वास्तविक भान भी नहीं
यह शक्ति आपत्तिकाल में ही प्रकट होती है क्योंकि वह शक्ति
करने के लिए हमें अंतरगहनमें पैठने की आवश्यकता है हरएक
परिणाम को प्रमाण में ही कार्यकी अपेक्षा है ।

ोधपुर के संघ के माफिक ब्यावर-नयेशहर के श्री संघ ने
रे वाले संतों को समाधान की ही सलाह दी और जब
दूसरी पूज्य पदवी प्रकट की तब चतुर्विध संघ की सम्मति
ऐसा व्याख्यान में ही प्रगट होगया था और समस्त श्री संघ
था अन्य मनुष्यों की सही से हमें यह मंजूर नहीं ऐसा, लिख
ा ।

ालवा मेवाड़ से बहुत दूर पंजाब में पूज्य श्री की आज्ञा
ी और जम्मू कश्मीर में एक संत बीमार होजाने

बहुत दिनों से ठहरे हुए महाराज श्री मन्नालालजी स्वामी जो
हकीकत के पूरे ज्ञाता न थे और सरल स्वभावी होने से दूसरों
युक्ति प्रयुक्ति में भुला जाने जैसे हलुकर्मी हैं, वे दूर के
चित क्षेत्र में आसपास के संजोग बिना जाने और पूज्य
आज्ञा में विचरते होने से उन्होंने पूज्य श्री की बिना आज्ञा
ही यह पद स्वीकार करने का साहस किया।

इस पर विचार करने से सिर्फ ममत्व ही मालूम होता
छद्मस्त मनुष्य भूल कर बैठते हैं, इसलिये दीर्घदर्शी शास्त्र
ने प्रायश्चित्त की विधि बताई है। प्रबल सबूत होने पर
आलोचणा नहीं की तब शास्त्र की आज्ञानुसार उन्हें अलग
परन्तु पूर्व परिचय के कारण कई संत और कई श्रावक उन
में पड़गए।

सं० १९७३ का चातुर्मास आचार्यजी महाराज ने
में किया। अपार अवर्णनीय, धर्मोद्योत हुआ। शहर के जैन
मनुष्य तथा देशावर के दर्शनार्थ बड़ी संख्या में आने वाले
श्राविकाओं की हजारों मनुष्य की भीड़ व्याख्यान में
लगी था। पूज्य श्री के सदुपदेश द्वारा वीरप्रभु की वाणी
प्रकाश जनसमूह के हृदय में व्याप्त अज्ञानान्धकार को दू
था। बीकानेर संघ में अपूर्व आनन्द छारहा था। ज्ञान

।, दया, परोपकार और अभयदान के मांगलिक कार्यों से
। धर्मवृद्धि तथा जैन शासन की प्रभावना हुई।

स वर्ष साधुओं में भी खूब तपश्चर्या हुई। श्री हरकचंदजी
ज के सुशिष्य मुनि श्री नंदलालजी महाराज ने ७२ उप-
किये थे और श्री गेनचंदजी महाराज की सम्प्रदाय के मुनि
लचंदजी महाराज के शिष्य मुलतानचंदजी महाराज ने ८२
स किये थे। ये दोनों तपस्वी एक ही दिन पारणा करने वाले
ठ चांदमलजी ढड्ढा सी. आई. ई., कि जो बीकानेर के श्वे०
जक जैन भाइयों के अग्रेसर हैं उनके सुप्रयास से राज्य की
से उस रोज कसाईखाने बंद रक्खे गए थे तथा भटियारा,
, सोनी, लुहार इत्यादि के हिंसा के कार्य तथा अग्नि के
म बंद रक्खे गए थे। इसके सिवाय केवलचंदजी महाराज के
भैरमलजी महाराज ने ३१ उपवास किये थे। चातुर्मास के
विहार कर मारवाड़ तथा जोधपुर स्टेट के ग्रामों में विचरते२
श्री जब जोधपुर पधारे तब जयपुर श्रीसंघ ने चातुर्मास जयपुर
में दायत्त विनय की, तब उसे मंजूर कर नयेनगर अजमेर होकर
श्री आषाढ़ शुक्ला २ को जयपुर पधारे। उस समय अजमेर
में महामारी-रोग का उपद्रव प्रारम्भ था, परन्तु पूज्य श्री के
र में पदार्पण करते ही शांति होगई थी।

अध्याय ३६ वाँ ।

जयपुर का विजयी चातुर्मास ।

सं० १९७४ का चातुर्मास पूज्य श्री ने जयपुर कि
जयपुर में धर्मध्यान तपश्चर्या, त्याग, प्रत्याख्यान तथा
अत्यन्त हुई । बाहर ग्राम से संख्याबन्ध श्रावक दर्शनार्थ
थे । रतलाम, बीकानेर, जावरा और व्यावरनगर के
श्रावक पूज्य श्री के सत्संग और वाणी श्रवणादि का
उठाने को खास मकान लेकर रहे थे । श्रीमती नानूबाई
मोरवी वाली तथा मुम्बई, गुजरात और काठियावाड़ के कई
वक दर्शनार्थ आये थे और बहुत दिनोंतक व्याख्यान का
उठाया था । व्याख्यान में कभी २ नानूबाई स्त्री-उपयोगी मह
प्रश्न पूज्य श्री से पूछती थी और उनके संतोषदायक उत्तर पू
की ओर से मिलने पर श्रोतागण सानंदाश्चर्य होते थे ।

जयपुर स्टेट की तरफ से बकरियों का बध करना मना था,
बकरी का बध होता है, ऐसी खबर पूज्यश्री को मिलते ही ए
व्याख्यान में पूज्य श्री ने प्राणीरक्षा पर असरकारक विवे
श्रावकों को उनका कर्तव्य बताते हुए कहा कि, उदयपुर

नंदलालजी मेहता जैसे उत्साही कार्यकर्ताओं ने महाराजश्री
दार आश्रय से हिंसा रोकने के लिये प्रशंसनीय प्रयत्न किया
ौर हिंसा बराबर रुकी रहे और राज्य के हुकम का बराबर
ल होता रहे उसकी पूर्ण निगाह रखते हैं इसलिये वहां कोई
मनुष्य राज्य की आज्ञा के विरुद्ध जीवहिंसा करने का साहस
कर सका। जो नंदलालजी मेहता उदयपुरवाले यहां होते तो
की आज्ञा उल्लंघन कर बकरियों का बध करने वालों को ज़रूर
ाने की कोशिश करते, इस बात की खबर उदयपुर नंदलालजी
ता को मिलते ही तुरन्त वे और केसूलालजी ताकड़िया
हरी उदेपुर से रवाना हो जयपुर आये और कई दिन ठहर कर
रियों का वध रोकने का प्रयत्न किया। नामदार महाराज तक
र पहुंचा कर सम्पूर्ण सफलता प्राप्त की। इस चातुर्मास से बकरी
बिलकुल बध होना बन्द होगया। श्रीमान् रायबहादुर खवासजी
ाचदजी साहिब ने कसाईखाने की तपास करने वाले डाक्टर
हेब को सख्त फरमाया था कि जो कोई शख्स बकरियों का
ध करे उन के पास से कानून अनुसार ५०) रुपये दण्ड मात्र ही
हीं लो, परन्तु उन्हें सख्त सज़ा कराओ। इस कारण खवासजी भी
न्यवाद के पात्र हैं।

इस चातुर्मास में दर्शनार्थ आनेवाले स्वधर्मी बंधुओं का
्वागत करने का सन्मान सुप्रसिद्ध जौहरी काशीनाथजी

जौहरी नवरत्नमलजी ने प्राप्त किया था। वे स्वतः तथा उनके
जौहरी मुन्नीलालजी इत्यादि व्याख्यान पूर्ण होते ही दरवाजे
खड़े रहते और महमानों को हाथजोड़ अपना मकान पवित्र
वास्ते अर्ज करते तथा खड़े रह कर सबको आग्रह से जिमाते।
रतलाम में युवराज पदवी के उत्सव पर जयपुर से खास जौहरी मु
लालजी रतलाम पधारे थे और अपने प्रांत की ओर से इस
बाबत हार्दिक अनुमोदन दिया था।

मोरवी चातुर्मास के समय स्वागत का कुल खर्च
सेठ सुखलाल मोनजी अपने स्नेहियों के साथ जयपुर आये थे
प्रीतिभोजन दे स्वधर्मियों से भेट करने का अवसर प्राप्त किया था।

जयपुर चातुर्मास में देश परदेश के कई श्रावक जयपुर में
से धर्म का बड़ा उद्योत हुआ था। जागीरदार और अमलदार तथा
बहादुर डाक्टर दुर्जनसिंहजी इत्यादि ज्ञानचर्चा के लिए पूज्य
के पास आते और उनके मनका सरल रीति से समाधान हो
पर अपने दूसरे मित्रों को भी साथ लाते थे।

जयपुर चातुर्मास पूर्ण होने पर पूज्य श्री टोंक पधारे, उस
टोंक की ओसवाल जाति में कुसम्प था। ज्ञाति में दो तड़ होगई
परन्तु पूज्य श्री के सदुपदेश से कुसम्प दूर हो पूर्ण एकता होगई

टोंक से क्रमशः विहार कर पूज्य श्री रामपुरा पधारे और
१९७४ के फाल्गुन शुक्ल ३ के रोज संजीत वाले भाई नंदराम
पूज्य श्री के पास रामपुरा मुक़ाम पर दीक्षा ली।

अध्याय ४० वाँ ।

सदुपदेश का प्रभाव ।

पुरा से श्रीजी महाराज कुकड़ेश्वर पधारे। व्याख्यान में ख्व
बड़ी संख्या में आते थे। स्कंध तथा व्रतादि बहुत हुए। जड़ाव-
पोरवाड़ ने ४५ वर्ष की अवस्था में सजोड़ ब्रह्मचर्य व्रत अंगी-
या। यहां दो रात ठहर कर पूज्य श्री कंजारड़ा पधारे, वहां नावद
ाई कजोड़ीमलजी ने दीक्षा ली, वहां से पूज्य श्री भाटखेड़ी
वहां श्रीयुत नानालालजी पीतालिया ने सजोड़ ब्रह्मचर्य व्रत
ार किया था तथा वहां के रावजी साहेब ने शिकार खेलने का
किया। वहां से श्रीजी मनासा पधारे। वहां महेश्वरी (वैष्णव)
ावभक्ति सहित व्याख्यान का लाभ लेते थे। यहां के न्याया-
ान्सिफ साहिब इत्यादि सरकारी कर्मचारीगण भी व्याख्यान का
उठाते थे। मनासासे महागढ़ हो पूज्य श्री पीपलिया पधारे।
[illegible] मार्गी भाइयों के घर होने से २२ सम्प्रदाय के साधु वहां
[illegible] थे तथा उन्हें आहार पानी व उतरने वास्ते मकान भी
[illegible] थे। श्रीजी महाराज के सदुपदेश से उनकी द्वेषाग्नि शांत
[illegible] और वहां के ठाकुर साहिब ने शिकार खेलने का त्याग किय
।

पीपलिया से पूज्य श्री धामणे पधारे। वहां साधुमार्गी के ५-७ घर थे। यहां के जमीनदार मांणा लोग नवरात्रि में देवी को बकरे चढ़ाते थे, पूज्य श्री के अमृत तुल्य उपदेश से उनके पर जादू के समान प्रभाव पड़ा और उन्होंने हमेशा के लिये के सामने बकरे न चढ़ाने की प्रतिज्ञा ली और नीचे लिखा कर उन पर सबने अपनी २ सही की "आगे से बकरों का करते ओसवालों के समस्त पंचों की ओर से चूरमा बाटी का नैवेद्य माताजी को रक्खेंगे।"

यहां से श्रीजी महाराज 'बहेड़ी' नामक एक छोटे पधारे। वहां के ठाकुर साहिब ने पूज्य श्री के सदुपदेश से पत्नि के साथ ब्रह्मचर्य व्रत अंगीकार किया और शिकार का त्याग किया। वहां से पूज्य श्री ने जावद की तरफ किया।

बड़े २ शहरों की अपेक्षा छोटे २ ग्रामों में जहां ऐसे धर्मोपदेष्टाओं का आगमन कचित ही होता है, वहां के लो रुषों की अद्भुत वाणी श्रवण करने का अपूर्व प्रसंग प्राप्त नी अभिलाषा दिखाते हैं, और व्रत प्रत्याख्यान करते हैं प्रत्यक्ष उदाहरण हैं।

सं० १९७४ के फाल्गुन वदी ५ के रोज रामपुरे

जावद पधारे । जावद में प्लेग का उपद्रव था, परन्तु पूज्य श्री पदार्पण करते ही उनके पवित्र चरणकमल से पवित्र हुई भूमि से प्लेग भगगया । और शांतिदेवी ने अपना साम्राज्य जमा लिया । जावद निवासियों पर इसका इतना अधिक प्रभाव पड़ा कि धर्मी और अन्यधर्मी पूज्य श्री की मुक्त कंठ से प्रशंसा करने लगे ।

रामपुरा से जावद पधारते समय पूज्य श्री के सदुपदेश से के अनेक ग्रामों में तथा जावद में जो जो उपकार हुए, उनका सार निम्नांकित है:—

स्थान बहेड़ी के ठाकुर साहिब प्रतापसिंहजी बहादुर ने कई प्रकार के शिकार के सौगंध लिये तथा उनकी बड़ी ठकुराइन साहिबा ने आजन्म ब्रह्मचर्य व्रत अंगीकार किया ।

ग्राम मोरवण में ओसवाल ज्ञाति में तीन तड़ें थीं, वे श्रीमान् के उपदेशामृत के सींचने से कुसम्प मिट सम्पूर्ण एकता होगई और कितने ही कुव्यसनों का त्याग हुआ ।

... ग्राम के राजपूत लोगों ने जीवहिंसा तथा मादक द्रव्य पान न करने के त्याग किये ।

पूर्ववत् प्रारंभ कर दिया और सब झगड़ा मिटगया, इस ...
पूज्य श्री ने निम्नाङ्कित एक दृष्टांत दिया था—

" एक सेठ के यहां कई गायें और भैंसें थीं। सेठानी ...
भली और दयालु थी, जिससे ग्राम के लोगों को पोले हाथ ...
देने लगी। एक दिन सब छाछ खुटगई, बाद एक बाई छाछ ...
आई, तब सेठानी ने निरुपाय हो उसे इन्कार किया। फिर दो ...
दिन बाद भी यही हाल हुआ। जिससे वह स्त्री सेठानी पर क्रोधि...
हो बोली कि ग्राम के सब जनों को छाछ देती है फक्त मुझे ...
बारबार निराश कर पीछा लौटने को कहती है, परन्तु अब ...
रखना ऐसा कह कर क्रोधावेश में वह चली गई और फिर कभी ...
लेने न आई।

इस बातको थोड़े ही दिन बीते होंगे कि एक दिन वह ...
पानी का बेवड़ा लिये हुये नदी की ओर से घरको आरही थी ...
सेठ की दुकान के समीप आई तब माथे पर का बेवड़ा फेंक दि...
और खूब जोर से सिर धुनने और होहा करने लगी। बाजार के ...
लोग इकट्ठे होगये। मंत्रवादी, भोपे प्रभृति आये और उसे पूछने ...
वह कहने लगी कि मैं फलां सेठानी हूं, गाय भैंस इत्यादि हैं, ...
मेरे पति (सेठ की) की लाई हुई हैं, मैं उनकी स्वामिनी हूं किसी ...
छाछ देना न देना मेरी इच्छा की बात है, यह रांड (स्वयं)

लेने आई और मैंने इनकार कर दिया तो मुझे कई गालि-
श्राप दे चलीगई अब मैं इसे जीवित नहीं छोडूंगी "सेठ
नींद में थे अपनी स्त्री पर ऐसा कलंक आता देख वे सर-
ाए। विचारी भली सेठानी इस बात से बिलकुल अज्ञात थी
कुल निर्दोष थी, छाछ लेने आने वाली बाईका ही यह सब
, तो भी सब ग्राम में वह सेठानी डाकन के सदृश गिनी
ी और सबने उसके साथका व्यवहार बंद कर दिया।
: अज्ञान और संशयी मनुष्य विचारे निर्दोष व्यक्ति पर
ाल चढ़ा उसकी जिंदगी बर्बाद कर देते हैं, परन्तु बदकाम का
पर ही होता है, आज तुम्हारे पर किसी ने मिथ्या कलंक
दे तो तुम्हें कितना दुःख होगा, इसका विचार कर उसके
सा व्यवहार रक्खो कि जैसा व्यवहार दूसरों से तुम अपने
करवाना चाहते हो। 'आत्मनः प्रतिकूलानि परेषां न समाचरेत्'
मंत्र खूब याद रक्खो। इसका यह मतलब है कि जो २ बातें
चेष्टाएं तुम्हारे प्रतिकूल हैं दूसरों के द्वारा जो व्यवहार होता
तुम्हें नापसंद हो, उसे अहितकर दुःखदाई समझते हो.
र वैसा व्यवहार दूसरों के साथ भी मत करो। इस उपदेश

Do unto others what you wish to be done unto
दूसरों का तुम अपने साथ जैसा व्यवहार चाहो वैसा ही
र करना तुम दूसरों के साथ प्रारंभ करो। (बाइबल

और सेठानी के दृष्टांत का लोगों पर पूर्ण प्रभाव पड़ा। इस 'शत स्कन्धा' में कितनी ही बाइयों के शिरपर डाकन का था वह पूज्य श्री के वहां पधारने पर उनके उपदेश से प्रया गया था।
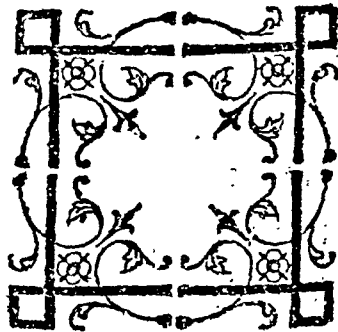
अध्याय ४२ वां।

दयपुर महाराज-कुँवार का आग्रह।

पहां से विहार करते २ पूज्य श्री भीलवाड़े पधारे। वहां शेष
कल्पित दिन ठहरे। भीलवाड़े के हाकिम पंडितजी श्री
शंकरजी श्रीमान् का सदुपदेश श्रवण करते थे। यहां
वालों में २७ वर्ष से भिन्न २ तीन तड़ें कुसम्प के कारण हो
।। श्री जी महाराज के अमूल्य उपदेश से सब क्लेश दूर हो
गैर तीनों तड़वाले इकट्ठे होगये। चातुर्मास के लिये बहुत
के साथ प्रार्थना की परन्तु उदयपुर से श्रीमान् कोठारीजी
चातुर्मास की विनन्ती वास्ते स्वयं पधारे और चातुर्मास
करने बाबत बहुत आग्रहपूर्वक अर्जकी, इसलिये भील-
। चातुर्मास स्वीकृत नहीं हुआ।

पश्चात् श्रीजी महाराज चित्तौड़ पधारे। वहां भी ओसवालों
[illegible] थीं, वे पूज्य श्री के सदुपदेश से एक होगई। यहां भी
कोठारीजी आदि दर्शनार्थ पधारे थे और चित्तोड़ के ओ-
में [illegible] कराने में उनका मुख्य हाथ था। महेश्वरी
[illegible] के बीच भी कलह था, वह पूज्य श्री के उपदेश

इस वर्ष पूज्य श्री के चातुर्मास के लिये नयेशहर के श्री
को अत्यन्त अभिलाषा थी, जिससे नयेनगर के श्रावकों ने ज
इत्यादि स्थानों पर श्रीजी की सेवा में उपस्थित हो प्रार्थना की
और उन्हें कुछ आशा भी होगई थी, परन्तु जब दूसरी ओर
यपुर संघ का भी सम्पूर्ण आकर्षण था और खुद नामदार महारा
कुमार साहिब की भी पूज्य श्री का चातुर्मास उदयपुर कराने
प्रबल आकांक्षा थी। श्रीमान् महाराजकुमार साहिब बहुत ही
प्रेमी गुणग्राही, तत्वजिज्ञासु और दयालु दिल वाले
उच्च भावनाओं में ऐसा बल रहता है कि उन्हें उत्तम वस्तु
योग मिल ही जाता है, कुछ न कुछ निमित्त आ मिलता है।
चातुर्मास में पूज्य श्री जब जयपुर विराजते थे तब उदयपुर के
सुयोग्य श्रावक श्रीयुत कन्हैयालालजी चौधरी ना० महाराज
के अंगोछे तथा कमरबंद छपाने वास्ते जयपुर आये थे तब
ने श्रीजी महाराज के दर्शन तथा वाणी श्रवण का लाभ
था और सं० १९७४ के कार्तिक शुक्ला ११ के रोज वे पी
पुर गए और श्रीमान् महाराजकुमार साहिब को सब
निवेदन की, पूज्य श्री के अमृतमय उपदेश की यथार्थ प्रशं
तब महाराजकुमार साहिब ने फरमाया कि भविष्य का
श्री को यहां करना कल्पता है या नहीं, उत्तर में चौ
की कि, हां हुजूर कल्पता है, यह सुन महारा

ती से कहा कि तुम, आगामी चातुर्मास पूज्य श्री यहां करें,
इस अभी से पूरी २ कोशिश करो ।

त्र माह में पूज्य श्री मन्नासा विराजते थे; तब पन्नालालजी
विनन्ती करने के वास्ते भेजे थे। पूज्य श्री जावद पधारे वहां
यपुर के कई श्रावक विनन्ती करने वास्ते आये थे और अर्ज
कि महाराजकुमार की भी प्रबल आकांक्षा है कि आगामी
स उदयपुर में हो तो बहुत ठीक हो, परन्तु पूज्य श्री की तरफ
कृति का उत्तर न मिला। चैत्र शुक्ला ११ के रोज कोठारी
ाहिब उदयपुर आये और चौधरीजी कन्हैयालालजी को
विनन्ती के वास्ते भेजे। उन्होंने उदयपुर पधारने से बहुत
होना संभव है, ऐसा विश्वास दिलाया। तब श्रीजी महा-
ी तरफ से कुछ आशाजनक उत्तर मिला। महाराजकुमार जब
पधारे और उनके पूछने पर सब हकीकत निवेदन की गई।
ी चित्तौड़ पधारे तब महाराजकुमार साहिब की आज्ञा से
[illegible] चौधरी चित्तौड़ विनन्ती के लिये गए और
[illegible] भी गए थे।

[illegible] पधारे तब उदयपुर से [illegible]लालजी [illegible]
[illegible], पन्नालालजी [illegible] तथा [illegible]लालजी
[illegible] पूज्य श्री से अर्ज की कि चातुर्मास
[illegible] है [illegible] में [illegible] है, इसलि

आप उदयपुर की ओर विहार करो तो बड़ी कृपा हो,
पूज्य श्री ने फरमाया कि नयेशहर के श्रावकों को जावर
पर उनकी विनन्ती पर से नयेशहर शेषकाल फरमाने
मैं उन्हें आशाजनक वचन दे चुका हूं और मेरे पांव में
होगई है, ऐसी स्थिति में व्यावर होकर उदयपुर आना
इस पर से उदयपुर से आये हुए चारों भाई व्यावर गए
के संघ से सब हकीकत निवेदन की, तब व्यावर के श्र
कहा कि जो महाराज साहिब का व्यावर चातुर्मास न हो
इतना चक्कर खाकर व्यावर पधारने की तकलीफ़ वे न
अच्छा है, कारण कि उनके पांव में बहुत व्याधि रहती है
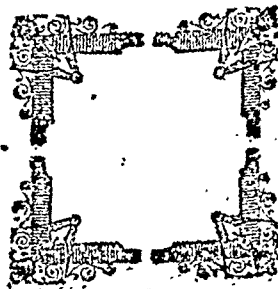
अध्याय ४३ वाँ।

आर्याजी का आकर्षक संथारा।

हां से विहार कर पूज्य श्री ज्येष्ठ माह में राश्मी पधारे। वहां
को खबर मिली कि रंगूजी आर्याजी की सम्प्रदाय के सती-
राजकुँवरजी ने उदयपुर में संथारा किया है और आपके
ी उनके दिल में पूर्ण अभिलाषा है इसलिए पूज्य श्री ने
की ओर विहार कर दिया। संवत् १९७५ के आषाढ़ वदी
ाज उदयपुर शहर के बाहर दिल्ली दरवाजे से निकल आगे
कोठारी साहिब बलवंतसिंहजी की बगीची है, वहां ठहरे।

ाड़ी में थोड़े समय विश्राम ले श्रीजी महाराज आर्याजी को
ाने के लिए शहर की ओर जाने लगे। वाड़ी के बाहर निक-
[illegible] नामक एक उदयपुर का खटीक १३१ बकरों को लेकर
[illegible] लिए जा रहा था। पूज्य श्री के साथ [illegible] लाला
[illegible] मेहता रतनलालजी इत्यादि थे। [illegible]
[illegible] होने से पूज्य श्री [illegible] और
[illegible] पूज्य श्री के पास [illegible]
पूज्य श्री की ओर देखने लगे, [illegible] विनय [illegible]

प्राप्त करना चाहते हों या अभयदान दिलाने की भिक्षा चाह
ऐसा भास होता था। उन्होंने उस खटीक से प्रश्न किया कि
को तूं कहां ले जावेगा। खटीक ने धूजते २ उत्तर दिया
क्या करूं मेरा यह धंधा है इसलिए इन्हें मारने ले जा र
सुनकर महाराज का हृदय बहुत करुणार्द्र होगया और
सांस निकल गई, लालाजी केसरीमल जैसे प्रसिद्ध श्रावक
ही खड़े थे वे पूज्य श्री की मुख मुद्रा पर से उनके म
समझ गए और मेहता रतनलालजी से कहा कि इन
को अभयदान मिलना चाहिए और इसमें जो खर्च ह
दूंगा। यह सुन श्रीयुत रतनलालजी मेहता ने खटीक को
देना ठहरा कर सब बकरों को छुड़ा दिये और दूसरों
होते भी आप अकेले ने ही कुल रकम दे महान लाभ उ
तरह पूज्य श्री के उदयपुर में पदार्पण करते ही १२१
प्राण बचने पाये।

पश्चात् सतीजी श्री राजकुँवरजी कि जिन्होंने जाव
संथारा कर दिया था उनके पास आये और तबियत के
पूज्य श्री के दर्शन से उन्हें परम हुलास प्राप्त हुआ औ
कहा, कि आपके पधारने से मैं कृतार्थ हुई, आर्याजी क
और चढ़ते परिणाम देख श्रीजी महाराज सानंदाश्चर्य हुए

प्राप्त करना चाहते हों या अभयदान दिलाने की भिक्षा मां
ऐसा भास होता था। उन्होंने उस खटीक से प्रश्न किया कि इन
को तूं कहां ले जावेगा। खटीक ने धूजते २ उत्तर दिया कि "
क्या करूं मेरा यह धंधा है इसलिए इन्हें मारने ले जा रहा
सुनकर महाराज का हृदय बहुत करुणार्द्र होगया और
सांस निकल गई, लालाजी केसरीमल जैसे प्रसिद्ध श्रावक
ही खड़े थे वे पूज्य श्री की मुख मुद्रा पर से उनके मनो
समझ गए और मेहता रतनलालजी से कहा कि इन
को अभयदान मिलना चाहिए और इसमें जो खर्च होगा
दूंगा। यह सुन श्रीयुत रतनलालजी मेहता ने खटीक को रुपये
देना ठहरा कर सब बकरों को छुड़ा दिये और दूसरों
होते भी आप अकेले ने ही कुल रकम दे महान लाभ उठा
तरह पूज्य श्री के उदयपुर में पदार्पण करते ही १२१
प्राण बचने पाये।

पश्चात् सतीजी श्री राजकुँवरजी कि जिन्होंने जाव
संथारा कर दिया था उनके पास आये और तबियत के
पूज्य श्री के दर्शन से उन्हें परम हुलास प्राप्त हुआ और
कहा, कि आपके पधारने से मैं कृतार्थ हुई, आर्याजी
और चढ़ते परिणाम देख श्रीजी महाराज सानंदाश्चर्य हु

र्याजी का संथारा बहुत दिनतक चला। पूज्य श्री भी नित्य
र्मामृत का पान कराते थे। उनकी सेवा में १६ आर्याजी थीं।
निरंतर शास्त्रों की स्वाध्याय करने का सतीजी श्री राजकुँवरजी
ा रक्खा था और आप स्वयं बहुत ध्यान से स्वाध्याय
करते थे। उनका उपयोग इतना शुद्ध था कि कोई भी
ी उच्चारण में एक अक्षरकी भी भूल करदेतीं तो तुरंत वे उसे
ी थीं।

क दिन रात को खूब वृष्टि होरही थी। जिस मकान में सती-
संथारा किया था उसकी छत प्रथम से ही खुली पड़ी
और जब वर्षा होती थी, तब उस मकानमें पानी भर जाता
सलिये श्रावकों को रातभर चिंता हुई कि सतीजी को बहुत
पड़ता होगा, परन्तु सुबह तपास करने पर ज्ञात हुआ कि
ा एक बूंद भी छतमें से न गिरा।

संथारा किये बाद ३४ वें दिन पूज्य श्री सतीजी को साता
हमेशा की नाईं गए और तबियत के समाचार पूछे। उस
में सतीजी ने यह दोहा कहा—

मरने से जग डरत है, मुझ मन बड़ा आनंद।
कब मरस्यां कब भेटस्यां, पूरण परमानंद॥

ाप्त करना चाहते हों या अभयदान दिलाने की भिक्षा
ऐसा भास होता था। उन्होंने उस खटीक से प्रश्न किया कि
को तूं कहां ले जावेगा। खटीक ने धूजते २ उत्तर दिया कि
या करूं मेरा यह धंधा है इसलिए इन्हें मारने ले जा रहा
सुनकर महाराज का हृदय बहुत करुणार्द्र होगया और
ांस निकल गई, लालाजी केसरीमल जैसे प्रसिद्ध श्रावक
ो खड़े थे वे पूज्य श्री की मुख मुद्रा पर से उनके मनो
मझ गए और मेहता रतनलालजी से कहा कि इन
ो अभयदान मिलना चाहिए और इसमें जो खर्च होगा
गा। यह सुन श्रीयुत रतनलालजी मेहता ने खटीक को
ा ठहरा कर सब बकरों को छुड़ा दिये और दूसरों
ते भी आप अकेले ने ही कुल रकम दे महान लाभ उठा
ह पूज्य श्री के उदयपुर में पदार्पण करते ही १३
ण बचने पाये।

पश्चात् सतीजी श्री राजकुँवरजी कि जिन्होंने जाव
ारा कर दिया था उनके पास आये और तबियत के
य श्री के दर्शन से उन्हें परम हुल्लास प्राप्त हुआ और
हा, कि आपके पधारने से मैं कृतार्थ हुई, आर्याजी के
र चढ़ते परिणाम देख श्रीजी महाराज सानंदाश्चर्य हुए

अध्याय ४४ वां ।

राजवंशियों का सत्संग ।

पुर के इस चातुर्मास में भी पूज्य श्री पंचायती नोहरे में
। और व्याख्यान में हजारों मनुष्य आते थे। राज्य के
वैष्णव तथा मुसलमान इत्यादि बड़ी संख्या में उपस्थित
।

मान् महाराणा साहिब के ज्येष्ठ भ्राता बाबाजी सूरतसिंहजी
कई समय पूज्य श्री के दर्शनार्थ पधारे थे और उनके
से पूर्ण संतुष्ट हो पूज्य श्री के पूरे भक्त बन गए थे ।
सूरतसिंहजी साहिब एक धर्मात्मा और तेजस्वी पुरुष थे ।
तक उन्होंने अन्न का परित्याग किया था, सिर्फ फल, दूध
की बनी हुई चीजें पेड़े, बरफी इत्यादि के ऊपर ही निर्वाह
, बहुत वर्ष तक उन्होंने ब्रह्मचर्य पालन किया था । जीव
। और उनका पूर्ण लक्ष्य था । बहुत वर्षों से उन्होंने मांस,
का त्याग कर दिया था, इतना ही नहीं, परन्तु श्रीमान्
जी साहिब के मारफत कई समय बकरों को अभयदान
था और जो जीवों को अभय दान दे अपने द्रव्य का सद्-

अर्थात् जग सब मरने से डरता है, परन्तु मेरे मन में तो आनन्द है कि कब मरूंगी और कब पूरण परमानंद से मिल (प्राप्त करूंगी)।

देशावर से हजारों लोग पूज्य श्री के तथा सतीजी के दर्शनार्थ आते थे, और सतीजी के अखूट धैर्य को देख आनंद पाते थे। दिनोदिन उनकी कांति और मनके परिणाम बढ़ते ही गये। अंत समय तक शुद्धि रही, किसी समय मुंह से एक शब्द ऐसा न निकला कि जिससे उनकी कायरता प्रतीत हो।

संथारे में श्रीमान् कोठारीजी साहिब को सतीजी ने फरमाया श्रीदरबार को एक सिंह को अभयदान देने बाबत अर्ज़ करना उस आफिक श्रीमान् महाराणा साहिब की सेवा में कोठारीजी ने अर्ज़ की थी और महाराणा साहिब ने बहुत खुसी से वह अर्ज मंजूर और याद रखकर पूर्ण करदी और संथारे की सब हकीकत कोठारीजी से सुन उन्होंने सतीजी की बहुत प्रशंसा की थी।

संथारा ३९ दिन चला, श्रावण वद १० के रोज रात नौ बजे के करीब संथारा सीझा. उस समय एक तारा आकाश से खिरा, उस पर से पूज्य श्री ने अनुमान किया और पास बैठे हुये श्रावकों से कहा कि सतीजी का संथारा इस समय सीझा हो ऐसा मालूम होता है, इसके थोड़े मिनट बाद ही सतीजी के स्वर्ग गमन की खबर मिली।

आप सूर्यवंशी हैं, दिलीप से गोपालक, हरिश्चन्द्र से सत्यवादी रामचंद्रजी के समान धर्मधुरंधर महात्माओं ने जिस वंशको किया था उसी वंश में आप उत्पन्न हुए हैं। अभी आप राम- की गादी पर हैं इसलिए आपको धर्मकी पूर्ण रक्षा करनी । जीवों की रक्षा करना यह आपका परमधर्म है । जैनधर्म की जैन साधुओं की ओर आप प्रेम तथा बहुत मान की दृष्टि से हैं यह देख मुझे बड़ा आनंद होता है । आपके पूर्वज भी जैन ओर हमेशा सहानुभूति रखते थे और आपके पिता श्री ान नरेश) दयाधर्म की ओर पूर्ण ध्यान रखते हैं। महाराणा के दयामय कार्यों की मैंने बहुत २ प्रशंसा सुनी है उन्होंने रक्षा कर शिशोदिया के कुल को दिपाया है, आपभी उनका ण कर धर्म की रक्षा करेंगे । पूर्व धर्म की रक्षा करने से ही है, उत्तम कुल और राज्यवैभव मिला है, आप अभी के राजा हैं, परन्तु धर्म की विशेष रक्षा करने से देवों के ंद्र) भी हो सकते हैं ।

ज श्री ने यह श्लोक विस्तार से समझाया—

अष्टादश पुराणेषु व्यासस्य वचनं द्वयम् ।
परोपकाराय पुण्याय पापाय परपीडनम् ॥

देश सुन महाराजकुमार बहुत प्रसन्न हुए ...
र मोहनविलास महल में पधारे ।

पयोग करते थे । संवत्सरी के दिन बाबाजी सूरतसिंहजी साहि
पूज्य श्रीजी से अर्ज की कि आज बड़ा भारी संवत्सरी का दि
और बाई, भाई बृहत् संख्या में व्याख्यान में इकट्ठे होवे
मनुष्य के लार एक २ बकरा अभयदान पावे तो सैकड़ों को
दान मिलेगा । इन पुण्यात्मा पुरुष की हितसलाह उदयपुर
श्राविकाओं ने तत्काल स्वीकृत की और प्रायः दो, दो
बकरों को अभयदान देने का प्रबंध किया । बाबाजी साहि
स्वर्ग सिधारगए हैं । पास के पृष्ठ पर आपका चित्र दिया
बेदला के रावजी साहिब श्रीमान् नाहरसिंहजी साहिब भी
के दर्शनार्थ पधारे थे ।

उदयपुर के नामदार श्री कुँवरजी बावजी श्री श्री १
भूपालसिंहजी साहिब जो पूज्य श्री की अपूर्वता से पूर्ण
उन्होंने पूज्य श्री का दर्शन व उपदेश सुनने की इच्छा दर्शा
१९७५ श्रावण सुदी ८ के रोज सज्जननिवास बाग के
महल में (जिसकी पूज्य श्री ने चातुर्मास पहले ही रिया
आज्ञा लेली थी) समागम हुआ । दूर से देखते ही श्रीमान्
कुमार साहिब पग में से बूंट निकाल पूज्य श्री के समीप
नमस्कार कर महाराज के सन्मुख बैठ गए । उस समय उन
कितनेक राजकीय गृहस्थ भी थे । उस समय पूज्य श्री ने
चित उपदेश देते हुए कहा कि:—

रीन की शीशी पूज्य श्री को भेट करने लगे और कहा कि इस
मे थोड़ीसी शक्कर पानी में डालने से बहुत पानी मीठा होजाता
और आप को यह शीशी बहुत दिनों तक चलेगी। फिर महा-
ज श्री ने साधुओं के कठिन नियम की हकीकत कह सुनाई
हमें खाने पीने की कोई भी चीज सामने न लाईहुई स्वीकार नहीं
नी पड़ती है, इतना ही नहीं, परन्तु पहिले प्रहर का लाया हुआ
हार पानी चौथे प्रहर में हमसे भोगना भी नहीं हो सकता,
सब हकीकत सुन दोनों अंग्रेज़ चकित होगए और शीशी
राज श्री के कार्य में नहीं आई, इसलिये दिलगीर हुए। उन्होंने
ा कि आप शीशी न ले सको तो खैर, परन्तु इस चीज में
ास का कितना अधिक तत्व है, वह तो आप थोड़ा सा पानी
ाकर उसमें से थोड़ी सी यह चीज डाल कर पी देखो कि जि-
े आप को खात्री होजाय। महाराज ने यह भी स्वीकार नहीं
या, तब साहिब ने कहा कि हम आपके उपकार का बदला कैसे
सकते हैं?, महाराज ने कहा—आप कर्तव्यपरायण बने, दया-
ले और धर्म निभाईं। यही हमारे लिये भारी से भारी लाभ-
ा कारण है। टेलर साहिब १९७१ के चातुर्मास में भी पूज्य श्री
े पास आते थे, सं० १९७५ में पूज्यश्री चितोड़ शेष काल पधारे
ब भी वे पूज्य श्री के पास आये थे।

आसोज सुदी ११ के रोज महाराज कुमार साहिब ने
पूज्य श्री के दर्शन और वार्तालाप का लाभ सज्जन
बाग में लिया। कुमार साहिब बाग में पधारे थे,
पूज्य श्री को दूर से जाते देख गिरधारीसिंहजी (
साहिब के पुत्र) को पूज्य श्री के सामने भेज
में पधारने बाबत अर्ज़ की। पूज्य श्री पधारे और सदु
लाभ उठाया।

इस चातुर्मास में तपस्वीजी श्री मांगीलालजी तथा
महाराज ने बड़ी तपश्चर्या की थी। इसके उपलक्ष में
म अर्ज़ कर एक दिन अगता रखाया था। और उदय
ने बड़ी जेल तथा छोटी जेल के कैदियों को मिठाई
खिलाने वास्ते महाराणा साहिब की मंजूरी ली थी।
कैदियों को मिठाई खिलाई गई, परन्तु बड़ी जेल के
का रोग चलता था इसलिए साहिब ने इन्कार कर
फिर महाराणा साहिब की परवानगी ले छोटी जेल
दूसरी वक्त मिठाई खिलाई गई।

मेवाड़ के ओपियम एजेंट टेलर साहिब इस च
पूर्ववत् आते थे। एक दिन वे अपने साथ एक
को भी पूज्य श्री के पास लेते आये। वे भी
परिचय से अत्यंत प्रसन्न हुए और अपने

ाहर जंगल से आगए, इनकी इन बकरों पर दृष्टि पड़ी, इतने में खटीकने कहा कि ये जानवर न मरें तो ठीक हो, यह कहकर दोनों बकरों को ले नोहरे के आगे खड़ा रहा । श्रावकों को मिलते ही श्रीयुत नंदलालजी मेहता ने आकर मेना से कहा म राह से बकरे ले जाने की मनाई है, तू क्यों लाया? सर- की ओर से बाजार में तथा महाजन और ब्राह्मणों की बस्ती गलियों में से किसी भी मनुष्य को बकरे मारने के लिये ले मना है । इस पर से उन दोनों बकरों को छुड़ा कसाई पास नगरसेठ के वहां भेज दिये । जो बकरे नगरसेठ के वहां जाते हैं उनके कान में कड़ी डाली जाती है वे बकरे मारे नहीं सकते । उन बकरों को अमरे कर दिये ऐसा इधर मेवाड़ देशा में बोलते हैं । अमरे किये हुये बकरों की रक्षा का प्रबन्ध की ओर से होता है । श्रीमान् मेदपाटेश्वर ने इनके लिये ीन, मकान, मनुष्य और खर्च इत्यादि का पूर्ण प्रबन्ध कर खा है । महाराणा साहिब इतने अधिक दयालु और प्रजावत्सल कि वे अपने या अपने सम्बन्धी जनों के या राज्य के चाहे जि- बड़े ओहदेदार के लिये कानून का बराबर अमल हो इसकी ख्याल रखते हैं । मेवाड़ के रेजीडेन्ट साहिब कर्नल पायली [illegible] अनूपपुर की भानजेरी में आगये. उनको भी यहां के कानू- के कायदे मुताबिक छुड़ा लिये और नगर सेठजी के पास भेज

गुणग्राही विदेशियों में सात्विक वृत्ति होती है इस कार
जैसा देखते हैं वैसा सत्य कहने में डरते नहीं हैं। गुजरात काठि
वाड़ के अनुभवी और पूज्यश्री के व्याख्यान में राजकोट में
स्थित रहनेवाली मिसिस स्टीवनसन्स् लिखती हैं कि--

"Their standard of literary (405 males and
females per 1000) is higher than that any o
community save the Parsis and they proudly
that not in vain in their system are practical e
wedded to Philosophical speculation for their cri
record is magnificently white."

राज्यकर्त्ता जाति यों कहती है कि जैनों में नियम और
ज्ञान फिलासोफी ऐसी है कि जैन कौम छाती ठोक कह सक
कि जैनियों में गुन्हेगारों की लिस्ट आश्चर्यपूर्वक कि
कोरी है। गुन्हगारों की लिस्ट में जैनियों का नाम शायद ही
होगा।

यह प्रमाणपत्र कम आनंददायक नहीं, इस प्रमाणपत्र
लाने की कुल जवाबदारी जैन मुनिराजों पर है, जो अभी
स्टीमर के कप्तान गिने जाते हैं।

एक दिन दो बड़े बकरे प्रेमा नाम का खटीक पंचायती
के पास से ही सिंहों की खुराक के लिये ले जाता था। इतने

ार पच्च की भानजी तथा चाँदकुँवर बाई की पौत्री थी। धार्मिक
ं की छाप उत्तरोतर कैसी प्रबल पैठती है, उसका यह एक
ण है।

बेताड़ जिले के ग्राम कणेरा के सुश्रावक छोटमलजी कोठारी
ी के दर्शनार्थ उदयपुर आये। पूज्य श्री के सदुपदेश से उनके
ं परिग्रह से मूर्च्छित भाव आये। कुछ अंश में कम करने
भिलाषा उत्पन्न हुई। उन्होंने उसी समय रुपया दश हजार
र्म कार्य में व्यय करना निश्चय किया और व्याख्यान में नंद-
श्री मेहता द्वारा जाहिर किया कि "रु० ५०००) उदयपुर पाठशाला
दि शुभ कार्य में खर्च करने तथा रु० ५०००) अकाल पीड़ित
णियों को सहायता देने के लिए मैं अर्पण करता हूं" इसके
ाा रु० १२४१) का एक खत भी उदयपुर श्री संघको उन्होंने
समय अर्पण कर दिया।

चातुर्मास पूर्ण होने पर उदयपुर में धर्म का पूर्णतः उदय कर
श्री ने वहां से विहार किया। वे आयड़ हो गुरुड़ी पधारते
उदयपुर से ६ माइल दूर है, गुरुड़ी की सीमा में पूज्यश्री पधारे;
रस्ते में उदयपुर का खाटा मोती नामका एक खटीक ८४
ो लेकर मारने के लिये उदयपुर जाता था, उस समय पूज्य श्री
ड़ी की सीमा में एक आम्रवृक्ष के नीचे विराजते थे। कुछ

द्वारा गिरवा जिले के हाकिम ऊपर हुकम फरमाया गया कि जो
बलिदान नये सिरे से होना प्रारंभ हुआ हो तो बंद करदो। यह हु
पाकर मावली के थानेदार और गिरवा के गिरदावर ने माता
स्थानक पर जाकर तलाश की और बलिदान नये सिरे से होता
ऐसा सबूत मिलने से श्रीमान् मेवाड़ाधीश्वर के हुक्म अनुसार
नहीं होने बाबत वहां के लोगों से मुचलका लिखा लिया
जामिन भी ली, तब से माता के पास पाड़ों, बकरों का बलिदान
होना बंद होगया। चातुर्मास व्यतीत हुए बाद पूज्य श्री जब
हो कानोड़ पधारे तब खेरादे वालों ने अर्ज की कि महाराज आप
प्रताप और मेहता नंदलालजी के सुप्रयास से पाड़ों, बकरों का
होना हमेशा के लिए बंद होगया है।

श्रीयुत मांगीलालजी गुगलिया, उनकी पत्नी तथा कुटुम्ब स
दर्शनार्थ आये थे। वहां उस बाई के शरीर में अचानक व्याधि
होजाने से बाई की प्रार्थना पर से श्रीजी महाराज ने प्रथम ति
और फिर चउविहार संथारा कराया था। बाई ने सम्पूर्ण
में आलोयना प्रायश्चित्त किया। दो दिन संथारा रहा और आ
सुदी १५ के रोज उनका स्वर्गवास होगया। पाठकों को याद
कि इस बाई ने बालवय से ही ब्रह्मचर्य व्रत, तथा चारों
करीब ४॥ वर्ष से ऊपर होगए, किये थे और उनके पति ने भी २
की उम्र में सजोड़ शीलव्रत धारण किया था। यह बाई पूज

धार पच की भानजी तथा चाँदकुँवर बाई की पौत्री थी। धार्मिक
रों की छाप उत्तरोत्तर कैसी प्रबल पैठती है, उसका यह एक
रण है।

चित्तौड़ ज़िले के ग्राम कणेरा के सुश्रावक छोटमलजी कोठारी
श्री के दर्शनार्थ उदयपुर आये। पूज्य श्री के सदुपदेश से उनके
में परिग्रह से मूर्च्छित भाव आये। कुछ अंश में कम करने
अभिलाषा उत्पन्न हुई। उन्होंने उसी समय रुपया दश हजार
र्थ कार्य में व्यय करना निश्चय किया और व्याख्यान में नंद-
जी मेहता द्वारा जाहिर किया कि "रु० ५०००) उदयपुर पाठशाला
दि शुभ कार्य में खर्च करने तथा रु० ५०००) अकाल पीड़ित
णियों को सहायता देने के लिए मैं अर्पण करता हूं" इसके
ाय रु० १२४१) का एक खत भी उदयपुर श्री संघको उन्होंने
ी समय अर्पण कर दिया।

चातुर्मास पूर्ण होने पर उदयपुर में धर्म का पूर्णतः उदय कर
श्री ने वहां से विहार किया। वे आकोड़ हो गुरुड़ी पधारते
उदयपुर से ६ माइल दूर है, गुरुड़ी की सीमा में पूज्य श्री पधारे,
समय में उदयपुर का माया मोती नामका एक खटीक ८४
रे लेकर मारने के लिये उदयपुर जाता था, उस समय पूज्य श्री
ड़ी की सीमा में एक आमवृक्ष के नीचे विराजते थे। कुछ

बकरे पूज्य श्री से तीन चार हाथ दूर उस आम्रवृक्ष की छाया के
नीचे बैठगए, उस समय पूज्य श्री के साथ उदयपुर के श्राव
नंदलालजी मेहता, श्रीयुत प्यारचंदजी वरड़िया तथा श्रीयुत कन्है
यालालजी वरड़िया तथा गुरुड़ी के भी श्रावक थे। पूज्य श्री ने
भाणा खटीक को एक हृदयभेदक लावनी सुनाई तथा असरकार
उपदेश दिया, जिससे खटीक ने कहा कि मुझे मुद्दल रक
मिलजाय तौभी मैं ये सब बकरे महाजनों के सुपुर्द करदूं। मोपाल
रसीद है तत्काल बकरे छुड़ादिये गये और गुरुड़ी पींजरापोल
कि जो उदयपुर के कोठारीजी श्री बलवंतसिंहजी की सहायता
प्रयास से चलती है, उसमें रखदिये गये।

सं० १९७५ के चातुर्मास पश्चात् पूज्य श्री कानोड़ भीण्
डाह में पधारे। करीब १०० स्कंध हुए। बहुत से अन्यदर्शनी
सुलभ बोधी हुये और उनमें कितने ही अन्य दर्शनियों ने जैन
अंगीकार किया।

वहां से विहार कर पूज्यश्री बड़ी सादड़ी पधारे, उस समय
सादड़ी के जैनियों और बोहरों में बहुत कुसम्प बढ़गया था।
लोगों की ओर से जीवहिंसा की वृद्धि करने वाला मिलता हुआ अ
ही इस कुसम्प वृक्ष का बीज था। बात यहां तक बढ़गई थी
सादड़ी के बोहरों के साथ वहां के महाजनों ने लेनदेन व्यापार

कार्य बन्द कर दिया था। श्रीमान् आचार्य श्री ने सादड़ी
ारने पर उस कुसम्प को भगाने और परस्पर भ्रातृभाव बढाने
लिये हमेशा उपदेश देना प्रारंभ किया जिसका शुभ परिणाम
हुआ कि निम्नांकित शर्तें होकर वोहरे लोगों के साथ समा-
न होगया।

१ सादड़ी के तालाव में कोई मछली न पकड़े और न मारे।

२ प्रत्येक एकादशी और अमावास्या के रोज जीवहिंसा न हो?

३ श्रावण, भाद्रपद और वैशाख तथा अधिक मासमें किसी
भी दिन जीवहिंसा न हो।

४ आमराह में एवं प्रकटमें मांस ले कोई वाहर न निकले।

उपर्युक्त शर्तें वोहारे लोगों ने सब लोगों के सामने कुरान की
ाथ ले मन्जूर की। दोनों पक्षों में कुसम्प दूर होने से सब तरफ
ानंद होगया और सब पूज्य श्री की अनुकरणीय अनुग्रह
ादि की मुक्तकंठ से प्रशंसा करने लगे। उस समय पूज्यश्री यहां
ेक मास तक ठहरे थे और इस बीच में अनेक उपकार के
ार्य हुये थे।

अध्याय ४६ वाँ।

सुयोग्य युवराज।

वर्तमान साल में इन्फ्लूएञ्जा नामका भयंकर रोग समग्र भारत में फैलगया था। उदयपुर शहर पर भी आश्विन मास में उसका भयंकर आक्रमण प्रारंभ हुआ। इस दुष्ट रोगने पूज्य श्री को भी अपने पंजे में लिया। ऐसे सख़्त ज्वर में भी पूज्य श्री अपने नित्य नियम शुद्धोपयोग पूर्वक करते थे और समभाव से वेदना सहते थे। थोड़े ही दिन में आराम तो होगया, परन्तु व्याधि के दिनों में ही पूज्य श्री ने औदारिक शरीर का क्षणभंगुर स्वभाव समझ पूर्वजों की कीर्ति कायम रखने, सम्प्रदाय की सुव्यवस्था और समुन्नति होने के लिये न्यायविशारद, पंडितरत्न श्री जवाहरलालजी महाराज को सर्वथा सुयोग्य समझ उन्हें सम्प्रदाय का भार सौंपना निश्चय किया और अपना यह निश्चय उदयपुर के संघ के अग्रेसर श्रावकों एवं रतलाम, अनेक शहर, ग्राम के भाई यानों को, कि जो पूज्य श्री के दर्शनार्थ उदयपुर आये थे, कह सुनाया। सबने अत्यानन्दपूर्वक पूज्य श्री के इस सुविचार की प्रशंसा की। कारण कि श्रीमान् जवाहरलालजी महाराज ने ज्ञान, चारि

शक्ति में और अणगार पद को सुशोभित करें ऐसे उत्तमो-
गुणों में ऐसी तो असाधारण उन्नति की है कि आपकी
ता करने वाले वर्तमान समय में कोई विरले ही साधु होंगे।
पद को दिपावें, ऐसे सर्वगुण उनमें विद्यमान हैं। दक्षिण
महाराष्ट्र में जिन्होंने जैन धर्म की विजयपताका फहराई है,
जैन और जैनेतर लोग उन्हें जैनियों के दयानन्द सरस्वती
हैं। स्व० लोकमान्य तिलक ने उनकी असाधारण ज्ञान-
और अद्वितीय वाक्-चातुर्य की मुक्तकंठ से प्रशंसा की है
स्वरचित गीतारहस्य नामक पुस्तक में जैनधर्म के विषय में
हुए उल्लेख में उनके कथनानुसार सुधार करने की इच्छा प्रकट
। ऐसे पुरुष पूज्य श्री के उत्तराधिकारी हों और श्रीमान् हुक्मी-
महाराज की सम्प्रदाय की कीर्ति समुज्वल करते रहें इसमें
आश्चर्य है ? इसलिये सबकी सलाह अनुसार पूज्य श्री ने सं०
७५ के कार्तिक शुक्ला २ के रोज व्याख्यान में श्रीमान् जवाहिर-
श्री महाराज को युवाचार्य पदपर नियुक्त किये, ऐसा जाहिर
। जिससे सकल संघ में आनन्दोत्सव छागया। यह खबर
पुर श्रीसंघ ने डेपुटेशन द्वारा पंडित-प्रवर श्री जवाहिरलालजी
राज को पहुंचाई और पछेवड़ी की क्रिया तपस्वी स्थेवर मुनि
मोतीलालजी महाराज के हाथ से करने बाबत आचार्य श्री ने
या। जवाहिरलालजी महाराज उस समय दक्षिण में विराजते

अध्याय ४६ वाँ ।

सुयोग्य युवराज ।

वर्तमान साल में इन्फ्लूएन्ज़ा नामका भयंकर रोग सम
भारत में फैलगया था । उदयपुर शहर पर भी आश्विन माव में
उसका भयंकर आक्रमण प्रारंभ हुआ । इस दुष्ट रोगने पूज्य श्री
भी अपने पंजे में लिया । ऐसे सख़्त ज्वर में भी पूज्य श्री अप
नित्य नियम शुद्धोपयोग पूर्वक करते थे और समभाव से वेद
सहते थे । थोड़े ही दिन में आराम तो होगया, परन्तु व्याधि
दिनों में ही पूज्य श्री ने औदारिक शरीर का क्षणभंगुर स्वभ
समझ पूर्वजों की कीर्ति कायम रखने, सम्प्रदाय की सुव्यव
और समुन्नति होने के लिये न्यायविशारद, पंडितरत्न श्री जव
हरलालजी महाराज को सर्वथा सुयोग्य समझ उन्हें सम्प्रदाय
भार सौंपना निश्चय किया और अपना यह निश्चय उदयपुर
संघ के अग्रेसर श्रावकों एवं रतलाम, अनेक शहर, ग्राम के
जनों को, कि जो पूज्य श्री के दर्शनार्थ उदयपुर आये थे, कह सुना
सबने अत्यानन्दपूर्वक पूज्य श्री के इस सुविचार की प्रशंसा
कारण कि श्रीमान् जवाहरलालजी महाराज ने ज्ञान, चारि

त्र शक्ति में और अणगार पद को सुशोभित करें ऐसे उत्तमो-
गुणों में ऐसी तो असाधारण उन्नति की है कि आपकी
नता करने वाले वर्तमान समय में कोई विरले ही साधु होंगे।
ार्य पद को दिपावें, ऐसे सर्वगुण उनमें विद्यमान हैं। दक्षिण
महाराष्ट्र में जिन्होंने जैन धर्म की विजयपताका फहराई है,
के जैन और जैनेतर लोग उन्हें जैनियों के दयानन्द सरस्वती
ते हैं। स्व० लोकमान्य तिलक ने उनकी असाधारण ज्ञान-
क्ति और अद्वितीय वाक्-चातुर्य की मुक्तकंठ से प्रशंसा की है
र स्वरचित गीतारहस्य नामक पुस्तक में जैनधर्म के विषय में
हुए उल्लेख में उनके कथनानुसार सुधार करने की इच्छा प्रकट
थी। ऐसे पुरुष पूज्य श्री के उत्तराधिकारी हों और श्रीमान् हुक्मी-
जी महाराज की सम्प्रदाय की कीर्ति समुज्वल करते रहें इसमें
न आश्चर्य है ? इसलिये सबकी सलाह अनुसार पूज्य श्री ने सं०
७५ के कार्तिक शुक्ला २ के रोज व्याख्यान में श्रीमान् जवाहिर-
लजी महाराज को युवाचार्य पदपर नियुक्त किये, ऐसा जाहिर
या। जिससे सकल संघ में आनन्दोत्सव छागया। यह खबर
यपुर श्रीसंघ ने डेपुटेशन द्वारा पंडित-प्रवर श्री जवाहिरलालजी
हाराज को पहुंचाई और पछेवड़ी की क्रिया तपस्वी स्थेवर मुनि
मोतीलालजी महाराज के हाथ से करने बाबत आचार्य श्री ने
रमाया। जवाहिरलालजी महाराज उस समय दक्षिण में विराजते

थे। उन्हें यह खबर मिलते ही आपने पूज्य श्री से दूर विचरते
समय होजाने से पूज्य श्री के दर्शन का लाभ ले उनके करकम
से पछेवड़ी धारण करने की अभिलाषा दिखाई। चातुर्मास
होने पर उन्होंने दक्षिण से मालवे की तरफ विहार किया औ
आचार्य श्री मेवाड़ से मालवा की ओर पधारे। रतलाम में दोनों
महापुरुषों का समागम हुआ और वहां सं० १६७६ के
वदी ६ के दिन पूज्य श्री ने अपने कर-कमल से पंडित श्री
जवाहिरलालजी महाराज को युवाचार्य पद पर चतुर्विध संघ
समक्ष नियुक्त किये और अपने मुबारिक हाथ से पछेवड़ी धार
कराई। इस अलभ्य अवसर का लाभ लेने के लिये बाहर ग्राम
बहुत भाई उत्सुक थे। रतलाम संघ ने भारतवर्ष के प्रत्येक मुल्क
शहरों में खबर पहुंचाई थी, जिससे संख्याबद्ध श्रावक श्रावि
उपस्थित हुए थे।

पंचेड़ से ठाकुर श्री चैनसिंहजी इत्यादि भी पधारे थे। लेख
ने अपनी जिंदगी भर में ऐसा उत्सव न देखा था। तीर्थंकरों
समवसरण का संस्मरण होवे, ऐसा भव्य दृश्य था। उस सम
का वर्णन बहुत लिखा जा सकता है, परन्तु पुस्तक बढ़ जाने के भ
से 'कान्फ्रेन्स प्रकाश' में प्रसिद्ध किया हुआ हाल ही यहां पाठ
के अवलोकनार्थ उद्धृत कर देते हैं।

अध्याय ४७ वाँ ।

...ाम में श्रीमान् पंडितरत्न श्री श्री ...०८ श्री जवाहिरलालजी महाराज ...ाहिब को युवाचार्य पदकी चादर ओढ़ाने का महोत्सव ।

...प्रत्येक प्रांत में से करीब २०० ग्राम के लगभग
...र आठ हजार मनुष्यों का अपूर्व सम्मेलन ।

...मान् महाप्रतापी महाराजाधिराज श्री श्री १००८ श्री
...दजी महाराज की सम्प्रदाय के वर्तमान जैनाचार्य श्रीमान्
...धिपति महाराजाधिराज १००८ श्री श्री श्रीलालजी महाराज
... ने उदयपुर में गत साल चातुर्मास में अपने शरीर में व्याधि
...अनेक शारीरिक कारणों से परम्परा की रीत्यनुसार सम्प्र-
...गौरव के संरक्षणार्थ तथा मुनि महाराजों की साल संभाल
...एवं उन्हें ज्ञान, दर्शन, चारित्रादि गुणों की वृद्धि में सहायता
...त्यादि सम्प्रदाय रूपी कल्पवृक्ष को यथावत् स्थित रखने के
... से महाराष्ट्र देश में विचरते उपरोक्त सम्प्रदाय के जाति-

कुल सम्पन्न विद्वद्रत्न पंडित-शिरोमणि मुनि महाराज श्री
१००८ श्री जवाहिरलालजी महाराज को सब तरह योग्य
सं० १६७६ के कार्तिक शुदी २ के रोज उदयपुर के सर्व संघ
सम्प्रदाय के युवाचार्य जाहिर किये थे। उसकी चादर-प
ओढ़ाने वास्ते (श्रीमान् महाराज साहिब के पूर्वजों ने भी
महत् कार्यों में रतलाम को ही योग्य समझ मान दिया था,
सार) श्रीमान् पूज्य महाराज साहिब ने भी रतलाम पधार
कृपा की और श्रीमान् युवाचार्यजी महाराज को भी उदयपुर
के अग्रेसरों तथा रतलाम संघ के नेता श्रीयुत वर्द्धभाणजी पी
तथा श्रीयुत बहादुरमलजी बांठिया भीनासर वालों ने शहर
(जिला अहमदनगर) में जाकर मालवे की ओर पधारने
प्रार्थना की। तदनुसार श्रीमान् युवाचार्य महाराज ने दक्षिण
अनेक ग्रामों के संघ की पछेवड़ी का उत्सव दक्षिण में क
महती अभिलाषा होने पर भी श्रीमान् आचार्य महाराज सा
दर्शनार्थ तथा श्रीमान् आचार्य महाराज साहिब के कर-क
यह बख्शीस लेने वास्ते बहुत परिश्रम उठाकर उग्र विहार
लाम पधारने की कृपा की। श्रीमान् आचार्य महाराज साहिब ने
शुक्ला ५ गुरुवार के रोज और श्रीमान् स्थवर महात्मा त
श्री मोतीलालजी महाराज ने मय युवाचार्य महाराज के
शुक्ला १० मंगलवार को रतलाम शहर पावन किया, जिन

। तथा भक्तिभाव प्रकट करने के लिये रतलाम संघ के सब श्रावक
ाकाएं तथा अन्य धर्म के भी बहुलसे धर्मप्रेमी बन्धु बहुत दूर २
भक्तिपूर्वक रतलाम शहर में लाये। इन महापुरुषों के आगमन
ृश्य भी बड़ा ही भव्य और चित्ताकर्षक था। श्रीमान् उभय
के पधारने बाद युवाचार्य पदकी पछेवड़ी प्रदान करने
प्रसंग मिती चैत्र वदी ९ बुधवार ता० २६-३-१९ का
ाया। यहां यह लिखने की आवश्यकता है कि श्रीमान्
महाराज़ के करकमल से श्रीमान् युवाचार्य महाराज को
लाम में बख्शी जायगी, यह खबर हिन्द के प्रत्येक विभाग
ाने से अनेक देशवासी बन्धुओं ने उभय महापुरुषों के
। ही दर्शन करने तथा इस अपूर्व प्रसंग का लाभ लेने के
लाम श्रीसंघ से बार २ आग्रह किया था, कि युवाचार्य
ःसव के शुभ प्रसंग का लाभ लेने से हम वंचित न रहजायं,
हमें अवश्य खबर मिलनी चाहिए। इसपर से रतलाम
तरफ से साधारण रीति से कार्ड तथा चिट्ठी द्वारा हिन्द
क विभागों में आमंत्रण पत्रिकाएं भेजीगई थीं जिसे मानदे
क प्रत्येक विभाग में से करीब २०० ग्रामों के हजारों श्रावक
। तथा अनेक प्रतिष्ठित अमेसरों ने यहां पधार कर रतलाम
लौकिक शोभा में अभिवृद्धि की थी। उनके उतरने तथा भोजन
र रतलाम श्रावकों की तरफ से उचित प्रबन्ध किया था।

कितने ही अति उत्साही वन्धु तो श्रीमान् महामुनियों के पधा
की खबर मिलते ही इस शुभ प्रसंग का दिन नियत होने की
पहुंचने के पहले ही पधार गए थे। मुंबई संघ के खास नेता
मेघजी भाई थोभण तथा हैदराबाद निवासी लाला सुखदेवसह
के सुपुत्र लाला ज्वालाप्रसादजी इत्यादि बहुतसे श्रावक पधारे
परन्तु सांसारिक अनेक कारणों से रुकने की प्रबल उत्कंठा हो
अधिक दिन का अवकाश न मिलने से वे इस महत् कार्य में
प्रसन्नता प्रकट कर पीछे चले गये थे। चैत्र वदी ५ के रो
बहुतसे श्रावक, श्राविकाएं आने लगीं और चैत्र वदी ८
हजारों श्रावक श्राविकाएं उपस्थित होगईं। यह महत् कार्य
वर्ष के सर्व संघकी सम्मति से रीत्यनुसार होना आवश्यक
कर चैत्र वदी ८ मंगलवार ता० २५-३-१९ के रोज रात
बजे हनुमान रुडी के भव्य मैदान में प्रत्येक ग्राम से पध
श्रावकों के मुख्य २ प्रतिनिधियों तथा रतलाम संघ के प्रति
की एक समस्त संघ सभा एकत्रित कीगई। और नवमी के
काल को जो महत्कार्य होने वाला था, उसका प्रोग्राम नक्की
गया तथा आवश्यक अनेक कार्यों का निकाल कर अत्
ठहराव किये गये।

ता० २६ मार्च १९१९ मिती चैत्र वदी ९ बुधवार
काल के छः बजे से श्रीमान् आचार्य महाराज विराजते

ज़ारों श्रावक श्राविकाओं की मेदिनी पचरंगी, नाना-
ं से सजी हुई बहुत तेज़ी से चमकने लगी। उस छटा
ूर्व था। श्रीमान् पूज्य महाराज के पधारने के दिन
, श्राविकाओं को उस भव्य मकान के कम्पाउन्ड में
हो सकने से सड़क के आम रास्ते पर शामियाना खड़ा
था। तथा नीचे तख्त बिछाये गये थे, परन्तु इतने में
मनुष्य कैसे बैठ सकें? इसलिये तम्बू फिर बढ़ाया गया।
ास के और सामने के पांच २ सात २ मकानों के
तथा सड़क पर लोगों की अत्यंत भीड़ होगई।

समय श्रीमान् पंचेड़ ठाकुर साहिब (जिला रतलाम)
हजी साहिब कि जो रतलाम नरेश के मुख्य सर्दार हैं
ल्से को सुशोभित करने के लिये ही पंचेड़ से यहां पधारे
शहर के अन्य अग्रेसर भी पधारे थे। करीब ८ बजे श्री-
चार्य महाराज तख्त पर विराजमान हुए। उपस्थित साधु,
श्रावक, श्राविका चतुर्विध संघ तथा अन्य सभाजनों ने उप-
भक्तिपूर्वक सत्कार किया, तथा वंदना कर जयजिनेंद्र
र आलापते हुये यथायोग्य स्थान पर बैठगये। पश्चात्
आचार्य महाराज ने प्रभु-प्रार्थना आदि मंगलाचरण फरमा
नन्दीजी सूत्र की सज्झाय फरमाई। पश्चात् श्री युवाचार्यजी
ा को कितनी ही अत्युपयोगी सूचनाएं कर अपने शरीर

पर धारण की हुई निज पछेवड़ी (चादर) को प्रसन्नतापूर्वक
स्थित सब मुनि महराजाओं ने हाथ लगाकर चतुर्विध संघ
समक्ष " जयजिनेंद्र " "आचार्य महाराज की जय" "युवाचा
महाराज की जय" "जैन शासन की जय " इत्यादि अनेक
नाद गर्जना में धारण कराई। निस्संदेह वह दृश्य अलौकिक था
उसे किसी भी रीति से कहने के लिये हमारे पास शब्द नहीं
वह चादर धारण कर श्रीमान् युवाचार्यजी महाराज ने श्रीमा
आचार्य महाराज को तथा श्रीमान् स्थवरमुनि श्री मोतीलाल
महाराजको यथाविधि उठ बैठ कर वंदना की। पश्चात् सर्व मुनि
ने युवाचार्य महाराज को यथाविधि खड़े हो वंदना
पश्चात् उपस्थित करीब ७५-८० महासतियों ने यथा विधि
वंदना की। बाद श्रावक श्राविकाओं ने वंदना की। उक्त वंद
क्रिया समाप्त हुये बाद श्रीमान् युवाचार्य महाराज नीचे के प
से उठ श्रीमान् आचार्यजी महाराज के समीप आसनारूढ
सामान मुनि हरकचंदजी महाराज ने उठ कर सब मुनि मह
की ओर से उक्त कार्य के लिये अपना संतोष प्रकट किया
श्रीमान् आचार्य महाराज की तरह युवाचार्य महाराज की
पालन करना स्वीकार किया। उसे श्रीमान् हीरालालजी म
ने अनुमोदन दिया, तत्पश्चात् भारतवर्षीय समस्त संघ की
निम्नलिखित महाशयों ने अपना संतोष प्रदर्शित कर अनुमोदन

(१) श्रीयुत उदयपुर नगर के सेठ नंदलालजी की तरफ से
लालाजी साहिब केसरीलालजी (उदयपुर)
(२) ,, सेठ चंदनमलजी पीतलिया अहमदनगर
(३) ,, जौहरी सेठ मुन्नीलालजी सकलेचा जयपुर
(४) ,, वर्धभाणजी पीतलिया रतलाम
(५) ,, सेठ पन्नालालजी कांकरिया नयानगर
(६) ,, मास्टर पोपटलाल केवलचंद राजकोट
(७) ,, प्रतापमलजी बांठिया बीकानेर
(८) ,, फूलचंदजी कोठारी भोपाल
(९) ,, नन्दलालजी मेहता उदयपुर
(१०) ,, कुंवर गाढ़मलजी साहिब लोढ़ा अजमेर

पश्चात् भंडारी केसरीचंदजी साहिब (देवास) ने बाहर
गांवों के कितने ही अग्रेसरों के, जो अनिवार्य कारणों से न
आ सके थे, उनके तार तथा पत्र पढ़ सुनाये, उन्हें यहां सविस्तर
न देते सिर्फ नाममात्र प्रकट किये जाते हैं—

(१) श्रीयुत जनरल सेक्रेटरी सेठ बालमुकुन्दजी साहिब
मूथा, सतारा
(२) ,, वाडीलालजी मोतीलाल शाह मुंबई
(३) ,, कामदार सुजानमलजी साहिब बांठिया नताप

(४) राजश्री कोठारीजी साहिब श्री बलवंतसिंहजी
प्रधान रियासत उदयपुर (मेवाड़)

(५) ,, जमशेदजी रुस्तमजी साहिब चीफ
रियासत जावरा (मालवा)

(६) श्रीयुत कुंदनमलजी फिरोदिया बी. ए. एलएल
अहमदनगर

(७) ,, वछराजजी रूपचंदजी पांचोरा (खानदे

(८) ,, सेठ रतनलालजी दौलतरामजी वागली (ख

(९) ,, परमानन्दजी वकील बी. ए. कसूर (पं

इनके सिवाय अनेक दूसरे सद्गृहस्थों से भी अनुमोद
आये थे। इन सब पत्रों में मुख्य आशय इस कार्य में अत्यन्त
पूर्वक अनुमोदन तथा मुबारिकबादी देने उपरांत स्वयं
न हो सके इसलिये लाचारी दिखाई थी।

पश्चात् युवाचार्यजी महाराजने उक्त पद का भार स्वीकृत
हुए अपने तथा चतुर्विध संघ के कर्तव्यों का अत्यन्त अ
शब्दों में दिग्दर्शन कराया था। फिर पंडित दुःखमोचन झा
निवासी ने समयोचित गायन तथा विवेचन बहुत ही उत्तम
से किया था। उसमें श्री आचार्य महाराज के साथ श्री सं
क्या कर्तव्य है, उसका प्रतिपादन उत्तम रीति से किया था।

श्रीयुत सेठ वर्द्धमाणजी ने विवेचन करते श्रीमान् आचार्य
ज साहिब तथा श्रीमान् युवाचार्य महाराज साहिब ने इतने
मपूर्वक यहां पधार कर रतलाम पावन किया तथा ऐसे मह-
का लाभ भी रतलाम को ही दिया इसके लिये श्री संघ की
से उपकार जाहिर किया तथा श्रीमान् रतलाम नरेश तथा
सर वर्ग, जिन्होंने इस कार्य में पूर्ण सहानुभूति दिखाई है
। उपकार प्रदर्शित किया तथा श्रीमान् पंचेड़ ठाकुर साहिब
पधारे हुए श्राविक, श्राविका तथा अन्य महाशयों का संघ
से उपकार प्रदर्शित किया। इस महान् कार्य में यहां के स्वधर्मी
नों ने तन, मन, धन से लाभ उठाने के वास्ते
हुए साहिबों का आदर सत्कार, उतरने तथा भोजन
बनाकर वालण्टियरों के समान जो अपूर्व सेवा बजाई है तथा
म संघ को महान् यश प्राप्त कराया है उन्हें भी धन्यवाद दिया,
(जयजिनेन्द्र की दिव्य ध्वनि के साथ व्याख्यानसभा विस-
ई। उस समय यहां के संघ तरफ से प्रभावना बांटी गई थी।

दोपहर के दो बजे श्रीयुत जालिमसिंहजी कोठारी इन्दौर राज्य
धकारी कमिश्नर साहिब का व्याख्यान हुआ, जिसके असर
मे महाविद्यालय खोलने बाबत कई उदार गृहस्थों की ओर से
रे रकमों के वचन मिले, परन्तु वे स्कीम मंजूर होने बाद प्रकट
आयेंगे। उस दिन नयेनगर निवासी सज्जनों ने आत्मभोग

दें रु० १५००) के पंचेन्द्रिय जीव छुड़ाये । समस्त शहर में काम की दूकानें, भट्टियें, घाणियें इत्यादि आरम्भ तथा हिंसा के काम बन्द रक्खे गए थे । उस दिन रात को भी एक जनरल मीटिंग की गई थी जिसमें विद्यालय, पाठशाला इत्यादि ज्ञानवृद्धि के सम्बन्ध में अनेक भाषण हुए थे । जीवदया के लिये एक फंड हुआ जिसमें रूपये २५००) इकट्ठे हुए ।

ता० २७-३-१९ के रोज व्याख्यानों में सभा का ठाठ पूर्ववत् ही था, जिसमें फिर नथमलजी चोरड़िया का विद्यालय के सम्बन्ध में व्याख्यान हुआ और उस समय भी कितने ही मेम्बर मिले । पश्चात् मीरी जिला अहमदनगर निवासी के अग्रसरों ने वहां की गोशाला में दुष्काल से दुःख पाती गायों के लिये फंड इकट्ठा कर उनकी रक्षा करने की प्रार्थना की जिसमें क़रीब २०००) की मदद मिली ।

श्रीमान् जैनाचार्य महाराजाधिराज १००८ श्री श्रीलाल जी महाराज साहिब के व्याख्यान में 'जैनों की उन्नति कैसे होसकती है' इस विषय पर बहुत ही मनन करने योग्य विवेचन हुआ। आचार्य श्री ने फरमाया कि जबतक समाजमें स्वार्थत्यागी स्वयंसेवक उपस्थित हो, गरीब और निराधार जैनियों की संभाल नहीं ले और वे सिर्फ थोड़े दिन सम्मेलन में उपस्थित हो समाज के अग्र-

घर चले जायँ वहांतक उन्नति होना कठिन है। अधिक नहीं तो
पचास ही स्वयंसेवक हमेशा जैनसमाज की सार संभाल
रहें तो समाज की अवनति होना रुक जाय और थोड़े ही
य में समाजकी दशा निःसंदेह उदय होजाय, परन्तु वे स्वयं-
क सद्गुणी सदाचारी न्यायी और पक्षपातादि दोषरहित होने
हिये।

ऐसे महाशय ... पांच वक्त ये ... पर असर उत्पन्न कर सकते हैं।
कई ... समझ उपरोक्त नियमानुसार
... नाम लिखाया।

यों यहां ... स्तृत वर्णन लिखा जाय तो एक
पुस्तक तैयार ... पेपर में सिर्फ सारांश ही प्रकट
या गया है कि ... ओं को कंटाला न आवे और
उसमें से कुछ काट ... सकें। इति शुभम्

रतलाम श्री संघ

(कान्फ्रेन्स प्रकाश ता० २२ एप्रिल १९१९)

रतलाम में शेषकाल का समय पूरण हुआ था ही कि उस
य एक पत्र जावरा स्टेट के चीफ सेक्रेटरी साहिब का श्रीमान्
वर्धमाणजी पर आया, उसमें उन्होंने लिखा था कि मेरी

ओर से महाराज साहिब को निवेदन करें कि आपका चातुर्मास जावरे में होगा तो बहुत ही उपकार होगा, रतलाम से विहार कर खाचरोद–उज्जैन की ओर पधारे, वहां जावरा के श्रावकों ने चातुर्मास के लिये आग्रह किया, इसलिये सं० १९७६ का चातुर्मास जावरा किया। किसे खबर थी कि यह पूज्य श्री का अन्तिम चातुर्मास है।

बहुत वर्ष से जावरा निवासी व्याख्यानों की अभिलाषा और प्रार्थना थी वह इस वर्ष सफल थमलजी चोरड़िया ३ सोमवार को २ ठाणे से आचार्य श्री और उस समय आषाढ शुक्ला १० रोज जयपुर निवासी चौथमलजी अहमदनगर करीब १७ वर्ष की उमर में दीक्षा ली। दीक्षा वहां का उत्सव जस दुःख संघ ने बहुत धूमधाम से अति उत्साहपूर्वक किया, कई प्रार्थना की प्रकार मनुष्य बाहर गांव के आये थे। किसी धर्मद्वेषी ने इस मतलब की अर्जी दी कि चौथमलजी को बलात्कार जाती है इसपर से दीवान साहब ने एक दिन प्रथम जावरा स्टेट के चीफ सेक्रेटरी जमशेदजी शेठ ने चौथमलजी को अपने पास बुलाया, कई श्रावक भी उनके साथ थे, जमशेदजी शेठ ने कई विचित्र प्रश्नों से इनके वैराग्य की कसौटी की, प्रत्येक प्रश्नका उत्तर बहुत ही संतोषकारक मिला, जिसे सुनकर वे बड़े प्रसन्न हुये, उनका समाधान हुआ, और दीक्षा की आज्ञा देदी।

आवरा के चातुर्मास में सागर वाले सेठ चांदमलजी नाहर
टुम्ब पूज्य श्री के दर्शनार्थ पधारे थे। उनकी पत्नी ने वहां
गाई की थी, इसके उपलक्ष्य में भादवासुदी ३ को उत्सव मनाया
। था, जिसमें ३० ग्राम के करीब २००० मनुष्य बाहर के
ये थे।

पंचेड़ के श्रीमान् ठाकुर साहिब चैनसिंहजी व्याख्यान का लाभ
। लेने के वास्ते पांच वक्त यहां पधारे थे।

इस चातुर्मास में पूज्य श्री को अनेक उपसर्ग सहन करने
परन्तु आप स्वयं कभी नाहिम्मत या निराश न हुए, न कभी
ये, परन्तु सत्यपथ पर कायम रहे। और घबरानेवाले श्रावकों
हिम्मत देते कि असत्य की कलक बहुत समय तक नहीं टिक
गी, सत्य ही की अंत में जय होती है। इसलिये सत्य को
। करो, सत्य को अनुमोदन दो, फिर स्वयं सत्य प्रकाशित हो
गा।

इस समय कान्फ्रेन्स आफिस दिल्ली थी। समग्र श्री संघ की
फेंस और प्रकाश पत्र का खास कर्तव्य तो पड़ी हुई छोटी दराड़
ही मिटाना था। जो उन दिनों का प्रकाश पक्षपात में न
।, समाधान करने बाबत अपना सुप्रयास प्रचलित रखता
जलते में घी न होमता तो यह बात इतने से ही

जाती। छोटी २ दराड़ से बड़े खोखले न पड़ते और आगरा कमेटी में सब लेख पीछे खींच लेने न पड़ते। सुभाग्य से पीछे प्रकाश में यह विषय न लेने बावत ठहराव हुआ था।

लाला लाजपतराय के कलकत्ते की खास कांग्रेस में कहे हुए निम्नांकित शब्दों का यहां स्मरण हो आता है। " जब लोगों की इच्छा का ज्वालामुखी फटता है तब उसका पाप आंदोलन करने वालों के सिर पड़ता है।

अध्याय ४८ वाँ।

सवालाख रुपयों का दान।
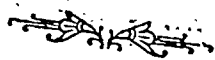
जावरा से मालवा मेवाड़ की ओर के विहार में छोटीसादड़ी
सेठ नाथूलालजी गोदावत ने सवालाख रुपयों का दान प्रकट
[illegible]या था। जिस रकम के व्याज में अभी श्रीगोदावत जैन
[illegible]श्रम छोटीसादड़ी में चलता है। एक तो रास्ते से दूर एक
[illegible] में छोटासा ग्राम, दूसरे आत्मभोगी कार्यकर्ताओं की त्रुटि,
[illegible] दोनों कारणों से इस आश्रम का लाभ चाहे जैसा हम नहीं उठा
[illegible]ते। जबतक स्वार्थत्यागी आत्मभोगी काम करनेवाले नहीं
[illegible]लेंगे वहां तक दान वगैरह का सदुपयोग नहीं होगा।

इस विहार में युवराज भी शामिल थे। सब मुनिराज नये
[illegible] पधारे और वहां कल्पते दिन ठहरे। दोनों मुनिराज सूर्य
[illegible]न्द्र की तरह जैनधर्म की ज्योति का अपूर्व प्रकाश फैला

[illegible]नाम में थे पीछे आये हुए जावरे वाले संतों की प्रेरणा से
[illegible]जयपुर और अजमेर के श्रावकों ने नयेशहर जाकर पूज्य

से अजमेर पधारने की प्रार्थना की, जहां जावरे के संतों से मि
कर चारित्र के सम्बन्ध में मतभेद का समाधान होने की श
दिखाई ।

इस अत्याग्रह को मान दे पाली हो डुंगराल प्रदेश और ग
का परिसह सहन कर भी पूज्य श्री अजमेर पधारे। वहां
समाचरी के अनुकूल योजनाएं निश्चित कीगई। उदयपुर महारा
साहिब ने श्रीमान् कोठारीजी बलवंतसिंहजी जैसे अनुभवी
कार्यदक्ष पुरुष को सुलह के मिशन में जाने बाबत परवानगी
थी। पूर्ण कोशिश हुई। पूज्य श्री ने समाधानी के वास्ते कोशि
करने में कमी न की, परन्तु समाधानी की आशा उड़ जाने से पू
श्री ने वहां से विहार कर दिया ।

उस समय लेखक अजमेर हाजिर था। और जैनपथप्रद
वाले भाई पद्मसिंहजी तथा जैनजगत वाले भाई धारशीजी डा
तथा भिन्न २ शहरों के श्रावकों के समक्ष जो २ प्रयास और
चीतें हुई वे अक्षरसः यहां लिखी जायं तो सत्यासत्य समझना स
होजाय, परन्तु मैंने जिनके पवित्र जीवन लिखने के लिए यह क
उठाई है उन महात्मा के मनोभाव की याद आते ही उनके जीव
चरित्र में क्लेष वर्णन का एक बिंदु भी न लिखना ऐसी प्रे
हो जाती है ।

विहार के समय एक मुनि ने मध्य बाजार में पूज्य श्री को
सामने अविवेकपूर्ण वचन कहे थे, परन्तु मानों आपने
ी न हों दिलमें जरा भी क्रोध न लाते आगे बढ़ते ही गए।
। मुकाम पर उस अविवेकी मुनि ने पूज्य श्री से माफी चाही
य श्री ने बिलकुल निर्मल भाव से जवाब दिया कि तुम्हारे
ैने एक कान से सुन दूसरे कान की ओर से निकाल दिये
लिए मुझे माफी की जरूरत नहीं है, परन्तु जब साथ के
ों ने बहुत अनुनय विनय की, तब मुंह से ही नहीं, परन्तु
अपमान करने वाले साधु के सिरपर हाथ रख माफी के साथ
में सुदृढ़ रहने की आशिष दी, तब देखने वालों की आंखों
भराये बिना न रहे।

अजमेर में इकट्ठे हुए श्रावकों ने अजमेर छोड़ते समय सुलह
शा भी छोड़दी। ममत्व के पास निष्पक्षपात और शास्त्रानु-
ाय करने वालों को भी निराश होना ही पड़ता है। यह
का दृश्य एक पत्र-सम्पादक के शब्दों में ही यहां प्रसिद्ध
। बहुत से बादल इकट्ठे हुए, गंभीर गर्जनायें भी हुईं, बिजली
ी, वर्षात के सब चिन्ह हुये, परन्तु अंत में यह सब
व्यर्थ गया, बादल बिखर गये, तृषातुर चातक निराश हो गये,
ों ने अपनी कला खिलादली, ममत्व की चढ़कर आई हुई
रजकणों से बहुतों की आंखें लाल होगई। निराशा की

निरुत्साह की श्याम रेखा कइयों के वदन पर फिर गई, उत्सा
आये हुए निश्वास छोड़ पीछे फिरे, परन्तु आकाश में ऊंचे च
सूर्य देवता ने आश्वासन दिया कि धैर्य रक्खो, सत्यकी ही
और मैं वर्षात को पलटा कर गर्मी से गभराये हुओं को
कराऊंगा।

डरपोक श्रावकों की सहनशीलता को भी धन्य है!
सेना के सेनापति हो करके समाजसेना का सत्यानाश करें,
स्टीमर के कप्तान हो करके जहाज को खराबी में ला छिन्न
करें, धर्म के नाम से ही अधर्म का जाल बिछा निरपराधि
फांसा जाय, ये तो भ्रष्टाचार की अनुमोदना ही है और
सहाय करने वाले श्रावक समाज के शत्रु गिने जायँ!

एक सज्जन को क्लेश की शान्ति के बारे में लिखा
इसका उत्तर पाठकों के मनन करने योग्य होने से उन्हीं के
में यहां लिखा जाता है, आपने लिखा कि "मुनि क्लेश को
करो, तो मुनि क्लेश दोनों को सहयोगी स्थान कैसे?
में क्लेश नहीं रह सकता और क्लेश में मुनिपन नहीं रह

एक गुणानुरागी मुनिराज ने मुझे लिखे हुए पत्र के
शब्द पक्षपातियों को अर्पण:—

शिथिलाचार की पछेवड़ी में ढँकाते हुए साधु शरीर को तो मैं चमड़ी में सज्ज हुआ सियाल ही समझता हूँ, विचारे दूसरे की तो क्या ताकत परन्तु कुछ म प्रतिबिम्ब दिखाकर सिंह ाह फंसा देता है। ऐसे सियालों को ढूंढ निकालने में श्री तनी बेपरवाही, आलस्य और टालमटूल करेगा उतना ही का किला पोला होता चला जायगा। किले का एक आध ढीला होजाय और जल्द ही उसे दुरुस्त कर दिया जाय ठीक नहीं तो वह गुम्मज ही दुश्मनों को राह दे देता है। ों को निर्मूल करने की संजीवनी मात्रा एक ही है वह यह सियालों से समाज को होशियार रखना और इस रोग के प्रसार फैलाते हुए रोकना'।

ाचीन संस्कृत विभूति और गौरव के अमूल्य तत्वों से प्रका- ा संघ का यह अंग अपनी अस्वस्थता समझ गया है। ानना चाहता है उठकर खड़े रहना मांगता है, परन्तु पक्ष- घोंघाट प्रयत्नों की सफलता में विलम्ब करते हैं। अब त्याग खड़े हो जागृत होने का जमाना है। सागर पर से आती हुई लहरें झेलने को तैयार होने का समय है। चारों बैठन कर, विहार को राह दे, पक्षपात को निर्मूल कर, अा- समझा और कुसम्प का निवारण करने के वास्ते कटिबद्ध

होना चाहिये । यह उपयोगी और कठिन कार्य है कुछ
खेल नहीं है ।

जो चिन्ता हो, इच्छा हो, कर्त्तव्य का भान हो तो
निर्दयी स्वभाव, शान्त जीवन, संयम सार्थक और सतत
शीलता का सेवन करो ' सोये तानी सोड़ ' का कलंक धो,
समाजोन्नति करने का कलश तुम पर ढोलने दो ।

अपने में रहा हुआ मनुष्यत्व अपने को पुकार पुकार
कहता है कि—

" पक्ष छोड़ पारखी निहाल देख नीकी कर " व्याख्
पहिले यह वाक्य हररोज सुनते भी कान बहरे हो जायँ तो
सार्थकता क्या ? अपने प्रातःस्मरणीय पूर्वजों का स्मरण करो,
और तुम्हारा पूज्यभाव हो तो उनकी आज्ञा सिर पर
उनके सौंपे हुए समाज रक्षा के सुकार्य को हाथ में लो, वे
या श्रावकों के गुलाम न बने थे ।

शुद्ध सात्विक जीवन व्यतीत करना, आत्मबल खिलाना,
त्मिक उन्नति करना, यह आर्य के प्राचीन संस्कारों का
भौतिक सिद्धान्त आध्यात्मिक प्रगति के बीच में कभी
सकते । संयम सागर की जीवन नौका में सोते समय,

की दिशा बदलते समय, पवित्रता का वेष पहिनते समय,
प्रतिज्ञाओं को याद करो, उस मंगलमुहूर्त में मिले हुए मंत्रों
ण करो जिसके लिये प्राण लगा दिये हैं उसे प्राण की
समझो, अन्तरात्मा के नाद को बेपरवाह कभी मत करो।

हात्माओं और अनुभवियों के उपरोक्त शब्द याद कराने की
इसलिये हुई है कि समाज अभी गरम होकर प्रवाही बन
, इनके सामने ढाल प्रतिबिम्ब हाजिर हो तो घाट भी बन
है। निडर लेखक श्रीयुत् वाड़ीलाल मो० शाह सत्य लिखते
' समस्त दुनियां एक साथ एक सी समझदार कभी न हुई
कभी होगी, जो थोड़े स्वभाव से शक्तिवान है, परन्तु उनकी
विकृत शिक्षा से घट गई हैं उन 'थोड़ों को' अपनी जागृति
ी आवश्यकता है इन थोड़ों के बाद लोकगण को
इच्छा शक्ति से पीछे कर लेंगे……नीचे खड़े रह
झने की अपेक्षा, ऊँचे खड़े हो नीचे देखना सीखना चाहिये
से प्रथक्करण करते इस आंदोलन में अनावश्यक, अमानुषता
कण अधिक प्रमाण में हुआ है, निर्मल कीर्ति की परवाह
ाओं की न्यूनता से और हिम्मत से कार्य करनेवालों के कर्तव्य
रवाही ने इस आंदोलन में जोर से पवन फूंक दिया है।
मय साधु और श्रावकों को भूल का भान कराने वाले और
ी शब्द मात्र से दूसरों की बोली बंद कर देने वाले

अमरचन्दजी पीतलिया का स्मरण हुए बिना नहीं रह स
प्रभाव और बनिये की रीति से समझाने और ठिकाने लाने
राय सेठ चांदमलजी साहिब और समाधान करने में पूर्ण
अनुभवी राजश्री गोकुलदास राजपाल, जो इस समय कोठारी
साथ अजमेर होते तो आज भी संयम संरक्षा का विज
फहराता । शांत मुद्रा और शास्त्रों की आज्ञा से दूसरों को
करने वाले सेठजी बालमुकुंदजी मूथा और भद्रिक स्वभाव
बहादुर सुखदेवसहायजी जौहरी हाजिर होते तो प्राचीन
निभाने के लिये मथने वालों को लताप्रहार सहन करना न
श्रीयुत वाड़ीलाल बीच में न पड़े होते तो स्वमान संभालते
ठिकाने लगा देते ।

अभी भी समाज में अग्रेसर पद के योग्य अनेक श्राव
जमान है वे निष्पक्षपात हृदय से आगे आकर वर्तमान
श्रीमान् कोठारीजी की तरह खड़े रहे तो चारित्र संयम क
सरलता से हो सके । बहुरत्ना वसुंधरा ।

अध्याय ४६ वां ।

◌पुर महाराणा के भतीजे ने लग्न के समय पशुवध बंद किया ।

◌मान् आचार्यजी महाराज अजमेर से विहार कर नयेनगर ◌ौर श्रीमान् युवाचार्य जी महाराज ने बीकानेर की तरफ़ किया । नये शहर पूज्य श्री कितने ही दिन विराजे । चातु- ◌ी नयेनगर होने की संभावना थी इसके लिये कालक्षेप करने ◌ासपास मारवाड़ में पूज्य श्री विचरने लगे । अनुक्रम से, ◌त पूज्य श्री बावेर पधारे । बावेर के श्रावकों ने पूज्य श्री के ◌श से १००-१५० बकरों को अभयदान दिया । पूज्य श्री ◌ावेर विराजते थे तब उस समय महाराणा उदयपुर के भतीज ◌ी महाराज हिम्मतसिंहजी के कुंवर साहेब की बरात बावेर ◌ीप राश ग्राम है वहां के ठाकुर साहेब के वहां आई थी । ◌ी बावेर विराजते हैं ऐसी खबर मिलते ही हिम्मतसिंहजी ◌ि सरदार बावेर पधारे और पूर्व परिचय के कारण अर्ज की ◌ार पांच दिन वहां ठहरेंगे इसलिये आप राश पधार

की कृपा करें तो हमें अत्यंत लाभ हो। श्रीमान् ने फरमाया कि
राश आने का अवसर नहीं है सबब कि वहां आप की मेहमा
में पशु पक्षियों के बध होने की संभावना है, तब उन्होंने अर्ज
कि महाराज ! हम हिंसा बिलकुल न होने देंगे।

आप राश पधारने की कृपा करें। तत्पश्चात् ठाकुर श्री ने राश
आज्ञा की कि 'हमारे लिए बिलकुल जीवहिंसा न करें'। इससे
से १७५ बकरों को सहज ही अभयदान मिल गया। पूज्य श्री
पधारे। वहां व्याख्यान में शीवरती महाराज श्रीमान् हिम्मता
साहिब तथा अन्य सरदार, स्वमती और अन्यमती लोग बड़ी सं
में उपस्थित होते थे। राशके कामदार ने १०१ बकरों को
यदान दिया, श्रावकों ने भी बहुत से बकरों को अभयदान दि
श्रीयुत भाव वाले के नीचे के विचार मांसाहारी लोगों को
करने योग्य है, सादी जिंदगी और स्वच्छ खुराक यह अपना
लेख होना चाहिए। जैसा खाते हैं वैसा ही अपना स्वभाव
है अपनी खुराक में तामस की चीजें बहुत पड़ी हुई है अपनी
के लिए अपन मनुष्य तक का जीव ले लेते हैं अपन मांस
खाने के लिये खून पर चढ़ जाते हैं, जहांतक ऐसे निर्दोषों के
न रुकें वहां तक अपन में से चोरी, लूटपाट, दगा, फाटका,
बदमाशी का अंत सरलता से नहीं हो सकता।

या का धर्म जब अशोक राजा ने स्थापित किया तब हिन्दू-
न की बनावट हो सकी। दयाधर्म जब राजकुमार पाल ने स्थापित
ा तब गुजरात की आबादी हुई। दयाधर्म जब राणी विक्टोरिया
ज़माने में प्रारंभ हुआ तब लोग संतोषी बनने लगे, परन्तु अपना
आज स्वार्थी, क्रूर और अधम बनता जाता है। पहिले अपने
इसका त्याग करना चाहिये, दया से शांति होती है किसी का
गुन्हा हो तो उस पर दया करनी चाहिए, इनकी रक्षा करने
भ्रातृभावना का राज्य अपने में जल्द हो सकेगा।

गूंगे, दीन, निर्दोष और मूक प्राणियों पर जुल्म करना या
पर तेज छुरी चलाना निर्दयता है जिसका त्रास अपने को भी
ना पड़ता है इसलिए अपने को सब जगह दया का प्रचार करना
हिए।

राश से पूज्य श्री कोकिन पधारे, वहां वे एक सप्ताह तक ठहरे
वहां श्रीजी के दर्शनार्थ विकटवर्ती ग्रामों के सैंकड़ों श्रावक आते
करीब ४०० बकरों को जसनगर में अभयदान मिला। वहां से
र कर आषाढ़ वदी १ के रोज पूज्य श्री तांवोया पधारे, वहां के
र साहिब पूज्य श्री के व्याख्यान में आये। उनके हृदय पर
श्री के व्याख्यान का अत्यंत ही असर हुआ। ठाकुर साहिब ने
ने ही नियम तथा प्रत्याख्यान किये और चार बकरों को अभ-
न दिया। दूसरे भी बहुत से लोगों ने नानाप्रकार की प्रतिज्ञाएं

आषाढ़ वदी २ के रोज पूज्य श्री कालू पधारे। वहां पूंसाला लजी कोठारी ने खजोड़ चौथेव्रत का स्कंध लिया। उपवास, दश पौषध तथा अन्य स्कंधादि बहुत हुए। कालू के कृषिकारों ने हरे तथा हरे चने इत्यादि जलाने के सौगंध लिये।

कालू में महाराज दौलतऋषिजी (जिन्होंने भी काठियावाड़ विचर कर अत्यंत उपकार किया है वे) ठाणा ८ सहित पधारे परस्पर बहुत आनंदपूर्वक ज्ञानचर्चा और वार्तालाप हुआ। व्याख्यान एक ठिकाने होता था। प्रातःकाल में व्याख्यान दिगम्बरी स्कूल होता था। पहिले एक आध घंटे तक दौलतऋषिजी महाराज व्याख्यान फरमाने के लिए पूज्य श्री कहते थे और बाद में पू श्री व्याख्यान फरमाते थे। दोपहर को बड़े बाजार में श्री नारायणजी के मंदिर की तिबारी में दोनों महात्मा व्याख्यान, माते थे। परिषद् का जमाव दर्शनीय था। और दोनों संतों अघणीय और अद्वितीय उपदेश के प्रभाव से महान् उपकार हु व्याख्यान में स्वमती और अन्यमती करीब ५०० मनुष्य आते थे कालू से विहारकर आषाढ़ वदी १३ के रोज पूज्य श्री बालूंदे पधा वहां के धनाढ्य गंगारामजी मूथा ने, जिनकी दुकानें बंगलौर

त्र में हैं, पूज्य श्री की पूर्ण भक्तिभाव से सेवा की। वलूंदे में श्री पधारे, उसी दिन संध्या समय पूज्य श्री बाहर जंगल से हे थे तब एक खटीक की लड़की दो बकरों को ले जारही। सेठ गंगारामजी को यह खबर मिलते ही उन्होंने दोनों बकरों अभयदान दिला दिया।
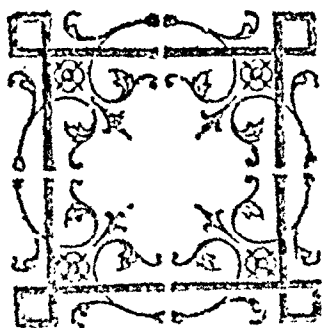
अध्याय ५० वां।

अवसान।
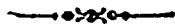
आषाढ़ वदी १४ के रोज बलूंदे से विहार कर पूज्य श्री जेतारण पधारे। वहां आहार पानी किये, बाद स्वाध्यायादि नित्य नियम से निवृत्त हो पूज्य श्री ने दोपहर का व्याख्यान फरमाया। दूसरे दिन आषाढ़ वदी ३० के रोज नित्यनियम से निवृत हो पूज्य श्री ने प्रतिलेहन किया और पूजन प्रमार्जन कर अपने हाथ से कांजा निकाला तथा पाटिया लगा व्याख्यान फ़रमाने लगे। भगवतीजी सूत्र में से गांगिये अणगार के भांगे फरमारहे थे। आधा घंटा बांचने के बाद महाराज श्री को अचानक चक्कर आने और आंखों में तकलीफ होगई। महाराज श्री ने अपने हाथ से सूत्र के पन्ने सहित पाटी नीचे रख अपने दोनों हाथों से आंखें थोड़े समय तक ढक रक्खीं। फिर ऐनक लगाकर सूत्र पढ़ने का प्रयत्न किया, परन्तु नहीं देख सके। तत्काल दूसरी वक्त चक्कर आया और शिर में असह्य दर्द होने लगा, तब महाराज श्री ने फ़रमाया कि अब मेरी आंखें पढ़ने का कार्य नहीं कर सकतीं। इसलिये मुंह से व्याख्यान देता हूं। पूज्य श्री ने उसी समय मुंह से सूत्र की

ंदर उसका रहस्य समझाना प्रारंभ किया । इतने में फिर
र आये और दर्द का जोर बढ़गया। तब दूसरे साधु गब्बू-
लजी को व्याख्यान देने की आज्ञा देकर आप अंदर पधारे और
ने श्री मनोहरलालजी इत्यादि के समक्ष कहा कि " मैंने अभी
नी वृद्ध पुरुषों के मुंह से ऐसा सुना है कि बैठे २ आंख की
े एकाएक बंद हो जाय तो मृत्यु समीप आगई है ऐसा सम-
ना चाहिये। इसलिये मुझे अब संथारा करादो और मुनि श्री
कचंदजी आजायँ तो मैं आलोयना करलूं " ऐसा कह पूज्य श्री
चतुरसिंहजी नामक एक साधु को आज्ञादी की तुम अभी नये-
र की ओर विहार करो। श्रावकों को यह खबर मिलते ही
होंने एक शख्स को रेल में नयेनगर की तरफ रवाना कर दिया।
साधुजी के पहिले शीघ्र पहुंचगया और मुनि श्री हरकचंदजी
राज की सेवा में सब हकीकत निवेदन की। श्रीमान् हरकचं-
ी महाराज यह सुन आषाढ़ सुदी १ के रोज बारह कोस का
ार कर नीमाज पधारे और वहां चिंताग्रस्त स्थिति में रात्रि
मन की। दिन उदय होते ही नीमाज से विहार कर आठ
े के समय जेतारण पहुंचगए। उनसे महाराज श्री ने कहा कि
ेरी आंखें तुम्हारी मुंहपत्ति नहीं देख सकतीं। अब मुझे शीघ्र
ारा कराओ। जीव और काया भिन्न होने में अब विशेष विलम्ब
ीं है।" मूलचंदजी महाराज ने कहा कि महाराज ! ं

कराने जैसी बीमारी आपके शरीर में नहीं मालूम होती है तब
संथारा कैसे करावें ! शिष्यों के हृदय में बड़ा भारी धक्का लगा,
ढीले होगए । पूज्य श्री उन्हें हिम्मत दे जागृत करते कि 'जो नि
तीर्थंकर तक को लागू हुआ वह नियम सब के लिए एकसा
इस समय तुम से बन सके उतना धर्म ध्यान सुनाओ, यही तुम
कर्तव्य है।'

पूज्य श्री के मस्तिष्क में तीव्रवेदना हो रही थी। दर्द
जोर बिजली की तरह बढ़रहा था। परन्तु उपस्थित साधु दर्द
उग्र स्वरूप पूज्य श्री की अद्वितीय सहनशीलता से न समझ
और पूज्य श्री के बार २ कहने पर भी उन्होंने संथारा नहीं करा
परन्तु ज्यों २ व्याधि बढ़ती गई, वैसे २ पूज्य श्री के भाव सम
में स्थित होते गए, ऐसी उज्वल वेदना में भी उनकी शांति और
अनुपम था, कायरता प्रतीत हो ऐसा एक शब्द भी इस
समान शूरवीर, धीरपुरुष के मुंह से कभी न निकला।

पूज्य श्री की बिमारी के समाचार जेतारण के श्रावकों ने
चरों में तारद्वारा अनेक शहरों के मुख्य २ श्रावकों को पहुंचा
थे। उस पर से कई श्रावक वहां आपहुंचे थे। आषाढ शुक्ल
के रोज ब्यावर के कई भाई आये और उसी दिन शामको

भाई चुन्नीलालजी * कल्याणजी भी आये । मैं मोरबी था, वहां र आया, परंतु बिना पंख के इतनी दूर कैसे पहुंच सकता था। न्नीलालजी ने महाराज श्री से वंदना कर सुखसाता पूछी, तब वे ले कि "भाई ! मेरा अंतिम समय-संथारे का समय आ गया है ाल दुःख दे रहे हैं । " इस समय दूसरे भी कई श्रावक और धु पूज्य श्री के पास बैठे थे । उस समय श्रीजी महाराज ने घोरा मुहुत्ता अबलं सरीरं ' इस उत्तराध्ययन जी सूत्र का वाक्य कर सबको इसका मतलब समझाया ।

भिन्न २ श्रावक भिन्न २ औषधियां सुचाते थे, परंतु पूज्य श्री फरमाया कि ' बाह्योपचार करने की अपेक्षा अब आंतरोपचार ने दो और आरंभ समारंभ मिश्रित औषधियां न सुचाओ ' ।

उस समय युवराजजी हाजिर होते तो पूज्य श्री को विशेष समा- धी रहती, परन्तु हिम्मत बहादुर, महाभटवीर अचानक आई मृत्यु से तनिक भी न डरे । शिष्य-समुदाय को शैय्या के पास

---

* इन दोनों बाप बेटों ने अभी संयम अंगीकार कर आत्म- पन जीवन सार्थक करना प्रारंभ किया है, उनकी माताजी र बहिन ने भी संयम लिया है, धन्य है ऐसे वैराग्य और ाग को ।

बुलाकर सब के मस्तिष्क पर हाथ फिरा मानों अंतिम विदा ले
हो यों कहने लगे:— मुनिराजो ! संयम को दिपाना, संप के सा
रहना, पंडित श्री जवाहिरलालजी की आज्ञा में विचरना, वे दृ
धर्मी, चुस्तसंयमी और मुझ से भी तुम्हारी अधिक सालसंभा
रख सके हैं। मैं और वे एक ही स्वरूप के हैं ऐसा समझना,
उनकी सेवा करना, श्री हुक्म महाराज की सम्प्रदाय को जाज्वल्
मान रखना, शासन की शोभा बढ़ाना, 'क्षमाता हूं' क्ष-मा-करना
पूज्य श्री बोलते रुक गए। पास बैठे हुए मुनिमंडल के चक्षु अश्रु
पूर्ण हो गए, एक मुनिराज ने उत्तर दिया " पूज्य साहेब ! आप
की आज्ञा हमें शिरोधार्य है, आप निश्चिंत रहें। हम बालकों को
आप क्या क्षमाते हैं ! सच्चा क्षमाना तो हमें चाहिये कि आपके
उपकार के प्रमाण में हम आपकी किंचित् सेवा का भी लाभ
ले सके" इससे अधिक बोलना न हो सका।

समयसूचक पूज्य श्री ने इस शोक के समय जल्द ही श्रीसूत्र
गाथा बोलना प्रारंभ की। शोक को शांति के रूप में बदल दि
और शिष्य भी मंदस्वर से उसमें शामिल होगये।

दूसरे दिन आषाढ़ शुक्ला २ को सवेरे अजमेर से श्रीमा
गाढ़मलजी लोढा तथा ब्यावर के कई गृहस्थ आ पहुंचे। उस दि
पूज्यश्री के शरीर में व्याधि बहुत बढ़गई थी और नित्यनियम

। न हो सका था । पूज्यश्री बार २ फरमाते थे कि 'मुझ से नित्य-
यम न हो उस दिन समझना कि मेरा अंतकाल समीप है इस
। से उनके शिष्यों को बहुत चिंता हुई और द्वितीया के दिन
न्हें सागारी संथारा करा दिया तथा रात को महाराज श्री को
वजीवका संथारा करादिया गया, उसी रात के पिछले प्रहर म
बि ५ बजे इस मिट्टी के कच्चे घड़े की नांई औदारिक देह को
ाग पूज्यश्री का अमर आत्मा स्वर्ग सिधाया । जैन शासन रूप
ाकाश में से एक जाज्वल्यमान सूर्य अस्त होगया । चतुर्विध संघ का
ान आधार स्तंभ टूटगया, उस समय साधुजी के १२ थाने
जीकी सेवा में उपस्थित थे ।

पूज्यश्री के शरीर में रहा हुआ प्राण उनका ही नहीं परन्तु
कल संघ का था । राजा महाराजाओं की भी न होसके ऐसी
नकी चिकित्सा की गई । कई स्थान पर तपश्चर्या प्रारंभ हुई,
ान दिया गया, प्रतिज्ञायें ली गईं और पूज्य श्री की आराम होने
ी प्रार्थनाएँ की गईं, परन्तु उस आत्मा को परमात्मा के आमंत्रण
ी बेपरवाही न करना होने से असंख्य श्रावकों को शोकसागर में
ुबो में डाल समाज का सितारा अदृश्य होगया । संथारा इतना
ाश न होता तो इस मृत्युमहोत्सव को दिपाने के लिये लोग
ंगाते और लाखों रुपये खर्च कर देते ।

विश्व की घटा बड़ी अलौकिक है। प्रारब्ध का वैचित्र्य अगम्य है। मृत्यु की बूँटी नहीं, जैनसमाज को देदिप्यमान करनेवाली वह पवित्र आत्मा अनेक कष्ट झेल, दुःखित दिल वालों का ज्वलन्त संदेश श्री शासन देव के दरबार में अर्ज करने स्वर्गलोक में पधार गई।

काठियावाड़ में कोहनूर के समान प्रकाश करने वाले राजपूताने का यह रत्न, मालवा—मेवाड़ का यह मणि जो आत्मा अभी तक इन महात्मा के शरीर में थी वह समस्त श्रीसंघ में व्याप्त होगई।

कौनसा वज्रहृदय इस वियोग का—अवसान समय का वर्णन कर सकता है ? कौन कवि इस विरह को वर्णन करने की हिम्मत धारण कर सकता है ? एक भक्त के शब्द में ही कहें तो—उनका शरीर गया, मूर्ति अदृश्य होगई, उनका दर्शन दूर होगया, स्थूल दुनियां में स्थूल व्यवहार मस्त दुनियां में उनका स्थूल स्वरूप नाश होगया, परन्तु यशःशरीर अभी तक मौजूद है।

कौन ऐसा हृदयशून्य होगा कि इस समय लोगों को रोने नहीं देगा। मस्तिष्क की गर्मी कम नहीं करने देगा, परन्तु बस बस हुआ।

" रोई रोई आंसूड़ानी नदिओं वहे तोये।
गयुं ते गयुं, शुं आवी आंसु लुछनानुं शाणा॥"

जब वे विराजते थे तब तो वे उनका लाभ न ले सके, और
से रोना यह बिलकुल पाखंड ही है।

खुले नेत्रों से तो उनके स्मितपूर्ण मुखचंद्र के दर्शन नहीं
सकेंगे, विशालभालरक्षित मुखकमल में से झरते हुए मधुर
ग्राहक अमृत के पान से पवित्र न हो सकेंगे, परन्तु हां, उनका
ान यही उनकी आत्मा थी। अपन उन श्री के सद्विचारों को
ण करेंगे तो वे हरएक के हृदय-सिंहासन पर आरुढ़ हुए दृष्टि-
होंगे।

पूज्यश्री के देह का नाश हुआ, परन्तु उन श्री के प्राणरूप
श्री के आत्मारूप चारित्रधर्म का ध्येय तो विशेष विस्तृत ही होगा।
ध्येय खूब फैले, पूज्यश्री की अमर आत्मा समाज के कोने २
वेश करे और पूज्यश्री सा जीवनबल सब संतों में स्फुरित हो।

तीसरे दिन बीकानेर, उदयपुर इत्यादि कई ग्रामों के श्रावक
त्रित होगए और आचार्य श्री का निर्वाणोत्सव बहुत ही धूमधाम
किया गया।

चंदनादि लकड़ियों से चिता तैयार कीगई। चिता में आग रखने
बहुओं की हिम्मत न हुई। अंत में पूज्य श्री का मानुषीदेह भस्मी-
त होगया। श्रावकों ने मुनिराजों के पास का [illegible]

मंगलिक सुनकर अपने २ स्थान पर गए। भस्मी, हड्डी व दाँत बहु
से श्रावक लेगये।

भारत की शोचनीय दशा यह है कि अपने नेताओं की
कम होती है और तन्दुरुस्ती जल्द बिगड़ने लगती है। मृत्यु के सम
स्वामी विवेकानंद की आयु ३९ वर्ष, श्रीयुत केशवचंद्र सेन
आयु ४५ वर्ष, जष्टिस तैलंग की ४८ वर्ष और श्रीयुत गोपाल
गोखले की ४९ वर्ष की थी। पूज्यश्री का आयुष्य अवसान के सम
५१ वर्ष का ही था। इस उम्र में भी नई २ बातें सीखने का उत्सा
बढ़ता ही जाता था। उस समय ग्लेडस्टन और एडीसन याद आ
बिना नहीं रहते थे।

अंतिम कसोटी तक तपकर शुद्ध कुंदन होने में पूज्यश्री
असह्य परिसह सहन करने पड़े, पूज्य श्री के प्रकाशित कीर्ति
को बुझाने के लिए नीच प्रयास हुए, परन्तु सूर्य के सामने ध
डालने वाले की क्या दशा होती है? पूज्यश्री के शुद्ध संयम
तेज से इर्षाग्नि पिघल जाती, ईर्षा के वेग में चारित्रधर्म का
कर बैठने वालों को वे दया की दृष्टि से देखते और डर बताते
कि कहीं जैन--शासन के मुख्य स्तंभरूप साधु धर्म के क्रिया
की यह हत्या न कर बैठे।

अलौकिक और आपके गुण अपार अकथनीय हैं। विद्वान् लेखक और शीघ्रकवि वर्षों तक वर्णन करते रहें तो भी आपके चारित्र का यथातथ्य निरूपण होना या आपके गुणसमूह का पार पाना अशक्य है। आपके ज्ञान, दर्शन, चारित्र की शुद्धि, आपके अतीत काल में उत्पन्न हुए शुभकर्मों के उदय का अपूर्व प्रभाव, वर्तमान की शुभ प्रवृत्ति, आगामी समय के लिये दीर्घदर्शीपन इत्यादि इतने प्रब[illegible] थे कि जिनकी उपमा देना ही अशक्य है। इस पंचम काल [illegible] जीवों में से आपकी समानता कोई कर सकता है। ऐसा व्यक्ति दृष्टि[illegible] गत नहीं होता। तथापि आश्वासन पाने योग्य बात यह है कि आपके समान ही अनुपम आत्मिक गुण, अद्वितीय आकर्षण शक्ति, दिव्य तेज, अपार साहसिकता, आत्मबल, आपकी गादी पर विराज[illegible] मान वर्तमान आचार्य श्री १००८ श्री पं० रत्न श्री जवाहिरलालजी महाराज साहिब में अधिक अंश से विद्यमान है। हमारी यह हार्दिक अभिलाषा है कि आपके ज्ञान, दर्शन, चारित्र के पर्यायों में समय २ पर अधिक २ अभिवृद्धि होती रहे और [illegible] निरामयी तथा दीर्घ आयुष्य भोग जैनधर्म की उदार और पवित्र भावनाओं का प्रचार करने में अपने कार्य में पूर्ण सफलता प्राप्त करें।

अध्याय ५१ वाँ।

शोक-प्रदर्शक सभाएं.

मारवाड़, मालवा, मेवाड़, गुजरात, काठियावाड़, दक्षिण, इत्यादि प्रत्येक प्रांन्तों के अनेक शहरों और ग्रामों में पूज्य स्वर्गवास की खबर मिलते ही हड़ताल, अगते, पर्व, पालेगए। ान किया गया और लाखों रुपये जीवदया के कार्य में व्यय ाये थे ※ स्थानाभाव के कारण वह सब वृन्तान्त यहां नहीं ा सकता, किन्तु उनमें से मुख्य २ सभाओं का हाल नीचे

म्बई संघ की वृहद् सभा, बाज़ार बंद रक्खे गए।

ारीख़ २४—६--२० को चींचपोकली के जैन उपाश्रय में की एक आमसभा की गई थी। उस समय सैकड़ों जैन

※ एक अन्य धर्मी साधु ने किसी भी जीव को अभयदान ा निश्चय किया था, वह भी [illegible] कर के पारणा [illegible] ा।

बाई, भाई एकत्रित हुए थे और पूज्य आचार्यश्री के स्वर्गवास
जैन कौम और धर्म में ऐसी बड़ी भारी कमी हुई है कि, जिस
पूर्ति नहीं होसकती, इस विषय पर कई सज्जनों के व्याख्यान
और अत्यन्त शोक प्रदर्शित किया गया।

अन्त में मुंबई के जैनसंघ की ओर से बीकानेर में विरा-
मान युवराज महाराज श्री जवाहिरलालजी महाराज तथा वहां
श्रीसंघ एवं रतलाम के जैनसंघ को शोकप्रदर्शक तार दे
निश्चित हुआ।

पूज्य आचार्यश्री के निर्वाण-महोत्सव के समय जीवों
अभयदान देने के लिए एक फंड किया गया, जिसमें उपस्थित सज्ज
ने पांच हज़ार रूपया दिया और बांदरा इत्यादि स्थानों के क
खाने बंद रक्खे गए, फंड अभी शुरू है।

आज रोज मुम्बई में जौहरी बाज़ार, सोना, चांदी बाजार,
बाज़ार, मूलजी जेठा मारकीट, मंगलदास कपड़े का मारकी
कोलावे का रुई बाज़ार, दाणा बाज़ार, किरयाना बाज़ार इत्यादि
पारी बाज़ार बंद रहे थे।

रतलाम।

ता० २५-६-२० को बड़े स्थानक में समस्त संघ की एक स
एकत्रित हुई। जिसमें मुंबई संघ का शोकप्रदर्शक तार पढ़ा गया

चार व्याख्याताओं ने सद्गत पूज्यश्री का जीवनचरित्र कह
ा। पूज्य महाराज श्री के अकस्मात् वियोग से समस्त संघ को
त खेद हुआ और निम्न ठहराव पास किये गए थे।

प्रस्ताव पहला।

मान् परमगुणालंकृत, क्षमावान्, धैर्यवान्, तेजस्वी, जगद्-
महाप्रतापी, आचार्यपदधारक परम पूज्य महाराजाधि-
श्री १००८ श्रीलालजी महाराज का आषाढ़ शुक्ला ३
को मु० जेतारण में अकस्मात् स्वर्गवास होगया, यह
खेदजनक और हृदयभेदक खबर सुनकर इस रत-
ंघ को पूर्ण रंज व दुःख प्राप्त हुवा है। इन महात्मा
ग से सारे हिन्दुस्थान में अपनी समाज के लोगों के
क हजारों अन्य मतावलम्बियों को भी अत्यंत रंज हुवा है।
ैन-समाज ने एक अमूल्य रत्न खोया है और ऐसा फिर
ना दुर्लभ है। इसलिये यह संघ सभा पूरी रंजी के साथ
ाहिर करती है। इसी मजमून का तार मुम्बई संघ का भी
र आया हुआ सभा में सुनाया गया। यह सभा मुंबई संघ
स्कार मानती है। और श्रीमान् वर्तमान पूज्य महाराज श्री
१००८ श्री जवाहिरलालजी महाराज साहिब को और संघ को
और रतलाम संघ की तरफ से आश्वासन देने के लिये बीकानेर
ेरिधि जाने का ठहराव करती है व वर्तमान पूज्य महाराज श्री

बाई, भाई एकत्रित हुए थे और पूज्य आचार्यश्री के स्वर्गवास
जैन कौम और धर्म में ऐसी बड़ी भारी कमी हुई है कि, जिस
पूर्ति नहीं होसकती, इस विषय पर कई सज्जनों के व्याख्यान
और अत्यन्त शोक प्रदर्शित किया गया।

अन्त में मुंबई के जैनसंघ की ओर से बीकानेर में विरा
मान युवराज महाराज श्री जवाहिरलालजी महाराज तथा वहां
श्रीसंघ एवं रतलाम के जैनसंघ को शोकप्रदर्शक तार
निश्चित हुआ।

पूज्य आचार्यश्री के निर्वाण-महोत्सव के समय जीवों
अभयदान देने के लिए एक फंड किया गया, जिसमें उपस्थित सज्ज
ने पांच हज़ार रुपया दिया और बांदरा इत्यादि स्थानों के कस
खाने बंद रक्खे गए, फंड अभी शुरू है।

आज रोज मुम्बई में जौहरी बाज़ार, सोना, चांदी बाजार,
बाज़ार, मूलजी जेठा मारकीट, मंगलदास कपड़े का मारके
कोलावे का रुई बाज़ार, दाणा बाज़ार, किरयाना बाज़ार इत्यादि
पारी बाज़ार बंद रहे थे।

रतलाम।

ता० २५-६-२० को बड़े स्थानक में समस्त संघ की एक
एकत्रित हुई। जिसमें मुंबई संघ का शोकप्रदर्शक तार पढ़ा ग

ार व्याख्याताओं ने सद्गत पूज्यश्री का [illegible] का
। । पूज्य महाराजश्री के अकस्मात् वियोग से [illegible]
। खेद हुआ और निम्न ठहराव पास किये गए थे ।

प्रस्ताव पहला ।

ारमगुणालंकृत, क्षमावान्, धैर्यवान, [illegible]
ापी, आचार्यपदधारक परम पूज्य महाराज [illegible]
१००८ श्रीलालजी महाराज का आषाढ़ [illegible]
मु० जेतारण में अकस्मात् स्वर्गवास [illegible]
जनक और हृदयभेदक खबर सुनकर [illegible]
को पूर्ण रंज व दुःख प्राप्त हुआ है । [illegible]
से सारे हिन्दुस्थान में अपनी समाज के [illegible]
जारों अन्य मतावलम्बियों को भी अनंत रंज हुआ है ।
समाज ने एक अमूल्य रत्न खोया है और [illegible]
दुर्लभ है । इसलिये यह संघ सभा पूर्ण रंज के साथ
र करती है । इसी मजमून का तार मुम्बई संघ [illegible]
आया हुआ सभा में सुनाया गया । यह सभा मुंबई संघ
ार मानती है । और श्रीमान् वर्तमान पूज्य महाराज श्री
०८ श्री जवाहिरलालजी महाराज साहिब को और [illegible]
और रतलाम संघ की तरफ से आश्वासन देने के लिये [illegible]
या जाने का ठहराव करती है व वर्तमान पूज्य महाराज श्री

बाई, भाई एकत्रित हुए थे और पूज्य आचार्यश्री के स्वर्गवास
जैन कौम और धर्म में ऐसी बड़ी भारी कमी हुई है कि, जि
पूर्ति नहीं होसकती, इस विषय पर कई सज्जनों के व्याख्यान
और अत्यन्त शोक प्रदर्शित किया गया ।

अन्त में मुंबई के जैनसंघ की ओर से बीकानेर में वि
मान युवराज महाराज श्री जवाहिरलालजी महाराज तथा बी
श्रीसंघ एवं रतलाम के जैनसंघ को शोकप्रदर्शक तार
निश्चित हुआ ।

पूज्य आचार्यश्री के निर्वाण-महोत्सव के समय जीव
अभयदान देने के लिए एक फंड किया गया, जिसमें उपस्थित स
ने पांच हजार रुपया दिया और बांद्रा इत्यादि स्थानों के क
खाने बंद रक्खे गए, फंड अभी शुरू है ।

आज रोज मुम्बई में जौहरी बाजार, सोना, चांदी बाजार
बाजार, मूलजी जेठा मारकीट, मंगलदास कपड़े का मार
कोलावे का रुई बाजार, दाणा बाजार, किरयाना बाजार इत्यादि
पारी बाजार बंद रहे थे ।

रतलाम ।

ता० २५-६-२० को बड़े स्थानक में समस्त संघ की एक
एकत्रित हुई । जिसमें मुंबई संघ का शोकप्रदर्शक तार पढ़ा

न चार व्याख्याताओं ने सद्गत् पूज्यश्री का जीवनचरित्र कह
ाया। पूज्य महाराज श्री के अकस्मात् वियोग से समस्त संघ को
यंत खेद हुआ और निम्न ठहराव पास किये गए थे।

प्रस्ताव पहला।

श्रीमान् परमगुणालंकृत, क्षमावान्, धैर्यवान्, तेजस्वी, जगद्-
न, महाप्रतापी, आचार्यपदधारक परम पूज्य महाराजाधि-
ज श्री श्री १००८ श्रीलालजी महाराज का आषाढ़ शुक्ला ३
वार को मु० जेतारण में अकस्मात् स्वर्गवास होगया, यह
यन्त खेदजनक और हृदयभेदक खबर सुनकर इस रत-
म संघ को पूर्ण रंज व दुःख प्राप्त हुवा है। इन महात्मा
वियोग से सारे हिन्दुस्थान में अपनी समाज के लोगों के
तिरिक्त हजारों अन्य मतावलम्बियों को भी अत्यंत रंज हुवा है।
ी जैन–समाज ने एक अमूल्य रत्न खोया है और ऐसा फिर
होना दुर्लभ है। इसलिये यह संघ सभा पूरी रंजी के साथ
जाहिर करती है। इसी मजमून का तार मुम्बई संघ का भी
पर आया हुआ सभा में सुनाया गया। यह सभा मुंबई संघ
उपकार मानती है। और श्रीमान् वर्तमान पूज्य महाराज श्री
१००८ श्री जवाहिरलालजी महाराज साहिब को और संघ को
ई और रतलाम संघ की तरफ से आश्वासन देने के लिये बीकानेर
दिया जाने का ठहराव करती है व वर्तमान पूज्य महाराज

श्री १००८ श्री जवाहिरलालजी की तेज क्रांति दिन २ बढ़े
हृदय से इच्छती है।

प्रस्ताव दूसरा।

श्रीमान् पूज्य महाराज के स्वर्गवास की खबर सुनते ही
संघ ने उसी वक्त अपनी २ दुकान बंद करके शोक माना था,
संघ की तरफ से फिर ठहराने में आता है, कि स्वर्गस्थ पूज्य
राज के शोक-निमित्त फिर भी आषाढ़ सुदी १३ मंगलवार
सब व्यापार बंद रक्खा जावे और हलवाई, भड़भूजा आदि
भी दुकानें बंद कराई जावे व गरीबों को अन्न वस्त्र का दान
जावे। यह कार्य ४ आदमियों के सुपुर्द किया जावे। इस खर्च में
कोई अपनी खुशी से जो रकम देवे सो स्वीकार की जावे।

उपरोक्त ठहरावानुसार मिती आषाढ़ सुदी १३ को रतला
कई दुकानें बंद रहीं। अन्न वस्त्रादि दान दिये गए और पूज्य
श्री की स्मृति में सब लोगों ने वह दिन पर्व के समान समझा

राजकोट।

ता० २६-६-२० को यहां के तालुका स्कूल के मिडिल
में राजकोट स्टेट के मुख्य दीवान रावबहादुर हरजीवन भा
भाई कोटक बी. ए. एलएल. बी. के सभापतित्व में राजको

सियों की एक जाहिर सभा हुई थी। उस समय सभापति महो-
तथा अन्य वक्ताओं ने पूज्यश्री के राजकोट के चातुर्मास में
ये हुए अवर्णनीय उपकारों का अत्यन्त ही असरकारक भाषा
विवेचन किया था और पूज्यश्री के स्वर्गवास से शोक प्रकट
ते नीचे मुजिब ठहराव सर्वानुमत से पास किये गए थे:—

ठहराव १ ला.

राजकोट के निवासियों की यह सभा श्री स्था० जैनाचार्य
महाराज श्री १००८ श्री श्रीलालजी महाराज के अपक्व वय
वर्गवास हो जाने से अंतःकरणपूर्वक अत्यन्त खेद प्रकट
ी है।

सं. १९६७ का चातुर्मास निष्फल जाने से संवत् १९६८ के
मांस में खासकर जानवरों के लिये बड़ा भारी दुष्काल
उस समय चातुर्मास में पूज्यश्री के यहां के निवास में पूज्य-
ने यहां के तथा बाहर ग्राम के लोगों को दया और सेवा धर्म
अच्चा अर्थ समझा कर लोगों में दया का बड़ा भारी जोश
किया था और पूज्यश्री के सद्बोध से राजकोट ने उस
ाल में यहां से तथा बाहर देशावरों से बड़ा भारी फंड
ित कर मनुष्यजाति एवं जानवरों के प्रति बड़ा भारी
ा काम कर दिखाया था, ऐसे एक सच्चे महान् विद्वान्

और चारित्रवान् महामुनि के स्वर्गवास से सिर्फ जैन-जाति क
नहीं परन्तु अन्य सबों को भी एक बड़ी भारी कमी हुई है,
यह सभा जाहिर करती है।

ऊपर का यह ठहराव पत्र द्वारा तथा उसका थोड़ासा
तार द्वारा बीकानेर तथा रतलाम संघ को सभापति महोद
हस्ताक्षर से भेजने का प्रस्ताव करती है।

तारकी नकल.

Citizens of Rajkot assembled in public mee
express their deep sorrow for the premature de
of Achārya Mahāraj Shri Shrilālji and beg to
that in him not only the Jain Commuuity but a pe
in general have lost a most learned pious and i
saint. Please convey this message to Achārya M
rāj Shri Jawāharlālji with our humble requests

ठहराव दूसरा.

आचार्य महाराज श्री श्रीलालजी महाराज जैसे नमूनेदा
ख्यवान् मुनि ने अपने पर किये हुए उपकारों के कारण उनकी
जितना भी मान और भक्ति प्रगट कीजाय उतनी ही थोड़ी है, ऐ
सभाका विश्वास है। इसलिए यह सभा ऐसी उम्मेद करती है कि

भीलवाड़ा ।

आषाढ़ शुक्ला ४ को प्रातःकाल खबर मिलते ही स्वमती अन्यमती इत्यादि में सम्पूर्ण शोक होगया। धर्मध्यान पुण्य दान इत्यादि यथाशक्ति हुआ। जावेर वाले संत श्री देवीलालजी महाराज यहां विराजते थे, उन्हें एकाएक यह खबर मिलने से बड़ा भारी रंज हुआ, व्याख्यान भी बंद रक्खा, गौचरी करने भी न गए। फिर भी वे सद्गुणी आचार्यश्री के गुणानुवाद अपने व्याख्यान में समय २ पर गाते रहते थे।

सादड़ी ।

अवसान की खबर मिलते ही जीवदया के लिये रु०४०० का फंड हुआ, उनसे जीव छुड़ाये गए। द्वितीय श्रावण वदी १ के रोज एक दवाखाना खोलागया।

रामपुरा ।

श्री ज्ञानचंद्रजी महाराज के सम्प्रदाय के मुनि श्री इन्द्रमलजी ठाना २ यहां विराजते हैं। पूज्यश्री के स्वर्गवास की खबर सुनते ही उन्हें अत्यन्त खेद हुआ। उस दिन आहार पानी भी न किया। संघ में भी बड़ाभारी शोक रहा।

बडी सादड़ी ।

कल संघ में बड़ा भारी शोक छागया । व्याख्यान बंद रहा,
ान, दान, पुण्य, व्रत, प्रत्याख्यान बहुत हुआ । आसपास
ों में भी यही बात हुई ।

रावलपिंडी ।

जैन सुमति मित्रमंडल के आधीन जितनी संस्थाएं हैं, वे सब
क्खी गईं ।

रायचुर ।

यहां पूज्यश्री श्रीलालजी महाराज की स्मृति में एक 'श्रीलाल
पुस्तकालय' खोला गया ।

घोराजी ।

व्याख्यान की परिषद् में शतावधानी पं० रत्नचंद्रजी महाराज
ज्यश्री के स्वर्गवास के शोक प्रदर्शित करते हुए अपने परिचय
र्णन के साथ पूज्यश्री के उत्तम गुणों की सार्थक [illegible]
णारसपूरित वर्णन किया कि श्रोताओं का हृदय शोकविह्वल
गया और कितने ही की आंखों में से अश्रुप्रवाह [illegible]
। बहुत व्रत, प्रत्याख्यान हुए । [illegible]
कपासिये के [illegible]

भूसावल ।

पत्र द्वारा समाचार मिलते ही आषाढ़ शुक्ला ११ को तमा
व्यापार आदि बंद रक्खा गया और श्रावकों ने दया, पौषध
समस्त दिन धर्मध्यान में बिताया ।

अमृतसर ।

युवराज श्री काशीरामजी महाराज ने एक दिन व्याख्या
बंद रख बड़ा भारी शोक प्रदर्शित किया । समस्त संघ में ब
भारी शोक रहा ।

हींघनघाट ।

साधुमार्गी तथा मंदिरमार्गी भाइयों ने मिलकर आषाढ़ शु
११ के रोज बाजार बंद रक्खा ।

कपासन ।

तपस्वीजी हजारीमलजी ठाणा ३ यहां विराजते हैं, स्वर्गव
की खबर मिलते ही साधु, श्रावकों में भारी शोक छागया । दू
दिन व्याख्यान बंद रहा । महाराज ने उपवास किया । पींजराप
खोलने का प्रबंध हुआ ।

जावद ।

उसत श्रावकों ने दुकानें बंद रक्खीं और उपाश्रय में एकत्रित कसाइयों की दुकानें बंद रक्खी गई गरीबों को वस्त्र तथा भोजन, ों को खल तथा घास, कबूतरों को जुवार तथा कुत्तों को डाली गई, जिसमें रु० २००) खर्च हुए। कई तैलियों ने अपनी से ही कई पशुओं को खल खिलाई ।

उपरोक्त स्थानों के अतिरिक्त उदयपुर, बीकानेर, दिल्ली, ला, शिवपुरी, सिन्दुरणी, जावरा, मोरवी, जयपुर इत्यादि अनेक और ग्रामों में सभाएं इत्यादि दान-पुण्य, संवर, पौषध हुए, स्थल-संकोच से तथा कितने ही स्थानों का सविस्तृत हाल लने से यहां दाखिल न किया गया ।
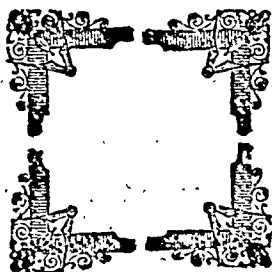
अध्याय ५२ वाँ।

सम्पादकों, लेखकों इत्यादि के शो

हमारी निराशा।

साखी ॥

अंतरनी आशाओं सघली अंतरमांज समाणी.
रह्या मनोरथो मनना मनमां कहेवी कोने कहाणी.
न्होती जाणी ....के आम थशे हाणी. ॥१॥

पूज्य महाराज श्री श्रीलालजी महाराज के शोकदायक
सान के समाचार थोड़े ही समय के पहिले मैंने सुने तब मेरे
को बड़ा भारी धक्का लगा, स्वर्गस्थ महात्मा श्री के उम्दा गुणों
गुणानुवाद पहिले मैंने कई जनों के मुंह से सुना था और तब से
मिलने की मेरी प्रबल उत्कण्ठा रही, परन्तु दुर्दैव ने यह अभि
निर्मूल करदी। जब पूज्यश्री का यहां पधारना हुआ तब मेरा
हार कच्छ के प्रदेशों में था और मैं जब लींबड़ी आया तब
पूज्यश्री से फिर से इस तरफ पधारने के लिए वीनती क
परन्तु वे नहीं पधार सके, और मैं अपने गुरु की सेवा में लगा र

व दिनों लींबड़ी न छोड़ सका, इसलिये मेरी यह अभिलषा
ही रही।

मेरा उनके साथ प्रत्यक्ष परिचय नहीं होने से मेरे मन पर
गुणों की छाप पड़ी है वह मात्र परोक्ष है।

लींबड़ी में पूज्य महाराज का आगमन संवत् १९६७ के
व शुक्ला ६ गुरुवार को २१ ठाणों से हुआ। तब वे वहां के
कूल में ठहरे थे। उनके व्याख्यान में वहां के ठाकुर साहिब
दिन उपस्थित होते थे। ऑफिस के लोग सब व्याख्यान का
ले सकें, इसलिये कोर्ट का मोर्निङ्ग टाइम बदल दिया था,
से ऑफिस के या ग्राम के अन्य इच्छुक समुदाय का जमाव
होता था। पूज्यश्री के व्याख्यान की शैली अत्यंत आकर्षक
नुसार और देश, काल की वर्तमान भावनाओं की पोषक थी।
प्रकृति अत्यंत सरल और निर्मल थी। प्रत्येक जाति के मनुष्य
—सत्संग का लाभ लेते थे और उन्हें उनके अतिशय के कारण
अपने ही धर्मगुरु के समान मानते थे। व्याख्यान में अनेक
ीन कवियों के काव्य, सुमधुर कंठ से शिष्यवर्ग के साथ इस
ह घोषित करते थे कि जिससे श्रोताओं पर अजब असर पड़ता
। मारवाड़ की वीरभूमि के इतिहास के दृष्टांत और उन पर
द्धांतों की ऐसी मजेदार घटना घटित करते थे कि श्रोतालोग

में बिलकुल निमग्न बन जाते थे। व्याख्यान से उठने की इ
तो होती ही नहीं थी, कारण मधुरी शैली से बुलंद आवाज
श्रोताजनों को सम्हालते रहते थे। उस समय यहां पंडितराज
सूत्री स्वर्गस्थ महाराज श्री उत्तमचंदजी स्वामी अपने समुदाय स
बिराजते थे और वे भी व्याख्यान में हमेशा पधारते थे। उ
मुंह से तथा अन्य श्रावकों के मुंह से यह सब तारीफ मैंने सु
तथा उनकी वाणी की महिमा तो मैंने कइयों के मुंह से सुनी

वहुत से मनुष्यों ने उनको व्याख्यान सुने हैं उनसे मैंने
है कि उनका प्रभाव अब भी श्रोताओं पर वैसा ही कायम है,
प्रभावोत्पादक शैली और श्रोताओं के मन पर छाप पाड़ने की श
इस बात को सूचित करती है कि पूज्यश्री जो कथन श्रोताओं
समक्ष प्रकाशित करते थे उसे वे अपने हृदय में सत्य के
स्वीकार करते थे और उस सत्य पर उनकी अचल श्रद्धा और
प्रीति के कारण ही वे श्रोताओं पर ऐसा उत्तम प्रभाव गिरा सकते

शास्त्रों में फरमाई हुई आज्ञाओं का वे असाधारण धैर्य
दृढ़ श्रद्धापूर्वक पालन करते थे। पूज्यश्री जिन भावनाओं को अ
धर्म और कर्तव्य समझ स्वीकार करते थे उन्हें वे अपनी आत्म
ऐकात्मभाव में परिणमा सकते थे, इसके सिवाय वर्तमान साधु-स
दाय में दुर्लभ और अनेक उच्च तथा साधु के शृंगार स्वरूप
के धारक थे।

ऐसे एक परम दुर्लभ गुणधारी साधु के देहांतरगमन से हम को सचमुच बड़ा भारी खेद है। सद्गति के अनुयायी समाज का कर्तव्य है कि वे पूज्य महाराज श्री के गुणों को अपने जीवन में लाने का प्रयत्न करे और उन गुणों द्वारा उनकी स्मृतिकी संरक्षा करें।

ली० संतशिष्य,

भिक्षु नानचन्द्र.

जैन–हितेच्छु ।

क्लेश से गोला का जल भी सूख जाता है यह कहावत तद्दन झूठा नहीं है, जैन समाज का एक कोहिनूर अदृश्य होगया है, और इनके प्रतिपक्षी के दृष्टिबिंदु में कहां फरक था तथा कौन किस दरजे पर्यंत दोषी था, यह चर्चा मैं बिलकुल पसंद नहीं ....आज जब पूज्य महाराज हयात नहीं है तब इतना अवश्य कहूंगा कि दूसरे श्रीलालजी पचास वर्ष में भी न होंगे और दूसरे साधुओं की पार्टी जमाने में मुख्यतः अग्रेसर पी थे।

अब तो पूज्यश्री विदा होगए हैं और सम्प या द्वेष देख सकते हैं। अब चारित्र, गौरव और महत्ता थोड़े ही काल में य होजायगी और इसका पाप सुलह के फरिश्तों के शिर। श्रीलालजी महाराज के स्मारक बतौर एक बड़ा फंड

कर 'जैन गुरुकुल' या ऐसी एक कोई संस्था खोलना जिसका
स्मेलन बीकानेर में इस अंक के निकलने के पहिले ही हो
होगा. मैं चाहता हूं कि इन पवित्र पुरुष का नाम किसी भी सं
या फंड के साथ न जोड़ा जाय। समाज की वर्तमान स्थिति में
कोई संस्था कैसे चलेगी यह अन्दाज लगाना कठिन नहीं।
जहां हजार तकरारें होती ही रहेंगी, ऐसी संस्था के साथ इन
पवित्र पुरुष का नाम जोड़ने में भक्ति की अपेक्षा अविनय हो
ही अधिक संभव है। चारित्र के नमूनेदार दो महात्मा काठिया
में जन्मे हुए श्री गुलाबचन्द्रजी और राजपूताने में जन्मे हुए श्री
लजी दोनों अदृश्य होगए हैं योंतो दूसरे भी बहुत से मुनि
चारित्री हैं, व्याकरण न्याय के ज्ञाता भी हैं, परन्तु गुलाब
श्रीलाल ये दो पुरुष अनोखे ही थे' एक में सत्य के लिये
(Noble indignation) और दूसरे में आत्मगौरव में
स्वाभाविक उत्पन्न हुआ गूंगा मान दृष्टिगत होता था। परंतु ये
उनका मूल्य बढ़ानेवाले तत्व थे। अप्रशस्त क्रोध और अप्रशस्त
से ये बिलकुल भिन्न वस्तुएं थीं। क्षत्रिय में और संघ के नाय
प्रशस्त क्रोध और प्रशस्त मान आवश्यक हैं और यह, दो
उज्वलता का सबूत है।

इस अवसर पर एक आध्यात्मिक सत्य Mysticism
कारण स्फुरित हो जाता है। चारित्र और बुद्धि के संघर्षण का

य है, व्याकरण, न्याय, तर्क के अभ्यास का शाक़
पूताने की ओर के श्रावकों एवं साधुओं की प्रकृति में न
। वहां सिर्फ निर्दोष चारित्र का शौक़ था। बुद्धि की लीलाएं
ओर पुजाने लगीं और इनमें से कितने ही साधु भी धीरे २
वैभव की ओर झुकने लगे। पहले तो सब को यह अच्छा
। फिर चारित्र और बुद्धि में परस्पर युद्ध प्रारम्भ हुआ। यह
लम्बे समय तक टिकना चाहिये। दोनों एक दूसरे की तपल
कर अन्त में चारित्र बुद्धि में और बुद्धि चारित्र में समा
ी। अर्थात् बुद्धि और चारित्र से परे ऐसे "आध्यात्मिक भान"
ेल हो जायंगे। हृदय और बुद्धि दोनों एक व्यक्ति के मालिक
ान तो भयंकर हैं परंतु व्यक्ति के साधन—दास के समान
ी हैं। दयालु और विद्वान दुःखी हैं। परन्तु योगी कि जो
ौर बुद्धि के राज्य में होकर उस सीमा को पार कर गया है
 सुखी महाराजा है कि जिसके दोनों तरफ हृदय और
ाथ जोड़ हुक्म की आज्ञा मांगती रहती हैं। इस स्थिति तक
 के लिये हृदय की बलवान् तरंगें और बुद्धि की उद्धताई
रनी ही पड़ेगी।

वा. मो. शाह.

जैनपथ-प्रदर्शक, आगरा।

भीषण वज्रपात

जिस पै सब को दिमाग था हा ! न रहा।
समाज का एक चिराग़ था हा ! न रहा।

आज चारों ओर से इस जैन-धर्म पर आपत्ति की घटायें घिरी देखकर किस जैन-धर्म के प्रेमी को दुःख होगा। जिस जैन-धर्म के मुख्योद्देश "अहिंसा परमो ध[र्मः" के] कारण एक दिन सारे नभोमंडल में उसकी तूती बोलती [थी] उसी का प्रचार था, आज वही धर्म—हा शोक है कि उसी [के अनु]यायी उसका अनुकरण न करके उसको अधोगति में प[हुँचाने की] कोशिश कर रहे हैं।

धर्म को हीनदशा से बचाने अर्थात् बिना बोझ की डूबने वाली नौका को ऊपर उठाने के लिये, उसे पार कर[ने के लिये अनेक] ही साधु महात्माओं ने अहर्निश प्रयत्न किया, किंतु खे[द है कि] "अहिंसा परमोधर्मः" का प्रचारक जैन धर्म आज अपने स[...] भी वंचित होता जाता है। हा ! जब हम जैन-धर्म के

ार्य्य प्रवर, विद्वान्मण्डली के रत्न, क्षमा के भूषण, दया के
र, शांति के उपासक, धर्मप्रेमी, निर्भीक, स्पष्टवादी, रात्रिन्दिवा
धर्म का प्रचार करने वाले परमपद प्राप्त पूज्य श्रीलालजी
ाज के आषाढ शुक्ला ३ शनिवार संवत् १९७७ जयतारण शहर
ूताना में स्वर्गारोहण का समाचार सुनते हैं तब कलेजे के
२ हो जाते हैं ।

आषाढ सुदी ३ शनिवार जैन-धर्म के इतिहास में काले अक्षरों
लिखा जायगा । जिस बात की कुछ भी सम्भावना न थी, वही
ों के आगे घटित होगई । जिस घोर आपत्ति की आशंका
से मन अधीर हो उठता है वह अंत में इस दुखिया जैन-
ज की आखों के सामने आ ही गई । अनेक आशाओं पर
फेर कर तमाम स्थानकवासी ही नहीं लेकिन अनेकों जीवों
अथाह शोकसागर में निमग्नकर उस दिन निष्ठुर काल ने
कवासी जैन-वाटिका में वज्रपात करके जिस प्रस्फुटित और
न्त तक सौरभ विकीर्ण करने वाले सुमन को उसकी गौरव-
ानी लता की गोद में से उठा लिया । देखते २ बिना किसीके
में पहिले से इस बात का खयाल भी आये हुए और बिना
ी महान् कष्ट के ५१ वर्ष तक औदारिक शरीर की झोंपड़ी में
कर अपने सुकृत मय जीवन में महाशुभकर्म व...

बंधकर तेजस और कार्मण शरीर को लिये हुए किसी वैक्रिय
शरीर में दीर्घ काल के लिये स्थायी हो गए।

एक तो योंही जैन-धर्म पर आपत्ति की घनघोर घटाएं छा
हैं। लगभग एक माह ही हुआ होगा कि, अभी पंजाब प्रांत
लाहौर नगर में श्रीमान् अनेक गुणों के धारक जैन-मुनि
शादीरामजी और दूसरे जैन-नवयुवक पंडित मुनि श्री कालूरा
महाराज का जो सियालकोट में स्वर्गवास हुआ उसको तो हम
भी न पाये थे कि, इतने ही में हम जैन-धर्म के प्रचारक कार्य
और उसके माननीय स्तम्भ का दुःखदायी एकाएक समाचार
हैं तब हमें

"फ़लक तूने इतना हँसाया न था।
कि जिसके बदले यों रुलाने लगा।"

वाली लोकोक्ति याद आती है। हा! जब हम मुनिव
श्रीलालजी महाराज के मिष्टभाषण की ओर ध्यान देते हैं और
चार करते हैं कि, जिनका मिष्टभाषण जैन-धर्म के केवल स्था
वासी ही सुनकर प्रसन्न नहीं होते थे, परन्तु जिस मिष्टभाष
सुनकर सब ही मधुरभाषण करने की प्रतिज्ञा करते थे, हा!
वे ही पूज्यवर श्रीलालजी जिनका नाम सोने में सुगन्
कहावत चरितार्थ करता था नहीं है! यदि शेष है तो वह

ो उन्होंने जैन-धर्म की रक्षा, सेवा और अभिवृद्धि के लिये
प्यारे जीवन को तुच्छ वस्तु की तरह उत्सर्ग करने में समर्थ
स्वदेश, जाति और समाज की उन्नति एवं योगक्षेम के लिये
ारी से भारी विपत्ति झेलने और जीवन में सम्पूर्ण सुखों को
ाम ही बलिदान करने को तैयार हुए। मृत्युशय्या पर
में पड़े हुए भी अपने प्राणप्रिय धर्म की हित
ा के उच्च विचार जिनके मस्तिष्क में घूमते रहे
ान दुखियों के अकारण बंधु थे, जिनके पतन पर एक
शोक की कालनिशा, दुःख की तरंगें तथा हृदय-विदारक
ार ध्वनि और दूसरी तरफ समस्त नरनारी, बूढ़े बड़े और
ाधारण के मुंह से यशः-सौरभ का पटह्नाद चारों ओर गूंज रहा
का देह और प्राण समवर्ती गह्वर में चिरकाल के लिए लुप्त-
ार भी वे चिरंजीवी हैं उनकी मृत्यु किसी प्रकार भी हो नहीं
ा। यमराज का शासन दण्ड उनकी विमल-कीर्ति की अभेद्य
से टकराकर कुंठित हो जाता है—टुकड़े २ होकर गिर जाता
मनुष्य चक्षु से अगोचर रहने पर भी उनकी पुण्यमय आत्मा
ण बराबर करती रहती है। मरने के बाद भी उनका [illegible]
आदर्श जीवन उनका अनुकरण करने वालों के जीवन को [illegible]
उच्च करने का महान् साधन बना रहता है।

आज शोकाकुल और निराधार हृदय से [illegible]

जैसे—अब क्या करें, कुछ सूझता नहीं, ऐसे ही वाक्य निक
लेकिन यह कबतक के हैं ? पाठकगण ! ये तभीतक के हैं
हम और आप अपने विषयरूपी कषायों को छोड़ हुए हैं
यह अनादि काल से नियम चला आया है कि, प्रायः ज्यों२ दि
जाते हैं त्यों२ जीव अपने विषयरूपी कषायों में फंसकर शोक
पाते जाते हैं । इसी प्रकार थोड़े समय के बाद आप भी
श्री की याद तक भी भूल जाओगे । थोड़ी देर के लिए
मान भी लें कि, जिन्होंने पूज्य श्री को देखा है जिनको प
वे कदाचित् न भी भूलें तो भी उनकी भावी संतान को
भी सुनना एक तरह से कठिन हो जायगा ऐसी अवस्था
और आपका कर्तव्य है कि, इस स्वर्गीय श्री श्री १००८
श्रीलालजी महाराज का

सच्चा स्मारक

बनाने को हर प्रांत, देश, शहर और गांव में "श्रीलालज
की स्थापना करके स्मारक के लिये चंदा करें ।

जैन-धर्म ही एक ऐसा धर्म है जो कृतघ्नता के दोष
हुआ है इसलिये आईये, भ्रातृगण ! हम अपने माननीय
जैन-धर्म के अनन्य भक्त, निःस्वार्थ-प्रेमी पूज्य श्री श्रीलाल
राज के स्मारक रूप में कोई संस्था बनाकर अपने
पालन करें । यों तो जैन-समाज में आजकल छोटी मोटी

मुम्बई समाचार में से।

(लेखक—श्रीयुत चुन्नीलाल नागजी वोरा, राजकोट) साम्प्रत
में अशांति, अज्ञान और जीवन कलह का तीक्ष्ण साम्राज्य
में सब तरफ फैला हुआ है। ऐसे समय में पूज्य महाराजश्री "
मां एक बेट समान" थे और संसार के त्रिविध तापों से तप्त
को सिर्फ यह एक ही दिलकी शांति और विश्वास मिलने का
स्थान था वह भी जैन कौम के हीन भाग्य से नष्ट होगया
जैन-धर्म तथा कौम को बड़ा भारी धक्का लगा तथा उनकी यह
बहुत समय तक पूर्ण होना कठिन है।

हिन्द के भिन्न २ भाग-पंजाब, राजपूताना, मारवाड़, मे
मालवा, कच्छ काठियावाड़, गुजरात, दक्षिण, आदि देशों के नि
हजारों और लाखों जैनी पूज्य महाराज श्री पर अत्यंत पूज्य
रखते थे और तरणतारण रूप जहाज के समान वीतरागी
के नमूने के तुल्य समझते थे। चौथे आरे की प्रसादीक समा
महावीर स्वामी विचरते थे। उस सुखदाई समय के प्रसाद
में पूज्य आचार्य श्री की गिनती होने से उनके शांतिमय मुख
के दर्शनार्थ एवं महाप्रभावशाली दिव्यवाणी और जगत् में
सुख और शांति फैलाने वाले पवित्र सद्बोधामृत के पान
के लिये प्रतिवर्ष चातुर्मास में हिन्द के तमाम भागों में से ह

भाई एकत्रित हो इस दुःखद काल में दिव्य सुख की झांकी लाभ प्राप्त कर अपने को कृतार्थ समझते थे। और दुःख तथा के भार को कम कर सकते थे। यों पूज्य श्री के चातुर्मास वाला शांति और आनन्द ही आनन्द की जयध्वनि से गूंज था।

पूज्य श्री की वाणी का इतना अधिक प्रबल और हृदयंगम प्रभाव कि, स्वधर्मी, अन्यधर्मी हजारों लोग सब जगह उनके व्याख्यान लाभ लेने को एकत्रित होते थे और उनका व्याख्यान जबतक रहता था तब तक इस दुःखमय संसार का भान ही भूल और कोई दिव्यभूमि में बैठे हों ऐसी सबके मनपर परम और शांति की प्रतिच्छाया छाई रहती थी और एकचित्त से का अलौकिक उपदेश श्रवण करने में समय का भान भी भूल थे।

पूज्य श्री के दो मुख्य गुण, कि जिन गुणों द्वारा जैन-साधु किसी भी पंथ या धर्म का त्यागी साधु अग्रेसर गिनाजाता है ये चैतन्य की स्वतंत्रता का सम्पूर्ण ज्ञान, और इस तंत्रता के प्राप्त होने एवं विकसित होने के तदात्मक उपाय ये ों अलभ्य महान् गुण आचार्य श्री के समागम वाले श्री वीर ों के ज्ञाता जो २ व्यक्ति हैं सबको मालूम है। जैन-सा स्वगुण पैदा होने के लिए संयम ग्रहण करते हैं

मुम्बई समाचार में से।

(लेखक—श्रीयुत चुन्नीलाल नागजी वोरा, र..
में अशांति, अज्ञान और जीवन कलह का त..
में सब तरफ फैला हुआ है। ऐसे समय में पू..
मां एक बेट समान" थे और संसार के त्रिवि..
को सिर्फ यह एक ही दिलकी शांति और वि..
स्थान था वह भी जैन कौम के हीन भाग्य
जैन-धर्म तथा कौम को बड़ा भारी धक्का लगा..
बहुत समय तक पूर्ण होना कठिन है।

हिन्द के भिन्न २ भाग-पंजाब, राजपूताना
मालवा, कच्छ काठियावाड़, गुजरात, दक्षि.. ..
हजारों और लाखों जैनी पूज्य महारा..
रखते थे और तरणतारण रूप जह..
के नमूने के तुल्य समझते थे। चौथे ..
महावीर स्वामी विचरते थे। उस सुख..
में पूज्य आचार्य श्री की गिनती होने से
के दर्शनार्थ एवं महाप्रभावशाली दिव्यवाण..
सुख और शांति फैलाने वाले पवित्र सद्..
के लिये प्रतिवर्ष चातुर्मास में हिन्द के तमा..

समझ समस्त जीवोंपर समभाव रख स्वकार्य में तत्पर रहते
धर्मान्ध न बन जैन और जैनेतर प्रत्येक जीव कर्मों से हलके
ा सोचकर उपदेश देते और अपने चारित्र को समुज्वल
ागों और जगत् पर महान उपकार करने के सिवाय स्वआ-
कल्याण करने में भी सम्पूर्ण आराधक होते हैं ऐसे ही उपकारी
ज्यश्री में प्रधानता से थे। यही कारण है कि, पूज्यश्री
ौर जैनेतर वर्ग में अति माननीय और पूजनीय होगये थे।

मा हणो, किसी जीव को मन, वचन और कर्म से दुःख
, यह पूज्यश्री का अतिप्रिय और मुख्य उपदेश था।
जीव को तानिक भी दुःख होता देख या सुन वे मन में बड़े
होते थे और कभी २ उन्हें उनका वह दुःख सहन भी
सकता था।

ंवत् १९६७ के साल में पूज्यश्री काठियावाड़ में विचरते थे।
मय वर्षा न होने से संवत् १९६७ में भयंकर दुष्काल
या और क्षमा की मूर्ति के समान आचार्य श्रीने जब देखा कि
विचारे प्राणी सिर्फ घास के विना मरण की शरण में वज
तब उन्हें अत्यन्त दुःख पैदा हुआ। परिणाम यह हुआ कि,
ा पीड़ित दुखी जानवरों की रक्षा से संचित लाभ ...र प्
ऐसा सचोट उपदेश शास्त्राधार से दिया कि, ७

महान् विकट कार्य को परिपूर्ण करने के लिए सतत परिश्रम
है। कारण कि, आर्यमान्यता के अनुसार भी प्रत्येक जीवात्
षड् रिपुओं द्वारा अनादि काल से बंधा है और उनके साथ उस
घनिष्ट सम्बंध है तात्पर्य यह कि, स्वसत्ता को भूला हुआ जीवात्मा
पुनः वही सत्ता प्राप्त करने के लिए मार्ग बदलता है और नये मा
पर चलने से पूर्वकाल के दूसरे अभ्यास के कारण अनेक व्याघा
प्रतिघात उत्पन्न होते हैं। उन्हें हटाने के लिए सतत उद्योग
आवश्यकता प्रधानता से रहती है यह उद्योग और यह विचार पू
आचार्य श्री में मुख्यतया और अनोखी रीति से भरा हु
दृष्टिगत होता था। आधुनिक जैन और कई एक जैन-सा
लौकिक और लोकोत्तर धर्म की भिन्नता बिना समझे सा
और श्रावकों के आचार, व्यवहार और शिक्षा आदि कर्मों
आधुनिक समयानुसार हेरफेर करने की हिमायत करते हैं। उन्
पूज्य श्री ने एक दृष्टांत रूप होकर विश्वास दिलाया कि आत्मा
निज गुण की प्राप्ति में पर्व समय जिन वस्तुओं की आवश्यक
थी, आजभी उन्हीं की आवश्यकता है और भविष्य में भी उन
की रहेगी जिन्हें अपनी आत्मा का भान करने की तीव्र जिज्ञा
है और जिन्होंने इसीलिये संयम ग्रहण किया है ऐसे महा
भाव और ज्ञानी पुरुष आज भी श्री वीरप्रभु की आज्ञानुसार रा
द्वेष से विरक्त हो एकेन्द्रिय से पंचेन्द्रिय तक के जीवमात्रकी स

समझ समस्त जीवोंपर समभाव रख स्वकार्य में तत्पर रहते धर्मान्ध न बन जैन और जैनेतर प्रत्येक जीव कर्मों से हलके । सोचकर उपदेश देवे और अपने चारित्र को समुज्वल गों और जगत् पर महान उपकार करने के सिवाय स्वआ- कल्याण करने में भी सम्पूर्ण आराधक होते हैं ऐसे ही उपकारी ज्यश्री में प्रधानता से थे । यही कारण है कि, पूज्यश्री ौर जैनेतर वर्ग में अति माननीय और पूजनीय होगये थे ।

ा हणो, किसी जीव को मन, वचन और कर्म से दुःख , यह पूज्यश्री का अतिप्रिय और मुख्य उपदेश था । ीव को तानिक भी दुःख होता देख या सुन वे मन में बड़े होते थे और कभी २ उन्हें उनका वह दुःख सहन भी सकता था ।

ंवत् १६६७ के साल में पूज्यश्री काठियावाड़ में विचरते थे । मय वर्षा न होने से संवत् १६६७ में भयंकर दुष्काल या और क्षमा की मूर्ति के समान आचार्य श्रीने जब देखा कि, विचारे प्राणी सिर्फ घास के विना मरण की शरण में बजा तब उन्हें अत्यन्त दुःख पैदा हुआ। परिणाम यह हुआ कि, पीड़ित दुखी जानवरों की रक्षा से संचित लाभ औ ऐसा सचोट उपदेश शास्त्राधार से दिया कि, उस

महान् विकट कार्य को परिपूर्ण करने के लिए सतत परिश्रम क
है। कारण कि, आर्यमान्यता के अनुसार भी प्रत्येक जीवात्
षड् रिपुओं द्वारा अनादि काल से बंधा है और उनके साथ उस
घनिष्ट सम्बंध है तात्पर्य यह कि, स्वसत्ता को भूला हुआ जीवा
पुनः वही सत्ता प्राप्त करने के लिए मार्ग बदलता है और नये मा
पर चलने से पूर्वकाल के दूसरे अभ्यास के कारण अनेक व्याघ
प्रतिघात उत्पन्न होते हैं। उन्हें हटाने के लिए सतत उद्योग
आवश्यकता प्रधानता से रहती है यह उद्योग और यह विचार पू
आचार्य श्री में मुख्यतया और अनोखी रीति से भरा हु
दृष्टिगत होता था। आधुनिक जैन और कई एक जैन-ध
लौकिक और लोकोत्तर धर्म की भिन्नता बिना समझे स
और श्रावकों के आचार, व्यवहार और शिक्षा आदि कर्मों
आधुनिक समयानुसार हेरफेर करने की हिमायत करते हैं। उ
पूज्य श्री ने एक दृष्टांत रूप होकर विश्वास दिलाया कि आत्मा
निज गुण की प्राप्ति में पूर्व समय जिन वस्तुओं की आवश्य
थी, आजभी उन्हीं की आवश्यकता है और भविष्य में भी उ
की रहेगी जिन्हें अपनी आत्मा का भान करने की तीव्र जिज्ञा
है और जिन्होंने इसीलिये संयम ग्रहण किया है ऐसे महा
भाव और ज्ञानी पुरुष आज भी श्री वीरप्रभु की आज्ञानुसार रा
द्वेष से विरक्त हो एकेन्द्रिय से पंचेन्द्रिय तक के जीवमात्रकी स

समक्ष समस्त जीवोंपर समभाव रख स्वकार्य में तत्पर रहते
धर्मान्ध न बन जैन और जैनेतर प्रत्येक जीव कर्मों से हलके
सोचकर उपदेश देते और अपने चारित्र को समुज्वल
ोगों और जगत् पर महान उपकार करने के सिवाय स्वआ-
कल्याण करने में भी सम्पूर्ण आराधक होते हैं ऐसे ही उपकारी
ूज्यश्री में प्रधानता से थे। यही कारण है कि, पूज्यश्री
ौर जैनेतर वर्ग में अति माननीय और पूजनीय होगये थे।

मा हणो, किसी जीव को मन, वचन और कर्म से दुःख
, यह पूज्यश्री का अतिप्रिय और मुख्य उपदेश था।
जीव को तनिक भी दुःख होता देख या सुन वे मन में बड़े
होते थे और कभी २ उन्हें उनका वह दुःख सहन भी
सकता था।

संवत् १९६७ के साल में पूज्यश्री काठियावाड़ में विचरते थे।
मय वर्षा न होने से संवत् १९६७ में भयंकर दुष्काल
दया और क्षमा की मूर्ति के समान आचार्य श्रीने जब देखा
विचारे प्राणी सिर्फ घास के बिना मरण की शरण
तब उन्हें अत्यन्त दुःख पैदा हुआ। परिणाम यह हु
ल पीड़ित दुखी जानवरों की रक्षा से संचित लाभ
र ऐसा सचोट उपदेश शास्त्राधार से दिया कि, उस

से श्रोतृवर्ग में दया की उत्कृष्ट भावना उत्पन्न हुई और राजको
छोटे शहर में एक ही दिन तीस हजार रुपयों का फंड इ
गया कि, जिससे हजारों जानवरों को अभयदान मिला।

इस समय यह बात खास जानने योग्य है कि, संवत्
में काठियावाड़ के बहुत से हिस्सों में पूज्य महाराजश्री के उ
प्रभाव से जानवरों के रक्षार्थ केटल केम्प खुले थे और इ
लोगों का अधिक ख्याल रहा, पूज्य आचार्य श्री ने इस तरह उ
का जो बीज बोया उसका विशेष फल संवत् १९६८ के स
पश्चात् के पड़े हुए दुष्कालों में काठियावाड़ के छोटे २ ग्राम
नवराजें की रक्षा के लिये किये हुए प्रयत्न सबके दृष्टिगत हु

यों काठियावाड़ की भूमि को पूज्य श्री के मंगलमय
पवित्र होने का ऐसा अलौकिक स्मरण चिन्ह प्राप्त हुआ।
प्रभावशाली व्यक्ति के उपदेश का यह कुछ कम प्रभाव नह
जा सकता।

राजपुताना-मालवा इत्यादि में भी अनेक स्थानों पर
के लिये संस्थाएं और ज्ञानशालाएं मुख्यतः पूज्यश्री के सद
ही प्रारंभ हुई हैं इसी तरह छोटी सादड़ी वाले सद्गत
सेठ नाथूलालजी गोदावत ने रुपया सवालाख की सखावत
कर एक जैनाश्रम खुलाया है वह भी पूज्य श्री के प्रभाव

पूज्य श्री चारित्र के एक उमदा से उमदा नमूने थे। उनकी
तिमय मुखमुद्रा, दयामय हृदय, ज्ञानमय अलौकिक वाणी और
कथन के प्रभाव से अन्यधर्मी साक्षर लोग भी उन्हें पूजनीय
मते थे। राजकोट के चातुर्मास में श्रीयुत न्हानालाल दलपतराम
वर और सद्गत अमृतलाल पढ़ियार पूज्य श्री से पक्के परिचित
और जब २ इन दोनों साक्षरों को प्रकट आम सभा में बोलने
मय मिलता तब २ आचार्य श्री के उत्तम चारित्र, ज्ञान और
श की मुक्तकंठ से तारीफ किये बिना नहीं रह सकते थे। उनके
न मुताबिक "श्रीलालजी महाराज चारित्र के एक उमदा स
ा नमूने हैं और इस कलिकाल में उनकी समानता करने वाला
ना दुर्लभ है।"

आचार्य श्री इतने अधिक प्रभावशाली, चरित्रवान् और ज्ञानी
क, प्रायः तमाम जैन मुनिराज उन्हें आचार्य के समान मान देते
अभी वर्तमान में उनकी संप्रदाय में ७२ साधु मुनिराज
रते हैं। पूज्य श्री के निर्वाण के कारण युवराज मुनि श्री जवा-
लालजी महाराज अब आचार्य पद पाये हैं वे भी सर्वथा
ग्य हैं।

स्थानकवासी जैन-समाज के ऐसे एक महान् पूज्य आचार्य श्री
निर्वाण से जैन कौम का एक अनमोल रत्न खो गया है
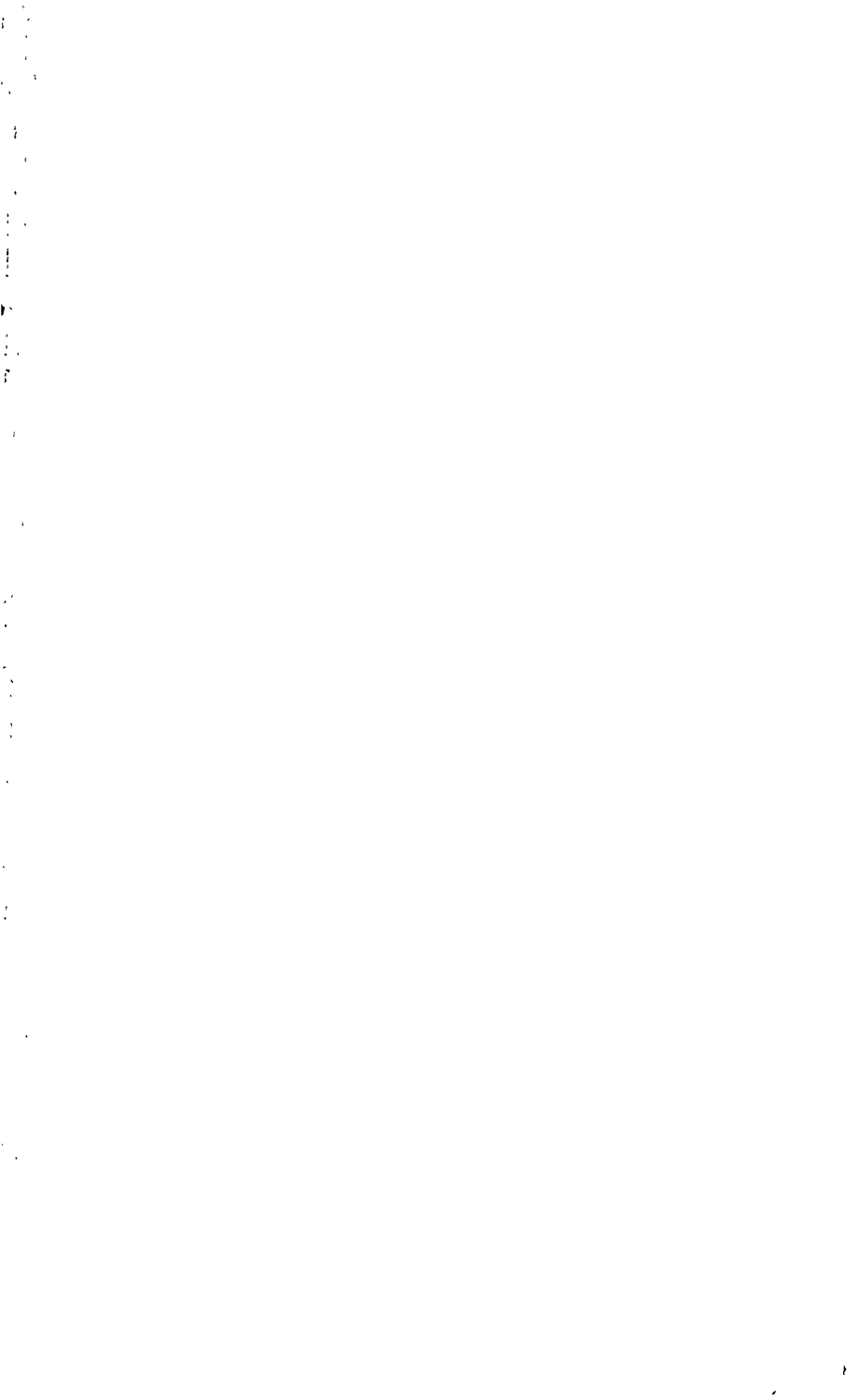
प्रेषित पत्र

(लेखक—श्री पोपटलाल केवलचंद शाह)

परम पूज्य गच्छाधिपति महामुनि श्री १००८ श्री श्री श्रीलालजी
ज साहिब के स्वर्गवास के समाचार शोकजनक हृदय से
जैन-संसार व्यवहार की अपेक्षा से जैन-समाज में इनके
ास से भारी-जिसकी पूर्ति न हो सके-ऐसी त्रुटि पैदा हो गई
हुत बुरा हुआ। जैन साधु-समाज की अपेक्षा से भी उनकी
ारी कमी हुई जिसकी अभी जल्दी पूर्ति नहीं हो सकती।

साधु समाज के तो ये नेता, शास्त्रसिद्धांत के पारगामी, वीत-
ी आज्ञा का सब साधुओं से पालन कराने वाले, पूर्ण प्रेमी,
ा की रक्षा करने में अडिग, साधु-मंडल में तनिक भी अप-
ा दाखल न हो जाय ऐसा प्रत्येक पल २ पर देखने वाले,
ता के पालक और समस्त दिन स्वाध्याय में लीन रहने वाले
हात्मा थे। इनकी खामी तो साधु-समाज को पग २ पर
होगी।

जैन-समाज में समय को देख उनके जैसा असरकारक, स
सिद्धान्त तथा नियमबद्ध ज्वलन्त उपदेश देने वाले महा
ा विरले ही होंगे और इसलिये जैन-समाज के संसार व्य

हार को धर्म की दृष्टि से सुधारने को तत्पर उन जैसे संत महंत
जैन-समाज को बड़ी भारी खामी हुई है। मैंने कई साधु साध्वी
दर्शन एवम् सत्संग का लाभ लिया है परंतु ऐसे एक ही संत
मैंने अपनी तमाम उम्र में भी न देखे कि जिनका प्रताप, जिनकी वा
जिनकी शासन रक्षा, जिनका उपदेश, जिनका तप, तेज, जि
आतंक, जिनका उद्योत, जिनका उत्साह ये सब एक
दूसरों में भाग्य से ही होंगे। बेशक, कई साधु साध्वी
उत्तम पूज्य हैं, वंदनीय हैं, परोपकारी हैं परन्तु मुझे पक्षपाती
या अनन्य भक्त कहो, जो कहना हो सो कहो, परन्तु मेरा औ
जिन जैनों को या जैनतरों को प्रामाणिक और परीक्षक सम
हूं उनका हृदय तो उन्हें सब साधुओं में श्रेष्ठ समझता था।

राजकोट में उन पर जैन और जैनेतर सबका ऐसा उत्तम
रहा कि, उनके स्वर्गवास से उन पर प्रेम प्रकट करने के लिये
जैनों ही की नहीं, परन्तु एक आम सभा बुलाकर खेद प्रकट
और हिंदू मुसलमान व्योपारियों ने इनके मान में व्योपार बंद
पर्य पाल एक दिन अपने २ धर्मध्यान में बिताया।

परमपूज्य सद्गत आचार्य महाराज श्रीलालजी मह
साहिब समभावशील और गुणानुरागी थे, तथा सब मतों में
सत्य हो उस सत्य के पक्षपाती थे। जैन-धर्म में कथित जी

: करने वाली कई बातें, कविताएं और कहावतें चाहे जिस
। हों उसे याद रख व्याख्यान में कहते और सब श्रोतृ-समु-
ो आनंदित करते थे।

क कवि की भाषा में कहूं तो अहिंसा इनके जीवन का मुख्य
। और यह उनके जीवन में ताने, बाने, की तरह फैल गया
त्य उनका मुद्रालेख था, तप उनका कवच था, ब्रह्मचर्य
सर्वस्व था, सहिष्णुता उनकी त्वचा थी, उत्साह जिनका
था, अखूट क्षमा-जल जिनके हृदय पात्र या कमंडल में
था, सनातन योगी कुल का यह योग मालिक था, राग
झंझानल से यह अलग था, मेरे तेरे के ममत्व-भाव
े था, सब जीव के कल्याण का यह इच्छुक था, इतना
ा, परन्तु सबके कल्याण के उपदेश में वह सदा-मश्कूल
था जैन भारत का एक वर्तमान महान् धर्म गुरु धर्माचार्य
का शृंगार, परोपकारी समर्थ वक्ता, समर्थ क्रियापात्र,
निष्ठ गच्छाधिपति ५१ वर्ष की अपरिपक्व वय में कालधर्म
मने एक अनुपम अमूल्य आचार्य खोया है।

ाजकोट और काठियावाड़ में उन्होंने जगह २ जीव-दया की
ोषणा उच्च स्वर से असरकारक रीति से की थी। अडस-
ुष्काल की अपेक्षा छप्पनिया दुष्काल अधिक विषम था, तोभी
ाया में जीव-रक्षा या गो-रक्षा के लिए जो हुआ था उससे

अनेक गुना कार्य अडसठिया में हुआ। अडसठिया दुष्काल में गये दया के कार्य पशु-रक्षा, गो-रक्षा, मनुष्य-रक्षा, इत्यादि सुन्दरता से हुए थे, एवम् धर्म-श्रद्धालु परोपकारी पुरुषों ने इस को पार लगाने में कैसा सरस उत्साह दिखाया था तथा राज ने इस विषय पर समस्त काठियावाड़ को जो नमूना दिखाया वह सब सोचते २ इन स्वर्गवासी--इन देवगतिपाये हुए महात्म उपकार तनिक भी नहीं भूल सकते और इस काठियावाड़ में पूज्य श्री के स्वर्गवास के समाचार मिलेंगे वहां २ उनके को पारावार शोक होगा।

ज्ञान, भक्ति, वैराग्य, अनुभव, तप, आश्रम धर्म का पालन, हृदय की विशालता इन सबका जब हृदय हिसाब तब उनकी जैन-समाज में कितनी बड़ी भारी कमी हुई है जा सकता है। हृदय में आंसू निकल पड़ते हैं और साधुओं कलम अधिक कम्पित होती है, गद्गद-कंठ से आज इस लिखता हूं।
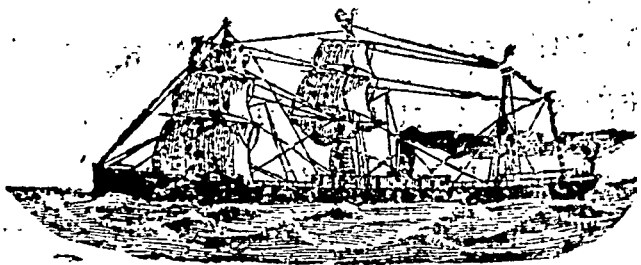
शोकोद्गार ।

(राग सोरठा)

अमृत भीनी वाण, सांभलता सुधर्या घणा,
अब मूलुं व्याख्यान, सुणशुं क्यां श्रीलालजी ॥ १ ॥
प्राणी-रक्षण काज, अमर पडो वजडावता,
करी शके नवराज, करनारा श्रीलालजी ॥ २ ॥
अडसठ साल कराल, छतां जणायो नहि जरा,
थयो न वांको वाल, प्रताप ए श्रीलालजी ॥ ३ ॥
आप गुणोनी खाण, अल्प प्राण शुं कही शके,
अमने मोटी हाण, जगमां त्रिण श्रीलालजी ॥ ४ ॥
संयमना परिणाम, आप स्वर्गमां शोभता,
मरजीवा तम नाम, विसरां कयम श्रीलालजी ॥ ५ ॥
सदैव ल्यो संभाल, अवध ज्ञान उपयोगथी,
नथी भूलणां बाल, अरज एज श्रीलालजी ॥ ६ ॥
कारक कसाई खास, लाखो जीव विदारता,
कर्या दयाना दास सांभरशो श्रीलालजी ॥ ७ ॥
राजकोट पर प्यार, पूरो राख्यो प्रथम थी,
गुण रसना भंडार, सत्यगुरु श्रीलालजी ॥ ८ ॥

श्री प्राणजीवन मोरारजी शाह—राजकोट

अध्याय ५३ वाँ ।

सच्चा—स्मारक।

महियर नरेश को धन्यवाद।

संख्याबंध प्राणियों को अभयदान।

श्रेष्ठ समुदाय और शुद्धाचारित्र यही पूज्यश्री का सच्
है। इस शुद्ध—चारित्र को निभाने की शक्ति उत्पन्न करना
राजों की और चारित्र पालने की सरलता का रक्षण करना
कृतज्ञता है। उनके उपदेश को याद रख इसी मुआफि
करना यह उनका उत्तमोत्तम स्मारक है।

जीव—दया की वकीली में उन्होंने अपनी जिन्दगी
भाग अर्पण किया है। उनके स्मरणार्थ उनके स्वर्गवास
जल्दी ही जीव-दया का एक महान् कार्य हुआ और काय
बची। उस सम्बन्ध में 'जीव—दया' मासिक का निम्
यहां देते हैं।

वैरिणोऽपि हि मुच्यंते, प्राणान्ते तृणभक्षणात्
तृणाहाराः सदैवते, हन्यन्ते पशवः कथम् ॥

हमारे देशके रक्षक सचमुच ये पशु हैं,
हमारे देशकी दौलत सचमुच ये पशु हैं,
हमारा बल और बुद्धि सब कुछ ये पशु हैं,
हमारी उन्नति का सुदृढ़ पाया ये पशु हैं.

"All are murderers-the man who advise the kill-
creature, the man who kills, the man who
man who purchases, the man who sells, the
cooks (the flesh) the man who distributes
man who eats." —Manu

भारत का धन है, प्रभु की विभूति है और अपने लघु
धर्मशास्त्र, अर्थशास्त्र, और आरोग्यशास्त्र, की दृष्टि से
रना यह अत्यंत हानिकर और महा अनर्थकारी है। प्रत्येक
ने पशुवध का—प्राणीमात्र की हिंसा का निषेध किया
ा, दया यह मनुष्य का प्राकृतिक धर्म है हिन्दुओं के पांच
द्धों के पांच महाशील, जैनों के पांच महाव्रत इन सब में
धर्म ही प्रधान पद पर आरुढ़ है।

पञ्चैतानि पवित्राणि सर्वेषां धर्म चारिणाम्।
अहिंसा सत्यमस्तेयं त्यागो मैथुन वर्जनम्॥

हिंसा, सत्य, अस्तेय, त्याग और मैथुन वर्जन इन पांचों के
र्म वालों ने पवित्र माने हैं इसके सिवाय

"अहिंसा परमोधर्मः" "माहिंस्यात् सर्वाभूता
"आत्मवत् सर्वभूतेषु यः पश्यति स पश्यति"

इत्यादि अनेक मनन योग्य वाक्य हिन्दू धर्मशास्त्रों
स्थल दृष्टिगत होते हैं तो भी अफसोस की बात है, कि
में ऐसा एक वर्ग प्रस्तुत है जो हिंसा के कृत्यों में
मानता है—धर्म के लिये हिंसा करता है जो अत्यंत नि
एवं भयंकर है । काली, महाकाली दुर्गा, जगदम्बा,
शारदा, आदि देवियों के उपासक अपनी अधिष्ठात्री दे
पशुओं के रुधिर की प्यासी महाविकाल और क्रूर हृदय की
हैं और उसकी कृपा सम्पादन करने के लिये उसे पाड़े,
इत्यादि निर्दोष पशुओं का बलिदान कर भेंट चढ़ाते हैं। यह
त्ति सिर्फ अज्ञानजन्य है । मांसलोलुप, स्वार्थान्ध, लोभग्रू
कि जिनके हृदय में दया का लेश भी न था, धर्म ग्रन्थों में
ही कल्पित बातें घुसादी और लोगों के नेत्रों पर पट्टा बांध
केवल उलटे मार्ग पर लगा दिया । इसतरह अपनी दुष्ट वास
को तृप्त करने वास्ते तथा अपने पर पूज्यभाव कायम रखने
उन्होंने धर्मशास्त्रों से, और साधारण ज्ञान से भी प्रतिकूल
एकांत पापमय प्रवृत्ति को भी धर्म का कार्य ठहराया है ।
प्रपंच जाल में फंसे हुए भोले अज्ञानी लोग तनिक भी

कि इन कार्यों से देव देवी तुष्ट होंगे या रुष्ट होंगे ? उनकी मान्यतानुसार देवी जगज्जननी है समस्त जगत् की अर्थात् प्राणीमात्र की वह माता है इस हिसाब से मनुष्य मात्र उसके ज्येष्ठ पुत्र हैं और पशु उसके कनिष्ठ पुत्र हैं । माताओं का प्रेम छोटे बच्चों पर अधिक रहता है यह स्वाभाविक है । माताको प्रसन्न करने के वास्ते उस के ही छोटे २ बच्चों के गले उसके समक्ष छेद डालना यह कितना बेहूदा और मूर्खता पूर्ण क्रूर कर्म है ? इससे यदि माताएं प्रसन्न होती हों तो वे माताएं ही नहीं हैं । देव देवियों को राजी करने के लिये बलिदान देना ही हो तो अपनी प्यारी से प्यारी वस्तु का देना चाहिये । स्वार्थी उपासक इष्ट वस्तुओं का वियोग सहन नहीं कर सकते, इसलिए निरपराधी पशुओं पर छुरी चलाते हैं । देव-देवी तो सिर्फ वासना के भूखे हैं । तुम्हारी कैसी भावनाएं हैं यह योजना तुम्हारी कसोटी की है जो चढ़ाते हो वे तो उसे लेते ही नहीं, उनकी अमीदृष्टि से यह प्रसाद होगया ऐसा समझ उसे तुम वापिस लेजाते हो, जठर उपासक स्वार्थी पुजारियों ने मुफ्त के माल में मांसाहार प्राप्त करने की युक्ति ढूंढ निकाली और धर्म के नामपर भोले भारत को ठगना शुरू किया ।

जबतक सत्य न समझा जाय तबतक ही लोग ठगे जाते हैं, सत्य समझने के साथ ही लोग अपनी भूल से होते ह

समझने लगे । देवी का साम्राज्य समस्त दुनियां में है, समस्त देशों की अपेक्षा भारत अधिक अधम दशा को है । इसका कारण भी सोचने योग्य है पशुओं के बलि प्रसन्न होते तो भारत की ऐसी दुर्दशा कभी न होती । से नानातरह के रोगों का उपद्रव, बड़े से बड़ा मृत्यु प्रमाण दुष्काल पराधीनता, दरिद्रता आदि दुःखों का वरसाद, प्रवृत्ति से कुपित हुए देव देवी ही क्यों न बरसाते । जैसे बुने और करे वैसा भोगे अन्य को सुख देने दुख देने से दुःख प्राप्त हो यह त्रिकाल से बंधा हुआ है अन्य के अनिष्ट द्वारा अपना इष्ट साधने की आ प्राकृतिक कानून से विरुद्ध है ।

"मा हिंस्यात् सर्वा भूतानि" किसी भी प्राणी करो यह महावाक्य याद रखकर ही उसके सरवग ने देवी पूजा इत्यादि कार्य करने चाहिए, परन्तु यह होनी चाहिए कि जिसमें दूसरे निर्दोष प्राणियों व जाय । कदाचित कोई ऐसा कहे कि दुर्गा सप्तशती गंधैश्च' पशु पुष्प और सुगंधित पदार्थों से देवी की पू है तो उसका अर्थ क्या है ? जिसका उत्तर यही है पुष्प की पूजा, पुष्पों को पूरे २ चढ़ाकर की जाती पशुओं से पूजा करनी हो तो पशुओं को माता के

सी प्रार्थना कर छोड़ देना चाहिए कि हे जगदम्बे ! आपके दर्शन
पवित्र हुआ यह बकरा भी निर्भय होकर विचरे अर्थात् कोई भी
साहारी उसका वध न करे, ऐसा संकल्प कर उस बकरे को छोड़
ना चाहिए' जिससे पुण्य हो, सचमुच में पूजा की यही विधि है
ह पद्धति कई स्थानों पर प्रचलित है और बकरे के कान में कड़ी
ना कर उसे निर्भय 'अमरा' किया जाता है उपदेशकों ने धर्मोपदेश
ा और राजाओं ने राज्य सत्ता द्वारा इस उत्व विधि का प्रचार
ना चाहिए।

जमाना ज्यों २ आगे बढ़ता जाता है त्यों २ ऐसे घातकी सन्देह
कम होते जाते हैं। कितने ही दयालु और धर्मनिष्ठ राजाओं ने
पने राज्य में इसतरह होते हुए पशुबध को देशकी अवनति का
र कालेरा सेग इत्यादि रोगों की उत्पत्ति का कारण समझ राज्य-
ा से उसे बंध कर दिया है यह अत्यंत संतोष की बात है।

अभी ही महियर राज्य के नामदार नरेश ने जिस पुण्यमय
ति द्वारा प्रतिवर्ष हजारों जीवों का वध होता हुआ बंद कराने
प्रशसंनीय कार्य किया है उसे सुन दयालु मनुष्यों के हृदय
ंद से लहराये बिना नहीं रह सकते।

महियर यह बुंदेलखंड का एक देशी राज्य है। वहां अति प्रा ीन
य से एक उच्च टेकरी पर शारदा देवी का स्थान है। इस

रियाया में से अधिकांश रियाया इस देवी की उपासक है।
देवी को प्रसन्न करने के लिये पुत्रादिक की प्राप्ति अथवा अन्य
की सिद्धि के लिये देवी को भेड़ों बकरों का बलिदान दे
कुप्रथा बहुत समय से वहां प्रचलित थी। इसलिये वहां
हजारों भेड़ों बकरों का बलिदान दिया जाता था। चैत्र म
वहां बड़ा भारी मेला लगता है और वहेमी, अज्ञानी, मूर्ख
नारियल की तरह पशुओं को माताजी पर चढ़ाते हैं। यह
प्रथा क्यों और किसतरह बंद की गई जिसका संक्षिप्त
वाचकों को आनंदित करेगा।

जैनाचार्य श्रीलालजी महाराज कि जिनके सदुपदेश से
जीवों को अभयदान मिला था और कई राजा महाराजाओंने
राज्य में धर्म निमित्त होती हुई पशुहिंसा और शिकार इत्या
कराया था, उनका स्वर्गवास गत अषाढ़ शुक्ला २ को जे
मुकाम पर हो जाने के दुःखद समाचार इस लेखक को
मुकाम पर मिलने से उनके ऊपर पूज्यभाव और प्रशस्तरा
कारण से हृदय को बड़ा भारी आघात पहुंचा, परंतु धर्म क्रि
प्रवृत्त हो संसार की असारता और देह की क्षणभंगुरता का
आते ही अंतरात्मा की ओर से ऐसी प्रेरणा हुई कि गुरु
स्मारक के उपलक्ष में कुछ शुभ प्रवृत्ति करना उचित है। परन्तु
करना इसका निर्णय न हो सका। मन अनेक तर्क वितर्क

रा। विचार ही विचार में समस्त रात बीतगई दूसरे दिन बढ़-
ण में मेरे एक मित्र श्रीयुत भगवानदास नारणजी बोरा तरफ से
क पत्र मिला जिसका सारांश यह था कि:—

"मैहियर स्टेट में प्रतिवर्ष देवी को भोग देने के लिये हजारों
ओं का वध होता है। इसे बन्द कराने वास्ते प्रयत्न करना
आवश्यक है और रु० १५००० वहां हॉस्पिटल का मकान बंधाने
के देवी को अर्पण किया जाय तो वध जल्द ही बंध हो जाय।"

इस पत्र ने मुझे कर्तव्य पथ सुझाया। सद्गत गुरुवर्य की अदृश्य
या का ही यह फल हो ऐसा मुझे दृढ विश्वास हो गया और
कार्य को पार लगाने वास्ते मैंने दृढ़ संकल्प किया।

मैहियर स्टेट के दिवान साहिब श्रीयुत हरिलाल उर्फे बारा-
गणेशजी अंजारिया बी० ए० राजकोट के खानदान कुटुम्ब
एक बढ़नगरा नागर गृहस्थ है। उनके साथ पत्र व्यवहार
म किया। और रु० १५०००) के लिये मुम्बई स्थानकवासी
संघ के अग्रेसर कच्छ माँडवी के रहिवासी शेठ मेघजी भाई
णभाई तथा उनके भाणेज शांतिदास आसकरण जे० पी० से
न लिया। पश्चात् हम बम्बई से (मैं और मेरे मित्र श्रीयुत
) मैहियर गये। वहां दिवान साहब की मुलाकात से हमें
न्त आनन्द हुआ और हमारा मनोरथ सफल

ऐसा विश्वास हो गया । शारदा देवी के दर्शन करने की हमने इच्छा दर्शाई । दिवान साहेब भी हमारे साथ आये, संख्याबन्ध सीधे पंक्तियें चढ़ कर हम देवी के स्थान पहुंचे प्रथम दिन ही करीब तीस पैंतीस बकरे काटे गये थे जिस से वहां लोही का कुंड भरा हुआ था. वह दृश्य हृदय को कम्पा देने वाला था। दीवान साहेब के दयार्द्र अंतःकरणको भी इस क्रूर प्रथा से असह्य दुःख होता था फिर हम नामदार महाराजासाहिब से मिले. उनका मिलन सार स्वभाव विद्वत्ता, और धर्म पर श्रद्धा इन सब से हमें अत्यन्त आनंद हुआ । हमने अत्यन्त नम्रता से देव देवी को बली देने वास्ते राज्य के प्रतिवर्ष हजारों निरपराध पशुओं के प्राण लूटे जाते हैं उन्हें बंद करदेने की प्रार्थना की और इस के बदले यतकिंचित स्मारक के बतौर महियर के हास्पिटिल के लिये एक मकान बंधा देने वास्ते रुपया १५०००) अर्पण करने की विज्ञप्ति की। हमारी प्रार्थनाको दयालु महाराज साहिब ने कितनीही दलीलों के बाद स्वीकृति की और हास्पिटिल के मकान पर शेठ मेघजीभाई तथा शांतिदास के नामका शिलालेख रखने की परवानगी दी और आज्ञा पत्र निकाल कर समस्त राज के तमाम मंदिरों में हमेशा के लिये देवियों को बलिदान देने बाबद पशुवध करने की बिलकुल मनाई करदी इस आज्ञापत्र की नकलें हिंदके तमाम राज्यों में भेजी गई और प्रसिद्ध पेपरों में भी प्रकट की गई ।

नामदार महाराजा साहब ने इस महान पुण्यकार्य से अपनी
अमर करदी और कई भोले लोगों को घोर पाप के कार्यकी
में गिरने से बचाये तथा संख्याबन्ध मनुष्यों को नर्क के
कारी होने से रोक अपने लिये स्वर्ग के द्वार खोलदिये हैं
या और सत्ता का सदुपयोग कर अपना जीवन सार्थक कियाहै
रतवर्ष के अहिंसा धर्म के उपासकों के मन उन्हों ने इस शुभ
त्ति से जीत लिये हैं. हिन्द के प्रत्येक भागों में से हजारों
रक वादी के तार उन के पास जा गिरे हैं वहां के
वान साहेब ने भी इस प्रवृत्ति के प्रेरक बन महान पुण्य प्राप्त
किया है।

सेठ मेघजी भाई तथा शेठ शांतिदास ने अपनी लक्ष्मी का
सद्व्यय कर अलभ्य लाभ उठाया है. उनकी उदारता परम श्रेयका
कारण भूत हूई पंद्रह कोटि रुपये खर्चने से भी जो लाभ प्राप्त न
हो सके वह लाभ उन्हे रु० १५०००) से प्राप्त होगया. सात
हजार बकरों को सिर्फ एक ही समय अभय दान देनेमें रु० १५०००
खर्च होते हैं उस के बदले रु० १५०००)) में हमेशा के लिये
प्रतिवर्ष होते हजारों पशुओं का वध बंद होगया यह लाभ कुछ
कम नहीं है फिर इन १५००० रुपयों से दवाखाने का मकान
बांधाजायगा जिस से हजारों दुःखी दर्दी की आशिष भी
उनपर वरसती रहेगी द्रव्य का शुभ से शुभ उपयोग इसी को

हॉस्पिटल की नींव का मुहूर्त ता १३ १० २० के रोज बुंदेलखंड के पोलिटिकल एजन्ट के हाथ से होगया और मकान बनना भी प्रारंभ है स्टेट तरफ से अधिक रकम देकर मकान बनाना निश्चित हुआ है हास्पिटल का खर्च भी राज्य होगा।

अंत में हम चाहते हैं कि इस सत्य प्रवृत्ति का सर्वत्र अनुकरण हो और पवित्र आर्यावर्त में से पशुवध बंद होजाय त पुण्य भारत भूमि अपना पूर्वसा गौरव पुनः प्राप्त करे।

इस अवसर की खुशी में श्री मोरवी हाइ स्कूल के शास्त्री श्रीयुत पुरुषोत्तम कुबेरजी शुक्ल की ओर से निम्नांकित काव्य हुआ है।

शार्दूल विक्रीड़ितं वृत्तम्।

यत्साध्यं न भवेत् कदापि बहुलै निष्क्रव्ययैः कोटिभिः
वर्षाग्रामयुतेन नापि सुलभं यत्तत्र वद्धश्रमैः ॥
यस्मिन्वै विजयं न याति सततं संख्यातिगावाहिनी।
तत्कार्यं सुमहात्मनां करुणया स्वल्पश्रमात् सिध्यति।

राज्ये यन्महियारके वलिवधो श्रीशारदाम्बाकृते।
प्राचीनः पशुतावधः कुविधिना यः क्रियमाणोऽभवत्
श्रीश्रीलालजि सद्गुरोर्गुणनिधेः स्मृत्यर्थमेवाधुना।
रुद्धोदुर्लभ श्रेष्ठिनेश कृपया धर्म प्रभावो महान् ॥ २

गुजराती अनुवाद ।

शार्दूल विक्रीडित ।

कोटी म्होर सुवर्ण खर्च करतां, जे कार्य थातुं नथी ।
जेनी वर्ष अयुत कष्ट श्रम थी, किंचित् सिद्धि नथी ॥
सेनाओ अगणि युद्ध कर शे, तोये न आशा फल ।
तेवुं महान् सुकर्म साध्य सुलभ, साधु कृपा किंचित् ॥१॥
जुवो महियर राज्य मां वलिविधि, श्री शारदा मातने ।
थातो तो वध रे वहु पशुतणो, ते रोक्यो सज्जने ॥
त्रिभुवन सुत दुर्लभे श्रमकरी, तें पाप रोकावियुं ।
जैनाचार्य श्रीलालजी स्मरणमां तेसंत नामे थयुं ॥ २ ॥

*इससे सम्बन्ध रखने वाले चित्र आगे दिये गये हैं ।

अध्याय ५४ वाँ ।

बीकानेर में हिन्द के जैन साधु मार्गियों का सम्मेलन ।

श्री बीकानेर श्रावकों की ओर से स्मारक के विचार भारतवर्ष के भिन्न २ प्रान्तों के अग्रगण्य नेताओं को आमंत्रण गया था । जिस पर से भिन्न २ प्रान्तों से करीब २०० सद्गृ हाजर होगए थे जिनमें मुख्य २ ये थे ।

श्रीमान् सेठ गाढ़मलजी लोढ़ा अजमेर, श्रीमान् सेठ वर्द्धमाण पीतलिया रतलाम, श्रीयुत दुर्लभजी त्रिभुवनदास जौहरी जैपुर, श्री सुगनचंदजी चोरड़िया जौहरी जयपुर, श्रीयुत जालमसिंहजी कोठ B.A. जोधपुर, श्रीयुत माणकचंदजी मूथा जोधपुर, श्रीयुत जौह मोहनलाल रायचंद बम्बई, श्रीयुत जौहरी अमृतलाल रायचंद बम्ब जौहरी माणकचंद जकशी बम्बई, जौहरी लक्ष्मीचंद जशकरण पा नपुर, जौहरी कालीदास गोदड़भाई पालनपुर, सेठ भगवानजी ना णजी वोरा वढवाण शहर, लाला केशरीमलजी रिटाइर्ड ज्युडीशी सेक्रेटरी उदयपुर, जौहरी केसुलालजी ताकड़िया उदयपुर, श्रीयुत

मी मेहता उदयपुर, श्रीयुत सागरमलजी गिरधारीलालजी बंगलोर, युत शंभूमलजी गंगारामजी बंगलोर, श्रीयुत श्रीचंदजी अब्बाणी र, श्रीयुत घासूलालजी चोरड़िया ब्यावर, श्रीयुत अगरचंदजी, चंदजी अजमेर, श्रीयुत मोतीलालजी कांसवा अजमेर, श्रीयुत मलजी गाढ़मलजी चोरड़िया अजमेर, श्रीयुत मिश्रीलालजी जयपुर, श्रीयुत रतनचन्दजी दफ्तरी जयपुर, श्रीयुत गुमा- जी ढड्ढा जयपुर, जौहरी कल्याणमलजी छाजेड़ जयपुर, शेषमलजी बालिया पाली इत्यादि २ ।

उपस्थित गृहस्थों तथा बीकानेर और भीनासर संघ की एक ता० २-८-२० से ता० ४-८-२० तक श्रीयुत भेरूदानजी के मकान में एकत्रित हुई । प्रमुख स्थान श्रीयुत दुर्लभजी नदास जौहरी को दिया गया । प्रारंभ में आये हुए देशावरों सानुभूति दर्शक तार, पत्र प्रमुख महाशय ने पढ़ सुनाये । १००८ श्री श्रीलालजी महाराज के अकस्मात् वियोग से को जो हानि पहुंची है उसके लिये हार्दिक खेद प्रकट किया

उपस्थित सभासदों ने ऐसा वि[illegible] बताया कि श्रीमान् स्वर्ग- पूज्य महाराज के उपदेशों की [illegible] संघ के भावी संतानों में पित [illegible] एक ऐसी [illegible] जाय कि,

जिससे उनके उपदेशामृत की यादगार चिरकाल तक स्थायी
रहे । इस पर से निम्नांकित ठहराव सर्वानुमत से पास किये ग

प्रस्ताव १ ला ।

(१) निश्चय हुआ कि श्री संघ की उन्नत्यर्थ एक गु
खोला जावे और उसका नाम "श्री० श्वे० साधुमार्गी जैन गुरु
रक्खा जावे ।

(२) इस संस्था के लिये अनुमान रु० ५०००००)
लाख की आवश्यक्ता है जिसमें रु० २०००००) दो ला
चन्दा वसूल हो जाने पर कार्यारंभ किया जावे.

(३) कमसे कम रु० २१०००) का विशेष प्रदान
वाला इस संस्था का संरक्षक (Patron) गिना जावेग
संरक्षकों में से ही इस संस्था की प्रबन्ध कारिणी सभा का
पति चुना जावे ।

(४) रु० ११०००) देने वाले गृहस्थ इस सं
सहायक गिने जावेंगे और उनमें से इस संस्था की प्रबन्धक
सभा के उप सभापति सरीके या कोषाध्यक्ष (खजानची)
चुने जावेंगे ।

५) रु० ५०००) या ज्यादा और रु० ११०००) से कम
व्यक्ति इस संस्था के शुभेच्छुक Sympathiser) गिने
और उनमें से भी मंत्री आदि पदाधिकारी चुने जा सकेंगे ।

६) रु० २०००) या अधिक प्रदान करने वाले गृहस्थ
सभा के सभासद गिने जावेंगे और उनका चुनाव प्रबन्ध
सभा में हो सकेगा ।

७) चंदा प्रदान करने वाले गृहस्थों के नाम शिलालेखों
न आश्रम के दरवाजे पर मय चंदे की तादाद के प्रकट
जावेंगे ।

८) प्रबंध कारिणी सभा अपनी इच्छानुसार पांच अन्य
गृहस्थों को सलाह लेने के लिये शरीक कर सकेगी और उनके
सभा में आसकेंगे और उनपर चंदे का कोई प्रतिबंध
।

नोट—इस गुरुकुल का उद्देश समाज की भावी संतान को
चरित्र, नीतिमान, विनयवान, शीलवान, व विद्वान बनाने
का ।

प्रस्ताव २ रा.

श्री बीकानेर संघने प्रकट किया कि यदि बीकानेर में

बाहर गुरुकुल खोला जावे तो इस समय रु० १२५०००
रकम यहां के संघ की ओर से लिखी जाती है और प्रयत्न
बढ़ाने का जारी रहेगा. रुपेय दो लाख इकट्ठे होजाने पर
किया जावेगा।

उक्त कार्य के लिए सभा की तरफ से श्री बीकानेर
हार्दिक धन्यवाद दिया जाता है कि जिन्होंने उत्साहपूर्वक
बड़ी रकम प्रदान कर एक ऐसी संस्था की बुनियाद डा
साहस किया कि जिसकी परम आवश्यक्ता थी।

प्रस्ताव ३ रा.

इस उपयोगी कार्य में सलाह देने के लिये बहार
तकलीफ लेकर पधारने वाले गृहस्थों को यह सभा धन्यवाद दे

प्रस्ताव ४ था.

श्रीयुत दुर्लभजी भाई के सभापतित्व में यह कार्य
पूर्वक किया गया अतएव यह सभा उनका उपकार मानती

प्रस्ताव ५ वां।

आपस में निंदायुक्त लेख छपने से समाज में पूरी हा
है हाल में जो सत्यासत्य कमेटी जावरे की तरफ से ३६

ट्रैक्ट निकला है उसका यथोचित उत्तर दिया जाना स्वा-
है मगर आज रोज श्रीमान परम पूज्य महाराजा साहिब
१८ श्री जवाहिरलालजी महाराज साहिब ने शांतिपूर्वक
देश व्याख्यान द्वारा विस्तारपूर्वक फरमाया कि अपने
द्गत् पूज्य महाराज साहिब के उपदेशामृत को व श्री
के मूल क्षमाधर्म को अंगीकार करके श्रीमान् के भक्तों
से शान्तता ही रखना चाहिए। और छापा द्वारा उत्तर
हीं करना चाहिए। महाराजा साहिब के इस फरमान को
र स्वीकार किया। यदि किसी की तरफ से फिर भी
निरायुक्त लेख प्रकट हुए और न्यायपूर्वक उत्तर देना
समझा जावे तो निम्नलिखित पांच मेम्बरों की नाम से
कार किया जावे।

१ नगर सेठ नंदलालजी वाफना, उदेपुर
२ सेठ मेघजी भाई थोभण, बंबई
३ ,, कनीरामजी बांठीया, भीनासर
४ ,, नथमलजी चोरडिया, नीमच
५ ,, दुर्लभजी भाई जौहरी, जैपुर

अध्याय ५४ वां ।

विहंगावलोकन ।

सद्गत आचार्य महोदय की असाधारण गुण सम्पत्ति लेखों से पाठकों को अप्रकट नहीं रही होगी, तोभी इस उपसंहार रूप उनके मुख्य सद्गुण विभव का समुच्चय जाता है। ऐसे युग प्रधान पुरुषों के सद्गुण वर्णन करना सागर का पानी गागर में भरने के समान उपहास अशक्य है तोभी उन के चरित्र की कितनी ही घटना निक्षेप कर उन में से कुछ सार बोध ग्रहण करने कराने यथामति, यथाशक्ति, यत्किंचित्, प्रवृत्ति कर लिखता हूं।

ज्ञानबल ।

ब्रह्मचर्य का प्रभाव, तीव्र जिज्ञासापूर्वक परम सुयोग्य सद्गुरु का सुयोग और विनयादि आवश्यक गु ज्ञान प्राप्ति के परमावश्यक साधनों की पूर्व पुण्य प्रभा श्री में सम्पूर्ण विद्यमानता थी जिससे उन्हें अल्प समय तत्त्वावबोध होगया था, सूत्र श्री आचारांग, सूत्र कृतांग,

निमंत्रण करते, शिष्य के पूछे हुए एक प्रश्न का संतोषकारक समाधान होते ही "और पूछो" यह वाक्य प्रायः उनके मुख कमल में से खिले बिना नहीं रहता था. उनकी वाणी में अद्वितीय आकर्षण था, उनके समाधान किये बाद शंका को मौका भाग्य से ही मिलता था. उनके साथ ज्ञानचर्चा करने वाले सूत्र के ज्ञाता श्रावक लोक उनके विशाल शास्त्रज्ञान पर बड़ा आश्चर्य प्रकट करते थे. एक सिद्धांत का समर्थन करने के लिए वे एक के पश्चात् एक शास्त्रीय अनेक प्रमाण अत्यन्त शीघ्रता पूर्वक प्रकाशित करते थे. जैन के ३२ सूत्रों तो मानों उनकी दृष्टि के सामने ही तिरते होते त्यों उनमें से एक के पश्चात् एक २ रत्न ढूंढ निकालते थे. पदानुसारिणी लब्धि करते हैं वैसी लब्धि पूज्यश्री में दीख पड़ती थी. किसी भी धार्मिक विषय की चर्चा छिड़ते ही उस विषय में उनका ज्ञान तलस्पर्शी है ऐसा दूसरों को प्रतीत होता था. इतना ही नहीं परन्तु उनके मुंह से निकलते हुए अमृत जैसे मीठे वाक्य सुनकर आनंद का पार भी नहीं रहता था।

चारित्र विशुद्धि ।

पूज्यश्री का चारित्र अत्यंत निर्मल था. वे इतने अधिक आत्मार्थी, पाप भीरु, और निरतिचार चारित्र पालने में सावधान रहते थे कि उनका वर्णन शब्दों में हो ही नहीं ...

महापुरुष का सत्संग किया है वे ही उनके चारित्र की महिमा अंश में जान सके हैं। साधुओं में ज्ञान थोड़ा हो या अधिक उसकी चिंता नहीं, परन्तु चारित्र विशुद्धि तो अवश्य होनी ही चाहिये, ज्ञानका फलही चारित्र है ' ज्ञानस्य फलं विरतिः " ज्ञान से विरति अथवा चारित्र प्राप्त न हो वह ज्ञान अफल समझना चाहिये। सच्चारित्र यही समस्त विश्व को वश करने का अद्भुत वशीकरण मंत्र है। जन समूह पर विद्या, लक्ष्मी, अधिकार की अपेक्षा चारित्र का प्रभाव विशेष और चिरस्थायी होता है. चारित्र बल से ही महात्मा गांधीजी अभी विश्व वंदनीय हैं पूज्य श्री बार बार उपदेश देते कि नर से नारायण होते हैं इसलिये चारित्र रत्न का यत्न जीव के नष्ट होने पर भी करना चाहिये।

साधु पुरुषों का चारित्र यही सच्चा धन है। इस धन द्वारा अक्षय सुख के अखूट खजाने खरीदे जा सकते हैं उसकी पूर्णता पूर्ण-प्रभुता की प्राप्ति हो सकती है।

श्रीमान् पूज्यश्री को अविश्रान्त परिश्रम के कारण प्राप्त हुए सर्वज्ञ प्रणीत शास्त्र के अपूर्व ज्ञान के सुफलरूप उदार, अनुकरणीय और अति दोषरहित चारित्र की प्राप्ति हुई थी। श्री वीर प्रभु की आज्ञा यही उनका जीवन था और यही उनका पवित्र धर्म था। इन आज्ञा के पालन में वे

शहर के मध्य से हो कर जब वे सूरजपोल महंत की धर्मशाला में पधारे उस समय का दृश्य जिन्होंने आंखों से देखा है वे कहते हैं कि उस समय पूज्यश्री के पांव में अतुल वेदना थी, पांवकी तली छिलरही थी. ऊपरका भाग सूजरहा था. तोभी वे वज्रमा कठिन हृदय कर विश्राम लेते २ चलते थे और अत्यन्त कष्ट होने से उनके नेत्रों में से मोती की तरह अश्रुबिंदु टपकते थे, जिसे देख भाविक भक्तों के हृदय थर २ धूज उठते थे, इसमें तो कुछ नवीनता नहीं थी, परन्तु नगर का हरएक प्रेक्षक यह स्थिति देख थर २ धूज उठता था। ऐसी स्थिति में उन्होंने एक समय नहीं अनेक समय विहार किया है।

वाक्पटुता।

प्रिय और पथ्य वाणी किसी विरले पुरुष की ही होती है. ऐसे विरले पुरुषों में पूज्यश्री का दर्जा अति उच्च था, उनका वाक् चातुर्य अति प्रशंसनीय था, धर्म और हृदय की उच्च भावनाओं से मिश्रित तथा विचार के प्रवाह से प्रवाहित हुई उनकी असाधारण वाणी में अजब आश्चर्य था, अद्भुत शक्ति थी और परिपूर्ण निरवद्यता थी।

जिसतरह प्रशस्त प्रेम का पवित्र प्रवाह पूज्यश्री के नेत्र युगल से निरन्तर बहा करता था उसीतरह कमल बदन से भी व्याख्यान के प्रमय बहता हुआ वचनामृत का स्रोत सर्वत्र प्रेम का "वसुधैव

कुटुम्बकम्" इस भावना का प्रादुर्भाव करने के परिणाम में लीन होता था। Give the ears to all but tongue to the few. इस न्याय से पूज्यश्री सब सुनते परन्तु विचारकर बहुत कम बोलते थे। जरूरत से ज्यादा न बोलते और जो कुछ बोलते वह जिनागम के अनुकूल ही बोलते थे। पूज्यश्री का व्याख्यान अनुपम था। त्रिविध तापों से तप्त शोकाकुल निराश आत्माओं को यह प्रतापी महात्मा नवीन उत्साह देते इनकी मधुरवाणी श्रवण करते ही आनन्दसागर उछलता। सुषुप्त हृदय की अन्धकारमय गुहा में जीवनज्योति का प्रकाश फैलता, श्रोतृगण की आत्मा जागृत हो कर्त्तव्यक्षेत्र में प्रविष्ट होती। इनका अद्भुत वीरत्व इनके प्रत्येक वाक्य २ में व्यक्त होता था। उनकी सुधावर्षिणी वाणी से विश्व पर अवर्णनीय उपकार होता था। वे कर्त्तव्य पथ से भ्रान्त पथिकों को सन्मार्ग दर्शक सद्विचार स्फुराते थे। जिन वाणीरूपअमृत से भरपूर अति मधुर जीवनराग सुनाकर कायरों की कायरता दूर करते उन्नति का मार्ग बताते, निडरता और साहसिकता के पाठ पढ़ाते थे। कर्त्तव्य पालन में प्राण की भी परवाह न करना यह उनके उपदेश का सार था। उनके लिये जीना, मरना समान था। वे स्थितप्रज्ञ और स्वस्वरूप स्थित थे। उनका देह—प्रेम छूट गया था। इसलिये वे अप्रतिबद्ध सम्पूर्ण स्वतन्त्र, अपरिमित सामर्थ्यवान, और विशुद्ध चारित्रवान बन गए थे। तीव्र वैराग्य के कार[illegible] गधि लाभ हमेशा उनके समीप बैठा रहता था।

इसलिये उनका सच्चारित्र मौन दशा में भी जन समूह पर जादूसा असर उत्पन्न करता था। तो फिर उनके पवित्र आत्मा की वाणी, व्यापार, लोगों के चरित्र; संगठन में अपूर्व अवलम्बन रूप है इसमें क्या आश्चर्य है ? कभी २ उनके सद्बोध का पूरा रहस्य अल्पमति श्रोतृ समुदाय भी समझ सकती थी। उनकी वाणी का प्रभाव ऐसा अलौकिक था कि वह भव्यात्माओं के अन्तरपट को खोल देता था। पूज्य श्री की शास्त्रीय शैली ने निराश हुए कई श्रावकों को अत्यंत सहृदय आत्माओं को उत्साह और आशा दिला सतेज किये हैं। सूत्रों का स्वाध्याय रस के आनन्द में अर्वाचीन समय में मस्त होने वाले कितने मुनि हैं ? मलिन वृत्तियों को हटा कर, सात्विक वृत्तियों को जागृत कराने वाला पूज्य श्री के हृदय–सारंगी के तार से उत्पन्न हुआ हृदय-भेदक-संगीत व को कितना प्रिय लगता था ! सात्विक भावना के प्रकाश दीप प्रकटाना तो अनुभवी उपदेशकों के भाग्य में ही लिखा है। सिर्फ कर्णेन्द्रिय को प्रिय हो वह क्या काम का है ? अर्थ गंभीरता आत्मा को प्रसन्न करदे तब ही असर होता है।

पूज्य श्री की वाणी सत्य और हितकारी थी किंतु सर्वथा को प्रियकर हो ऐसी वाणी उच्चारण करना यह उनकी प्रकृति प्रतिकूल था। कभी २ किसी २ व्यक्ति को इनकी वाणी में क प्रतीत होती थी। क्योंकि ज्वर पीड़ित मनुष्यों को शक्कर या मिश्री

…, क्वीनाईन या चिरायता या ऐसी ही कटु दवा चतुर मनुष्य … है वैसे ही पूज्य श्री उन्मार्ग गामियों को सन्मार्ग पर लगाने … कटु वचन भी कह देते थे।

प्रत्येक को हित शिक्षा देना यह पूज्यश्री का खास स्वभाव … चाहे वह अपने से बड़ा ही क्यों न हो या छोटा; गुरु हो … का भी गुरु हो, सब को चाहे जैसा हो, निर्भयता से और … दय से कह देने की उनमें आदत थी. यह गुण (चाहे इसे … कहो या दुर्गुण) उनके लिये कई समय आपत्तिकारक भी … था. थंढी से थर २ धूजते बंदर को गृह बांधने की शिक्षा … सुगृही को अपना घर खोना पड़ा था. ऐसा ही मौका … को प्राप्त हुआ था. अपात्र पर दया कर उनपर उपकार … में श्रीजी को कई समय बहुत कुछ सहन करना पड़ा था. … तरह चूहे को थंड से बचाने में हंस को पंख रहित होना … था। उसी तरह पामर जीवों को पाप पंक में से बचाने जाते … श्री के बहुत २ सहन करना पड़ा था परन्तु ऐसे कर्तव्य निष्ठ, … न शील और पर हित परायण पुरुषों का मन तो परोपकार करने … ही सच्ची मौज मानते हैं " सहन करवूं एह छे एक लाणुं. "

पूज्यश्री की वाणी में गुणीजनों के गुणगान का भी मौका आता … , आप अपनी प्रशंसा या परनिंदा तो वे कभी करते ही

चर्चा के शब्दों की मारामारी में चाहे जैसी वकीली चला जाय परन्तु शब्दों की अब कीमत नहीं. कहने की अपेक्षा कर दिखाने का ही यह जमाना है. उनके फट के कभी भूले नहीं जाते।
' सुंदर सब सुख आन मिले, पण संत समागम दुर्लभ भाई'

' धनवंत को आदर करे, निर्धन को रखे दूर;
एऊ तो साधु न जांणिये, वो रोटियां को मजूर"
रंग घणा पण पोत नहीं, कुण लेवे उस साड़ी को ?
फूल घणा पण बास नहीं, कुण जावे उस बाड़ी को ?

निर्भयता

भय यह मानव जीवन की उन्नति में पीछे हटाने वाला भ-कर आवरण है। एक विद्वान् ने कहा है कि "भय यह मनुष्य आसपास कटुता फैलाता है वह मानासिक, नैतिक, और आ-त्मिक प्रवृत्तियों का नाश करता है और कितनी ही दफा मृ-त्यु का अवसर पैदा करता है वह सर्व शक्ति और विकास नाश कर देता है।"

पूज्य श्री में बालवय से ही निर्भयता भरी हुई थी। बा-प्रतिगमन, कानोड़ में सांप के साथ चार माह तक निवास, मां-गढ़ से कोटे जाते समय भयंकर जंगल का विहार, सुनेल के सुना-

...मने का सत्याग्रह इत्यादि अवसरों से वे कितने निर्भय बने
थे वह वाचकों को विदित ही है।

लोकापवाद का भय भी उन्हें कर्तव्य विमुख कदापि न बना
...था। सम्प्रदाय परिवर्तन तथा अनेक बड़े २ साधुओं का
...कार इत्यादि प्रवृत्तियों के ज्वलंत उदाहरण प्रस्तुत हैं सामान्य
...यों के लिये लोकापवाद की भयंकर भींत उलांघना अति
...न है।

जनभीरुता का स्थान पूज्य श्री में पापभीरुता ने लिया था।
...रुता इनके रोमांच में भी न थी। पापभीरुता इनके रग
में भरी हुई थी। उन्हें देह की चिंता भी न थी। आत्मा की
...तो हमेशा रहती थी।

दुनियां मुझे क्या कहेगी? इस पर उन्होंने ध्यान ही नहीं
कभी विचार भी नहीं किया, परन्तु सिर्फ महावीर क्या कह
...? उनकी क्या आज्ञा है? यही उनका जीवन पर्यंत शोध
यही चिन्तवना रही और वे वीर प्रणीत निरवद्य मार्ग पर
...ता से, निर्भयता से आगे २ बढ़ते ही चले गए। एक फारसी
...में फरमाते थे कि:—

" तीर तलवार तब्र तेगा व खंजर बरसे;
जहर खून और मुसीबत के समुंदर बरसे;

बिजलियां चर्ख से और कोट से पत्थर बरसे,
सारी दुनियां की बलायें मेरे सरपे बरसे;
खतम होजाय हर एक रँजो मुसीबत मुझपर,
मगर इमान को जुंबिस हो तो लानत हो मुझ

संयम सरिता का प्रवाह सहज ही शिथिल हो जाता तो
बड़ा दुःख होता था। बिलकुल रज जैसे बारीक छिद्र न
जाय तो हाथी निकले जैसे द्वार होजाते हैं इसलिये छोटे का
ही जल्द साल संभाल कर लेना वे पसंद करते थे। परन्तु प्र
हुए वृक्षों में जब क्षय घुसने लगा, ईर्ष्या और अंगद्वेष रूपी
फल को ही खाजाने लगे, तब सम्प्रदाय के मुख्य सिद्धांत
सीमा की रक्षार्थ वे जागृत हुए, घबराये नहीं। अवसर के
कार ये महात्मा तो कबूल करते थे कि मतभेद यह महान्
ने भी स्वीकार किया है और सजीवता का चिन्ह है जागृत
की चाबी है।

"मुंहु मुहुं मोह गुणे जयंतं। अणेग रूवा समणं च
फासा फुसंती असमंजसंच। नते सुभिक्खु मणसा
Bear and forbear.

सब सहन करलेते और आत्मा पर विश्वास रखते
सत्ता के मद में चारित्र की पांख कटजाय या बाजी बि

बहुत सावधान रहते थे। दुराग्रह से किसी विचार को पकड़े
रहते तथा शास्त्र का नियम खंडित हो वहां वे झुकते भी नहीं,
सत्याग्रह करते थे। समाज संरक्षा की सौंपी हुई जोखिम से
सदा जागृत रहते थे।

शिष्यों के साथ के व्यवहार में कुसुम से कोमल मालूम होने
हृदय उनके अन्यायी व्यवहार के समय वज्र से भी कठिन
जाता था। सत्य के ताप का यह तेज था। मतभेद के कारण
योग न होने पर भी वे दूसरों के सद्गुणों की वेदरकारी न
थे, परन्तु अवसर मिलने पर उनके गुणों की प्रशंसा करते
उन्होंने अपना समस्त जीवन श्री शासन देवी के शरण में ही
र्पण किया था। उनके वय के प्रमाण में दूसरा कोई व्यक्ति
य से ही मिले, ऐसा अपूर्व गांभीर्य पूज्य श्री में प्रकट होगया
सूत्र ज्ञान की प्रवीणता अनोखी थी। वे सूत्र के ज्ञान की
त प्रकाशित किरणें फैलाने के लिये शिष्य समूह को खास
ह करते थे। ऐसे विचारशील धर्माध्यक्ष के आश्रय में संख्या-
साधु आकर्षित होते और मनमानी प्राप्त कर जन्म सार्थक
थे।

धर्म के कारण मरना, प्राण देना यह कुछ नवीन म
देव नहीं, जब २ धार्मिक तेजस्विता कम होती हुई

होती, कि जल्द ही उसकी कीर्ति बढ़ाने की फिक्र लगती।
जुल्म सहन न होता परन्तु उसे बिलकुल निर्मूल करने का ही
होता था। परिणाम में सत्ता भिन्नता पकड़ती, सर्वानुमत
हो जाता, अनिवार्य प्रसंग उपस्थित होने से भिन्न २ सम्प्रदा
गए और पोषाते गए, इतने अधिक सम्प्रदायों का अस्तित्व
कारणों का आभारी है। सांसारिक व्यवहार या मान्यता को
कर भिन्न चौतरे पर चढ़ भिन्न २ बात कहना यह भिन्न
गुन्हेगारों का गुन्हा बिलकुल साफ प्रकट होजाने पर भी
कारण कितनी ही ज्ञातियों में गुन्हेगार के सगे सम्बन्धी
डालदेते हैं उसीतरह सत्य की शमशेर के प्रभाव से संयम
गत में उतरे हुए इन तड़ों का अनुकरण करें तो श्री महावी
वान् की आज्ञाओं का प्रत्यक्ष अपमान होता है और श्री
आदर भाव गुमाते हैं।

अलबत्त शरम भरी हुई स्थिति में बेशरम कबूल से
तो होता है परन्तु धार्मिक कायदे तो जीव को जोखिम में
ही निभाने पड़ते हैं इन कायदों पर अपील नहीं, ठहरा
भुगतना ही चाहिए, भविष्य की भूलों का भान ऐसी स
ही जागृत रहता है और दूसरों को भी जागृत करता है। वृत्ति
टाने की यह कसोटी है। कसोटी के कस में शुद्ध कंचन
उतरने वालों का ही संयम सार्थक है।

की थीं ऐसे दृष्टांतों पर खास पुस्तक लिखी जा सकती है यहां
संकेत करने का कारण यह है कि धार्मिक नियम धार्मिक प्र
यह कुछ बालक का खेल नहीं है कि अपनी इच्छानुसार क
के समय प्रतिज्ञा को त्याग दें और समय के वश होजांय।

'नवजीवन' इस सम्बन्ध में अपना यह अभिप्राय
करता है कि इस सुधार के जमाने में ऐसे प्राणत्याग को
मूर्खता से भरा हुआ भी कहदे, क्योंकि जनेव केकारण मरने को
हो जाना ऐसी सलाह आजके समय कोई सचमुच में नहीं
परन्तु अपने को जो वस्तु धर्म जची है उसके लिये प्राण दे
शक्ति तो प्रत्येक मनुष्य में रहनी ही चाहिये. वर्त्तमान स
समाज में से यह शक्ति बहुत कम होगई है इसीलिये स
पामरता दृष्टिगत होती है और अधर्म इतना बढ़ा चला आ

ईसु के इन बचनों का सार अंतःकरण में उतारना
कि गेहूं का कण जबतक जमीन में दबकर नहीं मरता
जैसा का तैसा रहता है।

सत्य और निर्भयता आत्मभोग बिना सजीवन नहीं हो
सचमुच जो हमें मर्द नहीं बनना है अपनी इज्जत कायम रखने ि
भी पुरुषार्थ हम में नहीं है स्वतः में प्रभु और पंच की साक्षी
ली हुई प्रतिज्ञा पालने की सामर्थ्य भी(मर्दपना)नहीं है तो

है कि लाचारी के साथ अपना पहिना हुआ भेष उतारकर परन्तु भेष को न लजावें, दंभ से दुनिया को न ठगें. चोर करे इसमें नवीनता नहीं है परन्तु चोकी पहरे वाले, रक्षण वाले ही भक्षण करने लगजाँय वह असह्य होजाता है ।

कर्तव्य पालन की टेवें निर्भयता का पोषण करता है. पूज्यश्री जीवन विविध घटनाओं से पूर्ण है वे कभी दुःख से दबे नहीं, मूढ़ बने नहीं, उदासीनता से दुबले हुए नहीं, आत्मा की भूख ने, प्यास छिपाने में उन्होंने अविश्रान्त श्रम किया है. पाप के अग्नि समान और अन्याय के शत्रु समान वे हमेशा गर्जारव रहे, कभी भी कोमलता नहीं त्यागी. श्रीकृष्ण को एक ब्राह्मण लात मारी उसे अलंकार की तरह धारण करली, गांधारी ने श्राप दिया, जिसे श्रीकृष्ण ने अधिक सम्मान दिया. साधु ता की ओट होजाने पर भी श्रीजी ऐसे ही अविचलित, गंभीर महासागर बने रहे ।

" आचार सिंधु महा शोधक मोती नोंतु !
दोरी विना उदधि ने तलीये ज्वानुं !
त्यां मच्छ सिंधु महि, व्हाण गली जनारा !
तोफान गिरि मूल तेय उखेड़नारा !
ते राक्षसोनी उपर प्रीति राखवानी !
ते राक्षसोनी सहसा अव देव अंश !

छे युद्ध तो जगाववुं, पण प्रेण प्रेम राखी !
लोही लीधा वगर लोही दइज देवुं"
कलापी.

एमर्सन के ये वाक्य यहां याद आजाते हैं ।

"Doubt not O Poet but persist say-it is in m
and shall outstand there, bulked and dumb shu'teri
and stammering hissed and hooted, stared and stri
until a last ruge draw out of thee that dream pow
which every night shows thee is thine own. A m
transcending all limit and privasy and by virtue
which a man is conductor of the whole river
electricity."
Emerson

स्मरणशक्ति ।

पूज्यश्री की जैसी स्मरणशक्ति अच्छे २ अवधानियों में
नहीं दिखती, उनकी असाधारण स्मरणशक्ति के एक दो उदाहर
यहां देता हूं ।

पूज्यश्री राजकोट विराजते थे, तब एक दिन मोरवी से कि
ही अग्रगण्य श्रावक मोरवी पधारने के लिये विनन्ती करने आ
थे. उनमें सेठ अम्बावीदास डोसाणी भी थे. जब सेठ अम्बावी
दास भाई ने वंदना की, तब महाराज श्री ने उनका नामले 'जी' कह

यह देख अम्बावीदास भाई को बड़ा आश्चर्य हुआ और उन्हों ने कहा कि "महाराज श्री ! मुझे तो आज ही पहिले पहल आपके दर्शन का लाभ मिला है तब आप मुझे कैसे पहचान सके ? ...श्री ने कहा कि अजमेर कॉन्फरन्स के समय मैंने तुम्हारा देखा था, उस पर से मैं तुम्हें पहचान सका हूं।

उदयपुर के श्रावक रतनलालजी मेहता कहते कि "उदयपुर में रात्रि के समय पूज्य श्री के साथ अधिक रात बीतने तक चर्चा करते रहते थे। पूज्य श्री अंदर मकान में विराजते और बाहर बैठते थे तब कोई श्रावक वहां से जाता तो तुरन्त महा- श्री कह देते कि ये अमुक श्रावक है जिससे उपस्थित श्रावकों अत्यन्त आश्चर्य पैदा होता। एक समय मैंने प्रश्न किया कि ...राज हम उसे नहीं पहचान सकते और आप अंधेरे में भी उसे ... पहचान सकते हैं ? पूज्य श्री ने उत्तर में फरमाया कि उसकी ... और पग रव पर से मैं अनुमान कर सका हूं इसी तरह ...र ग्राम के आये हुए श्रावक रात को वंदना करने आते और ...त्थएण वंदामि' बोलते ही उसे सुन पूज्य श्री उसे पहचान ...ते थे। बहुत वर्ष बीत जाने पर भी अंधारे में केवल आवाज से पूज्य श्री पहचान सकते थे।

...पने समागम में सिर्फ एक ही समय जो मनुष्य आया

उसका नाम ठाम पूज्य श्री नहीं भूलते थे । भीणाय वाले पाठक विहारीलालजी इस के सबूत में सत्य कहते हैं कि:—

" मुझे इनकी अद्भुत स्मरण शक्ति देख अत्यन्त आश्चर्य होता था और कभी २ मुझे ऐसा भान होता कि ये मनुष्य हैं या देवता हैं।

कर्तव्य पालन में सावधानी ।

आचार्य पद प्राप्त हुए पश्चात् दूसरों की तरह अपना प्रचार बढ़ाने की ओर पूज्य श्री का बिलकुल लक्ष न था, परन्तु अपनी आज्ञा में विचरने वाले चतुर्विध संघ में ज्ञान, दर्शन, चारित्र तप को बढ़ा कर जैन शासन की उन्नति करें यही उनका परम ध्येय था। पूज्य श्री अपने साधुओं से बार बार कहते कि:—

" तुमने दिक्षाली है और घर कुटुम्ब स्त्री सब को छोड़ दिया है सो अब उनक काम के तो तुम नहीं रहे हो यह दिक्षा। चिंतामणि रत्नों का हार है इसको अच्छी तरह से पालने में उत्कृष्टा रस आवेगा तो सिर्फ एक भव कर के मोक्ष में चले जाओगे संसार के सुख वैभव भुंगड़े की मुठी समान हैं सो इस भुंगड़े की मुठी के वास्ते चिंतामणि रत्नों का हार मत खो बैठना " व्याख्यान बांचने वाले साधुओं को उद्देश्य कर वे कहते कि:—

"अन्य को उपदेश देना सरल है परन्तु उस मुआफ़िक वर्ताव रना कठिन है उपदेशक होने की अपेक्षा आदर्श होने में हीं पना और जगत का श्रेय विशेष सिद्ध कर सकते हैं इसलिये नेयों ! तुम उपदेष्टा होने के पहिले दृष्टांत रूप बनो। बचन की पेक्षा वर्ताव में बल अधिक है उत्तम वर्ताव कभी भी न घिसे । गहन संस्कारों द्वारा परिचित जनों के हृदय पट पर अंकित हो ता है" ।

पूज्य श्री बाह्य त्याग की अपेक्षा आंतर त्याग को प्रधान पद और कहते कि:—

" विषय कषाय के त्याग रूप आंतर त्याग बिना सिर्फ बाह्य ाग जीवन के बिना देह बिना नीर के कुए जैसा है । कहते कि:—

कामना सब दुःखों की जननी है । निष्काम वृत्ति धारण रना यही सुख प्राप्ति का श्रेष्ठ साधन है। खारे जल के पीने से ा तृप्त नहीं होती परन्तु उलटी अधिक तृषा लगती है इसी तरह यों के सेवन से विषय वासना घटती नहीं परन्तु उलटी अधिक ढ़ती है"

" अशुचि मय शरीर पर मोह ममत्व रखना यह बड़ी भारी ि है। शरीर के अन्दर जो २ वस्तुएं हैं वे अगर शरीर बाह

भाग पर होती तो उसे खाने को गीद्ध कोए, इत्यादि पत्नी शरी पर गिरते और उन्हें हटाने में ही अधिक समय व्यतीत करन पड़ता।"

"मुनियो! तुम जो संसार के क्षुद्र बंधनों से पूर्ण वैराग पूर्वक मुक्त हुए हो अगर हो जाओ तो तुम आनन्द की भूमि विचरने वाले हो। भय और दुःख तो हमेशा तुम्हारे से दूर ह रहेंगे। दुनियां जिसे दुःख २ कह कर रोती है उसे तो तुम आनं देने वाली मान लोगे"

"केवल शास्त्र पढ़ने से ही मुक्ति नहीं मिल सकती परन्तु शास्त्र की आज्ञानुसार चलने से ही मुक्ति प्राप्त हो सकती है"।

उपरोक्त सद्बोधामृत का अपने शिष्य समुदाय को पान करा कर कर्तव्य पालन के लिये उचित प्रोत्साहन देते थे और अपने उत्तम चारित्र बल से सम्प्रदाय की नाव सही सलामत रीति से रास्ते पर आगे बढ़ाते चले जाते थे।

चतुर्विध संघको पूज्यजी परमावलम्बन के समान थे। सत्पुरु सद्गुण और सद्वर्तन की जीती जागती मूर्ति हैं सब संग परित्याग किये हुए महात्माओं के देखते ही उनके दर्शनमात्र से ही का संस्कारी जीवों को उनके उत्तम गुणों के अनुकरण करने की स्वतः

ी करुणा हो आती है। सचमुच महात्मा पुरुष इस अंधकार मय संसार समुद्र में फिरती हुई जीवन नौकाओं को खराब मार्ग में टकराकर नाश होने से बचाने वाली दीपदाण्डियों के समान है।

श्री वीतराग प्रभु की आज्ञा का विराधन न हो और अपनी आज्ञा में विचरते साधु आचार में शिथिल न होजायं सिर्फ इसी लिए उन्होंने शोभते साधुओं को अपनी सम्प्रदाय से अलग करने में तनिक भी देर न की थी जो वे थोडी भी झुकती दोरी कर देते तो भिन्न हुए कितने ही विद्वान् साधु, वक्ता, शास्त्र के ज्ञाता प्रसिद्ध मुनि और स्थेवर उनकी आज्ञा में चलना अपना गौरव समझते, परन्तु जिनाज्ञा को अपना सर्वस्व मानने वाले पूज्य श्री ने उनकी आज्ञा के बाहर एक पांव भी रखना न चाहा। पूज्य श्री के लिए यह सचमुच कसोटी का प्रसंग था और जिसमें भी उन्हें "प्राणान्ते ऽपि प्रकृति विकृति जायते नोत्तमानाम्" अर्थात् उत्तम पुरुष की प्रकृति में प्राणांत कष्ट तक भी विकृति नहीं हो सकती यह कथन सत्यता सिद्ध कर दिखा सकता है।

प्रत्येक महान पुरुष को अपने युग के बड़े से बड़े खास अन्यायों के साथ लड़ना पड़ता है, जिस से क्राइष्ट हजरत महम्मद, बौद्ध, मार्टीन ल्युथर और अपने लौकाशाह इन सबको ... कई कठिनाइयों और अन्याय के साथ लड़ना पड़ा।

को मरना भी पड़ा था पूज्य श्री को भी चारित्र शुद्धि के लि

अपना आत्मभोग देना पड़ा था ।

फांसी की सजा पाए समाज वाद के एक कार्य जोहले

कहा है कि ।

Don't mourn for me,
Friends ! organise !

दोस्तो ! मेरे लिये शोक न करते समाजको सुव्यवस्थित कर

ऐसा ही उपदेश श्रीजी के अवसान समय का था.

त्याग

" धर्म के प्रत्यक्ष अनुभव का प्रथम सोपान त्याग है न

तक बने वहां त्याग तक व्रत स्वीकार करें "

स्वामी विवेकानन्द

पूज्यश्री के रक्त के एक २ अणु में त्याग की भावना उछ

रही थी दुनियां धन दोलत हाट हवेली स्त्री इत्यादि मिला

आनंद पाती है परन्तु पूज्यश्री इन सब के त्याग में परमानन्द अ

भव करते थे. बाह्य और अंतर इन दोनों प्रकार के त्याग से उ

ने आत्माको समुज्वल किया था. सर्व संग परित्यागी और तपो

महात्माओं के देखते ही त्याग वैराग्य की उर्मियां देखनेवालों

्य में उछलने लगती ऋद्धि और रूप गुणवती रमणी को छोड़
र कष्ट सहने वाले इन साधु शिरोमणि के दर्शन मात्र से ही
त से लखपति और क्रोड़पति के हृदय में दान के गुण तत्त्व
रते और यथाशक्ति दान पुण्य करने की वृत्ति सहज ही
जाती।

सचमुच सत्पुरुष सद्गुणों की जीती जागती मूर्ति है. इस
धकार मय संसार समुद्र में पर्यटन करती हुई अपनी जीवन
का को चट्टान से टकराकर नाश होने से बचाने वाली ये दीप
स्थाएं है. उन्नति की दिशा बताने वाले ये ध्रुव के तारे हैं।

e in the world, not of the world.

निरहंकार वृत्ति।

दूसरे जब कीर्ति के पीछे दौड़ते फिरते हैं और जहां तहां
बड़ाई के फव्वारे छोड़ते हैं वहां पूज्य श्री कीर्ति को उन्नति
में अंतराय सम समझ उस से दूर भागते थे.

पहिले पाठक देख चुके हैं कि पूज्य श्री पूर्ण शास्त्र विशार
ज्ञानी होने पर भी श्रावकों से चर्चा करते समय
गहन प्रश्न का निराकरण करने में उन्हें कठिनता
स समय वे बिना संकोच कहदेते कि इस स

काम नहीं देती एक बड़े आचार्य होने पर सभा में स्पष्ट ऐस
नेवाले निरभिमानी स्फटिक रत्न जैसे निर्मल हृदय के मह
विरले ही होंगे।

लिंबड़ी सम्प्रदाय के विद्वान् मुनि श्री उत्तमचंदजी मह
की प्रशंसा करते हुए पूज्य श्री कहते कि अमुक सिद्धांत वचन
सच्चा रहस्य मुझे उन्होंने समझाया है। इसी तरह गोंडल सं
के आचार्य श्री जसाजी महाराज के ज्ञान की भी वे तारीफ
थे। पंडित श्री रतनचंदजी महाराज के पास से विनय पूर्वक चं
ज्ञप्ति सूत्रकी बांचना लेते थे, यह कितनी अधिक लघुता।

पूज्य श्री किसी ग्राम पधारते या कहीं से विहार करते उस
खबर श्रावकों को न होने देते थे, एक समय छतरपुरे से व्या
पधारते थे तब रास्ते में खबर मिली कि सैंकड़ों श्रावक श्रावि
आप के सन्मुख आरहे हैं महाराज श्री ने यह सुन दूसरी राह
और विकट रास्ते चल एक छोटे से ग्राम में पधारे वहां श्राव
का एक भी घर न था। उसने कहा कि हमारी पीढियां बीतगई
कोई साधूजी यहां पधारे ऐसा मैंने नहीं सुना।

पूर्ण योग्यता न होने पर भी आचार्यपद प्राप्त करने के लि
कितने ही साधु तनतोड़ परिश्रम और व्यर्थ के दावे रचते हैं

पुज्य श्री को आचार्यपद प्राप्त होते भी उन्हों ने सं० १९७१ ...पने बहुत से अधिकार अपनी सम्प्रदाय के सुयोग्य मुनिवरों ...सुपुर्द कर स्वतः ने अपने सिर का भार हलका किया था।

...अखिल भारतवर्ष के साधु मार्गी जैन सम्प्रदाय में सब से ...क साधुओं पर आधिपत्य धरानेवाले ये पूज्य श्री थे और उन ...उपदेश से अनेक भव्यात्मओं ने वैराग्य पा दिक्षा ली थी तौभी ...ष यह था कि उन्होंने अपनी नेश्राय में एक भी शिष्य न ... । उन्होंने तो दिक्षा न लेने के पहिले शिष्य न करने का ...ण कर लिया था।

शिष्य के लिये संयम लुटानेवाले, चाहे जिसे मूंड़ अपने परि-...र नाम बढ़ाने की आकांक्षा वाले साधु पूज्य श्री का अनु-... करें तो क्या ही अच्छा हो! करोडो तारों से जो अंध-...र नहीं होता वह सिर्फ एक चंद्र से दूर हो सकता है। जैन ... में अभी श्री लालजी जैसे चंद्र की आवश्यकता है। वेप-...ा जैनाभावी, प्रमादी, या पासत्थे के झुंड के झुंड मूंड़ कर ...करने से उसका ऊद्धार नहीं हो सकता। वे जो जैन शासन ...र्य को राहू रूप और जगत के केवल भाररूप हैं।

परमत सहिष्णुता।

...संग में या व्याख्यान में पर धर्म की निंदा का ए

भी पूज्य श्री के मुंह से न निकलता था। इतना ही नहीं परन्तु
दर्शी पूज्य श्री की वाणी सुन सन्तुष्ट होते थे।

जोधपुर के चातुर्मास में एक समय एक रामस्नेही धर्म
के अनुयायी गुलाबदासजी अग्रवाल जो अभी पक्के जैनी हैं
श्री के पास आ प्रश्न किया कि महाराज मुझे कोई ऐसा सीधा
उपाय बताइये कि जिससे मेरा मन शांत और स्थिर रहे।

महाराज श्री ने कहा कि भाई, तुम रामको जपते हो, उसी
चित्त को विशेष एकाग्र कर निरंतर रामनाम जपते रहो भी
तुम्हारा मन पवित्र और शांत हो जायगा। यह सुनकर तथा
राज श्री की सब धर्म पर ऐसी उदार भावना देखकर वे मह
अत्यन्त आनंदित हुए और पूज्य श्री के सत्संग से जैन धर्म
रहस्य समझ जैन धर्म उन्होंने प्रेम पूर्वक स्वीकार किया।

कई उपदेशक अन्यधर्म की निंदा कर उस धर्म को जैन
के अनुयायी बनाने की आशा रखते हैं परन्तु इसका परिणाम अ
होता है लोग ऐसे निंदको से हमेशा भड़क कर दूर भागते
ज्ञानी पुरुष शुद्ध आत्मिक प्रेम की श्रृंखला से दुनिया को युक्ति
की ओर लगाते हैं अन्य सम्प्रदाय या धर्म की निंदा करने से स
दाय की सेवा बजाने का भ्रम कइयों के हृदय से उन्होंने निका
दिया है।

परनिंदा परिहार।

ूज्य श्री कदापि किसी की निंदा न करते और न सुनते थे
अपने भक्तों को भी निंदा से सर्वथा दूर रहने का आग्रह
उपदेश देते थे इसके लिए सिर्फ एक ही दृष्टांत बस है।

सं० १९७६ के पौष माह में पूज्य श्री जावद में विराजते थे
जाम के श्रावक बालचंदजी श्रीमाल पौषध कर पूज्य श्री
ना में बैठे थे उस समय जावरे के एक श्रावक ने आकर तेज-
ी महाराज की सम्प्रदाय के साधु प्यारचंदजी तथा इंदरमलजी
ोग प्रारंभ करने के लिए पूज्य श्री से अर्ज की और विशेषता
ा कि अभी ऐसा ही मौका है जो आप विचार न करेंगे तो
पक्ष वाले दुश्मन इन्हें मदद देंगे। यह वाक्य सुनकर आचार्य
ोले कि भाई तुम दुशमन किसे कहते हो? वे तो हमारे परम
ैं उनकी प्रवृत्ति से हमें अपना चारित्र विशेष विशुद्ध करने
वसर प्राप्त हुआ है।

स समय वहां वे दोही श्रावक थे। और दोनों पूज्य श्री के
भक्त थे, तोभी एकांत में भी पूज्य श्री दूसरे पक्षवाले को
िय समझ बातचीत करते थे।

ोक्त घटना घटी उसी दिन पूज्य श्री ने बातचीत में

चंदजी श्रीमाल से कहा कि मेरे सम्बन्ध में इस मामले में कुछ भी
लेख निंदा या स्तुति रूप तुम्हें नहीं छपाने चाहिए।

इसके सौगंध लेलो, परन्तु उन्हों ने कुछ उत्तर न दिया, त
पूज्यश्री ने फिर फरमाया कि जो तुम सौगन न लेओगे तो मैं
तुमसे बोलनाभी बंद कर दूंगा, तब उन्होंने उसी समय सौगन लेलिये

दूसरे उनकी निंदा करते हैं ऐसे शब्द कभी वे सुनते तो उ
मौके पर पूज्यश्री की गंभीर मुखमुद्रा पर उसका अणुमात्र
असर नहीं होता था, तथा एक भी शब्द उनके मुंह से निंदा
अप्रसन्नता का इसके प्रतिकूल कभीनहीं निकलता था।

किसी भी धर्म वाले के साथ लड़ाई के कारण शास्त्रार्थ
वितंडावाद में उतरने के लिये पूज्यश्री बिलकुल खुश न थे. जिस
मुख्य कारण अपनी वाणी विवेक बचाये रखना ही था।

सं० १९७५ के चातुर्मास में एक समय उदयपुर में पूज्
के व्याख्यान में एक वक्ता ने अपने भाषण में अमुक पक्ष के
धुओं की प्रवृत्ति के लिये सत्य परन्तु कटु टीका की, इस
के मंगलाचरण में ही पूज्यश्री पाटपर से उठकर चलेगए।

उदयपुर में तीन आचार्यों के चातुर्मास संवत् १९७१ में
साथ हुए थे, उस समय तेरहपंथी एवम् मूर्तिपूजक भाइ

ा टेक्टबाजी इत्यादि कई क्लेशवर्धक प्रवृत्तियां की। परन्तु पूज्यश्री अनुपम क्षमा और शांति धारण कर निंदकों को प्रशंसक बना ये थे, उनके साथ पूज्यश्री का प्रेममय वर्ताव "द्वेष का नाश ेष से नहीं परन्तु प्रेम से ही होता है" इस आत्मवाक्य को रितार्थ करता था। पूज्यश्री का प्रेममय व्यवहार जावरे वाले मुनि- ओं के निम्नांकित काव्यों से स्पष्ट समझा जायगा।

राग आसावरी।

जी के चरनों में धोक हमारी, जाऊं क्रोड़ २ बलीहारी
पूजजी के चरनों में धोक हमारी।
क नगर में रेनो थो मुनि को, मात पिता परिवारी।
 मुख उपदेश सुनीने, लीनो संजम भारी॥ पूज०॥ १॥
ातम वस कर इंद्री जीती, विषय विकार विडारी।
ाग्य माहे जली रया हो, धन २ हो ब्रह्मचारी॥ पूज०॥ २॥
म मुनि की संप्रदाय में, प्रगट भये दिनकारी।
चारज गुण करने दीपो, महिमा फैली चउंदिशकारी॥ पू० ३॥
म आपको श्रीलालजी, गुण आपका है भारी।
ों संग है मिल पदवी दीनी रत्नपुरी पुजारी॥ पूज० ४॥
चंद ज्यूं कला वढ़त है, पूरण छो उपकारी।
रसन नैना तृप्त न होवे, सूरत मोहनगारी॥

क्या तारीफ करू में आपकी, वाणी अमृतधारी ।
मुझ ऊपर किरपा झट कीजे, पूरण होत विचारी ॥ पूज० ॥ ६ ॥
उगणीसे इकसठ साल में रतनपुरी मुजारी ।
चोथमल की याही बिनती, कदमों में धोक हमारी ॥ पूज० ॥ ७ ॥

पूज्य श्री हुकमीचंद्रजी महाराज की पाटावली

इस भरत खण्ड में तरण तारण की जहाजें
हुआ हुकमीचंद्रजी महाराज सुधारे काजे ॥ टे०

इकवीस वर्ष लग बेले तप ठाया,
इक वस्तर ओढ़त, ओढ़त अंग जीर लगाया ।
करी आचार विचार को शुद्ध सिंघ जिम गाजे ॥ हु ॥ १

पीछे पूज्य श्री सीवलालजी महा यश लीनो,
तेतीस वर्ष तक तप एकांतर कीनो ।
बहुविधि सम्प्रदा साधु साध्वी आजे ॥ हु ॥ २

श्री उदयचंदजी महाराज आचरज भारी,
केई राजा को समझाय आतमा तारी ।
ये तो हुआ जगत विख्यात सिंघ जिम गाजे ॥ हु ॥ ३

चौथे पाट हुआ चौथमलजी महा गुणवंता,
हुआ पंडितों में परमाण आचार्य दीपंता।
कई जणा को दियो ज्ञान ध्यान और साजे ॥ हु ॥ ४ ॥

अब पंचम पाटे आप हुआ वड़ भागी,
श्रीलालजी महा गुणवंत छती के त्यागी,
कियो धर्म अधिक उद्योत मिथ्यात्वी लाजे ॥ हु ॥ ५ ॥

ए मुनी माल रसाल ध्यान नित धरना,
हीरालाल कहे इस धर्म उन्नति करना।
गंगागंज कियो चौमासो मोक्ष के काजे ॥ हु ॥ ६ ॥

अथ स्तवन ।

श्री सीतल चंद्र समान, देखलो गुणरतनो की खान ॥ टेर
मारग में दीपतासरे, तीजे पद महाराज।
कालमें प्रगट भये हो, दया धर्म की जहाज ॥ पु ॥ १ ॥
पण में आप पूज्यजी पूरा पुण्य कमाया।
है माता आपकी, सरे ऐसा नंदन जाया ॥ पु ॥ २ ॥
वाणी सुणी आपकी, खुशी हुए नर नार;
सुद पूनम के ऊपर कियो घणो उपकार ॥

हाथ जोड़ कर करूं वीनती, अरजी पर चित दीजे।
बनी रहे सुनजर आपकी, चरणोंमें रख लीजे ॥ पु ॥ ४ ।
भवजीवां ने तारतासरे, किरपा करी दयाल,
रामपुरे महाराज विराजे, रह्या कल्पतो काल ॥ पु ॥ ५ ॥
उगणी से त्रेसठ पुज्यजी, ठाणा एक सहस्र आठ
रामपुरा में खूब लगाया, दया धर्मका ठाठ ॥ पु ॥ ६ ॥
महामुनि नंदलाल तणा शिष्य, कहे सुणो गुरुदेवा।
वो दिन भलो ऊगसी सरे, मिले आपकी सेवा ॥ पु ॥ ७

(मुनि खूबचंदजी कृत

तपश्चर्या।

एकांतरः--पूज्य श्री के ३३ चातुर्मासों में एक भी चातु
ऐसा शायद ही गया होगा कि जिस में आषाढ़ चौमासे
संवत्सरी तक उन्होंने एकांतर उपवास न किये हों । कई व
कार्तिक पूर्णिमा तक उपवास प्रारंभ रखते थे।

ह। सात और आठ उपवास के भी उन्होंने कई स्तोक किये
त २ आठ २ उपवास के दिन भी पूज्य श्री स्वयं ही
यान फरमाते थे।

तेरह उपवास का भी एक स्तोक पूज्य श्री ने किया था।

वैयावृत्यः—स्वयं आचार्य होने पर और शिष्य समुदाय भी
विनीत होने पर भी आप स्वयं आहार पानी लाते और
ों के लिये भी ला देते थे। इतना ही नहीं परन्तु पात्र, झोली,
इत्यादि धोने या पानी छानने इत्यादि के कार्य में भी वे
ों की पूरी मदद करते थे। उनके विनयवंत शिष्य ये काम
रने के लिये पूज्य श्री से बार २ निवेदन करते परन्तु वे अपने
व के कारण प्रमाद न कर कोई न कोई धर्म कार्य यों वैया-
लगे रहते थे।

ल्पनिद्रा और स्वाध्यायः—पूज्य श्री रात को १० या
और कभी २ एक बजे तक निद्राधीन न होते थे और एक
तीन बजे जागृत हो जाते थे। एक प्रहर से अधिक निद्रा
त ही लेते थे। नित्य प्रति रात को दो से तीन बजे तक
से जागृत हो सूत्र की स्वाध्याय करते थे। बहुत से सूत्र
कंठस्थ कर लिये थे। उसमें से दशवैकालिक सूत्र का
वे सबसे पहिले कर लेते थे। फिर उत्तराध्ययन के कितने

हाथ जोड़ कर करूं वीनती, अरजी पर चित दीजे ।
बनी रहे सुनजर आपकी, चरणोंमें रख लीजे ॥ पु ॥ ४ ॥
भवजीवां ने तारतासरे, किरपा करी दयाल,
रामपुरे महाराज विराजे, रह्या कल्पतो काल ॥ पु ॥ ५ ॥
उगणी से त्रेसठ पुज्यजी, ठाणा एक सहस्र आठ
रामपुरा में खूब लगाया, दया धर्मका ठाठ ॥ पु ॥ ६ ॥
महामुनि नंदलाल तणा शिष्य, कहे सुणो गुरुदेवा ।
वो दिन भलो ऊगसी सरे, मिले आपकी सेवा ॥ पु ॥ ७

(मुनि खूबचंदजी कृत

तपश्चर्या ।

एकांतरः--पूज्य श्री के ३३ चातुर्मासों में एक भी चा
ऐसा शायद ही गया होगा कि जिस में आषाढ़ चौमा
संवत्सरी तक उन्होंने एकांतर उपवास न किये हों । कई व
कार्तिक पूर्णिमा तक उपवास प्रारंभ रखते थे ।

बेला, तेला, चोला, पचेला, तो उन्होंने इतने किये हैं कि
की पूरी २ गिनती देना भी अशक्य है । पूज्य पदवी प्राप्त ह
पश्चात् ६ वर्ष तक तो हर महिने वे एक २ तेला विना नागा
थे । फिर भी कोई एकही ऐसा मास गया होगा कि जिस में
श्री ने तेला न किया हो ।

छः सात और आठ उपवास के भी उन्होंने कई स्तोक किये
ात २ आठ २ उपवास के दिन भी पूज्य श्री स्वयं ही
ख्यान फरमाते थे ।

तेरह उपवास का भी एक स्तोक पूज्य श्री ने किया था ।

वैयावृत्य:—स्वयं आचार्य होने पर और शिष्य समुदाय भी
विनीत होने पर भी आप स्वयं आहार पानी लाते और
ों के लिये भी ला देते थे। इतना ही नहीं परन्तु पात्र, झोली,
इत्यादि धोने या पानी छानने इत्यादि के कार्य में भी वे
ों की पूरी मदद करते थे । उनके विनयवंत शिष्य ये काम
रने के लिये पूज्य श्री से बार २ निवेदन करते परन्तु वे अपने
ाव के कारण प्रमाद न कर कोई न कोई धर्म कार्य यों वैया-
में लगे रहते थे ।

अल्पनिद्रा और स्वाध्याय:—पूज्य श्री रात को १० या
और कभी २ एक बजे तक निद्राधीन न होते थे और एक
या तीन बजे जागृत हो जाते थे । एक प्रहर से अधिक निद्रा
ित ही लेते थे । नित्य प्रति रात को दो से तीन बजे तक
से जागृत हो सूत्र की स्वाध्याय करते थे । बहुत से सूत्र
ने कंठस्थ कर लिये थे । उसमें से दशवैकालिक सूत्र का
ो वे सबसे पहिले कर लेते थे । फिर उत्तराध्ययन के कितने

ही अध्ययनों का पाठ करते थे। इसके पश्चात् आचारांग
कृतांग, नंदी, सुखविपाक इत्यादि जो सूत्र कंठस्थ थे उन
किसी सूत्र का स्वाध्याय करते थे। फिर अर्थ का चिंतवन
तत्वविचार में लीन हो अप्रमादपन से रात निर्गमन करते
संखयाबद्ध स्तोक उन्हें कंठस्थ थे, उनकी पर्यटना वे हमेशा क
उनमें भी २४ तीर्थंकरों का लेखा ज्ञानलब्धि इत्यादि कई थे
की पर्यटना तो वे नित्य प्रति करते थे।

कभी २ एक आध घंटे की निद्रा ले वे जागृत हो जाते
स्वाध्यायादि में प्रवृत्त रहते थे। फिर निद्रा आने लगती तो
ध्याय किये पश्चात् एक आध घंटा निद्रा लेलेते और प्रति
के पहिले जागृत हो जाते थे. सूत्रों की स्वाध्याय कई सम
अपने शिष्यों के साथ करते, शिष्य भी जल्द उठ पूज्यश्री के
स्वाध्याय करने लग जाते थे.

धीमे २ परन्तु गंभीर और सुमधुर स्वर से इस स्वा
सुनने का जिन २ भाग्यशाली साधु श्रावकों को सुअवसर
हुआ है वे कहते हैं कि हमारे जीवन की वे सफल घटिकाएं
उस समय का दृश्य कितना रम्य, बोधप्रद और आकर्षक था
सिर्फ अनुभव से ही ज्ञात हो सका है। सूत्र की अलौकिक
का प्रवाह रात्रि की नीरव शांति में पूज्यश्री जैसे पवित्र पुरु
मुख कमल में से बहता तब उसका प्रभाव कुछ भिन्न ही पड़ता

बालकों के शिक्षादेने का शौक।

लघुवय से ही बालकों को सत्पुरुषों के संसर्ग का लाभ [illegible]ता रहे तो उनके चारित्र का बंध उच्चतम हो जाता है। उत्तम [illegible] उनमें स्वयं प्रकट हो जाते हैं। इसीलिये प्राचीन समय के [illegible] अपने बालकों को व्यवहारिक शिक्षा देने के पश्चात् धार्मिक [illegible] प्राप्त करने के लिये सद्गुरुओं के पास भेजते थे।

मोरवी में जब पूज्यश्री का चातुर्मास था तब जैन शाला के [illegible]र्थी महाराज श्री के सत्संग का लाभ लेते. पूज्यश्री के दर्शन [illegible] वाणी श्रवण का लाभ लेने के लिये अत्यंत आतुरता के साथ [illegible] वय के बालक हमेशा पूज्यश्री के पास आते, भक्ति के [illegible] रंगा हुआ उनका कोमल हृदय कमल वहां प्रफुल्लित होजाता [illegible]र विनय से झुककर उनके शीष कमल पूज्यश्री के पदकमल [illegible] करते थे. इस विधि के पश्चात् वे सब सुमधुर ध्वनि से [illegible]वंता प्रभुवीर " का गायन ललकारते थे. उस समय का [illegible] अत्यंत रमणीक लगता था गायन के पश्चात् वे पूज्यश्री के [illegible] मर्यादा से बैठ जाते थे. ऐसे छोटे बालकों के योग्य कर्तव्य [illegible] के लिये पूज्यश्री अपनी रसालवाणी का प्रयोग [illegible] करते कि जिससे बच्चों को आनन्द के साथ ज्ञान [illegible] अपना कर्तव्य क्या है उसे स्पष्ट समझलें।

" कम खाना और गम खाना, पढ़ना ज्ञान, देखना
दोष, मानना गुरु वचन, सुनना शास्त्र, ग्रहण करना
शिक्षा,- देना हितोपदेश, लेना परायागुण, सहना प
चलना न्यायमार्ग, खानागम, मारनामन, दमना इंद्रिय,
लोभ, भजना भगवंत, करना जीवाजीव का जतन, जपना
तपना तप, खपाना कर्म, हरना पाप, मरना पंडित मरण,
भवसागर, करना सबका भला, धरना ध्यान, बढ़ाना क्रिया,
प्रभुनाम, हटाना कर्म, मांगना मुक्ति, लगाना उपयोग,
जीवोंका उपकार, रोकना गुस्सा, छोडना अभिमान, तजना
त्यागना चोरी, छोडना पर स्त्री, रखना मर्यादा "

ऐसे २ छोटे वाक्य बालकों को कंठस्थ याद करवाकर
रहस्य वे ऐसी खूबी से तथा मनोरम दृष्टांतों से समझाते कि
के हृदय पर उनकी गहन छाप पड़जाती कि जो कभी न हट
और एक रुढ़ी शिक्षा का अमल उस दिन से ही प्रायः
हो जाता था।

पाठक! स्कूल में नीति पाठ रटा २ बालकों के मस्तिष्क
२ कर भरते हैं परन्तु उनका बहुत प्रभाव नहीं पड़ता। घरम
पिता बार २ जो शिक्षा देते हैं वे भी उनके गले नहीं बैठती,
ऐसे सच्चारित्री और प्रभावशाली महात्माओं के बोध से
प्रभाव पड़ता है यह उनके चारित्र का ही प्रभाव समझना चा

तो ज्ञान के बिना धर्म सिर्फ अंग्रेजी शिक्षा का जो परिणाम
आरहा है वह सब दृष्टिगत होता ही है।

निश्चय पर अटलता।

पूज्यश्री स्वशक्ति और परिस्थिति का पूर्णता से विचार
प्रबल बुद्धिमत्ता से जीवन के उद्देश निश्चित करते थे। फलां
करना है और फलां नहीं करना है। वह मार्ग जाने योग्य है
वह अयोग्य है। ऐसी २ प्रतिज्ञाएं लेते, फिर प्राण की परवाह
कर उन्हें बराबर पालते थे।

देहं पातयामि वा कार्यं साधयामि।

यह उनका मुद्रा लेख था। छोटी उम्र ही से वे दृढ़निश्
थे। छोटे या बड़े प्रत्येक निश्चय में वे मेरू की तरह अटल रहते

दीक्षा लेने का उनका निश्चय फिराने वास्ते कुटुम्बी जनों
आकाश पाताल एक करडाला, अनेक परिसह आये, कैद में
रहे, परन्तु ये नेक सत्याग्रही महापुरुष अपने निश्चय से तनिक
न डिगे। साध्य प्राप्त करने की दृढभावना वाले महापुरुष अ
मार्ग में चाहे जैसे आवरण आवें उन्हे प्रबल पुरुषार्थ द्वारा कि
तरह हटा देते हैं इसकी शिक्षा पूज्यश्री के जीवन में पद २

ती है। मन वश करने के लिये निश्चय की निश्चलता एक
ष्ट साधन है और जिन्होंने मन जीता, उन्होंने सब जीत
या। मन और इंद्रियों पर विजय प्राप्त करना यही सच्चा जैन
है। जगत् की सब सिद्धियां मन बल से मन की दृढ़ता से सिद्ध
सकती हैं। पूज्यश्री आशातीत उन्नति साध सके यह उनके
निग्रह का ही आभार है उनके जैसे निश्चल निश्चयवान, पवित्र
तेजवान प्रभाविक महापुरुष की भावनाएं हृदय में उतारकर
सा पुरुषार्थ कर स्व परहित साधना यही कर्तव्य है यही प्राप्तव्य
और यही परम साध्य है। यह कर्तव्य और प्राप्त व्यजितना
र पासके उतनी ही जीवनयात्रा की सफलता है।

अपने आर्य धर्मग्रन्थों का प्रधान आशय एकयता से भरा हुआ
परन्तु मताग्रह के कारण ऐक्य की कड़िया ढीली होती जाती हैं
र अवनति को अवकाश मिलता जाता है। स्वयं जानबूझकर
र होते हैं जानबूझ कर अपना अकल्याण अपने हाथ से ही
हैं. स्वार्थपूर्णता के कारण प्रकृति ने न्याय न किया. कुदरत
णाली पलटजाय, निश्चयनय खूंटी पर रक्खाजाय, वहां उद्धार
सारा व्यर्थ है। मीठे तरवरों की जड़ें काट फिर पत्तों के
से उनकी पूजा करना हास्यजनक गिना जाता है. संदेह
के प्रत्यक्ष आदर होना चाहिये। संदेह में पड़े रहने से
जिसमें है यह दृष्टिगत नहीं होती तो फिर भला [illegible]

तो ज्ञान के बिना धर्म सिर्फ अंग्रेजी शिक्षा का जो परिणाम आरहा है वह सब दृष्टिगत होता ही है।

निश्चय पर अटलता।

पूज्यश्री स्वशक्ति और परिस्थिति का पूर्णता से विचार प्रबल बुद्धिमत्ता से जीवन के उद्देश निश्चित करते थे। फलां करना है और फलां नहीं करना है। वह मार्ग जाने योग्य है व वह अयोग्य है। ऐसी २ प्रतिज्ञाएं लेते, फिर प्राण की परवा कर उन्हें बराबर पालते थे।

देहं पातयामि वा कार्यं साधयामि।

यह उनका मुद्रा लेख था। छोटी उम्र ही से वे दृढ़निश्च थे। छोटे या बड़े प्रत्येक निश्चय में वे मेरू की तरह अटल रहते थे।

दीक्षा लेने का उनका निश्चय फिराने वास्ते कुटुम्बी जनों आकाश पाताल एक करडाला, अनेक परिग्रह आये, कैद में रहे, परन्तु ये नेक सत्याग्रही महापुरुष अपने निश्चय से तनिक न डिगे। साध्य प्राप्त करने की दृढभावना वाले महापुरुष अप मार्ग में चाहे जैसे आवरण आवें उन्हे प्रबल पुरुषार्थ द्वारा किस तरह हटा देते हैं इसकी शिक्षा पूज्यश्री के जीवन में पद २ प

ते हैं। मन वश करने के लिये निश्चय की निश्चलता एक साधन है और जिन्होंने मन जीता, उन्होंने सब जीत। मन और इंद्रियों पर विजय प्राप्त करना यही सच्चा जैन है। जगत् की सब सिद्धियां मन वल से मन की दृढ़ता से सिद्ध होती हैं। पूज्यश्री आशातीत उन्नति साध सके यह उनके निश्चय का ही आभार है उनके जैसे निश्चल निश्चयवान, पवित्र प्रधान प्रभाविक महापुरुष की भावनाएं हृदय में उतारकर पुरुषार्थ कर स्व परहित साधना यही कर्तव्य है यही प्राप्तव्य यही परम साध्य है। यह कर्तव्य और प्राप्त व्यजितना पासके उतनी ही जीवनयात्रा की सफलता है।

अपने आर्य धर्मग्रन्थों का प्रधान आशय एक्यता से भरा हुआ परन्तु मताग्रह के कारण ऐक्य की कड़िया ढीली होती जाती हैं अवनति को अवकाश मिलता जाता है। स्वयं जानवूझकर करते हैं जानबूझ कर अपना अकल्याण अपने हाथ से ही है. स्वार्थपूर्णता के कारण प्रकृति ने न्याय न किया. कुदरत ...ली पलटजाय, निश्चयनय खूंटी पर रखखाजाय, वहां उन्नत ...र्ग व्यर्थ है। मीठे तरवरों की जड़ें काट फिर पत्तों के ... उनकी पूजा करना हास्यजनक गिना जाता है. संदेह ... उसका आदर होना चाहिये। संदेह में पड़े रहने से ... फिरते हैं यह दृष्टिगत नहीं होती तो फिर भला कैसे हो?

मुनि की इस पद्य के*चारों चरणों के आद्यन्त अक्षरों से वन्दना पू
मैं स्तुति करता हूं। लंका दहन की उपमा लोकोक्ति है॥ १॥

कल्याणमन्दिरनिभात्सुरमन्दिरस्थात्
श्रीलालपूज्यकरुणावरुणालयाच्च।
कल्याणमन्दिरमवाप्तुमना विनौमि
कल्याणमन्दिरपदान्तसमस्यया तम्॥ २॥

कल्याणागार, स्वर्गस्थ, करुणानिधि पूज्य श्रीलालजी से आ
कल्याण प्राप्त करने की इच्छा से ही कल्याणमन्दिरस्तोत्र के पद को×
न्तिम समस्या के रूपमें लेकर उक्त श्री चरणों की स्तुति करताहूं॥

जन्मान्तरीयदुरिताचविपत्तिरद्य
सावद्यहृद्यमभिपद्य विपद्यमानः॥
पूज्य! त्वदीयपदपद्मसहं श्रयामि
कल्याणमन्दिरमुदारमवद्यभेदि॥ ३॥

हे पूज्य! जन्मान्तर में किये पापों से पीड़ित, सम्प्रति
कुकर्मों को ही ध्येय—ग्राह्य समझ कर अपनाने से उद्विग्न मैं आप
चरणकमलों का आश्रय लेताहूं। क्यों कि, आप के चरणकम
ही सुख निकेतन, अत्यन्त उदार, एवं पापों के नाशक हैं॥ ३

---

* श्रीलालमुनिं वन्देऽहम्.

×इस काव्य के प्रत्येक श्लोक का अन्तिम पद कल्याणमंदिर स्तोत्र से पूरा किया ग

तं त्वां स्मरामि सततं य इह प्रपञ्च-
पञ्चाननाश्रितकलावमलोमलेऽपि ।
ग्राहेऽगृहीत उदगा दिवमाङ्घ्रियुग्मम्
पोतायमानमभिनम्य जिनेश्वरस्य ॥ ६ ॥

महाप्रपञ्चरूपी सिंह से युक्त, महामलिन, ग्राह सम
से ही पकड़ने वाले इस विकराल कलिकाल में भी मात्र वीर
चरणों को ही नमस्कार कर आप स्फटिक तुल्य निर्मल
विषयों में अनासक्त रहकर देव लोक में पहुंच गये वैसे
भी आपका स्मरण करता हूं कारण कि, स्वर्गारोहण की पद्धति
ज्ञाता ही गये हैं ॥ ६ ॥

दुर्दान्तदाम्भिमदनोदनिदानमोद
पाथः पयोदवचनस्य तव स्तुतिं काम् ।
कुर्यामहं न गदितुं स हि यां समीष्टे
यस्य स्वयं सुरगुरुर्गरिमाम्बुराशेः ॥ ७ ॥

दुर्दान्त दम्भियों के मद को चूर करने का कारण, त
भृत जल वर्षी मेघ के समान भीर-वचन वाले आप की स्
(क्षुद्र) तो क्या ही कर सकता हूं किन्तु प्रसिद्ध वक्ता बृ
भी नहीं कर सकता क्योंकि आप गरिमा के सागर हैं ॥ ७

वाचा धनेन करणेन कृतेश्वयेन
प्रीणन्तु सन्तमसुमन्तमथो कियन्तः ।
स्तुवन्तु तान् तव दृशाऽऽदिशताऽतिमोदं
स्तोत्रं सुविस्तृतमतिर्न विभुर्विधातुम् ॥ ८ ॥

वचन और काया से एवं अन्यान्य साधनों से जो मनुष्य
के अथवा जीव मात्र को प्रसन्न कर सकते हैं उनकी स्तुति
कर सकते हैं किन्तु दृष्टिमात्र से एकान्तात्यन्त आन-
आपकी स्तुति तो प्रगल्भ तथा विस्तृत बुद्धि मनुष्य
सकता ॥ ८ ॥

आसाद्य भासुरधनानि वसुन्धरां च
सम्राट् पदं भजतु कोपि नृपासनस्थः ।
तत्त्वतः प्रतिनिधिर्हृदयंगतोऽभू-
स्तीर्थेश्वरस्य कमठस्मयधूमकेतोः ॥९॥

... धन, विशालवसुंधरा और सम्राट पद को कोई
...) मनुष्य प्राप्त कर सकता है किन्तु कमठ नामक
... दूर करने वाले तीर्थंकर के प्रतिनिधि तथा प्रिय
... आसन पर आपही बैठते थे ॥ ९ ॥

... समर्पणीय दधार हार्दं
... स्वार्थमपरार्थविधिं व्यधत्त ।

शक्तिं विनापि बहुभक्तिवशोऽधिकाश-
स्तस्याहमेष किल संस्तवनं करिष्ये ॥ १

हे पूज्य ! जो आपने द्वेष छोड़कर विश्वव्यापी प्रे
किया था और अपना स्वार्थ छोड़ कर परमार्थ का ही वि
था उन आपकी स्तुति केवल भक्तिवश होकरही शक्ति के बि
करूंगा ॥ १० ॥

ब्रूमः कथं हृदयहैमगिरेः प्रभूतां,
शान्तिक्षमासुजनताकरुणानदीं ते ।
यत्कारुकर्मकरतोऽहमनीश एतत्
सामान्यतोऽपि तव वर्णयितुं स्वरूपम् ॥ १

आपके हृदयरूप हिमालय से निकली हुई शान्ति,
सुजनता, तथा दया रूप नदी की तो मैं क्या महिमा कर सकता
जिसको चित्रकार लोग हाथों से लिख सकते हैं उस आपके
को मैं सामान्यतः भी नहीं कह सकता ॥ ११ ॥

यत्कर्मवीरमतिधीरचरित्रलेखे
वाणी विचिन्तयति नीतललाटपाणी ।
शेषो न चेश इह मन्दधियोऽपि तस्मा-
दस्मादृशाः कथमधीश ! भवन्त्वधीशाः ॥

अ० जिस अत्यन्त बुद्धिमान् कर्मवीर का चरित्र लिखने के लिये
...नी भी मस्तक पर हाथ रख कर चिन्ता में पड़ती है, शेष भी
...मुख से नहीं कहसकता हे नाथ! फिर हमारे सरीखे मन्दबुद्धि
...कैसे हो सकते हैं। (शेष का नाम लोकोक्ति है)॥१२॥

कुर्मो वयं बहुविधां द्रुमवर्णनां तु
किन्तावता सुरतरु-प्रभव-प्रभावः।
वाच्यस्तथैव तव वर्णनहीनसन्धो
धृष्टोऽपि कौशिकशिशुर्यदि वा दिवान्धः ॥ १३ ॥

हम लोग साधारण वृक्षों का वर्णन अनेक प्रकार से कर सकते
... कल्पवृक्ष का प्रभाव नहीं कह सकते जैसे उल्लू का बच्चा
... जाति में कदाचित् ढीठ भी होतो क्या सूर्य को देख सकता है ?
... और हम आपके वर्णन में कृतप्रतिज्ञ नहीं हो सकते ॥१३॥

मल्लं हयं गजमजं धनिनं वदान्यं
संवर्णयेयमिति किं भवतोऽपि नृणाम्।
घूकोऽवलोकयति वस्तु विहायसीति
रूपं प्ररूपयति किं किल धर्मरश्मेः ॥ १४ ॥

... प्रकार मल्ल, (पहलवान) घोड़ा, हाथी, बकरा, धनी
... का वर्णन हम अनाड़ी तरह से कर सकते हैं क्या? इसी

शक्तिं विनापि बहुभक्तिवशोऽधिकाश-
स्तस्याहमेष किल संस्तवनं करिष्ये ॥ १०

हे पूज्य ! जो आपने द्वेष छोड़कर विश्वव्यापी प्रेम किया था और अपना स्वार्थ छोड़ कर परमार्थ का ही विधा था उन आपकी स्तुति केवल भक्तिवश होकरही शक्तिके बिना करूंगा ॥ १० ॥

ब्रूमः कथं हृदयहैमगिरेः प्रभूतां,
शान्तिक्षमासुजनताकरुणानदीं ते ।
यत्कारुकर्मकरतोऽहमनीश एतत्
सामान्यतोऽपि तव वर्णयितुं स्वरूपम् ॥ १

आपके हृदयरूप हिमालय से निकली हुई शान्ति, सुजनता, तथा दया रूप नदी की तो मैं क्या महिमा कर सकता जिसको चित्रकार लोग हाथों से लिख सकते हैं उस आपके को मैं सामान्यतः भी नहीं कह सकता ॥ ११ ॥

यत्कर्मवीरमतिधीरचरित्रलेखे
वाणी विचिन्तयति नीतललाटपाणी ।
शेषो न चेश इह मन्दधियोऽपि तस्मा-
दस्मादृशाः कथमधीश ! भवन्त्वधीशाः ॥१

अ० जिस अत्यन्त बुद्धिमान् कर्मवीर का चरित्र लिखने के लिये सरस्वती भी मस्तक पर हाथ रख कर चिन्ता में पड़ती है, शेष भी मुख से नहीं कह सकता हे नाथ! फिर हमारे सरीखे मन्दबुद्धि कैसे हो सकते हैं। (शेष का नाम लोकोक्ति है)॥१२॥

> कुर्मो वयं बहुविधां द्रुमवर्णनां तु
> किन्तावता सुरतरु-प्रभव-प्रभावः ।
> वाच्यस्तथैव तव वर्णनहीनसन्धो
> धृष्टोऽपि कौशिकशिशुर्यदि वा दिवान्धः ॥ १३ ॥

हम लोग साधारण वृक्षों का वर्णन अनेक प्रकार से कर सकते किन्तु कल्पवृक्ष का प्रभाव नहीं कह सकते जैसे उल्लू का बच्चा जाति में कदाचित् ढीठ भी हो तो क्या सूर्य को देख सकता है? इसी प्रकार हम आपके वर्णन में कृतप्रतिज्ञ नहीं हो सकते ॥१३॥

> मल्लं हयं गजवरं धनिनं वदान्यं
> संवर्णयामिति किं भवतोऽपि नूनम् ।
> मूकोऽवलोकयति वस्तु विदारयन्ति
> रूपं प्ररूपयति किं किल धर्मरत्नैः ॥ १४ ॥

जिस प्रकार मल्ल, (पहलवान) घोड़ा, हाथी, दाता, धनी इनों का वर्णन हम अच्छी तरह से कर सकते हैं क्या ...

प्रकार आपका भी वर्णन कर सकते हैं? नहीं,नहीं उल्लू अप॰ आवश्यक्ता की वस्तुएं देखता और आकाश में भी गमन करता है तो क्या सूर्य का स्वरूप भी कभी देख सकता है ॥ १४॥

गुर्वाश्रम श्रमकृदस्तसमस्तदोष-
स्तोषान्वितोऽपि विबुधोऽपि कुशाग्रबुद्धिः।
शक्तो न वक्तुममितां भवदीयकीर्तिं
मोहक्षयादनुभवन्नपि नाथ ! मर्त्यः ॥ १५ ॥

गुरु के आश्रममें श्रम करने वाला, समस्त पापों को नाश करने वाला, प्रसन्न चित्त, विद्वान्, तथा तीक्ष्णबुद्धि मनुष्य मोह के क्ष॰ से (मोहनीयकर्म के क्षयोपशम से) सांसारिक पदार्थों का अनुभव करता हुआ भी हे नाथ ! आपकी विशाल कीर्तिको नहीं कह सकता।१५

पारे परार्द्धमभिते गणिते गरिष्ठो
रात्रिंदिवा यदि भवेद्गणनैकनिष्ठः।
गीर्वाणजीवनशतं निरुगेत्र जीवे-
न्नूनंगुणान्गणयितुं न तव क्षमेत ॥ १६ ॥

सब संख्याओं में बड़ी संख्या को परार्द्ध (अन्त संख्या) कहते हैं उक्त संख्या में निपुणभी नीरोग मनुष्यदेवताओं की आयुष्य प्राप्त कर के आपके गुणों की गणना करने में कृतकार्य नहीं हो सकता ॥ १६ ॥

अत्यन्तशान्तमनसो वचसोपनीता
भावा न भव्यभविभिः परिभाविता स्ते ।
किं गण्यते मणिगणो जलधेर्वणिग्भिः
कल्पान्तवान्तपयसः प्रकटोऽपि यस्मात् ॥ १७ ॥

आपके सुतरां शांत मन से वाणी द्वारा प्रकटित भी भाव (अभिप्राय) सांसारिक प्राणी नहीं गिन सकते जैसे कि, जल काल डालने से प्रकटित, समुद्र के रत्न बड़े से बड़ा हिसाबी ज्यो- तिषी भी गिन नहीं सकता ॥१७॥

निर्गण्यगुण्यशुभपुण्यसुपूर्णकाय-
कारुण्यपूर्णकरणस्य विभोर्गुणौघः ।
गण्यो न ते गुणनिधेर्जगदार्तिहर्त्तु
र्मीयेत केन जलधेर्ननु रत्नराशिः ॥ १८ ॥

असंख्य गुणों से युक्त एवं मांगलिक पुण्य से पूर्ण है शरीर जिनका और करुणा रस से भरी हुई हैं इन्द्रियां जिनकी ऐसे गुणाकर तथा संसार के त्रिविध दुःखों को दूर करने वाले आपके गुण गणों की गणना नहीं हो सकती कारण कि, समुद्र के रत्नों की गणना भगवान् से भी नहीं हो सकी ॥ १८ ॥

नाहं कविर्न च सुकर्कशतर्कशीलो
शब्दागमात्कलमतिस्तव [illegible]ऽपाय ।

वाचालयत्यतिमहात्मगुणो हि मूक-
मभ्युद्यतोऽस्मि तव नाथ ! जडाशयोऽपि ॥ १९

हे नाथ ! मैं कवि नहीं हूं शब्द शब्द में तर्क करने वाला त
र्किक भी नहीं हूं जिससे आपकी स्तुति करने का विचार कर
किन्तु यह बात प्रसिद्ध है कि, महात्माओं के गुण मूक को भ
वाचाल बना देते हैं इसी आशा से मन्दबुद्धि भी मैं आपके गुण-
गायन में प्रवृत्त हुआ हूं ॥ १९ ॥

मन्त्रप्रभाव इव सज्जनशक्तिरात्म-
सेवापरं निजगुणेन गुणीकरोति ।
स्यां सिद्ध एवमिह ते स्तवने प्रवर्त्त
कर्त्तुं स्तवं लसदसंख्यगुणाकरस्य ॥ २० ॥

महात्माओं के समीप रहने से मन्त्र के प्रभाव समान महा-
त्माओं के गुण भी मनुष्य को गुणी बना देते हैं ठीक इसी तरह
आपकी स्तुति करने में मुझको आपके प्रभाव से सिद्धि अवश्य मिल
सकेगी इसी आशा से जाज्वल्यमान अनेक गुणों के निधान आपकी
स्तुति करने के लिये मैं उद्यत हुआ हूं ॥ २० ॥

हास्यं श्रमे सफलयेदिह मे विपश्चित्
क्षामं ततो नहि मनागपि मे विषादः ।

हास्यास्पदं गुणवतां वियतः प्रमाणे
बालोऽपि किं न निजबाहुयुगं वितत्य ॥ २१ ॥

आपकी स्तुति करने में मैं जो श्रम करताहूं इस श्रम को देख
र यदि विद्वान् लोग हंसे तो यथेष्ट हंसलें मुझे इस में कुछ विषाद न
ागा क्योंकि आकाश के प्रमाण को बतलाने के लिये हाथ फैलाने
ाला बालक विशेषज्ञों का हास्यपात्र अवश्य होता है॥ २१ ॥

श्रीमद्गुणाब्धिरहमल्पपदार्थलब्धि-
र्भेद महत्यपि गुणान् कथये तथा ते ।
कूपस्थितोऽप्यनवलोकितलोकभेको
विस्तीर्णतां कथयति स्वधियाम्बुराशेः ॥ २२ ॥

आपके गुण तो अगाध सागर हैं तथा मेरी बुद्धि अल्पज्ञ
इस प्रकार का महान् भेद (दिन रात का फर्क) रहने पर भी
मैं आपके गुणों को कहने की धृष्टता करता हूं सो उस कूप मेंढ
के समान हैं जो संसार और सागर को न जानता हुआ भी उक्त दोनों
विस्तारता कूप में ही अपने पांव फैलाकर दिखाता है॥ २२ ॥

सन्तः कियन्त इह सन्ति वदन्ति धर्म
पञ्चव्रतान्यपि धरन्ति महीमटन्ति ।
त्वय्येव ते तु निजदर्शकलोपिणोऽन्-
ये योगिनामपि न यान्ति गुणास्तवेश ! ॥

वाचालयत्यतिमहात्मगुणो हि मूक-
मभ्युद्यतोऽस्मि तव नाथ ! जडाशयोऽपि ॥ १९

हे नाथ ! मैं कवि नहीं हूं शब्द शब्द में तर्क करने वाला त
र्किक भी नहीं हूं जिससे आपकी स्तुति करने का विचार क
किन्तु यह बात प्रसिद्ध है कि, महात्माओं के गुण मूक को भ
वाचाल बना देते हैं इसी आशा से मन्दबुद्धि भी मैं आपके गुण-
गायन में प्रवृत्त हुआ हूं ॥ १९ ॥

मन्त्रप्रभाव इव सज्जनशक्तिरात्म-
सेवापरं निजगुणेन गुणीकरोति ।
स्यां सिद्ध एवमिह ते स्तवने प्रवर्त
कर्त्तुं स्तवं लसदसंख्यगुणाकरस्य ॥ २० ॥

महात्माओं के समीप रहने से मन्त्र के प्रभाव समान महा-
त्माओं के गुण भी मनुष्य को गुणी बना देते हैं ठीक इसी तरह
आपकी स्तुति करने में मुझको आपके प्रभाव से सिद्धि अवश्य मिल
सकेगी इसी आशा से जाज्वल्यमान अनेक गुणों के निधान आपकी
स्तुति करने के लिये मैं उद्यत हुआ हूं ॥ २० ॥

हास्यं श्रमे सफलयेदिह मे विपश्चित्
कामं ततो नहि मनागपि मे विषादः ।

हास्यास्पदं गुणवतां वियतः प्रमाणे
बालोऽपि किं न निजबाहुयुगं वितत्य ॥ २१ ॥

आपकी स्तुति करने में मैं जो श्रम करताहूं इस श्रम को देख कर यदि विद्वान् लोग हंसे तो यथेष्ट हंसलें मुझे इस में कुछ विषाद न होगा क्योंकि आकाश के प्रमाण को बतलाने के लिये हाथ फैलाने वाला बालक विशेषज्ञों का हास्यपात्र अवश्य होता है॥ २१ ॥

श्रीमद्गुणाब्धिरहमल्पपदार्थलब्धि-
र्भेदे महत्यपि गुणान् कथये तथा ते ।
कूपस्थितोऽप्यनवलोकितलोकभेको
विस्तीर्णतां कथयति स्वधियाम्बुराशेः ॥ २२ ॥

आपके गुण तो अगाध सागर हैं तथा मेरी बुद्धि अल्पज्ञ है इस प्रकार का महान् भेद (दिन रात का फर्क) रहने पर भी जो मैं आपके गुणों को कहने की धृष्टता करता हूं सो उस कूप मंडूक के समान है जो संसार और सागर को न जानता हुआ भी उक्त दोनों की विस्तारता कूप में ही अपने पांव फैलाकर दिखलाता है ॥ २२ ॥

सन्तः कियन्त इह सन्ति वदन्ति धर्मं
पञ्चव्रतान्यपि धरन्ति महीमटन्ति ।
त्वय्येव ते तु निजदर्शकहर्षिणोन्त-
र्ये योगिनामपि न यान्ति गुणास्तवेश ! ॥ २३ ॥

हे नाथ ! इस अपार संसार में कितने ही साधु महात्मा हैं जो सदा धर्मोपदेश देते पांच महाव्रतों को पालते एवं दूसरों से पलवाते पृथ्वी में फिरते हैं किन्तु अदृष्टपूर्व दर्शकों को आनंद देने वाले गुण आप ही में थे जो अन्यान्य मुनियों में नहीं मिल सकते थे इसका साक्षी वही हो सकता है जिसने कदाचित् आपके दर्शनों का लाभ उठाया होगा ॥२३॥

ये सद्गुणास्तव हृदाद्रिदरीनिलीना–
स्त्वत्कण्ठमार्गमसदन्न हि जातु कुत्र ।
साकं त्वयैव विधिना दिवि संप्रयाता
वक्तुं कथं भवति तेषु ममावकाशः ॥ २४ ॥

जो सद्गुण आपकी हृदय रूपी गुफा में छिपकर बैठे थे कभी भी आप के कंठ मार्ग द्वारा बाहिर नहीं आये थे (अपनी प्रशंसा आप कभी नहीं करते थे) वे गुण दैवयोग से स्वर्ग तक आप के साथ ही गये इसीसे उनको यथावत् कहने का अवकाश मुझे प्राप्त नहीं हो सका ॥ २४ ॥

आत्मप्रबोधविरहात्कलहायमानान्
जाग्रत्प्रपञ्चकलिकालविवञ्चितांश्च ।
अस्मान् विहाय दिवसंगमनं तवैत–
ज्जाता तदवमसमीक्षितकारितेयम् ॥ २५ ॥

आत्मज्ञान के अभाव से परस्पर कलह करते हुये तथा महाप्रपंची इस विकराल कलिकाल से छले हुए हमको छोड़ कर आप स्वर्ग को सिधारे कदाचित् आप ने अविचारित कार्य किया है तो यही किया है ॥ २५ ॥

श्रीमत्कृपाकृतिचयोपकृता वयं स्मो
नो शक्नुमोऽत्र भवतां प्रविकर्तुमेव ।
कुर्मः स्तवं प्रभमिहोपकृता यथाव-
ज्जल्पन्ति वा निजगिरा ननु पक्षिणोऽपि ॥ २६ ॥

हे पूज्यवर ! आपकी कृपा और क्रिया से हम अधिक उपकृत हुए हैं किन्तु प्रत्युपकार करने कि शक्ति न होने से मात्र आपका गुण गायन ही करते हैं कारण कि उपकृत पक्षी भी अपने उपकारी की गुणद वाणी से स्तुति करता हूं ॥ २६ ॥

यस्मान्न्यवर्तत भवान् विषयोपभोगाद्
रोगादिव प्रतिदिनं व्यलिखत्तमेव ।
श्रोतृहृदाकृतिपटे भयदं हि चित्र-
मात्मानमचिन्त्यमहिमा जिनसंस्तनस्ते ॥ २७ ॥

हे पूज्य जिन विषयोपभोगों को रोग समझ कर आप हटाते थे प्रत्युत श्रावकों के भी हृदयस्थल पर उसी

लिखते थे और स्वरचित, अचिन्त्य महिमा, जिनेन्द्र संस्तव करने से जो आपकी अलौकिक शक्ति का प्रत्यय मिलता था इत्यादि का वर्णन कैसे कर सकूं ॥ २७ ॥

यस्ते पवित्रितजगत्त्रितयं विचित्रं
चित्ते चरित्रमतुलं सततं विदध्यात् ।
तस्योन्नतिस्त्विह परत्र किमत्र चित्रं
नामापि पाति भवतो भवतो जगन्ति ॥ २८ ॥

त्रिलोकी को पावन करने वाले जो आप के विचित्र तथा अनुपम चरित्र को हृदयङ्गम करेगा उसकी उभय लोक की अवश्य उन्नति होगी इस में आश्चर्य ही क्या है? कारण कि आपका नाम ही असार संसार से रक्षा करने वाला है ॥२८॥

श्रीमद्वियोग इह साधुसमाजनिष्ठान्
दुःखीकरोति नितरां सुजनान् तथैव ।
पित्सून् यथा जलमलं पयसामभाव-
स्तीव्रातपोपहतपान्थजनान्निदाघे ॥ २९ ॥

हे पूज्य ! श्री चरणों का वियोग साधुमार्गी जैन समाज को तथा सत्पुरुषों को वैसेही अत्यन्त दुःखी बना रहा है जैसेकि, आषाढ़मास की कड़ी धूपसे व्याकुल तथा प्यासे पथिक को जल का अभाव ॥२९॥

द्यामुद्गतेऽत्रभवति प्रगतोऽभिलाषो
नः श्रोतुमत्र भवतो वचनं सुचारु।
दृष्टिं दयार्द्रविपुलां भवतः समीहे
प्रीणाति पद्मसरसः सरसोऽनिलोऽपि॥ २०॥

आप के स्वर्ग में निवास करने से आपका वचनामृत तो हम
कर नहीं सकते मात्र आपकी दयार्द्रदृष्टि की चाहना है कारण
पद्मसरोवर का पावन पवन भी संसार को पवित्र तथा प्रसन्न
ता है॥ २०॥

यादृक् प्रसोदजलसान्द्रपयोद आसीद्
दृग्वर्त्तिनि त्वयि मुने! व्यतरन् सुधौघम्।
तादृक्कुतस्तदपि विघ्नविषादयूथा
हृद्वर्त्तिनि त्वयि विभो! शिथिलीभवन्ति॥ २१॥

हे विभो! आपकी उपस्थिति में सर्वत्र अमृतमय वृष्टि होती
अर्थात् बाह्य एवं आन्तरिक दुःख या पाप छू तक नहीं सकते
अब आपके न रहने पर वे उच्च आनन्द तो खपुष्प होगया
तो भी आपको आत्मसात् करने पर विघ्न और विषाद अवश्य
थिल होते हैं॥ २१॥

ध्यानप्रभावविधिना मधुलिट्स्वरूपं
कीटा भजन्त इति सन्त इहामनन्ति ।
तद्वद् गुणांस्तव विभावयतो विभिन्ना
जन्तोः क्षणेन निविडा अपि कर्मबन्धाः ॥ ३२ ॥

ध्यान एक ऐसी वस्तु है जिसके प्रभाव से साधारण, विजाती कीट भी भ्रमर बन जाता है ऐसा सत्पुरुषों (विज्ञानवेत्ताओं) का कहना है वैसे ही आप के गुणों का ध्यान करने पर मनुष्य के अनेक जन्मोपार्जित कर्म बन्धन भी सुतरां क्षण मात्र में दूर हो सकते हैं क्योंकि—जब आप अशुभ कर्म्मों के बन्धन से मुक्त हैं तब आप को आत्मसात् करने वाला भी अवश्य वैसाही होना चाहिये ॥ ३२ ॥

अस्मिन् द्विजिह्वजनजिह्ममये नृलोके
आसा वयं हि मुनिजाङ्गुलिकं भवन्तम् ।
इच्छन्ति खं त्वयि गते ग्रसितुं खला नः
सद्यो भुजङ्गमया इव मध्यभागम् ॥ ३३ ॥

सर्पतुल्य द्विजिह्व तथा कुटिल लोगों से ठूंस ठूंस कर भरे हुए इस संसार में विष के वैद्य एक आपही थे. अब आपके स्वर्ग चले जाने पर सर्प रूप वे दुर्जन हमें हृदय में काटना चाहते हैं ॥ ३३ ॥

जाते दिवं त्वयि विभो ! सुषमां सुधर्मा
भेजे यथा-सुरतरौ सति नन्दनस्य ।

देवैर्युतापि हि यथा शुकसङ्गतस्य
सत्यागते वनशिखण्डिनि चन्दनस्य ॥ ३४ ॥

हेपूज्य ! देवताओं से भरी हुई भी इन्द्र की सभा आपके पधा-
ने से खूब सुशोभित हुई होगी—कारण कि, शुकादि पक्षिओं से युक्त
न्दन वृक्ष की शोभा मोर के आने तथा अनेक वृक्षों से युक्त नन्दन
न की शोभा कल्पवृक्ष के होने से ही होती है (यह कवि की
ना है) ॥ ३४ ॥

वीर ! त्वदीयदयया मिलितः सुपूज्यः
कालेन संहृत इतो न जनोऽस्त्यनीशः ।
तस्यानुकम्पनतयाऽऽप्तसुपूज्यवर्या
मुच्यन्त एव मनुजाः सहसा मुनीन्द्र ! ॥ ३५ ॥

हे वीर प्रभो ! आपकी कृपा से प्राप्त हुए पूज्य श्रीजी को तो
। उठाकर स्वर्ग में लेगया। किन्तु इस से (यह) जन नायक
। नहीं होसका कारण कि, उक्त पूज्यश्री एक ऐसे पूज्य प्राति
ये को स्वस्थानापन्न कर गये हैं कि, जिनके कृपाकटाक्ष से ही
वय प्राणी बन्धनमुक्त हो रहे हैं ॥ ३५ ॥

श्रीलालपूज्य ! महिमा तव किं निगाद्यो
ऽविश्रान्तसञ्चितकलाखिलविधाधिलीनाः ।

धैर्यं मुदं नहि जहुर्बहुहन्यमाना
रौद्रैरुपद्रवशतैस्त्वयि वीक्षितेऽपि ॥ ३६ ॥

हे श्रीलालजी पूज्य! अवर्णनीय-आपकी महिमा का वर्णन क्या करें क्योंकि, आपके दर्शनमात्र से ही अविश्रान्तसंचित पाप कारणों से आधिभौतिक, आधिदैविक तथा आध्यात्मिक इन तीनों प्रकार के दुखों में तल्लीन भी मनुष्यों ने धीरता और प्रसन्नता न छोड़ी इससे बढ़कर और प्रभाव ही क्या हो सकता है ॥ ३६ ॥

जागर्ति नृत्यति जने वृजिनं च तावद्
यावद्द्वयो दुरितपूरितचेतसापि ।
सूर्येऽन्धकार इव पापमपैति नूनं
गोस्वामिनि स्फुरिततेजसि दृष्टिमात्रे ॥ ३७ ॥

इस संसार में पाप जीताजागता तब तक ही प्रचंड तांडव करता है जब तक उसे पीठमर्दक पापी मनुष्य मिलते रहते हैं लेकिन जब इन्द्रियों को वश करने वाले एवं देदीप्यमान कांति वाले आप जैसे महात्मा दृष्टिगोचर होते हैं तब पाप की वही दशा होती है जोकि, सूर्योदय में अंधकार की ॥ ३७ ॥

दृष्टे भवत्यभिभवान् बहु पापमाप
विघ्नक्षयो हि बहुशो भयभीतभीतम् ।

ग्रस्ता जना हि खलु तेन भयान्निरस्ता
श्चौरैरिवाशु पशवः प्रपलायमानैः ॥ ३८ ॥

आपके दृष्टिगोचर होते ही पाप के होश हवाश उड़गये और चारों ओर भागने लगा जिससे पाप ग्रस्त (पाप से पकड़े हुए) भी वैसे ही छूट गये जैसे कि, डरसे भागते हुए चोर के हाथ पशु छूट जाते हैं ३८ ॥

ये संस्मृतेः कृतिपरानुपदेशदानै
र्धर्मेऽद्दरान् व्यधिषतेह नरान्मुनीशाः ।
शान्ति क्षमामपि ददुः सततं भविभ्य
स्त्वं तारको जिन! कथं भविनां त एव ॥ ३९ ॥

हे जिन! सांसारिक जीवों को भवसागर से पार लगाने वाले मुनिश्रेष्ठ, पूज्यप्रवर हो सकते हैं अर्थात् जीवों के मोक्ष दाता मुनिवर ही हैं आप नहीं होसकते, कारण कि, सांसारिक कृत्यों में विलीन मनुष्यों को दिन रात उपदेश देकर धर्मशील, शांति प्रिय इत्यादि गुणयुक्त उक्त पूज्यवरों ने ही किया है ॥ ३९ ॥

नास्त्यस्मात्स धर्म इति सत्यवचो मुनीश!
धृत्वा जिनं हृदि जना द्विषमुत्क्षिपन्ति ।
दृश्यो गतान् जिनपरान् भवतो जनान्स्व
न्त्वामुद्वहन्ति हृदयेन यदुत्तरन्तः ॥ ४० ॥

हे मुनिराज ! धर्म धर्मी में रहता है यह शास्त्र सिद्धान्त सत्य
कारण कि, जिनेन्द्र को आत्मसात् करके मनुष्य स्वर्ग तक नहीं
सिद्धिशिला तक पहुंच जाते हैं इसीसे जिनेन्द्र में तल्लीन तथा अ
अन्तर्धान हुए आपको संसारसागर को पार करने की इच्छा व
मनुष्य हृदयङ्गम करते हैं ॥ ४० ॥

हित्वा हृदिस्थितमनोरथसर्वगर्वा
स्तद्धीनधर्मवपुषो भवतो निधाय ।
भव्यो जनस्तरति संसृतिमेव सम्यग्
यद्वाद्दतिस्तरति यज्जलमेव नूनम् ॥ ४१ ॥

सांसारिक जीव अपने अन्तःकरण से मनोरथ और अ
कार को दूर कर वीतराग, धर्ममात्र शरीर वाले आपको ही, हृ
में रखकर इस संसार से पार होते हैं, जैसे कि, वायु के प्रभाव
मशक भी अगाध जल से पार पा लेती है ॥ ४१ ॥

श्रीमन्तमेव हृदये निदधाति यस्मा
त्तस्माज्जनो दिवमुपैति मतं ममैतत् ।
उड्डीयते दिवि सदा पृथु पार्थिवं य-
च्चान्तःस्थितस्य मरुतः स किलानुभावः ॥ ४२ ॥

यदि जीव स्वर्ग तक पहुंचते हैं तो वे निस्सन्देह पूज्यचरण
की मनोमंदिर में प्रतिष्ठा करते हैं, ऐसा मेरा मत है क्योंकि, उ

तिक पदार्थ आकाश में उड़ता है सो उसमें स्थित वायु का ही
ात्र है न कि, उस पृथुल पदार्थ का ॥ ४२ ॥

क्रोधादिषड्रिपुगणं विनिहत्य नूनं
शान्तिं वितत्य च भवान्सुरमत्यशेत ।
लोकोऽमुना विजित इत्यपि किं विचित्रं
यस्मिन् हरप्रभृतयोऽपि हतप्रभावाः ॥ ४३ ॥

आपने इस लोक को जीत लिया, इसमें कौन बड़ी आश्चर्यज-
क बात है कारण कि, आपने अन्तः करणस्थ उन क्रोधादि शत्रु-
ओं को जीतकर और शान्ति का विस्तार कर देवों को नीचा दिख-
ाया जिन (क्रोधादि) से हरिहर प्रभृति भी पार न पासके ॥४३॥

आकीटकैटभरिपुर्दमनेन यस्य
दीनो नु भामिनिपदं सभयं ह्युपास्त ।
कान्तानिदेशवशतः कपितां समाप ।
सोऽपि त्वया रतिपतिः त्तपितः त्तणेन ॥ ४४ ॥

जिस कन्दर्प के दर्प से कीट से लेकर विष्णु तक दीन बनकर
स्त्री की सभय चरणसेवा करते हैं और स्त्री की आज्ञा बजाने
में बंदर बन जाते हैं उसी दुर्दान्त दंभी काम को आपने पल भर
में भ्रष्ट कर दिया ॥४४॥

कामादयः समभवन् जगदाश्रयासाः
पाशा इवेह सततं नृपशून् ववन्धुः ।
कीलालमेव हि भवान् भविभिः सुलब्धो
विध्यापिता हुतभुजः पयसाऽथ येन ॥ ४५ ॥

काम वगैरह संसाररूपी आश्रय को हड़प जाने वाली अग्नियें हैं इन्हों ने पाश के समान अपनी देदीप्यमान ज्वालाओं से नर पशुओं (अज्ञानियों) को लिपटा रक्खा था. लेकिन आपको शीतलजल के समान पाकर मनुष्यों ने उन कामाग्निओं को बुझा डाला ॥ ४५ ॥

कामं जलं वदतु काममपीह कामी
त्वां वाऽनलं वदतु नैव तथापि हानिः ।
निर्वापयत्यनलमेव जलं न वेत्तु ।
पीतं न किं तदपि दुर्धरवाडवेन ॥ ४६ ॥

विषयी लोग भले ही काम को जल और आपको अग्नि समझें तो भी इसमें हानि नहीं, सर्वत्र जल ही आग को बुझाता है ये उनका मानना भ्रम मात्र है, कारण कि, बडवा नाम की अग्नि जलको भस्म करदेती है ॥ ४६ ॥

उड्डीयतेऽनिलरयेण रजस्तदेव
नाऽऽसादितेह रजसा गुरुता च येन ।

मत्प्राणरेणव इहाऽऽश्रयतस्त्वदीयात्
स्वामिन्ननल्पगरिमाणमपि प्रपन्नाः ॥ ४७ ॥

वायु के वेग से वही धूलि उड़ सकती है जिसमें भारीपन न आया हो किन्तु हमारी प्राणरूपी धूलि आपको आत्मसात् करने में भारी हो चुकी है इसीसे हे स्वामिन् ! इन काम क्रोधादि रूप वायु से वह धूलि उड़ नहीं सकती ॥ ४७ ॥

ये शीर्णपर्णनिभसूक्ष्मतरा नरास्ते
धूता भवन्तु मदकामसमीरणैश्च ।
नीता भवन्तु गुणगौरवमादधानं
त्वां जन्तवः कथमहो ? हृदये दधानाः ॥ ४८ ॥

अहंकार व कामरूपी वायु उन्हीं को उड़ा सकती है, जो मनुष्य सूखे हुए पत्ते के समान एक दम हलके हैं लेकिन गुणों की गुरुता को धारण करने वाले पुज्य चरणों को जो मनुष्य हृदय में धारण करते हैं उन्हें उक्त वायु उड़ा नहीं सकती ॥ ४८ ॥

पूज्याऽनुराग इह भक्तिरतो विमुक्ति-
रेवं हि कार्यकरणं सुधियो वदन्ति ।
विद्युत्प्रशक्तिमिति युक्तिमवेत्य भक्ता
जन्मोदधिं लघु तरन्त्यतिलाघवेन ॥ ४९ ॥

पूज्य के चरणों का अनुराग ही भक्ति कहलाता है एवं भक्ति से ही मुक्ति होती है इस प्रकार का कार्यकारण भाव विद्वान् लो कहते हैं, इसीसे विजलीकीसी शक्ति वाली उक्त युक्ति को जान क अविलंब से ही भक्त जन जन्मरूपी महासागर को पार करते हैं ॥ ४६ ॥

सन्तो भवन्त इह नो विषयानभिन्दन्
संखेदयन्ति हृदयानि परासवोऽपि ।
ते चैव सम्प्रति न नो हृदयात्प्रयान्ति;
चिन्त्यो न हन्त! यदि वा महतां प्रभावः ॥ ५० ॥

इस संसार में रहते हुए आपने हमारे प्रिय विषयों को हमसे छुड़ाया और स्वर्ग में जाकर वियोगरूपि दुःख खड़ा करदिया, इस तरह भारी विरोध करने पर भी हमारा हृदय आपको छोड़ता नहीं, इसीसे सिद्ध होता है कि, महान् आत्माओं का (सत्पुरुषों का) प्रभाव अचिंतनीय है ॥ ५० ॥

संवीच्य दिक्षु जनतापदपापलीना
नस्मान्दुरुद्धरतरान् कृपया गतोऽसि ।
त्वं क्रोधनःकथमभूरिति विस्मयो नः
क्रोधस्त्वया ननु विभो! प्रथमं निरस्तः ॥ ५१ ॥

दिशाओं में पापमलिन एवं दुराकिल से उद्धार करने योग्य लोगों को दुख आप खिसलाकर यहां से चलते बने किन्तु आप के कोरन में क्योंकर आगये यही हमें आश्चर्य होता है कारण हे विभो ! क्रोध को तो आप प्रथम ही जीत चुके थे ॥ ५१ ॥

आचार्यवर्य ! भवताऽपि वतापि रोषो
शेषो न चेत्यदपि सत्यममुष्य लेशः ।
नो चेद्वयं विरहिता रहिता हितौघै
र्ध्वस्तास्तदा वद कथं किल कर्मचौरा ॥ ५२ ॥

हे आचार्यप्रवर ! खेद की बात है कि, पूर्ण रूप से तो नहीं कुछ अंश में आप भी क्रोध की धमकी में आगये यदि ऐसा न तो हितविमुख एवं दीनहीन हम लोगों को छोड़कर आप में न चले जाते और अशुभ कर्मरूप चोरों का सर्व नाश न डालते इसका उत्तर आप ही दें ॥५२॥

आस्तां वितर्कविधिरेष न रोषलेशः
श्रीमत्सु शान्तिसहिताऽस्त निरीहतैव ।
सैवाऽजहाद्द्रुमततीर्हिमसंहतिर्हि
प्लोषत्यमुत्र यदिवा शिशिरापि लोके ॥ ५३ ॥

अथवा इस तर्क वितर्क को कल्पना मात्र ही रहने दो, आपमें तो का लेश मात्र भी न था, सिर्फ शान्ति के साथ थोड़ी निरी

(तमाम आशाओं का अभाव) थी वही बेगर्जी हम लोगों को छोड़ कर स्वर्ग चले जाने में कारण हुई क्योंकि, शीतल भी हिम वृक्षसमूह को जला कर खाक कर डालता है ॥ ५३ ॥

दुर्दान्तषड्रिपुपुरातनकर्मचौरा
श्चूर्णीकृतास्तव सुशान्तिनिरीहिताभ्याम् ।
दाह्यानि दावदहनैर्दहतीह तानि
नीलद्रुमाणि विपिनानि न किं हिमानी ॥ ५४ ॥

अदम्य क्रोधादि छः शत्रुओं और पुराने चोर कर्म को आपकी अटल शान्ति और निरभिलाषिता ने चूर २ कर दिया, कदाचित् संदेह हो कि, अत्यन्त मृदु तथा शीतल शान्ति ने वज्र का काम कैसे किया तो इसका निवारण यों है कि, बन के भयंकर अग्नि से (दावाग्नि) भस्म होने योग्य उन हरे भरे वृक्षों को हिमसंहति (हिम की अधिकता) भी जला देती है ॥ ५४ ॥

यस्योपदेशमवसाय विहाय मोहं
सोऽहं विदन्ति च वदन्ति जगन्ति तत्त्वम् ।
यस्य प्रभावमधिगन्तुमचिन्तयँश्च
त्वां योगिनो जिन ! सदा परमात्मरूपम् ॥ ५५

हे जिनेन्द्र ! जिस पूज्यवर के उपदेश से योगी लोग मोह

ो छोड़ कर 'सोऽहं सोऽहं (मैं वही हूं) तत्व को समझते और
रते हैं उस पूज्यवर के आत्मप्रभाव को जानने के लिये परमात्म-
प,आपका ध्यान करते हैं ॥ ५५ ॥

तं पूज्यवर्यमविचार्य गतं द्युलोकं,
सद्योऽनवद्यमतिहृद्यमनाप्य भक्ताः ।
त्वां त्वत्पदे जिन ! निरस्य तमेवलोकाः
अन्वेषयन्ति हृदयाम्बुजकोशदेशे ॥ ५६ ॥

विना विचारे स्वर्ग में सिधारे हुए, दूषण रहित, गुण रूप
पण सहित उस पूज्यवर को न पाकर हे जिनेन्द्र ! आपको ध्यान
ान (हृदय) से निकाल कर भक्त अब उन्हीं पूज्य चरणों की खोज
हैं ॥ ५६ ॥

आसादयेप्सितपदं शिवमस्तु वर्त्म
सुस्वागतं समुचितं दिवि ते विभातु ।
पूज्य ! स्वपुण्यकिरणैरवलोकयास्मान्
पूतस्य निर्मलरूचेर्यदि वा किमन्यत् ॥ ५७ ॥

हे पूज्य ! आप अपना अभिष्ट पद प्राप्त करें, आपके लिये मार्ग
गलमय हो,स्वर्ग में आपका समुचित स्वागत खूब धूमधाम से हो.
पने पुण्य प्रकाश से हम लोगों को भी कर्तव्य मार्ग बतलावें
ारण कि, पवित्र एवं निर्मल कान्ति से इतना मांगना पर्याप्त है ॥

भूतस्तिरोहितवपुर्दिवि संगतोऽपि
पूज्य ! प्रभाविन उपैधय साधुमार्गान् ।
आत्मा हृषीकमिव शक्तिमृते किमन्य
दत्तस्य सम्भवपदं ननु कर्णिकायाः ॥५८ ॥

हे पूज्य ! जिस प्रकार आत्मा इन्द्रियों को चैतन्य शक्ति देत है वैसे ही स्वर्गसिधारे हुए आप भी इस साधुमार्गी संप्रदाय को कर्तव्य शक्ति दो कारण कि, हृदय की शक्ति के बिना इन्द्रियां नकामयाब ही होतीं हैं ॥ ५८ ॥

देवाधिदेव ! जिनदेव ! तदेव नाम
ध्यानं सुदेहि मुनिभक्तमनोजनेभ्यः ।
यस्मात्सुपूज्यवरसुन्दररूपमीपी
ध्यानाज्जिनेश ! भवतो भविनः क्षणेन ॥ ५६ ॥

हे देवाधिदेव भगवान् जिनेन्द्र ! मुनिभक्त, साधुमार्गी जनता को वह ध्यान दो जिससे आपके रूप के साथ २ पूज्यवर का भी सुन्दर स्वरूप दीख पड़े ॥ ५६ ॥

अस्मिन्ननादिनिधने भुवि भूरिशोके
तद्ध्यानतो मम दृशं समुपेतु पूज्यः ।
लोकाः सुरानपि यतोऽप्यतिशेरते स्म
देहं विहाय परमात्मदशां व्रजन्ति ॥ ६० ॥

सदा से आते हुए, मृत्युकारक तथा शोक वाले इस संसार में
चरणों का हम उस ध्यानसे दर्शन करें जिस ध्यान से साधारण
भी देवताओं को पराजित करते और शरीर छोड़ने पर
आत्मस्वरूप में लीन होते हैं ॥ ६० ॥

पूज्य ! त्वदीयगुणचिन्तनमस्मदादीन्
संशोध्य शुद्धमनसो विदधातु तद्वत् ।
यादृक् कठोरमुपलं कनकत्वमेति
तीव्रानलादुपलभावमपास्य लोके ॥ ६१ ॥

हे पूज्य! आपका गुणगान हमको ठीक वैसे ही शुद्ध बनादे
प्रकार तीव्र अग्नि पत्थर की कठोरता को छुड़ा कर उसे निर्मल
बना देती है ॥ ६१ ॥

गृह्णन्ति ये तव सुनाम वदन्ति भावं
सम्यक् स्मरन्ति रमणीयवपुः सदैव ।
तेऽपि त्वदीयगुणगौरवमाप्नुवन्ति
चामीकरत्वमचिरादिव धातुभेदाः॥६२॥

हे स्वामिन् ! जो मनुष्य आपका नाम रटते हैं, आपके अभि-
से वाणी को पवित्र तथा निर्मल करते हैं और आपके रम-
स्वरूपका सदा स्मरण करते हैं वे भी आपके गुणगौरवको प्र

सन्त्वत्र सुन्दरतराणि मुखानि भूरि
सर्वाणि किन्तु निजकृत्यपराङ्मुखानि ।
तत्पूज्यकृत्यसुमुखं सुजनाः स्मरन्ति
एतत्स्वरूपमथ मध्यविवर्तिनोऽपि ॥ ६५ ॥

इस संसार में सुन्दर मुख क्रोड़ों की तादाद में हैं, किन्तु सब
सब अपने कर्त्तव्य से विमुख हैं मात्र कर्त्तव्य में तत्पर हे पूज्य !
आपका ही स्वरूप था जिसका भूलोकवासी सज्जन सदा स्मरण
करते हैं ॥ ६५ ॥

सम्प्रत्यसाम्प्रतमितो ह्यभवत्सुपूज्य
प्रस्थानमत्रभवतो विबुधा वदन्ति ।
स्वस्वाऽग्रहग्रहगृहीतसुविग्रहे के
यद्विग्रहं प्रशमयन्ति महानुभावाः ॥ ६६ ॥

वर्त्तमान समय में इस लोक से स्वर्ग को सिधारना यह आपने
चमुच उचित नहीं किया ऐसा ही सभी विचारशील मनुष्य
हते हैं क्योंकि, अपने २ आग्रह (हठ) रूप ग्रह से मचे हुए
ड़ाई झगड़ों को कौन मिटा सकेगा कारण कि, आपके समान
हानुभाव ही उसका शमन कर सकते हैं ॥ ६६ ॥

जाते दिवं त्वयि विभो ! सकला जनाशा
जाता विनाशमभितोऽस्तपदावकाशा ।

आशास्ति ते गुणगणेन गुणीकृतश्चै
दात्मा मनीषिभिरयं त्वदभेदबुद्ध्या ॥ ६७ ॥

आप के स्वर्ग चले जाने पर हम लोगों की तमाम आशायें निराशा के रूपमें मिलकर नष्ट भ्रष्ट होगयीं हैं सिर्फ एक ऐसी आशा शेष रही है जिससे आपकी अभेदबुद्धि द्वारा आपके ही गुणों से अपनी आत्मा को विद्वान् गुणसंपन्न बना सकेंगे ॥ ६७ ॥

पूज्य त्वदीयकृपया प्रतिमास्तवैव
लब्धा विभान्ति प्रतिशान्तिधनाः सुपूज्याः ।
तद्ध्यानतद्गुणकरं प्रवदन्ति यस्माद्
ध्यातो जिनेन्द्र! भवतीह भवत्प्रभावः ॥ ६८ ॥

हे पूज्य ! आपकी परमकृपा से आपके समान ही शान्त दान्त तथा अगाध मतिवैभव वाले पूज्य मिलगये हैं, ध्येय (जिसका ध्यान किया जाय) के गुण ध्याता (ध्यान करने वाले) में आजाते हैं ऐसी लोकोक्ति है, इसीसे हे पूज्य ! आपका ध्यान करने से आपका प्रभाव होना ही चाहिये था ॥ ६८ ॥

ध्यानं धरातलजुषां विदितप्रभावं
ध्येयानुकूलफलमालभतेऽत्र योगी ।
स्वस्यामरत्वमभिकांक्षिगदातुराणां
पानीयमप्यमृतमित्यनुचिन्त्यमानम् ॥ ६९ ॥

सांसारिक जीव ध्यान के प्रभाव को खूब समझते हैं कि, ध्यान-
के योगी ध्येय के अनुकूल (जिसका ध्यान किया जाय उसीके
अनुसार) अभीष्टफल को प्राप्त करते हैं, इसीसे ही अपने अमरत्व
(सदा नीरोगिता) को चाहने वाले रोगियों के लिये जलभी अमृ-
तव होजाता है ॥ ६६ ॥

यो मासपूर्वमवदो बहु नो हितार्थं
स त्वं स्मृतोऽपि शुभदो भव भव्यमूर्ते ! ।
तिष्ठन्स्मृतोऽपि गरुडोऽहिरदष्टवानां
किं नाम नो विषविकारमपाकरोति ॥ ७० ॥

मास दो मास पहिले आप अनेक प्रकार के हितोपदेश दिया
करते थे, अतः अब स्मरण किये गये भी आप शुभदायी हो कारण कि,
गरुड़ सर्प के काटे हुए का विष प्रत्यक्ष होकर उतारता है तो क्या
स्मरण करने से विष विकार को दूर नहीं कर सकता ? ॥७०॥

निन्द्यो निरक्षर इति प्रथमं त्वनिन्दन्
त्वच्छान्तिशीलविधिना विगतप्रभावाः ।
निन्दन्ति तच्चरितमात्मगतं स्तुवन्ति
त्वामेव वीततमसं परवादिनोऽपि ॥ ७१ ॥

जो झूठे प्रतिवादी प्रथम आपकी निन्दा किया करते थे वे ही
आपकी अटल शान्ति के प्रताप से प्रभावहीन होकर अपने

निन्द्य एवं व्यर्थ जीवन की निन्दा करते, आत्मा को कोसते
अतीत पर पश्चात्ताप करते हुए अज्ञान को दूर करने वाले आ
मुक्तकंठ से प्रशंसा करते हैं ॥ ७१ ॥

येऽपि त्वदीरितपथाऽन्यपथप्रवृत्ता
स्त्वद्देवदेवनमपोह्य परं भजन्ते।
तेऽपि त्वदीरितगुणाकृतिमन्तमेव
नूनं विभो ! हरिहरादिधिया प्रपन्नाः ॥ ७२ ॥

जो मनुष्य आपके बतलाये हुए मार्ग को छोड़कर दूसरे
में प्रवृत्त हैं एवं आपके आराध्य देव की वन्दना न कर दूसरे
हृदयङ्गम करते हैं; हे विभो ! वे भी मनुष्य केवल हरिहर आ
की बुद्धि से आपके ही बतलाये हुए गुण तथा आकार को
करते हैं ॥७२॥

येषां मतावतिविपर्यय एव जातो
येषां न वा मतिरभूत्तव ते प्रतीपाः।
पीतोऽथ सन्नपि जनैर्विदितोऽस्ति नान्धैः
किं काचकामलिभिरीश ! शितोऽपि शंखः ॥ ७

जिनकी बुद्धि उलटे रास्ते बह गई थी या जो ज्ञानसे ही
थे वे ही आपके विरुद्ध चलते थे; क्योंकि, अंधे के लिये गौजूा

त का अस्तित्व नहीं है और जिनकी आखों में कामला रोग
ा है उन्हें सफेद भी शंख सदा पीला ही दीखता है ॥ ७३ ॥

यस्ते निदेशमधरद्धृदये न जन्तु
र्मन्तुर्न तस्य यदसौ श्रवणेन हीनः ।
दृष्टं न किं नु भवता बधिरैर्हितोऽपि
नो गृह्यते विविधवर्णविपर्ययेण ॥ ७४ ॥

जिस मनुष्य ने आपके उपदेश को हृदय में अंकित नहीं किया
का कुछ भी अपराध नहीं है कारण कि, उसके कान ही नहीं थे,
र (कानों से बहरा) मनुष्य अपने हित की बात को भी नहीं
झता, कदाचित् समझ भी ले तो उलट पलट समझता है ॥ ७४ ॥

वर्षर्तुवारिदनिभेऽम्बवमृतं वचस्तद्
वर्षत्यरं त्वयि मयूरनिभा जनौघाः ।
हर्षप्रकर्षमविदन् मुदमाप धर्मो
धर्मोपदेशसमये सविधानुभावात् ॥ ७५ ॥

वर्षा ऋतु का मेघ जिस प्रकार जल बरसाता है ठीक उसी तरह
आप वचनामृत की झड़ी लगा देते थे, तब जनता मयूरों के
त अनिर्वचनीय आनंद को प्राप्त होती थी और अपनी समीपता
र धर्म भी फूला नहीं समाता था ॥ ७५ ॥

संयोगमप्रियमवाप्य प्रियाद्वियोगं
चेत्खिद्यते यदि भवद्धृदयं त्वया तत् ।
माऽसज्जि जीव निकरेऽतिनिदेशतोऽस्मा
दास्तां जनो भवति ते तरुरप्यशोकः ॥ ७६ ॥

" तुम्हारा हृदय यदि अप्रिय के संयोग से और प्रिय के वियो
से दुखी होता हो तो तुम भी किसी जीव को कष्ट मत दो, प्राणी मा
को आत्म भाव से देखो और बन पड़े वहां तक दया देवी का हृद
में आह्वान करो ,, इस प्रकार का आपका उपदेश सुनकर मनुष्य ही
नहीं किन्तु वृक्ष भी वीतशोक हो जाया करते थे ॥ ७६ ॥

श्रीमद्वचोदिनकरे सदसि द्युलोके
सिंहासनोदयगिरेरुदिते जनानाम् ।
चेतोरविन्दमभिनन्दति किं विचित्र
मभ्युद्गते दिनपतौ समहीरुहोऽपि ॥ ७७ ॥

सिंहासन रूपी उदयाचल–पर्वत से सभा रूपी विशाल आकाश
में आपके वचन रूपी सूर्य का जब उदय होता था, तब चारों तीर्थों के
हृदय कमल एक दम खिल उठते थे, इसमें आश्चर्य ही क्या है, कारण
कि, सूर्योदय में समस्त संसार ही जग जाता है ॥ ७७ ॥

श्रीमत्सुशान्तिमतिभानुविधुप्रकाशे
आसीत्प्रकाश इह जीवहृदोऽवकाशे ।

किं चित्रमत्र तपनं तपति प्रशोकः
किं वा विबोधमुपयाति न जीवलोकः ॥ ७८ ॥

आपके शांति रूप चंद्र तथा ज्ञानरूप सूर्य के प्रकाश से चारों
ओं के हृदयाकाश में प्रकाश हुआ है, इसमें आश्चर्य की कौनसी
है; एक ही सूर्य के उदय होने से क्या वह समस्त संसार बोध
प्राप्त नहीं होता ? ॥ ७८ ॥

जाते तव प्रवचने तपनेऽत्र लोके
हर्षन्ति सर्वसुमनांसि विनिस्तमांसि ।
सूर्याख्यपुष्पमिव दुर्जनचित्तमेकं
चित्रं विभो ! कथमवाङ्मुखवृन्तमेव ॥ ७९ ॥

आपके वचन रूपी सूर्य के उदय होने पर कमलों के समान
जनों के हृदयों में प्रसन्नता छागई, लेकिन सूर्यपुष्प (सूरजमु-
खी) के समान सिर्फ दुर्जनों का मन अधोमुख ही रहा यही
आश्चर्य है । ७९॥

हित्वा भुवं दिवमुपेतुमितः प्रयाते
श्रीमत्यवर्णनगुणाः सुरसंभ्रमोऽभूत्
दध्वान दुन्दुभिरगायत मञ्जु हाहा
विष्वक् पतत्यविरला सुरपुष्पवृष्टिः ॥ ८० ॥

इस लोक को छोड़कर जब स्वर्ग के लिये आपका प्रयाण हुआ था, तब देवों का संभ्रम (अतिथिसत्कार में कुतूहल) अवर्णनीय था, जैसे कि, देवदुंदुभियों से स्वर्ग गूंज रहा था, गंधर्वों का मधुर गायन मोहित कर रहा था तथा चारों ओर निरंतर मंदार के पुष्पो की वृष्टि होरही थी इत्यादि २ (उत्प्रेक्षा) ॥८०॥

पूज्य ! त्वदीयगुण अर्पितदृष्टिपातः
पातोऽप्यतप्यततदैव हृदो वियोगे ।
धर्तुं गुणांस्तव लसन्ति मनांसि नूनं
त्वद्गोचरे सुमनसां यदि वा मुनीश ! ॥ ८१ ॥

हे पूज्य ! आपके गुणों को देखते ही राहु हृदयशून्य होकर अत्यन्त दुखी हुआ, कारण कि, आपके दर्शन होते ही देवताओं का हृदय गुण ग्रहण करने में अपूर्व उत्साह दिखलाता है (राहुका नाम लोकोक्ति है)॥८१॥

वन्हिप्रभे भवति दृष्टिपथे प्रयाते
एनांसि पापिनि भवन्ति समिन्धनानि ।
भस्मीभवन्त्यसुमतां भुवि तत्कृतानि
गच्छन्ति नूनमध एव हि बन्धनानि ॥ ८२ ॥

अग्नि के समान जाज्वल्य मान प्रभा वाले आपके दृष्टिमार्गमें आ

हुए पापियों के पाप सूखी लकड़ी के समान भस्म होजाते हैं, इसीसे उन पापों द्वारा प्राप्त बंधन भी छिन्न भिन्न होजाते हैं ॥८२॥

जाते दिवं त्वयि निराश्रयतां गताया
निर्व्याजशान्तिधृतिबुद्धिदयाक्षमायाः ।
हृत्कम्पतापकरुणार्द्रविलाप आस्ते
स्थाने गभीरहृदयोदधिसम्भवायाः ॥ ८३ ॥

आपके गंभीर हृदय-समुद्र से उत्पन्न स्वाभाविक शांति, धृति, बुद्धि दया तथा क्षमा के हृदय में कंपन, संताप और सकरुण-क्रंदन होरहा है; सो युक्त है, क्योंकि, वे सब की सब आपके स्वर्ग पधारने से आश्रय हीन होचुकी हैं ॥ ८३ ॥

जाने जनो भुवि सदाल्पगुणाभिधानो
ब्रूते हरिं गिरिधरं मुरलीधरं हि ।
पीयूषयूषमिव सद्वचनं ततोऽमी
पीयूषतां तव गिरः समुदीरयन्ति ॥ ८४ ॥

ऐसा मालूम होता है कि, संसार में मनुष्यमात्र का यह स्वभाव सा होगया है कि, बड़े से बड़े को छोटे से छोटा पुकारना, जैसेकि, गोवर्धन पर्वत-को धारण करने वाले हरि को मुरलीधर कहते हैं ऐसे ही आपकी वाणी यद्यपि अमृत का मावा (सार) है तोभी उसे अमृत समान ही बोलते हैं ॥८४॥

पूज्य ! त्वदीयवचनारचना विचित्रा
पीयूषयूषमिव नः श्रवसोरसिञ्चत् ।
तां चाधरीकृतसुधामधुमाधुरीं स्मः
पीत्वा यतः परमसंमदसंगभाजः ॥ ८५ ॥

हे पूज्य ! आपकी वचन रचना मनोहर एवं अलौकिक हमारे कानों में मानो सदा अमृत का मावा (सार) बरसाया थी, इसीसे सुधा तथा मधु की माधुरी की अवहेलना करने उस आपकी वाणी को श्रवण पुटों से पीकर हम अब तक भी द में हैं ॥८५॥

केचिद्व्रजन्ति यशसा स्तुतिपात्रतान्तु
केचिद्रणे जयरमां महसा लभन्ते ।
युष्मादृशं हि सहसा समुपास्य धीरं
भव्या व्रजन्ति तरसाऽप्यजरामरत्वम् ॥ ८६ ॥

हे विभो ! कई एक यश से स्तुति पात्र बन बैठते हैं और एक बल प्रयोग से युद्ध में जय को प्राप्त करते हैं, किन्तु आप धीर की उपासना करने वाले सब से उच्च अजरामरत्व–पद पहुंचते हैं ॥ ८६ ॥

नम्रास्त्वदीयचरणे सुरसुन्दरीणां
कम्राः प्रयान्ति सुरसद्म तथैव जीवाः ।

लङ्कां गता इह यथा पवनात्मजाताः
स्वामिन् ! सुदूरमवनम्य समुत्पतन्तः ॥ ८७ ॥

हे स्वामिन् ! आपके चरणों में जो मनुष्य नम्र होते हैं वे
वैसे ही देवाङ्गनाओं को मोहित करने वाला रूप प्राप्त कर
भर में स्वर्ग जावे हैं जैसे कि, रामचन्द्रजी के चरणों में नम्र
र तुरन्त मारुति (हनुमान्) लंका में पहुंचा था ॥ ८७ ॥

स्वः संगते त्वयि विभो ! दिविषत्प्रसादाः
अस्मादृशा ककुभि ते बहुलीभवन्ति ।
एवं हि वालनिकरान्मुहुरा किरन्तो
मन्ये वदन्ति शुचयः सुरचामरौघाः ॥ ८८ ॥

हे विभो ! आपके स्वर्ग जानेपर देवताओं की प्रसन्नता हमारे
न दसों दिशाओं में पर्याप्त फैल रही है, मानो यही संदेश देते
देवताओं के चामर अपने शुभ्रबालों को आकाश में इतस्ततः
र रहे हैं ॥ ८८ ॥

तेऽस्मिन् जनेऽमरपुरे मुदमाप्नुवन्ति
लप्स्यन्त आपुरभितः सभयत्रये च ।
संमोहयन्ति जनतां परिमोदयन्ति
येऽस्मै नतिं निदधते मुनिपुङ्गवाय ॥ ८९ ॥

वे ही मनुष्य इस लोक में तथा परलोक में तीनों काल आनं
पाते हैं, संसार को अपने अधीन कर सकते हैं तथा प्राणीमात्र व
प्रसन्न बना सकते हैं जो मनुष्य मुनिपुंगव—आपको नमस्कार कर
हैं ॥ ८९ ॥

पूज्याङ्घ्रिपद्मजपरागसुरागितान्तः
स्वान्ता भवन्ति मनुजा हि नितान्तशान्ताः ।
तस्मादव्रजन्ति वृजिनं परिवर्ज्य जीवा
स्ते नूनमूर्ध्वगतयः खलु शुद्धभावाः ॥ ९० ॥

पूज्यश्री के चरण कमलों के पराग से जिन मनुष्यों का अंत
करण रंगा गया है, वे ही मनुष्य एकांतशांत मनोवृत्ति वाले हे
हैं इसीसे तमाम पापों का क्षयोपशम कर एवं शुद्धात्मा होकर स्व
सिधारते हैं ॥ ९० ॥

धर्मानुरक्तदुरितादिविरक्तभक्त
भूषामणीनिव गुणान् परिवर्धयन्तम् ।
पूज्यं परासुमपि दृग्स्थितमेव मन्ये
श्यामं गभीरगिरमुज्वलहेमरत्नम् ॥ ९१ ॥

धर्मानुरागी तथा पापादियों में विरागी ऐसे भक्तरूप भूषण
मणिरूप गुणों की वृद्धि करने वाले शांत एवं गंभीर वाणी बोल

ौर स्वर्ण के नगीने सरीखे श्याम वर्ण-पूज्यश्रीजी को अपने
ाे सामने उपस्थित ही देखता हूं ॥ ६१ ॥

कारुण्यनीरधरमुत्तममात्मविज्ञं
चारित्र्यभूमिगुणसस्यविशेषशेकम् ।
हर्षन्ति सर्वसुजनाः शरणं विलोक्य
सिंहासनस्थमिह भव्यशिखण्डिनस्त्वाम् ॥ ६२ ॥

करुणारूप जल से भरे हुए तथा चरित्र रुपी भूमि में गुणरुपी
को उचित रीतिसे सींचने वाले ऐसे आत्म ज्ञानी, उत्तम
तथा सिंहासन पर बैठे आपको निहार कर समस्त सज्जन रुपी
हर्षित होते हैं ॥ ६२ ॥

ज्ञानासिमेत्य शुभकर्म तनुत्रितं च
पाखण्डखण्डनपरं सुकृताजिशूरम् ।
अर्हद्गिरं भुवि भवन्नमतान्द्रियार्था
मालोकयन्ति रभसेन नदन्नमुच्चैः ॥ ६३ ॥

धर्म युद्ध में ज्ञान तलवार को पकड़ कर शुभकर्मों का कवच
ेन कर पाखंड मत खंडन शूर, अतिन्द्रिय अर्थ युक्त—अर्हद्
ाी को वीरवचनों में बोलते हुए आपको सभी प्रसन्न हो होकर
ते हैं ॥ ६३ ॥

अगाधलक्ष्मी सम्पन्न आपने भोगोचित अवस्था (जुवानी में जो संसार का त्याग किया सो ही वास्तविक त्याग कहलाता है अन्यथा धन के नष्ट होजाने तथा इन्द्रियों के शिथिल पड़जाने प तो बुद्धिमान् से बुद्धिमान् को भी वैराग्य होजाता है ॥ ६८ ॥

उन्मादवातममताविपदादिचिन्ता
सन्तानशामकनिदानमतिं सुपूज्यम् ।
यद्यात्मचिन्तनरसे रसिकाः स्थ यूयं
भो ! भो !! प्रमादमवधूय भजध्वमेनम् ॥ ६९ ॥

हे संसार के उपासको ! यदि आत्मचिन्तन रूपी रसके रसि बनना चाहते हो तो प्रमाद की जड़ उखाड़ो और उन्माद, ममत तथा अनेक विपत्तियों के दूर करने में कृतहस्त बुद्धि वाले पूज्य आराधना करो ॥ ६९ ॥

ध्यानादिसम्बलयुता शिवमार्गगा भो !
आधेःकदम्बबहुजर्जरिता गुणज्ञाः ।
सज्जीभवन्तु कुरुते ह्यनुहूतिमेतु
मागत्य निर्वृतिपुरीं प्रति सार्थवाहम् ॥ १०० ॥

हे ध्यानादि पाथेय (रास्ते में खाने के लिये बनाई हुई वस्तु वालो मोक्षमार्ग के पथिको ! तथा मानसिक दुःखों से दुखियो !

मुक्ष मनुष्यो ! आपको मोक्षपुरी में लेजाने को पूज्यश्री बुलारहे हैं अतः शीघ्र ही मोक्षगामी संघ में सम्मिलित हो जाओ ॥ १०० ॥

नो प्राणिपीडनमथो न च दुष्टवाक्यं
नो चौर्यमाचरत चारु समाचरध्वम् ।
संश्रूयते दिवि गतोऽपि भवान् यथाप्रा-
गेतान्निवेदयति देव ! जगत्त्रयाय ॥ १०१ ॥

तुम सब किसी भी जीव को कष्ट मत दो, असंस्कृत (दुष्ट) भाषा को व्यवहार में मत आने दो, चोरी का आचरण मत करो सदा अपने आचार विचार को शुद्ध बनाओ इत्यादि जैसा कहा करते थे ज्यों का त्यों अब भी सुन पड़ता है । (यदि मनुष्य नाटक आदि की सीन सीनरी को दत्तचित्त तथा एक- होकर देखता है तो बहुत दिनों तक उसके सामने वही नज़ारा- (दृश्य) उपस्थित रहता है) ॥ १०१ ॥

प्रस्थानमाविरभवच्च तवेदमेत
दाकस्मिकं तु मुनिनाथ ! पयोदकाले ।
गर्जन्ति मेघनिवहाः सुजना विदन्ति
दंध्वन्यते तव मुदे सुरदुन्दुभिर्हि ॥ १०२ ॥

हे मुनिराज ! जब भी बादल गर्जता है तभी लोग सम-

उद्गीयमानयशसा दिवसद्य भाति
स्वेन प्रपूरितजगत्त्रयपिण्डितेन ॥ १०७ ॥

धर्म स्वरूप तथा रमणीय फल वाले कल्पवृक्ष द्वारा प्रकाशि
स्वर्ग भी गाया जाता है यश जिन्हों का और पूर्ण करदिये हैं तीन
लोक जिन्होंने ऐसे आपके वचनों से ही शोभित होता है ॥१०७

मानी धनी स्वमतिमन्थितशास्त्रराशि
दीसीकृतेतरजनोऽपि विधर्षितस्ते ।
प्रोद्यन्मरीचिनिचयेन भवन्मुखेन
कान्तिप्रतापयशसामिव सञ्चयेन ॥ १०८ ॥

धनी, अभिमानी, निज बुद्धि द्वारा शास्त्रों को विलोडन कर
वाले तथा दूसरे जीवों को दास बना लेने वाले मनुष्य
कान्ति, प्रताप और यश इन तीनों के समूह के समान देदीप
मान है तेजः पुंज जिसमें ऐसे आपके मुख को देख कर प्रसन्न
जाते थे अर्थात् उन मनुष्यों में उक्त दोष नहीं रहते थे ॥ १०८

त्वत्पादसेवनसुधा प्रददाति सौख्यं
तन्नैव नैव लभते गुणिनां प्रमुख्य ! ।
एवं वदन्ति कवयो नृपमन्दिरेण
माणिक्यहेमरजतप्रविनिर्मितेन ॥ १०९ ॥

पधारे हुए आपके चरणों के स्पर्श से अत्यन्त पवित्र एवं सुशोभि
मंदारमाला नमस्कार करते हुए इन्द्र की और भी अधिक सुशोभि
होती है ॥ १११ ॥

स्वर्गापवर्गसुखरत्नचये वदान्यं
सम्पन्नभूपनिवहाश्चरणौ पतन्ति ।
त्वच्छुद्धबोधमभिचित्तमभीप्सवस्त्वद्
उत्सृज्य रत्नरचितानपि मौलिबन्धान् ॥ ११२ ॥

स्वर्गापवर्ग सुखरूपी रत्न समूह के देने वाले आपके अनंत
ज्ञान को हार्दिक सन्मान देते हुए तथा मन में आपके शुद्ध-बोध
लेने की इच्छा वाले राजालोग रत्नजटित मुकुटों को अलग
आपके चरणों पर पड़ते हैं ॥ ११२ ॥

संसारतापपरितप्तचितो जना हि
मिथ्यात्वमोहगदजर्जरिता मुनीन्द्र ! ।
आप्तुं सुखानि भुवनेऽभयदावुदारौ
पादौ श्रयन्ति भवतो यदि वा परत्र ॥ ११३ ॥

हे मुनिन्द्र ! संसार के त्रिविध तापों से संतप्त एवं मिथ्य
रोग से पीडित मनुष्य उभयलोक में सुख की कामना से
तथा अभयप्रद आपके चरणों का आश्रय लेते हैं ॥ ११३ ॥

हस्त्यश्वयानमणिजातसुखाङ्गमन्यद्
वाराङ्गनादिकृतगीतमभिप्रपन्नाः ।
ये चैहलौकिकसुखे निरतास्त एव
त्वत्सङ्गमे सुमनसो न रमन्त एव ॥ ११४ ॥

जो मनुष्य हाथी, घोड़े, रथ और रत्नादिक सम्पत्ति के सुख मग्न होकर तथा वैश्या आदि के विलास और गीतों में आशक्त केवल ऐहिलौकिक सुख को ही जानते एवं मानते हैं हे नाथ! ही मनुष्य आपके संगसे प्रसन्न नहीं हैं ॥ ११४ ॥

वीरप्रभोर्वचनमानसमस्ति शस्तं
नीरं सदक्षरतरङ्गसुभक्तिरत्र ।
तीर्थारविन्दमिह तत्र निवासिहंसः
त्वं नाथ! जन्मजलधेर्विपराङ्मुखोऽसि ॥ ११५ ॥

हे नाथ! अक्षररूपी जल वाले एवं भक्तिरूप तरङ्गों से ङ्कित तथा साधु, साध्वी, श्रावक, श्राविका इन चारों तीर्थकमलों मण्डित, भगवान् वीरप्रभु के वचनरूपी मानस-सरोवर में दा विहार करने वाले राजहंसरूपी आप जन्म-समुद्र से विरुद्ध मानस-सरोवर में रहने वाला राजहंस खारी जन्म- द्रों दूर रहता है, यह स्वभावसिद्ध है ॥ ११५ ॥

ज्ञानक्रियातरणिरूपमतिर्मतोऽसि
जन्मादिशम्बरविपत्तितरङ्गरूपात् ।
संसारसागरनिभादुचितं त्वमेव
यत्तारयस्यसुमतो निजपृष्ठलग्नान् ॥ ११६ ॥

जन्मरूपी गहरे जल वाले तथा विपत्तिरूपी कुटिल तरङ्गं वाले भयंकर संसार-सागर से शरणागत जीवों को आप पार करते हैं सो उचित ही है, क्योंकि, ज्ञानक्रियारूपी नौका के सादृश बुद्धि वाले आप ही प्रसिद्ध हैं ॥ ११६ ॥

अस्मद्गुरोर्गणनिधेश्च दयैकसिन्धो
र्नित्ये परार्थनि वहार्पितजीवितस्य ।
सर्वातिशायिजिनतन्त्र उदारधी स्थं
युक्तं हि पार्थिवनिपस्य सतस्तवैव ॥ ११७ ॥

गुणनिधि, करुणा-सागर तथा परोपकार में समर्पित जीवन वाले हमारे पूज्य गुरुजी का उदार बुद्धि होना समुचित ही है क्योंकि, विशाल, सर्वजीव हितकारी तथा सर्वोत्तम जैनतन्त्रों में श्रीजी की ही मति परिपक्व थी ॥ ११७ ॥

सामान्यधीर्भवतु कर्म विपाकरिक्तो
जानाति नो य इह कर्म विपाकमेव ।

विज्ञाततत्त्वनिकुरम्बमुनीन्द्रचन्द्र !
चित्रं विभो! यदसि कर्मविपाकशून्यः ॥ ११८ ॥

जो जीव इस संसार में कर्म क्या वस्तु है और उसका विपाक क्या है ऐसा नहीं जानते हैं वे ही कदाचित् कर्म विपाक से (क्रियाजन्य फलेच्छा से) शून्य हो सकते हैं. किन्तु तत्व को जानने वाले आप भी कर्मविपाक से रहित हैं यही आश्चर्य है ॥ ११८ ॥

सत्प्रातिहार्यमपि यस्य सुरश्चिकीर्षुः
शेतेऽष्टसिद्धिरनिशं शयशायिनीव ।
नाथाच्यसे तदपि मन्दधिया जनेन
विश्वेश्वरोऽपि जनपालक दुर्गतस्त्वम् ॥ ११९ ॥

हे नाथ ! हे जनपालक ! जब आपकी नौकरी देवताभी बजाना चाहते हैं और आपके हाथों में आठों सिद्धियां सदा नृत्य सी करती रहती हैं. तब भी मन्दबुद्धि लोग आपको अकिञ्चन कहा करते हैं यह कितना आश्चर्य है ॥ ११९ ॥

आस्यं वशेऽस्ति रसनाऽपि वशंवदैव
लेखन्यखेदलिलिखुर्मसिपात्रमत्र ।
त्वामस्म्यहं लिखितुमुद्यत एव मूढः
किंवाऽक्षरप्रकृतिरप्यलिपिस्त्वमीश ! ॥ १२

हे नाथ ! मुख भी मेरे अधीन है, जिह्वा वशं वदा में है, लेखिनी आलस्य छोड़कर लिखना चाहती है मसी (स्याही) आदि साधन भी आधिक्य से मौजूद हैं और मैं भी लिखने को लालायित हूं तो भी आपको वर्णन नहीं कर सकता और न लिख सकता हूं इससे स्पष्ट जाना जाता है कि, आप अक्षरप्रकृति होकर भी उल्लेख में नहीं आ सकते ॥ १२० ॥

तस्त्रार्णवे विविधधर्ममणिव्रजस्य
निःशारणे कुशलसाविदलं न मूढः ।
अस्यां स्थितौ तव कृपानिकरैः सुशक्ति
रज्ञानवत्यपि सदैव कथं चिदेव ॥ १२१ ॥

शास्त्ररूपी अगाधसागर से अनेक प्रकार के धर्म-रत्नों को निकालने के लिये विचारशील मनुष्य ही समर्थ एवं कटिबद्ध होते हैं. मंदबुद्धि कोसों दूर भागते हैं. ऐसी विकट स्थिति में आपकी अतुल कृपा से वह शक्ति अज्ञानी जीवों में भी आवसी जिससे सर्व साधारण भी उक्त समुद्र से धर्मरूपी रत्नों को लूट रहे हैं ॥ १२१ ॥

अत्यन्तदुष्कृतिनिलीनमनाश्च साधु
द्रोही जिघांसुरपि जीवचयं त्वदीयम् ।

सान्निध्यसन्निधिमवाप्य जहौ स्वभावं
ज्ञानं त्वयि स्फुरति विश्वविकाशहेतु ॥ १२२ ॥

अत्यन्त पापमें मग्न देने वाले, साधु से द्वेष करने वाले, जीवों के
[illegible] करने की इच्छा वाले, महापातकी मनुष्य आपके सन्निधि
(समीपता) रूपी सन्निधि (शाश्वत खजाना) प्राप्त कर अपने
[illegible] स्वभाव का त्याग करते हैं. अतः विदित होता है आपका ज्ञान
[illegible]गत् के विकाश करने में देदीप्यमान तथा कृतहस्त था ॥१२२॥

मिथ्यात्वमोहकलुषाऽविलचेतनाशुद्
जन्तोर्यथा जलधरः पयसा जिन ।
प्रक्षालये द्वितमम्तव नाथ ! नाम
प्राग्भारसंभृतनभांसि तमांसि रोषात् ॥ १२३ ॥

जिस प्रकार धूलि से मलिन आकाश को गर्जना करता हुआ
[illegible]वीन जलधर (बादल) अपने जल से साफ कर देता है ठीक उसी
[illegible]कार आपका नाम भी मिथ्यात्व और मोह से मलिन बुद्धि वाले
[illegible]वों के हृदयाकाश को शुद्ध और साफ कर देता है ॥ १२३ ॥

मृत्योरहेःखगपतिः स्मरदन्तिसिंहो
लोभैनराजिमृगयुः शुचराग्निभानुः ।
हन्तीह नाथ ! दुरितानि तवाऽभिधान
मुत्थापितानि कमठेन शठेन यानि

मृत्युरूपी सर्प के लिये गरुड़, कामरूपी उन्मत्त हार्थ
लिये सिंह, लोभरूप मृग के लिये व्याध और शोकरूपी अं
रात्रि के लिये प्रचंड भानु के समान जो आपका नाम है
नितरां कमठ नामक शठ तापस से उठाये गये पापों को निस्स
नाश करने की शक्ति रखता है ॥ १२४ ॥

पाखण्डमण्डनपरैर्निजशक्तिसारै
रिच्छानुसारकृतिमेव विकाशयद्भिः ।
तीर्थादिसस्य उदवग्रहसाग्रहश्च
छायाऽपि तैस्तव न नाथ! हता हताशैः ॥ १२

अपनी प्रौढ शक्ति से पाखंड मत का मण्डन करने व
स्वेच्छाचार का विस्तार करने में कुशल एवं चारों तीर्थरूपी स
में वृष्टि को रोकने वाले दुर्जन हताश होकर आपकी छाया को
इधर उधर न कर सके ॥ १२५ ॥

कुड्येऽश्मराजिरचिते सविधास्थितास्तै
र्लोष्ठैर्विघट्य सहसा प्रतिवर्तितैश्च ।
चेष्टा हतो भवति तत्कपटैस्तथैव
ग्रस्तस्त्वमीभिरयमेव परं दुरात्मा ॥ १२६ ॥

र प्रकार पत्थर की दृढ बनी हुई दीवार पर कोई जोर

र पटके तो वह पत्थर दीवार से टकरा कर उलट पटकने वाले
ह पर जा लगता है उसी तरह दुर्जनों के किये हुये उत्पातों से
न ही नष्ट हुए ॥ १२६ ॥

साभ्रेऽह्नि संभ्रमविहीनधियैव धीमन् !
धर्म्यं वचस्तव मुखाद्बहिराजगाम ।
गर्जद्गुरु प्रतिभटं च तिरश्चकार
यद्गर्जदूर्जितघनौघमदभ्रभीमम् ॥ १२७ ॥

वर्षा ऋतुमें संभ्रमके बिना ही आपके मुख से निकले हुए
र्मरूपी मधुर वचन जोर से गर्जने वाली काली घटाको तिरस्कार
रते थे अर्थात् मेघकी मंद एवम् मधुर ध्वनि से भी आपकी
ाणी विशेष मधुर थी ॥ १२७ ॥

स्वान्तप्रशान्तरसिका वशिका सभासु
तारापथे च तव गीः प्रणिनाद मेघम् ।
गम्भीरतारगुणजाततया जिगाय
भ्रश्यत्तडिन्मुसलमांसलघोरनादम् ॥ १२८ ॥

अत्यन्त शान्तमन वाले रसिकों को वशमें करने वाली
आपकी मधुर वाणी जब सभा मंडप में घूमती हुई आकाश को
प्रतिध्वनित करती थी तब चकमकाती हुई बिजली वाली, मुसल-
धार जल वर्षाने वाली नील घन-घटा भी शर्माती थी ॥ १२८ ॥

गर्वोर्जितात्ममकरध्वजनाशदक्षः
सत्पक्षमाक्षिपति पक्ष इनो विपक्षः ।
पार्श्वप्रभुर्व रिपुणोक्तमसौ सुसोढा
दैत्येन मुक्तमथ दुस्तरवारिदध्रे ॥ १२६ ॥

अहंकार से जिसकी आत्मा उन्नत है ऐसे काम को नष्ट करने में कृतहस्त, सत् पक्ष में झूठे आक्षेप करने वालों के प्रबल विरोधी पूज्य श्री ठीक वैसे ही दुर्जनोंकी दुष्ट वाणीरूपी वर्षा को एक चित्त से सहते थे जैसे कि, दैत्यों द्वारा वर्षाये हुए जल को श्री पार्श्वप्रभु बड़ी शान्ति से सहते थे ॥ १२६ ॥

वाग्वारि योऽत्र विततार मलीमसात्मा
मालिन्ययुक्तमधिसाधुमुदैव सेहे ।
दाताऽऽप तापमभितोऽभिहितेन वक्तु
स्तेनैव तस्य जिन ! दुस्तरवारिकृत्यम् ॥ १३० ॥

हमारे पूज्य श्री पर मलिन आत्मा दुष्टों ने जो वाणीरूपी जल को वर्षाया उस कठोर वाणी-वर्षा को पूज्य श्री ने बड़ी खुशी से सह लिया, किन्तु वर्षा करने वाले बाद में संतप्त हुए और बोलने वालों को उन दुष्ट वचनों से निकले हुए विषयुक्त जल को पीने का फल मिला ॥ १३० ॥

प्राग्जन्मसञ्चितसुपुण्यविभावतश्चेत्
साधानवद्यमभिगद्य न खिद्यतेऽसौ ।
मृत्वा व्रजिष्यति यमालयमाविषीदन्
ध्वस्तोर्ध्वकेशविकृताकृतिमर्त्यमुण्डः ॥ १३१ ॥

अगर साधुओं की निन्दा करने वाला पूर्वजन्म के इकट्ठे किये हुए पुण्योदय से दुःखी न हुआ तो भी केशों के उखाड़ने से विकृताकार तथा दुःखी होता हुआ वह मनुष्य अवश्य ही नरक में पड़ेगा ॥ १३१ ॥

निन्दाऽभिनन्दितधियां दुरितक्षयाय
कालिन्ददिष्टपुरुषैः परुषैः समिद्धः ।
जिह्वेन्धनो धमतिनो विकलं करोति
आलम्बभृद्भयदवक्त्रविनिर्यदग्निः ॥ १३२ ॥

जो मनुष्य सदा दूसरों की निन्दा करना ही अपना कर्तव्य समझते हैं उन्हें पापों से मुक्त करने के लिये धर्मराज की आज्ञा से भयानक यमदूत उक्त मनुष्यों की जिह्वा में आग लगा देते हैं जिससे वह आग उनके मुखों से बड़ी २ ज्वाला रूप से निकलती है और उन्हें भस्मसात् करती जाती है ॥ १३२ ॥

नाथ ! त्वदीयहितदेशनतः सनाथ
तिष्ठन् तिरोहिततनुस्तरुमौलिलीनः ।
तत्याज्य तूर्णमपिसाथ परेतयोनिं
प्रेतवृजः प्रतिभवन्तमपीरितो यः ॥ १३३ ॥

हे नाथ ! आपके हितोपदेश से सनाथ-वृक्ष की सघन शाखाओं में शरीर को छिपा कर बैठे हुए प्रेत भी आप के प्रति भक्ति प्रेरित होकर तथा आपको आत्मसात् करके प्रेतयोनी से मुक्त होते हैं ॥ १३३ ॥

यैः प्राज्ञमानिनिवहैर्भवतोपदेशः
प्रत्तः कृतो न निजकर्णगतोऽभिमानात् ।
तस्माद्विरुद्धविधिमाविदधे विरोधात्
सोऽस्याऽभवत्प्रतिभवं भवदुःखहेतुः ॥ १३४ ॥

अपने को ही पण्डित मानने वाले जो लोग आपके दिये गये अमृतमय उपदेश को कानों द्वारा नहीं पीते थे प्रत्युत विरोधी होकर उपदेश से विपरीत आचरण करते थे उनके जन्म २ के लिये वह विरोध दुःख का कारण बन बैठा है ॥ १३४ ॥

सद्वाक्यरत्ननिचयं व्यतरन् जनेभ्यो
ज्ञानप्रभावगुणगौरवगुम्फिताश्च ।

ध्यायन्ति धीरधिषणास्त्वामिव प्रभुं चेत्
धन्यास्त एव भुवनाधिप! ये त्रिसन्ध्यम् ॥ १३५ ॥

सुन्दर वाणी रुपी रत्न समूह को लेकर सारी जनता को देने ज्ञान एवम् प्रताप से सुशोभित जो विद्वान् आपके समान कालों में परमेश्वर का ध्यान करते हैं वे भी धन्य हैं ॥ १३५ ॥

सुज्ञानदर्शनचरित्रपवित्रचित्तं
यत्सर्वजन्मितरणिं शरणं प्रपद्य ।
दुष्टाष्टकर्मरिपुमोचनसिद्धहेतु
आराधयन्ति सततं विधुतान्यकृत्याः ॥ १३६ ॥

सम्यक् ज्ञान, सम्यक् दर्शन तथा सम्यक् चारित्र से जिन्होंने को पवित्र किया है और प्रतिपक्षी (शत्रु) आठों कर्मों के ने के प्रधान कारण तथा प्राणीमात्र को भवसागर से पार करने ौका के समान परमेश्वर को तल्लीनता से जो भजते हैं वे धन्य इतना पूर्व श्लोक से जानना) ॥ १३६ ॥

आबालवृद्धयुवकायधराऽविशेषाः
प्राप्तस्त्वदीयवचनार्थमुदाद्यशेषाः ।
न्यस्ताप्तजीवसुलभात्रिविधार्त्तिलेशा
भक्त्योल्लसत्पुलकपक्ष्मलदेहदेशाः ॥ १३७ ॥

बालक, वृद्ध, युवा एवम् समस्त प्राणधारी जीव आ
सारगर्भित वचन-जन्य अर्थज्ञान से हर्षित हुए तीनों प्रकार
दुःखों को त्याग कर भक्ति से रोमाञ्चित देह वाले हो
हैं ॥ १३७ ॥

शास्त्राब्धिगूढहृदयार्थविदः समन्ता
ज्जीवादितत्त्वनिकरे परमार्थविन्दाः ।
तेऽप्यालपन्ति भवदुःखविनाशहेतु
पादद्वयं तव विभो ! भुवि जन्मभाजः ॥ १३८

शास्त्ररूपी समुद्र के छिपे हुए हृदयरूप अर्थ को जानने व
जीवादि तत्वों को प्राप्त करने वाले, प्राणी भी आपके चरणों
सांसारिक दुःखों के दूर करने का कारण ही कहते हैं ॥ १३

जन्मान्तताम्बुविषयपङ्कवितर्षगर्ते
गर्वोर्मिजन्ममकरस्वकषाष्टकर्म ।
पाषाणदम्भविशदेऽवनिमज्जतोऽस्मान्
अस्मिन्नपारभववारिनिधौ मुनीश ! ॥ १३९ ॥

हे मुनिराज ! जन्म तथा मरणरूपी जल वाले, विषय
भयंकर तृष्णा ही है भंवर जिसमें, अहंकार की तरंगों से यु
जीव ग्राहों से भरे हुए बन्धुवर्ग है मीन जिसमें, आठों कर्म

तों से विषम तथा दम्भ से वृद्धि प्राप्त ऐसे दुस्तर भवसागर
बते हुए हम लोगों की रक्षा करो ॥ १३९ ॥

विश्राणने विमलवैश्रवणेन तुल्यो
धर्मादितत्त्वनिचयस्य वदान्यकस्त्वम् ।
शाणायमानधिषणः सकले प्रतीतो
मन्ये न मे श्रवणगोचरतां गतोऽसि ॥ १४० ॥

दान में कुबेर सदृश, धर्म्मादि तत्त्व प्रदान में शाण समान
वाले तथा जगत्प्रसिद्ध भी आपको मैं नहीं जान सका (यही
चक्रमयी अज्ञता का नमूना है) ॥ १४० ॥

संग्रामवह्निभुजगार्णवतिग्मशास्त्रो
न्मत्तेभसिंहकिटिकोटिविषाक्तवाणाः ।
दुष्टारिसंकटगदाः प्रलयं प्रयान्ति
आकर्णिते तु तव गोत्रपवित्रमन्त्रे ॥ १४१ ॥

युद्ध, अग्नि, विकराल सर्प, दुस्तर समुद्र, तीखे शस्त्र, उन्मत्त
, भयंकर सिंह, उद्धत सूअर, विषालिप्त वाण, दुष्टात्मा शत्रु,
और रोग ये सब उसी क्षण में नष्टप्राय हो जाते हैं, हे नाथ !
आपका नाम रूपी पवित्र मन्त्र सुनलेते हैं ॥ १४१ ॥

चिन्तानितानजननान्तविनाशहेतौ
कल्पद्रुमे त्वयि सुसिद्धिसमानरूपे ।

हृत्पद्मसद्मवसिते भविनां मुनीन्द्र !
किंवा विपद्विषधरी सविधे समेति ॥ १४२ ॥

चिन्ता समूह को तथा जन्म मरण को नाश करने वाले कल्पवृक्ष के समान अष्टसिद्धि स्वरूप आप जब जनता के हृ सरोज में निवास करते हैं, हे नाथ ! तब क्या विपत्तिरूपी विषधरी—नागिन पास आसकती है ? ॥ १४२ ॥

पीयूषयूषसमशान्तिनितान्तपुष्टो
हृष्टः सदा धनगणैश्चरणप्रभावात् ।
नो विस्मरामि शुभतत्वगृहीतकोऽहं
जन्मान्तरेऽपि तव पादयुगं मुनीश ! ॥ १४३ ॥

अमृत के मावा समान सरस शान्ति से पुष्ट तथा आपके चर के प्रताप से धन ध्यानादि से संतुष्ट एवं तत्त्वग्राही हम आपके चरणयुगलों को जन्मान्तर में भी नहीं भूल सकेंगे ॥ १४३ ॥

विश्राणनश्रमितशीलतपोव्रतस्य
सुध्यानयोगशमसंयमसिद्धशुद्धेः ।
कस्यापि शुद्धचरणं तव चाप्यसद्यो
मन्ये मया महितमाहितदानदक्षम् ॥ १४४ ॥

अभयदान तथा सत्पात्र दान में तत्पर, शील एवं तप

ारक, शुक्ल ध्यान तथा संयमादि से युक्त ऐसे किसी महापुरुष के
वित्र चरणों को जन्मान्तर में आत्मसात् करके ही अभीष्टप्रद,
मर्थ एवं जगत्पूजित आपके चरणकमलों को प्राप्त किया है ऐसी
ारी प्रबल धारणा है ॥ १४४ ॥

श्रीमत्सु सत्सु न हि दुःखमवाप चास्मान्
यातेषु खं प्रतिनिधीन् समयज्ञसुज्ञान् ।
ज्वाहीरलालशर्मिनः प्रददत्सु नाणु
स्तेनेह जन्मनि मुनीश ! पराभवानाम् ॥ १४५ ॥

हे मुनिराज ! आपके रहते हुए हमें दुःख का अनुभव नहीं
तथा आपके स्वर्ग सिधारने पर अवश्य देश, काल, क्षेत्र एवं
के जानकार प्रबल पण्डित श्री १००८ श्री जवाहिरलालजी
ाज को आप अपने स्थानापन्न कर गये हैं, इससे वर्तमानभव में
ा पराभूत नहीं हो सकते ॥ १४५ ॥

काव्यप्रणीतिजनितानवकीर्त्तिदूत्या
आहूतिनीतमतिरद्य भवद्विभूतेः ।
प्राप्तोऽपवादपदभागभिसारिकाया
जातो निकेतनमहं मथिताशयानाम् ॥ १४६ ॥

काव्य बनाने से पैदा हुई नवीन कीर्तिरूपी दूती के बुलाने
मत होकर पूज्यप्रवर श्रीजी की विभूतिरूप अभिसा...

या हुआ है जिससे अब ध्यान से आपका साक्षात्कार होजाया गा ॥ १४८ ॥

युष्मत्पदानुगमने भविनां मनीषा
उत्कण्ठयन्ति रमयन्ति सदादिशन्ति ।
कृत्वाऽखिलं परिकरं गमनोत्सुकञ्च
मर्माविधो विधुरयन्ति हि मामनर्थाः ॥ १४९ ॥

आपका अनुसरण करने की इच्छा भव्य जीवों को उत्कण्ठित ी है, प्रसन्न करती है एवं सब प्रकार से आज्ञा देती है इसीसे भी आपका अनुसरण करने को सब तरह की तैयारियें करली न्तु मर्मभेदी अनर्थ (पाप) ही मुझे बारंबार रोक रहा १४९ ॥

स्युस्त्वाद्विधा बहुविधा विबुधाः सुशान्ता
स्त्वां वीक्ष्य मानवशिरोऽर्चितपादपीठम् ! ।
आहेयभोगानिभभोगभुजा निरस्ताः
प्रोद्यत्प्रबन्धगतयः कथमन्यथैते ॥ १५० ॥

अनेकों विद्वानों ने आपको समस्त जनमस्तकों से पूजित चरण देखा, ये सब आपके समान शान्तात्मा बनना चाहते न्तु बन न सके वे सांसारिक भोगों को भोग कर सर्प के मूर्च्छित हो चुके थे, जिससे उन्हें पछाड़ खानी पड़ी

के आदेश से हमने मलिन आशय वालों के अपवाद से युक्त
को प्राप्त किया है ॥ १४६ ॥

यो भाव आविरभवत्तव चिद्वियत्तो
भास्वत्प्रभाव इव तेन तमो निरस्तम् ।
त्वद्भावभावितजनैरिह ते प्रतीपै
र्नूनं न मोहतिमिरावृतलोचनेन ॥ १४७ ॥

हे नाथ ! जो भाव आपके मनोव्योम में प्रचण्ड भास्कर
समान प्रकट हुआ उस तेजोमय भाव के प्रताप से आपके अनुया
मनुष्यों के हृदयपटल पर जो मोहमय अन्धकार था सो ए
एक नष्ट होगया परन्तु आपके विपक्षचारियों की आंखें मोह
चकाचौंध गयीं जिससे उनके हृदयाकाश का मोहान्धकार दूर
होसका ॥ १४७ ॥

ज्ञातः सतोऽमितहितोऽत्र भवान् महीतो
दृष्टिं मतो नहि भवेदिति नैव कष्टम् ।
ख्यातो भविष्यसि यतो हि जनैर्वियुक्तः
पूर्वं विभो ! सकृदपि प्रविलोकितोऽसि ॥ १४८ ॥

सुतरां सज्जनों के हितकारी, परमपूज्य आप इस संसार से
पधार गये अतः अब आपका साक्षात्कार दुर्लभ होगया है, तोभी
इस बात की विशेष चिन्ता नहीं; कारण कि, आपका प्रथम दर्शन

या हुआ है जिससे अब ध्यान से आपका साक्षात्कार होजाया
रेगा ॥ १४८ ॥

युष्मत्पदानुगमने भविनां मनीषा
उत्कन्ठयन्ति रमयन्ति सदादिशन्ति ।
कृत्वाऽखिलं परिकरं गमनोत्सुकञ्च
मर्माविधो विधुरयन्ति हि मामनर्थाः ॥ १४९ ॥

आपका अनुसरण करने की इच्छा भव्य जीवों को उत्कण्ठित
रती है, प्रसन्न करती है एवं सब प्रकार से आज्ञा देती है इसीसे
मैं भी आपका अनुसरण करने को सब तरह की तैयारियें करली
परन्तु मर्मभेदी अनर्थ (पाप) ही मुझे बारंबार रोक रहा
॥ १४९ ॥

स्युस्त्वाद्धिधा बहुविधा विबुधाः सुशान्ता
स्त्वां वीक्ष्य मानवशिरोऽर्चितपादपीठम् ! ।
आहेयभोगनिभभोगभुजा निरस्ताः
मोधप्रबन्धगतयः कथमन्यथैते ॥ १५० ॥

अनेकों विद्वानों ने आपको समस्त जनमस्तकों से पूजित चरण
देखा, ये सब आपके समान शान्तात्मा बनना चाहते
किन्तु बन न सके वे सांसारिक भोगों को भोग कर सर्प के
मूर्च्छित हो चुके थे, जिससे उन्हें पछाड़े खानी पड़ी

अन्यथा कुल तैयारीयां करने पर भी वे वैसे (आपके समान
क्यों न बने ॥ १५० ॥

भावाऽवबोधविधुराय निरक्षराय
द्रव्याधिपाय च समृद्धिविवर्जिताय ।
सर्वेभ्य एव समबोधमदाः सुपूज्य !
आकर्णितोऽपि महितोऽपि निरीक्षितोऽपि ॥१५१

आप श्रुत–श्रवणगोचर थे, पूजित-समस्तलोकमान्य थे
दृष्ट–देखे गये थे इसीसे आपने भेदभाव को एक ओर छोड़
विद्वानों, मूर्खों, धनियों तथा निर्धनों को समान ज्ञान दिया जिस
आप पूर्ण समदर्शी थे ॥ १५१ ॥

दीने दयार्द्रहृदयः परमस्त्वमासी
र्हृद्यो दरिद्रनिवहः परमस्तवासीत् ।
यातो यतो दिवमवैमि च निर्धनेन
नूनं न चेतसि मया विधृतोऽसि भक्त्या ॥ १५२

हे पूज्य ! दीन दुःखियों के लिये आपका हृदय सदा दया
रहता था और दरिद्रियों ने आपको आत्मसात्कर लिया था, इत
होनेपर भी आप स्वर्ग में चले गये इससे स्पष्ट विदित होता है कि
परमदरिद्री मैं आपको हृदय में स्थान न दे सका–अपना न स
पश्चात्ताप !!! ॥ १५२ ॥

दैवेन मे हि विमुखेन भवन्तमद्य
हृत्वा हृतं मम हृदो वद किं न सद्यः।
किं वाऽधिकेन मम शर्मविभिन्नमर्म
जातोऽस्मि तेन जनबान्धव! दुःखपात्रम् ॥ १५३ ॥

हमारे प्रतिकूलवर्ती दैवने आपको हरकर हमारा क्या नहीं लिया यह आपही कहें, अधिक क्या कहें, हमारा शर्म—कल्याण (शुभ) भिन्नमर्म हो चुका है जिससे हे प्राणिमात्र के बन्धो ! न हम दुःख के भाजन बन बैठे हैं ॥ १५३ ॥

सम्प्रत्यसाम्प्रतबहुच्छलदम्भयुक्त
स्तद्दीनसाधुपथवर्त्तिनमाक्षिपन्ति ।
रक्ष प्रभो! बहुदुरक्षरवर्षतोऽस्मात्
त्वं नाथ! दुःखिजनवत्सल! हे शरण्य! ॥१५४॥

हे प्रभो ! इस समय कपट पटु अनेकों दंभी लोग निष्कपटी साधुमार्गी जैन समाज की हंसी उड़ाते हैं अतः हे नाथ ! हे दीन बन्धो ! हे भक्तवत्स ! हे शरणागतप्रतिपालक ! उन दुष्टाक्षरों बरसाने वालों से रक्षा करो ॥ १५४ ॥

नाथ! त्वदीयचरणे विनयेन युक्ता
मत्प्रार्थनेयमधुना सफलैव कार्या ।

स्यादस्मदादिहृदयं शुभभावलिप्तं
यस्मात्क्रियाःप्रतिफलन्ति न भावशून्याः ॥ १५५ ॥

हे नाथ ! आपके चरणों में हमारी यह सविनय प्रार्थना अब युक्त है-उचित है अब इसे आप सफल करें और हमारे अन्तःकरणों को शुभ भावों से भावित-संस्कारित बनावें कारण कि, भावशून्य (श्रद्धाविहीन) क्रियाएं फलतीं नहीं; वे व्यर्थ होती हैं ॥ १५५ ॥

स्वास्मिन्निवाशु बहु पूरय शान्तिपूण्य
कारुण्यशास्त्रनिवहैर्मम मानसानि ।
मन्मानसाऽश्रमदमाशु विवर्त्तयेश !
कारुण्यपुण्यवसते ! वशिनां वरेण्य ! ॥ १५६ ॥

हे ईश ! हे संयमियों में श्रेष्ठ ! हे करुणा और पुण्य के निवास भवन ! अपनी आत्मा के समान हमारी आत्मा को भी उन्नत बनादो अर्थात् हमारे हृदयों में भी शान्ति, पुण्य, दया एवं शास्त्र समूह को कूट २ कर भरदो और हमारे अन्तःकरण में जो मद है उसे उलटदो अर्थात् दम (बाह्यवृत्तियों से मन को रोकना) करदो अथवा मद की उन्नति को रोक कर उसका ह्रास करदो ॥ १५६ ॥

सन्तु प्रपूर्णमनसो वचसा विनाऽपि
स्यात्केवलेन मनसाऽपि समेष्टसिद्धिः ।
भारो न ते यदि सचेत्तदपीह सार्थो
भक्त्या नते मयि महेश! दयां विधाय ॥ १५७ ॥

" तुम सब पूर्ण मनोरथ होवो " यदि आप ऐसा कहने का
न भी उठाकर केवल हमारे अभ्युदय को आप मनमें ही विचार
करें तोभी हमारी अभिलषित सिद्धि हो सक्ती है, भक्ति से नम्र
रे जैसे भक्तों में दया करना आपका कर्तव्य है कोई बोझा नही
लो यदि बोझा भी है तो निष्प्रयोजन नहीं सप्रयोजन है ॥ १५७ ॥

चेखिद्यते जनमनः कलिखेदतश्च
श्रीमद्वियोगप्रभवात्परिभावतश्च ।
हित्वाऽधुना सुखनिदानसमाधिमाशु
दुःखाङ्कुरोद्दलनतत्परतां विधेहि ॥ १५८ ॥

विकराल कलिकाल जन्य दुःख से तथा श्री चरणों के वियोग
आविर्भूत परिभव द्वारा इस समय समस्त मनुष्यों के अन्तः
दुःखमय हो रहे हैं अतः आत्मा का सुख साधन कर
धी छोड़कर हमारे दुःखांकुरों के दलन में कटिबद्ध हो
१५८ ॥

जन्मान्तरीयकलुषार्तजनार्तिहारि
भावत्कभव्यभवनं दुरितप्रहारि ।
आसाद्य प्रीतिनिकरं समुपैति भोगी
निःसख्यसारशरणं शरणं शरण्यम् ॥ १५६॥

भवान्तर में किये हुए पापों से दुःखी जनों के दुःख दूर करने वाले, कल्याण—मंगल के उच्च भवन, दुरित विदारक एवं असहाय के सहाय आपके चरणों को पाकर सांसारिक जीव प्रसन्न होते हैं ॥ १५६ ॥

मन्ये स पापपरिपूरितचित्त आसीद्
दुर्दैवदेवनविलासनिवास एव ।
नाऽसादि येन सुखमङ्घ्रियुगं त्वदीय
मासाद्य सादितरिपुप्रथिताऽवदात्तम् ॥ १६० ॥

निःसन्देह यह मनुष्य घोर पापी एवं दुर्दैव का क्रीडास्थल था जो आपके सर्व सुखकारी चरणों को पाकर भी सुखी न व सका ॥ १६० ॥

अन्यत्कृतिप्रतिहितात्मतया न दृष्टो
दिष्टेन नष्टशुभकर्मचयेन दीनः ।
ध्यातोऽपि नैव नियतं च विवञ्चितोऽस्मि
त्वत्पादपंकजमपि प्रणिधानवन्ध्यः ॥ १६१ ॥

और और कार्यों में व्यग्र होने से तथा दुर्दैव से बाधित होने
मैं दीन हीन आपके पदारविन्दों का दर्शन न कर सका अथवा
न न करने पाया, अतः हे जगत्पावन ! मैं अवश्य ही छला
॥ ॥ १६१ ॥

त्वत्पादचिन्तनपरं प्रविहाय सर्वं
सम्प्रस्थितो यदि भवान्नहि मापवादीत्।
सम्प्रत्यपि प्रतिपलं भवता न गुप्तो
वन्ध्योऽस्मि तद्भुवनपावन ! हा हतोऽस्मि ॥१६२॥

सर्वस्व का बलिदान कर मात्र आपके ही शरणागत था परन्तु
आपने भी मुझे निराधार छोड़ बिना कहे बूझे परलोक सिधार
ये अब इस समय में यदि रक्षा न करोगे तो इस अनाथ का
सर्वनाश अवश्यंभावी है ॥ १६२ ॥

सर्वे भवन्तु सुखिनो गददैन्यमुक्ताः
सक्ताः परोपकृतिकार्यचये भवन्तु ।
जह्युःपरस्परविरोधमवाप्य मोदं
देवेन्द्रवन्द्य ! विदिताऽखिलवस्तुसार ! ॥ १६३ ॥

हे देवेन्द्रवन्द्य ! हे सकल पदार्थ तत्त्वज्ञ ! आपकी अतुल कृपा
आधिव्याधि एवं शोक से मुक्त होकर प्राणीमात्र सुखी हों सदा
रोपकार में लगें और प्रसन्न रहकर पारस्परिक विरोध को
१६३ ॥

विद्याऽनवद्यकृतिधर्मधनोन्नतीनां
मास्ते निदानमिति तां परिवर्धयस्व ।
त्वत्सेवकान् कुरु सुशास्त्ररसे रसज्ञान्
संसारतारक ! विभो ! भुवनाधिनाथ ! ॥ १६४ ॥

चारुक्रिया, धर्म, एवं धन आदि की उन्नति का मूल कारण सद्विद्या ही है, अतः विद्या को बढ़ाइये और सेवकों को शास्त्ररस के रसिक बनाइये ॥ १६४ ॥

संसारसागरसुसेतुमतिं विवेक
प्राग्भारपूरितकृतिहूदनीहिमाद्रिं ।
पूज्यं नवीनमतिदीनजने दयालुं
त्रायस्व देव ! करुणाहूद ! मां पुनीहि ॥ १६५ ॥

दुस्तर भवसागर में सेतु समान है बुद्धि जिनकी, विवेक संसार से पूर्ण क्रियारूप नदी के लिये हिमालय (नदी हिमालय से ही निकलती है) दुःखी जीवों में परमदयालु ऐसे हमारे नवीन पूज्य श्री जी की रक्षा आप करें ॥ १६५ ॥

ध्वान्तार्त्तजीवमिव भानुमुदन्ययार्त्तं
वारीव पन्नगगणार्त्तमिवाहिभोजी ।
यो मां जुगोप बहु गोप्स्यति पाति नित्यं
सीदन्तमद्य भयदव्यसनाम्बुराशेः ॥ १६६ ॥

आप हमारे उन नवीन पूज्य श्री की रक्षा करें जो अन्धकार पीड़ितों के लिये प्रचण्ड मार्तण्ड हैं, पिपासा कुलों के लिये शीतल जल हैं, विषधरों से काटे हुओं के लिये गरुड़ हैं एवं जिन्होंने अन्य व्यसनरूपी जल से भरे हुए इस अपार संसारसागर से रक्षा की, करते हैं और करेंगे ॥ १६६ ॥

शत्रुः प्रशाम्यति पराङ्मुखतां प्रयाति
सिंहाहिदन्तिमहिदारचयाश्च हिंस्राः ।
ध्यानं नितान्तसुखदं हृदये नराणां
यद्यस्ति नाथ ! भवदङ्घ्रिसरोरुहाणाम् ॥ १६७ ॥

हे नाथ ! यदि आपके चरणकमलों का ध्यान मनुष्यों के हृदय में है तो निस्सन्देह शत्रु स्वयं नष्ट होंगे अथवा भग जायेंगे सिंह, सर्प, हाथी आदि हिंसक जीव भी पराङ्मुख हो जायेंगे ॥ १६७ ॥

वक्तुं बृहस्पतिरसक्त इनोऽपि दीनः
शक्नोति नो बहुविशारदशारदाऽपि ।
अस्मादृशोऽल्पविषयस्तव किं गदामि
भक्तेः फलं किमपि सन्ततसञ्चितायाः ॥ १६८ ॥

एकान्त संचित की हुई जिस भक्ति के फल को समर्थ बृहस्पति भी नहीं कह सकता बहुत जानने वाली सरस्वती भी कहने को

अर्थैर्जनैर्हयगजैश्च समेधमानाः
भव्यैः सुधीभिरतितश्च बिवर्द्धमानाः
अन्ते समीप्सितपदं सततं ह्ययन्ते
ये संस्तवं तव विभो ! रचयन्ति भव्याः ॥ १७४ ॥

हे विभो ! जो भव्य जीव आपके इस प्रकार संस्तव (स्तुति) की रचना करते है वे निः सन्देह इस संसार में धनसे बन्धुओंसे, सुन्दर घोड़ों से, उन्मत्त हाथियों से युक्त बुद्धिमान् भव्य जीवों से वृद्धि गत अन्त में निश्चय से अभिलषित पद(मोक्ष) को प्राप्त करते हैं ॥ १७४॥

श्री

नकल रोबकार महकमें खास ब इजलास मुन्शी सुजानमल
या कामदार कुशलगढ ता. २१—९—९ इंस्वी
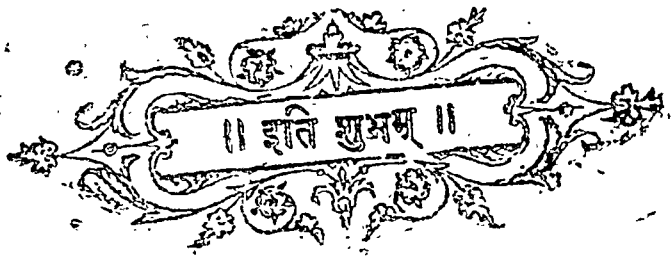
सिक्का

B. SUJANMUL
Kamdar of Kushalgarh

चुंके मोसम बारिश खतम होने आया और जंगलमें घासभी
होकर सुखने आगया है भील लोक अपनी कम कहमी से इलाके
के जंगल में आग याने (दवाइ) वे ज्यादती वाली मे लगादेते
जिस से की तमाम घास व सब किस्म की लकड़ी जलजाती है
इन्ही गरीब लोगों के गुजारे की बडी आधारकी चीज है और
होने से राजाको भी नुकसान होता है अवल भी इस अमर
[illegible] इन्तज़ाम रखनेलिये हुकम जारी हुवा है मगर इनसिनान
[illegible] इन्तजाम हुवा नहीं लिहाजा कवल अज गुजर जाने [illegible]
[illegible] के इस साल इन्तजाम होना मुनासिब लिहाजा

हुकम हुवा के

एक एक नकल रोबकार हाजा महकमे मालमें भेजकर लिख
के इस वक्त जमाबन्धी का काम शुरू है और हर देहात के
[illegible] वास्ते दस्तखत के जमाबन्धी महकमें माल में आते हैं
[illegible] वाले हर मुखिया गांव से इस बाबती जामीन [illegible]
[illegible] [illegible] पंचरा का लिया जावे के वो अपने [illegible]

गांव की हद के जंगल की पुरी निगरानी रखकर दावड़ न लगावें व न लगने देवे अगर दवाड़ ऊपर से आई तो फौरन तमाम गांव के लोग जमा हो बुझावे और जंगल या रास्तेमें तमाकु पीने वाले या दीगर अशखाश न आग न डालदें जिस से के आलोफैलकर जंगलमें नुकशान पहोंचानेका अहतमाल हो अगर इसमें किसी के जानीब से कसूर होगा तो उस से रुपे सदर तावान के वसूल किये जावेंगे और एक नकल रोबकार ताजा पुलिस में भेजी जावे और लिखा जावे के हर मुलिजमान पुलिसमें हिदायत की जावे के वो इस बातको पुरी निगरानी रखे याने दवाड़ के अमीनान चुड़ावाड़ व मोहकमपुरा व छोटा शरवा कारकून तावे शराके तरफ भेजी जावे और यह असल फाईल महकमे हाजा में वास्ते दाखला के रख्खा जाय फक्त

सिक्का

श्रीएकलिंगजी | श्रीराम

आवत

राजश्री जालोदा ठाकोर साहेब श्री दोलतसिंहजी

सुजश छोड्या मारी सीम मांही

री सीम में हरण व पंखेरु कोई मारे नहीं ना खाय ता उमर पीछे भी कोई मारे नहीं ।

द० प्यारचंद मालु का श्री रावला हुकमसुं
लिखा सं० १९६५ जेठ बुदी ३

श्रीरामजी ।

सावंत

ठिकाना साठोला में ई मुजब नहीं वेगा । रावतजी साहब श्री दलपतसिंहजी सादड़ी का पंच अरज करवा आया जीं पर छोड़ा। तालाव में मछली नहीं मारागां गजा पगु तलावठेपर तीतर आतो परगणामें कोई नहीं मारेगा और खास रावले का जानवरां के सिवाय हिरण रोज नहीं मारेगा और उपर लिख्या मुजब पर गणा में कोई मारेगा तो सजादी जावेगी सं० १९६५ जेठ सुद १० द० नरसिंही राजा हुजुररा हुकमसुं श्रावण कातीक वैशाख तीन महीना में जानवर मात्र नहीं मारेगा रुदीवरे सींवे नरसिंही राजा हुजुर रा केणासुं ।

नकल रोवकार महकमे खास व इजलास मुंशी सुजानमल
मांठीया कामदार कुशलगढ़ ता० २१-९-९ ई०

महोर छाप

B. SUJANMAL
KAMDAR OF KUSHALGARH

गांव की हद के जंगल की पुरी निगरानी रखकर दावड़ न ल
ग्न लगने देवे अगर दवाड़ ऊपर से आई तो फौरन तमाम ग
के लोग जमा हो बुझावे और जंगल या रास्तेमें तमाकु पीने व
या दीगर अशखाश न आग न डालदे जिस से के खालोफैल
जंगलमें नुकशान पहोंचानेंका अहतमाल हो अगर इसमें किसी
जानीब से कसूर होगा तो उस से रुपे सदर तावान के वसूल कि
जावेंगे और एक नकल रोबकार ताजा पुलिस में भेजी जावे अ
लिखा जावे के हर मुलिजमान पुलिसमें हिदायत की जावे के
इस बातको पुरी निगरानी रखे याने दवाड़ के अमीनान चुड़ाव
व मोहकमपुरा व छोटा शरवा कारकून ताये शराके तरफ भे
जावे और यह असल फाईल महकमे हाजा में वास्ते दाखला के र
जाय फक्त

सिक्का

श्रीएकलिंगजी

श्रीरामजी

नकल

राजश्री जालोदा ठाकोर साहेब श्री दोलतसिंहजी
इस मुजब छोड्या मारी सीम मांही

न में हरण व पंखेरु कोई मारे नहीं ना खाय ता उमर पीछे
ाई मारे नहीं ।

द० प्यारचंद मालु का श्री रावला हुकमसुं
लिखा सं० १९६५ जेठ वुदी ३

श्रीरामजी ।

सावंत

ठिंकाना साठोला में ई मुजब नहीं वेगा । रावतजी साहब
लपतसिंहजी सादड़ी का पंच अरज करवा आया जीं पर छोड़ा ।
तालाव में मछली नहीं मारागां गजा पगु तलावठेपर तीतर
ा परगणामें कोई नहीं मारेगा और खास रावले आ जानवरां
सेवाय हिरण रोज नहीं मारेगा और उपर लिख्या मुजब पर
ा में कोई मारेगा तो सजादी जावेगी सं० १९६५ जेठ वुद १०
० नरसिंही राजा हुजुररा हुकमसु श्रावण कातीक वैशाख तीन
हीना सें जानवर मात्र नहीं मारेगा रुदीवरे सींवे नरसिंही राजा
जुर रा केणासु ।

नकल रोवकार महकमे खास व इजलास मुंशी सुजान
चांठीया कामदार कुशलगढ़ ता० २१-९-९ ई०

महोर छाप

B. SUJAN

KAMDAR OF K

चुके ऐसा वजह हुआ के इलाके हाजा के हर देहात में भील लोग दशहरा पर पाडा मारा करते हैं और वो पाडे ऐसे जानवर हैं के जो खेती के काम में बजाय बैलों के मदद देते हैं तो ऐसे सैंकडों जानवर के एक दिन में हलाक होने से और हर साल पर नौबत पहोंचने से बेसुमार जानवरों के नाबुद होने में वहुत भारी नुकसान उन्ही लोगों को मालुम होता है पस मुनासिब कि ऐसे ना दुरुस्त और बेरहम तरीकेके जरिये जो सैंकडो जानवरों का नाश करने में बहस्त कोम कमहमी करते हैं उसके निस्बत उन को ऐसी समजुत दीजाय के वो अपनी इस भुल भरी हुई चाल का तरक कर ऐसे पाप के काम को हरगीज न करे बल्के पाड़ो की जान का बचाव करने में अपना फायदा समझे और शायद है के उनके उन खाम खयालीकों के जो पाडा एक देवी के भोगकी खातर हलका करते हैं वे वेप्रा होने से उनके जान माल की खैरहै मगर देवी को वो और तरीके से भोग दे सक्ते हैं। लेकिन इस रिवाज को कत्तई नाबुद करे ताके उन काम की बहुतही हो लीहाजा

हुक्म हुवा के

नक़ल इसकी माल आफीसर की तरफ भेजकर लिखा जावे के दशहरे के दिन पाड़ा हरगीज नहीं मारे अगर जिस किसी के जानीब से ऐसा होगा उस से रु० १५) तावान लिया जावेगा ऐसे मुचलके हर देहात के मुखीया तड़वी के लिये जाकर उनके दिल

म पुरा असर इस बात का कर दिया जावे के वो पाड़े के मारने
के रिवाज को व खुशी छोड़कर इसमें अपने फायदे का एतकार
र लेवे बनकल सारी पुलीस सुपरीन्टेन्डेन्ट की तरफ भेजकर
हरीर हो के इस बात के निगरार होके ऐसा बाकान गुजरे
क्योंकि यह एक सवाब का काम है इस में इसमें हर मुलामजीस
ने बादीली कोशीश करने में इसी साल इस बात का नतीजा जरुर
में आयेगा कि इस हुकम की तामील व पावबंदी रीयाया इलाके
राजा के जानीब से बा इतमीनान हुई तो निहायत दर्जे खुशी का
बायस होगा और एक एक नकल इसका बइनाय तामील मसन्दरे
बोहकम पुराव छोटी सरबा को भेजी जाकर बजी नहीं फाईल
में रहे । फक्त

सिक्का

.ज० कामदार कुशलगढ़.

हजुरी चेनाजी साकिन अमावली ई. मुजब सोगन कर्या मारा
हाथ सुं जनावर बिलकुल मारुं नहीं और घरे खाऊं नहीं माने
मारमुजारा सोगन है ।

द० जालमसिंह चेनाजी क

ठाकरां रुगनाथसिंहजी बगेली साकीन अमावली
मा भाई हरण, हुलो, तीतर मारुं नहीं खाऊं नहीं म
सोगन है । द० जालमसिंह रुगनाथसिं

गाम ननाणे पेटे

ठाकरां देवीसिंहजी गोड़ इण मुजब सोगन कर्या मारा हाथसुं जानवर मातर नहीं मारुं माने चारभुजारा सोगन है कसाई लोगाने बेचणे नहीं देऊं ।

द० ठाकरां देवीसिंहजी द० जीतमल का

ठाकरां दलेसिंहजी जोड़ भोमिया इण मुजब सोगन कर्या मारा हाथसुं जानवर मात्र खावा के वास्ते नहीं मारुं दाव मारा हाथसुं नहीं लगावणो मवेशी बिना सेधा आदमी ने नहीं वेचुं

द० उदेसिंह

ठाकरां जालिमसिंहजी जागीरदार अमावली ई मुजब सोगन कर्या जींरी विगत मारा गाम में सुं गाय बिना आलखाणने बेचवा देवुं नहीं मारी सीम गाम अमावली में कोई जानवर मारी जाण में मारवा देवुं नहीं और मैं मारुं नहीं हरण खरगोश मारुं नहीं खाऊं नहीं और पंखेरु जानवर मारुं खाऊं नहीं माने चारभुजारा सोगन है।

द० जालमसिंह का हाथरा छै

॥ श्रीरामजी ॥

सावत

श्री पूजजी महाराज चांदड़ी पधारवा पर पंच सादड़ी का ठिकाणा सुंदा अरज होवा पर निचे लिख्या मुजब छोड्या और

आहार वगैरे से भी छोड़ाया गया सो साबित है जानवर वगैरा मुजब सं १९६५ का जेठ सुदी बुधवार ।

श्री रावली तरफ से

वेशाख कार्तीक में कसाई अमावस ग्यारस बकरा खज नहीं गा आगे भी बंदोवस्त हो परन्तु अब भी पुख्ता राखा जावेगा रा ही महिनारी अमावास ग्यारस भी माफ है कार्तीक वैशाख महिना माफ और बाराही महिना की अग्यारस माफ ई साल चैत्र मास में राज गन देवगन बारे है कसाई दुकान नहीं करेगा रण झीलरा रोज ग्यारस अमावास तुंदा में शिकार नहीं करेगा ।

द० पन्नालाल रांका श्री हजुर का हुक्म से

श्रीपरमेश्वरजी

सिक्को छे

सवरुप श्री ठाकरां राज श्री १०५ श्री मोतीसिहजी लाख नरा साधु पूजजी महाराज श्री श्री १००८ श्री श्री हाराज मोटा उत्तम पुरुषारो पधारणों शहरे हुओ तरे मा तरे इणा मुजब सोगन किया है सो जावजीव

१—सीकार में सूर वो नार खिनास हुजो के धमुं नहीं मारसुं

२—अमावस अगियारस महिना में तिन आवे है सो म
धारारी छतीस तिथी हुए सो मारा राज में जावजीव हलारो (ह
अगतो रेसी

३—बारसरी तिथीरे दिन कुंभार, लवार तेली न्य
निभाड़ो, घाणी, एरणरो अगतो पालसी ने कसाई खटीकरो
अगतो रेसी

४—मारा राज में गाय वगैरे कसाई व परदेशी मुसलमा
नहीं बेचसी

५—सुड़ कोकड़ रा खेतारो मारा राज में वारे नाम दे
बालण देसी नहीं बालसी सो राजरो कसुरवार होसी

६—आसोज सुद १० ने सालो साल नव जीव बकरा
रे कुकड़क गलाया जावसी

इणां मुजब पाला जावसी ए कलमां पीढ़ी दर पीढ़ी पालां जाव
सं० १९६४ पोश सुद १५ द० कामदार महेताब चंदरा छे
ठाकोर साहबरा हुकम सुं लिख दिनो छे

श्रीभेरुनाथजी श्रीराम

महोरछाप

सीधश्री महाराज महारावतजी श्री भोपालसिंहजी रा. भदेस
बचनात् वड़ी सादड़ी का समस्त ओसवाल माननारा पंचा सुं प

ापेचं अपरंच थां अरज कीवी के मारवाड़ सुं मां के श्री पूज्य
चतुरमासो करवान आवे है सो वठांसुं केवांई है के मारो
वो वे है ई निमित्त कुछ उपकार वणो चावे ई वास्ते अठे हुकम
के सावन कातिक बैशाख तीनों महिना कसाई दुकान सदैव वंद
गा और इगियारस अमावस तो आगे सदैव सुं पाले है जो
ले ही है ।

सिक्कोछै

सं० १९६५ का जेठ सुद १२
द० गरिधारी सिंह

ाएकलिंगजी श्रीरामजी नंबर की
ाजस्थान गोगुन्दा मेवाड़ ८५९

महोरछाप छे

स्वामीजी महाराज श्री पूज्यजी महाराज श्री श्रीलालजी
ालमें गोगुन्दे पधारणो हुओ आपका उपदेश की तारीफ सुग
मारा भी सभा में जावो हुओ. जो उपदेश श्रीमान् का मैं
मारो मन बहुत प्रसन्न हुओ और आप जैसा महात्मा
मैं हमेशा के वास्ते पंलेरू जानवरां की स हरया की।

दी है । और अठै राजस्थान में आसोज सुदी ८ हमेशा सु पाड़ा रो बलदान होवे है वी में सुं १ हमेशा के लिये बंध कि सो मारी पुस्त हर पुस्त बंध रहेगी ई के पहले सं० १६६५ में मिजी महाराज चोथमलजी को पधारवो हुओ जद श्री बड़ा ह २ बकरा हर साल अमरा करवा को प्रण कीधो वा अब तक जावे है वीरो हमेशा अमल रहेगा मैं श्री पूजजी महाराज क उपकार के लिये अतरो धन्यवाद करुं थोड़ो है सं० १६७१ जेठ बुदी ७ सोम०

द० राजराणा दलपत

सेठ मेघजीभाई थोभणभाई.

मुंबइ श्री श्वे. स्था. सकळ श्री संघना प्रमुख.

महीयर राज्यमां देवीजीनो वध बंध करावनार परमार्थी.

परिचय–परिशिष्ट २. प्रकरण ४५.

नामदार महाराज

परिचय—परिशिष्ट २. प्रकरण ४५.

महीयर स्टेटमां धर्म निमित्ते थती हिंसा केम अटकी ?

महीयर राज्यमां एक हील उपर श्री शारदा देवीनुं मंदिर आवेलुं
छे तेमां देवी निमित्ते अनेक प्रसंगे देवी भक्तो तरफथी बकरा, पाडा
वगेरे हजारो प्राणिओनो लांबा कालथी दर वर्षे भोग अपातो हतो
के जे वात त्यांना दिवान साहेब रा. रा. हिरालाल गणेशजी अंजा
पोताने रुचिकर नहि लागवाथी तेओ आवा प्रकारनी कोईपण हिंसा
हंमेशने माटे बंध थाय तेवुं इच्छता हता अने ते माटे तेओ श्री
मी० भगवानलाल तथा मी० दुर्लभजी त्रिभुवनदास झवेरीने पा
करतां ते उपरथी जो कांइपण सारे रस्ते लोकोने दोरवी ते हिंसा
अटकावाय तो ते बाबत पोतानो विचार जणाव्यो हतो. आ उपरथी
मी. दुर्लभजीए शेठ मेघजीभाई थोभण भाईने पत्र लखी आ हिंसा बंध
करवा माटे कंईक इलाज लेवानी भलामण करी हती, ते उपरथी
अने तेमने खास आ कार्यसाटे महीयरना मे० दिवान साहेबनी
मुलाकात लेवा मोकलया हता के ज्यां तेओए नजरोनजर आ करपीण
हिंसायुक्त कार्यो जोयां हतां बाद दीवान साहेबे जणाव्युं के जो ...
...मां कोइ सखी गृहस्थ तरफथी एक सार्वजनिक लाभ माटे ...
...दवाखानुं मकान बंधावी देवामां आवे तो तेना बदलामां ...
महीयरना महाराजा साहेबनी संमति मेळवी के ... ...
... हुं बंध करावी शकुं. आ उपरथी मी. दुर्लभजीए ...

कत जणावतां अमे नीचेनी शरते तेवां एक इस्पीताल बंधावी आपवा ठराव कर्यो हतो

शरतो.

१ महीश्वर राज्यमां तमाम जाहेर देवलोमां हिंसा सदंतर बंध करवी.
२ ते बाबतना लेखीत हुकमो अमने त्यांना सत्तावालाओए आपवा.
३ आवी जातनी हिंसा बंध करीने ते बाबत श्री शारदा देवीना देवालय आगळ ते बाबतनो राज्य तरफथी बे पीलर लगावी हिंदी तथा अंग्रेजी भाषामां शिला लेख लगाडवा.

४ अमे ते इस्पीताल बंधाववा माटे रू० १५००१ अंके पंदर हजार अने एकनी रकम स्टेटने एवी शरते सोंपीए के ते इस्पीताल उपर आ बाबतनो शिलालेख पण हमेश माटे कायम राखवामां आवे अने पंदर हजारथी ओछी रकम खर्चवी नहि पण जो विशेष रकम जोइए तो स्टेट तरफथी ते आपवामां आवे अने इस्पीताल निरंतर निभाववानो सघलो खर्च राज्ये आपवो.

उपरना शरतो प्रमाणे ते राज्यना नामदार राजा साहेब श्रीजनाथ सींहजी बहादुरे पोताना राज्यमां तेमना दीवान साहेबनी नेक सलाहथी धार्मिक पशुवध हमेशने माटे बंध करवाना परमार्थि ठरावो करेला छे; अने आ ठराव विरुद्ध जो कोईपण शख्स वर्तन करे तो तेने ६ मासनी सख्त केदखानानी सजा तथा रू० ५० पचास दंड

ना ठराव ता. २ सप्टेम्बर १९२० ना रोज राज्य तरफथी द्धथयो छे. अने ते माटे अमे ते नामदारना मानपूर्वक आभार मीए छीए, दीवान साहेबनी असल सही सीक्कावाला सदरहु ठरावोना ग्राफोनी नकलो अमे जाहेर प्रजानी जाण माटे प्रसिद्ध करीए छ; के जेथी भविष्यमां ते राज्यमां तेवो बनाव कदि दैवयोगे बा पामे तो अमारा आ दस्तावजोनी साक्षी अने आधार द्वारा हेर प्रजाने अटकावी शके.

मेघजी थोभण.
शांतिदास आशकरण.

नभ टेरस
डहर्स्ट रोड
मई नं, ४.

अरुएक अनुवाद

(१)

मिस्टर हीरालाल गणेशजी अंजारिया साहेब; दी. ए.
दीवान रियासत सईहर तारीख -२-९-१९२०

नम्बर १२९७.

(सही) हीरालालजी अंजारिया

सदीचर राज्यना मंदीरामां घणुं करीने पक्षां तथा बीजा [illegible] प्रिओनां बलीदान आपवामां आवे छे. आ रुढी पसंद नहीं [illegible] [illegible] हुकम करवामां आवे छे के श्री देवी [illegible] मंदिरमां [illegible]

राज्यना कोई पण जाहर मंदीरोमां कोईपण माणस कोईपण देवी अथवा देवताओना नाम उपर बकरां अथवा तो बीजां जनावरानो वध करवानी के बलीदान देवानी सखत मनाई करवामां आवे छे, अने जे माणस आ हुकमनो भंग करशे अथवा कोई माणसने आ हुकम कोईए भंग कर्यानी खबर हशे अने ते दरबारमां ते बाबत नहीं रजु करशे, तो ते हुकमनो भंग करवा वालानो, अथवा तेवी खबर जाणवावालाने दरेकने ६-६ मास सुधी सखत केदनी सजा अने ५०-५० पचास रुपया सुधी दंड करवामां आवशे अने जे माणस आ हुकमनो अनादर करवावालाने पकडी दरबारमां हाजर करशे तेने १०दश रुपिआ दंडनी रकममांथी पेस्तर कापी दरबारमांथी आपवामां आवशे, अने ते माणसने राज्यनुं हितेच्छु गणवामां आवशे. आ हुकमनो अमल आजनी तारीखथी करवामां आवशे.

तारख़ूं

(२)

हु०

आ हुकमनी एक नकल रवीन्यु ओफीसरने मोकलवी अने एवुं लखवुं के तेओ जल्दीथी सर्वे पुजारिओ तथा मानता लेवावाला माणसने आ बाबत खबर दे अने सुपरिंटेन्डेन्ट सा० पोलीसने मोकली एवुं लखवामां आवे के राज्यना दरेक गामोमां हुकम चोटाड़वामां आवे अने दांडीद्वारा तेमां खबर देवामां आवे

न महीअर तलपदमां हुकमनी नकल छपावी चोटाडवामां अने
ांडी पिटावी जाहेर करवामां आवे अने दश २ पांच-पांच नकलो
ठकुर राज्यनी आसपास जाण वास्ते मोकलवामां आवे अने
क नकल मजिस्ट्रेटने अने एक नकल बाजार मास्तर ने खबर
ांट मोकलाववी असल नकल फाइलमां हाजर राखवी

(सही) फतेसिंहजी,
(सही) हीरालालजी. अंजारिया
दीवान महीयर.

नकल मा, शेठ मेघजी भाइ
अने शान्तिदास भाईने मोकलवी.

Sd. H. G. A.

10-9-20

जीवदयाना सिद्धांतने अनुसरीने महीयर राज्यना जा[illegible]
मां देवी, शारदा देवी अथवा तो कोई देवदेवीओना शा[illegible]
ना नामे थतो बकराओ अथवा प्राणीओनो वध करवा[illegible]
[illegible] सख्त मनाई करेली छे अने एना दाखला [illegible]
[illegible] महाशय शेठ मेघजीभाई थोभण भाई तथा [illegible]
[illegible] [illegible] रू. १५०००) [illegible]

कायनी यादगीरीमां शारदा देवीने ते रकम जीवदयाना कार्यमां वा-परवा माटे अर्पण करवा विनंती करी छे. राज्य तेमनी विनंतीनो खुशीथी स्वीकार करे छे अने तेमनी साथे मसलत चाल्या पछी तेमना तरफथी अर्पण करवामां आवेली रकमथी ओछी नहीं तेटला खर्चथी एक होसपीटल बांधवानो निर्णय उपर आव्युं छे.

आ इस्पीटलनुं मकान सज्ज करवानो, नीभाववानो, दुरस्त करवानो तथा तेने लगतो तमाम खर्च राज्य तरफथी उपाडवामां आवशे.

शारदा देवीना डुंगरनी तळेटीमां बे स्थंभो उभा करवामां आवशे अने जेमां इंग्रेजी तथा हिन्दुस्थानी भाषामां बकराओ तथा बीजां प्राणीओना थता वध अथवा बलीदान अटकाववानी अने कसुर करनारने सजा करवानी जाहेर खबरोना शीलालेख लगाड-वामां आवशे.

जो कोईपण प्राणी अथवा बकारने श्री शारदा देवीने अथवा तो कोई देव अगर देवीने जाहेर देवलोमां अर्पण करवामां आवशे तो तेनो कबजो राज्य तरफ थी संभाळी तेमनो खर्च राज्य तरफथी नीभाववामां आवशे.

मईयर, सी. आई.
२७मी सप्टेंबर १६२०

(सही) हीरालाल गणेशजी अंजारीया
दीवान, मईयर स्टेट.

...नी के जलसे हुए थे और उन जलसों में तीन २ चार २ हजार आदमियों ने इकट्ठे होकर मानपत्र अर्पण किये थे।

...जिले गुजरात के राजा साहिब मेरे मेहरबान थे। वे राजा साहिब मौसूफ अम्बे भवानी के मन्दिर में तशरीफ लेगये थे मैं भी साथ में था वहां अम्बे भवानी के भेंट चढ़ाने को बकरे पचास के करीब आते थे याने जितने आदमी उतने ही बकरे अम्बे भवानी के ... सुख शान्ति चढ़ाने लाते थे और यह बात राजा साहिब को भी बड़ी खुशी और मरजी की होती थी। मैंने राजा साहिब को और ... को 'अहिंसा परमो धर्म्मः' का मसला समझाकर ... शान्ति बराबर रहने का अपना जिम्मा लिया। चुनांचे राजा ... से बकरे छुड़ाने के बदले नकद रुपया अर्पण अम्बे भवानी ... मुकरर करा दिया जाता था और उन सब बकरों के ... हलवा कर अमरे करादिये गये। सब तरह से सुख ... किसी की आंख भी वहां नहीं दुखी। इस बाबत कई ... तरफ से मुझपर बड़े २ जोर पड़े परन्तु मैंने धर्म ... तकलीफ पहुंचने की परवाह नहीं की, और ... सबको सरोपाव दिये थे वह भी मैंने वहां ... पंजाब की तरफ ...

महा...

ता० २ जी सप्टें...

ता...

नीआनवा...

सहीयर, मी. अ...

ता० २७मी सप्टेंबर १६...

परिशिष्ट २

पूज्य श्री का, मुसलमीन भक्त सैयद असदअली M. R. A. S. F. T. S. जोधपुर।

सैयद असदअली लिखते हैं कि, जब श्री १००८ श्री पूज्य श्रीलालजी महाराज का चौमासा जोधपुर में हुआ था, मुझको श्रीपूज्य महाराज के उपदेश से फ़ैजरुहानी (आत्मज्ञान) बहुत पहुंचा। मुझको श्रीपूज्य महाराज ने अत्यन्त कृपा करके नौकार मंत्र की कृपा करी और खुद श्रीपूज्य महाराज ने अपनी जुबान मुबारक जुबान (खास श्रीमुख)से जुबानी नौकार मंत्र याद कराया जिसे मैं अबतक जपता हूं और बड़ा काम देता है—जैनधर्म का उपदेश लेने के बाद उन्हीं दिनों में मूढ लोगों से बड़ा कष्ट उठाना पड़ा, यहां तक कि मूढ लोगों ने मुझे जान से मरवा डालने के उपाय किये थे। दो तीन जगह दुष्ट लोगों ने मेरे बदन पर चोट भी पहुंचाई इस वजह से कि, मेरे भाई अमीरहुसैन जिले गुड़गांव (देशथाना) में डाक्टर थे। सो मैंने अपने भाई डाक्टर मजकूर से कहकर तमाम जिले में करीब ३००० तीन हजार के गाँओं को हिंसा होने से बचाया। जब कि, प्लेग उस तरफ फैला हुआ था और भाई डाक्टर मजकूर को हर तरह के अख्तियारात हासिल थे। इस कारर्वाई से रियासत जोधपुर में इस दगा के बाग के

म्होर

नीचे दर्शाव्या मुजबनो शीलालेख बांधवामां आवती होस
टालना मकानमां (प्रसिध्ध) सुदृश्य जगाए लगाडवामां आवशे

"आ होस्पीटल कच्छ मांडवीना रहीश शेठ मेघजीभाइ थो
भाइ तथा शेठ शांतिदास आसकरण, जे. पी. जेओए, मही
राज्यनां सर्व जाहेर देवलोमां थता प्राणिवधनी अटकायतना म
त्यांना महाराजा साहेब श्री ब्रीजनाथसिंहजी बहादुरना आभार
यादगीरीमां तेनां बांधकामना खर्च बद्दल रु० १५००१) अं
पंदर हजार एक अनायत करतां तेमना प्रेरणाथी बांधवामां अ
छे."

दीवान हिरालाल गणेशजी अजारीयाना वखतमां

महीयर,
ता० २ जी सप्टेंबर, १९२० { (सही) हीरालाल गणेशजी अंजारीय
दीवान, महीयर स्टेट.

म्होर

परिशिष्ट ३

पूज्य श्री का, मुसलमीन भक्त सैयद असदअली M. R. S. F. T. S. जोधपुर।

सैयद असदअली लिखते हैं कि, जब श्री १००८ श्री [illegible]ज्य श्रीलालजी महाराज का चौमासा जोधपुर में हुआ था, मुझको [illegible]पूज्य महाराज के उपदेश से फैजरुहानी (आत्मज्ञान) बहुत [illegible]ंचा। मुझको श्रीपूज्य महाराज ने अत्यन्त कृपा करके नौकार [illegible] की कृपा करी और खुद श्रीपूज्य महाराज ने अपनी जुबान [illegible]तर जुबान (खास श्रीमुख)से जुबानी नौकार मंत्र याद कराया [illegible] अबतक जपता हूं और बड़ा काम देता है—जैनधर्म का उपदेश [illegible]ने के बाद उन्हीं दिनों में मूढ लोगों से बड़ा कष्ट उठाना पड़ा, यहां [illegible] कि मूढ लोगों ने मुझे जान से मरवा डालने के उपाय किये थे। [illegible]र दो तीन जगह दुष्ट लोगों ने मेरे बदन पर चोट भी पहुंचाई [illegible], इस वजह से कि, मेरे भाई अमीरहुसैन जिले गुड़गांव (देश-[illegible]रियाना) में डाक्टर थे। सो मैंने अपने भाई डाक्टर मजकूर से [illegible]हकर तमाम जिले में करीब ३००० तीन हजार के गांवों को [illegible] होने से बचाया। जब कि, लेग उस तरफ फैला हुआ था और [illegible] भाई डाक्टर मजकूर को हर तरह के अखितयारात हासिल थे। [illegible] कारखाई से रियासत जोधपुर में इस दया के दान के बादल [illegible]

खुशी के जलसे हुए थे और उन जलसों में तीन २ चार २ हज़ार आदमियों ने इकट्ठे होकर मानपत्र अर्पण किये थे।

दांता ज़िले गुजरात के राजा साहिब मेरे मेहरबान थे। वे राजा साहिब मौसूफ़ अम्बे भवानी के मन्दिर में तशरीफ़ लेगये थे मैं भी साथ में था वहां अम्बे भवानी के भेंट चढ़ाने को बकरे पचास २ के करीब आते थे याने जितने आदमी उतने ही बकरे अम्बे भवानी को व ग़रज सुख शान्ति चढ़ाने लाते थे और यह बात राजा साहिब को भी बड़ी खुशी और मरज़ी की होती थी। मैंने राजा साहिब को और हाज़रीन को 'अहिंसा परमो धर्म्मः' का मसला समझाकर और सुख शान्ति बराबर रहने का अपना ज़िम्मा लिया। चुनांचे राजा साहिब से बकरे छुड़ाने के बदले नक़द रुपया अर्पण अम्बे भवानी जी के कराना मुक़र्रर करा दिया जाता था और उन सब बकरों के कान में कड़ियां डलवा कर अमरे करादिये गये। सब तरह से सुख शान्ति रही किसी की आंख भी वहां नहीं दुखी। इस बाबत कई द्वेषी लोगों की तरफ़ से मुझपर बड़े २ ज़ोर पड़े परन्तु मैंने धर्म मार्ग में किसी तरह तकलीफ़ पहुंचने की परवाह नहीं की, और राजा साहिब ने वहां सबको सरोपाव दिये थे वह भी मैंने वहां नहीं लिया। इस तरह पंजाब की तरफ़ एक रियासत में एक रईस को हज़ार २ कागले रोज मारने का शौक होगया था, और

र २ कर बंगिंग करते थे. जो कि, वहां पर उस रईस ने मुझको
स उनकी मुशकिल के वक्त बुलाया था । मैंने वहां पहुंचते ही उन
साहब से अर्ज कराही कि, मैं अब वापिस जोधपुर जाता हूं ।
पका मुझसे जो खास काम है वह धरा रहेगा, लेकिन उन रईस
हिब का मुझसे खास तौर से मतलब और गरज थी उन्होंने
ही से मुलाकात की और मुझसे पूछा कि, बिगर मुलाकात किये
पिस क्यों जाते थे । मैंने कहा कि, मैं सुनता हूं कि, आप हजार
र जानवरों का रोज मर्राह फक्त मनराजी के शकल में शिकार
ने हैं । इससे आपकी बड़ी बदनामी हो रही है और लोग गालियां
हैं और फक्त आपकी दिललगी के लिये हजारों जानों का
में नाश होता है । इस तरह उनको कई तरह समझाया तो र-
ने आयन्दा के वास्ते ऐसी हिंसा करने की सौगन्द लेली । इसी
एक रईस साहब जो जोधपुर में बड़े मुअज़्ज़िज़ हैं ।

उनकी इस किस्म की नागवरी ज़ाहिर कराने का बहुत
हुआ तो उन्होंने बच्चे वाली कुतिया जंगल वगैरह से [illegible]
र मंगाना शुरू किया और उनके शरीर पर [illegible]
कर लैम्प के तेल के पीपों में उन कुत्तियों को [illegible]
लगाने पीछे दिया सलाई [illegible]
[illegible] वह रईस साहिब [illegible]
[illegible]

परिशिष्ट ४.

वर्तमान आचार्यश्री

चरित्रनायक सद्गत पूज्य श्री श्रीलालजी महाराज के पश्चात् भारतवर्ष की जैन साधुमार्गी सम्प्रदाय में सब से अधिक मुनि व आर्याजी वाली इस सम्प्रदाय का समस्त भार पूज्य श्री जवाहिर-लालजी महाराज के सुपुर्द हुआ. आप इस पद पर आरूढ होकर जैनधर्म को देदीप्यमान कर पूज्य पदवी दिपा रहे हैं। आपका संक्षिप्त परिचय पाठकों को करादेना आवश्यक है।

मालवा देशकी पवित्र उर्वरा भूमि में सं० १९३२ कार्तिक शुक्ला ४ को श्रीमती नाथीबाई के उदर से आपका जन्म थांदला ग्राम में हुआ। आपके पिता श्रीका नाम सेठ जीवराजजी था। आप बीसा ओसवाल कुंवार गोत्र में उत्पन्न हुए आपको बालवय से ही अनेक संकटों का सामना करना पड़ा। जब आप दो वर्ष के थे तब आपकी माता श्री एवम् चार वर्ष की अवस्था में आपके पिता श्री का देहान्त होगया। अतएव आप मौसार में रह पढ़ने लगे, मामा मूलचंदजी को व्यौपार कार्य में मदद भी देते और विद्याभ्यास भी करते थे. दैवात् मामाजी का आपकी चौदह वर्ष की अवस्थामें स्वर्गवास होगया, अत एव आप पर उनके समस्त कुटुम्ब बाल बच्चे

म व्यौपारका समस्त भार आपड़ा आपने तीव्र बुद्धि से सबको
चित संभाला परंतु सांसारिक कई अनुभवों ने आपको वैराग्य
लीन बनादिया. आप संसार को असार समझ वैराग्यवंत
दीक्षित होनेको तैयार हुए. परंतु आपके बड़े बाप (पिताके बड़ेभाई)
आपको आज्ञा न दी। अतएव आप स्वयं भिक्षा लाकर गुजर
लगे. वर्ष सवा वर्ष यों व्यतीत होने पर आपने सबकी आज्ञा
महाराज श्री घासीलालजी महाराज श्री मगनलालजी
ाम झाबुआ के समीप लीमड़ी ग्राम में सं० १९४८ में मगसर
१ को दीक्षा अंगीकार की. परंतु दीक्षित होने के १॥ माह
ही आपके गुरुजी का परलोकवास होगया इतने अल्प
में गुरुजी ने आपको अत्यंत शिक्षित बना दिया था उस
र मोह के कारण आपका मन उचट गया और आप पागल
गए, पौने पांच माह पागलावस्था में रहे। दरम्यान तपस्वीजी
तीलालजी महाराज ने आपकी खूब सेवा सुश्रूषा की। आपके
मय के पागलपनके घावोंके निशान अभी तक मौजूद हैं। आप-
चंगे किये और सब चातुर्मास प्रायः अपने साथ ही कराये.
कृतज्ञता के कारण पूज्य जवाहिरलालजी महाराज तपस्वीजी
आज तक सेवा कर रहे हैं और इस उपकार के स्मरणार्थ आप
के अहसानमंद हैं। दीक्षा लिये पश्चात आजतक आपके
३१ चातुर्मास हुए हैं।

परिशिष्ट ४.

वर्तमान आचार्यश्री

चरित्रनायक सद्गत पूज्य श्री श्रीलालजी महाराज के पश्चात् भारतवर्ष की जैन साधुमार्गी सम्प्रदाय में सब से अधिक मुनि व आर्याजी वाली इस सम्प्रदाय का समस्त भार पूज्य श्री जवाहिर-लालजी महाराज के सुपुर्द हुआ, आप इस पद पर आरूढ होकर जैनधर्म को देदीप्यमान कर पूज्य पदवी दिपा रहे हैं। आपका संक्षिप्त परिचय पाठकों को करादेना आवश्यक है।

मालवा देशकी पवित्र उर्वरा भूमि में सं० १९३२ कार्तिक शुक्ला ४ को श्रीमती नाथीबाई के उदर से आपका जन्म थांदला ग्राम में हुआ। आपके पिता श्रीका नाम सेठ जीवराजजी था। आप बीसा ओसवाल कुंवार गोत्र में उत्पन्न हुए आपको बालवय से ही अनेक संकटों का सामना करना पड़ा। जब आप दो वर्ष के थे तब आपकी माता श्री एवम् चार वर्ष की अवस्था में आपके पिता श्री का देहान्त होगया। अतएव आप मौसार में रह पढ़ने लगे, मामा मूलचंदजी को व्यौपार कार्य में मदद भी देते और विद्याभ्यास भी करते थे. दैवात् मामाजी का आपकी चौदह वर्ष की अवस्था में स्वर्गवास होगया, अत एव आप पर उनके समस्त कुटुम्ब बाल बच्चों

१ धार, २ रामपुरा, ३ जावरा, ४ थांदला, ५ परतापगढ़, ६ सेलाना, ७-८ खाचरोद, ९ महिदपुर, १० उदयपुर, ११ जोधपुर, १२ ब्यावर, १३ बीकानेर, १४ उदयपुर, १५ गंगापुर, १६ रतलाम, १७ थांदला, १८ जावरा, १९ इंदोर, २० अहमदनगर, २१ जुनेर, २२ घोड़नदी, २३ जामनगर, २४ अहमदनगर, २५ घोड़नदी, २६ मीरी, २७ दीवड़ा, २८ उदयपुर, २९ बीकानेर, ३० रतलाम, ३१ सतारा।

आप शुरू से ही विद्या के अत्यंत प्रेमी थे। आप संस्कृत पढ़े न थे परन्तु संस्कृत के काव्यादि आप बहुत प्रेमसे सीखते और मनन करते थे. जब आप दक्षिणकी तरफ पधारे तब आपको सब अनुकूलता मिली और आप संस्कृतके धुरंधर विद्वान् होगए। आपका व्याख्यान आज अत्यंत प्रभावोत्पादक ढंग का वर्तमान शैली से होता है। आपके व्याख्यान से विद्वान् जन भी अत्यंत संतुष्ट हैं। आपने अत्यंत परिश्रम कर बहुत अधिक ज्ञान सम्पादन किया। कई ग्रंथ देखे उनमें से स्याद्वादमंजरी 'लघुसिद्धांतकौमुदी, मालापद्धति, न्यायदीपिका, परिश्रामण, विशेषावश्यक, रघुवंश, माघकाव्य, कादंबरी, वंशकुमार, किरातार्जुनीय, नेमिनिर्वाण, हितोपदेश इत्यादिका तो अभ्यास किया और तत्वार्थसूत्र, गोमटसार, महाराष्ट्रग्रंथज्ञानेश्वरी, रामदासका दासबोध, लो. तिलक की गीता, कर्मयोग तुकारामजी की पुस्तकें, मनुस्मृति, महाभारत, गीता, पुराण, उपनिषाद् इत्यादि जैन सूत्रोंके सिवाय

न्य ग्रंथों का अवलोकन किया है। आप संस्कृत के पारंगत विद्वान्
कर हिन्दी, गुजराती, मराठी आदि भाषाएं बोल सकते हैं। श्रीमान्
कमान्य तिलक आपसे अहमदनगर में मिले थे। आपने जैन धर्म
सम्बन्ध में अपनी गीता में कई सुधार करना चाहे थे और लोक-
ान्य ने मंजूर भी किये थे। जैनधर्म के सम्बन्ध में जगत् प्रसिद्ध
ोकमान्य तिलक महाराज के सुवर्णांकित शब्द ये हैं—

"जैन और वैदिक ये दोनों प्राचीन धर्म हैं। परन्तु अहिंसाधर्म
ा प्रणेता जैनधर्म ही है। जैनधर्म ने अपनी प्रबलता के कारण
ैदिक धर्म पर कभी न मिटने वाली ऐसी उत्तम छाप बिठाई है।"

वैदिक धर्म में अहिंसा को जो स्थान प्राप्त हुआ है वह जैनों
के कारण ही है। अहिंसा धर्म के पूर्ण वारिस जैन ही हैं। अढ़ाई
हज़ार वर्ष पूर्व वेद विधायक यज्ञों में हज़ारों पशुओं का वध होता
था, परन्तु चौबीस सौ वर्ष पहिले जैनियों के चरम तिर्थंकर श्री महा-
वीर स्वामी ने जब इस धर्म का पुनरोद्धार किया तब जैनियों के
उपदेश से लोगों के चित्त अघोर निर्दय कर्म से विरक्त होने लगे
और धीरे २ लोगों के चित्त में अहिंसा दृढ जम गई। उस समय के
विचारशील वैदिक विद्वानों ने धर्म के रक्षार्थ पशुहिंसा [illegible]
बंद करदी और अपने धर्म में अहिंसा को आदर पूर्वक स्थान दिया
और अहिंसा मंडन कर अपने धर्म को बचाया, [illegible]

१ धार, २ रामपुरा, ३ जावरा, ४ थांदला, ५ परतापगढ़, ६ सेलाना, ७-८ खाचरोद, ९ महिदपुर, १० उदयपुर, ११ जोधपुर, १२ व्यावर, १३ बीकानेर, १४ उदयपुर, १५ गंगापुर, १६ रतलाम, १७ थांदला, १८ जावरा, १९ इंदोर, २० अहमदनगर, २१ जुनेर, २२ घोड़नदी, २३ जामनगर, २४ अहमदनगर, २५ घोड़नदी, २६ मीरी, २७ दीवड़ा, २८ उदयपुर, २९ बीकानेर, ३० रतलाम, ३१ सतारा।

आप शुरू से ही विद्या के अत्यंत प्रेमी थे। आप संस्कृत पढ़े न थे परन्तु संस्कृत के काव्यादि आप बहुत प्रेमसे सीखते और मनन करते थे. जब आप दक्षिणकी तरफ पधारे तब आपको सब अनुकूलता मिली और आप संस्कृतके धुरंधर विद्वान् होगए। आपका व्याख्यान आज अत्यंत प्रभावोत्पादक ढंग का वर्तमान शैली से होता है। आपके व्याख्यान से विद्वान् जन भी अत्यंत संतुष्ट हैं। आपने अत्यंत परिश्रम कर बहुत अधिक ज्ञान सम्पादन किया। कई ग्रंथ देखे उनमें से स्याद्वादमंजरी, लघुसिद्धांतकौमुदी, मालापद्धति, न्यायदीपिका, परिश्रामण, विशेषावश्यक, रघुवंश, माघकाव्य, कादंबरी, वंशकुमार, किरातार्जुनीय, नेमिनिर्वाण, हितोपदेश इत्यादिका तो अभ्यास किया और तत्वार्थसूत्र, गोमटसार, महाराष्ट्रग्रंथज्ञानेश्वरी, रामदासका दासबोध, लो. तिलक की गीता, कर्मयोग तुकारामजी की पुस्तकें, मनुस्मृति, महाभारत, गीता, पुराण, उपनिषाद् इत्यादि जैन सूत्रोंके सिवाय

शिष्य समुदाय और श्री कोटापुर माहाराजा साहिब—

सं० १९७७ मार्गशीर्ष वद ५ मंगलवार के दिन मिरिजम
००८ घासीरामजी महाराज को लेकर हम आये। उसी दिन
डाक्टर साहिब ने महाराज साहिब को देखकर निश्चय कर दिया
मार्गशीर्ष वद ३ गुरुवार को सफा खाना में आकर डेरा करो,
मिगसर वद ८ को शुक्रवार को आपरेशन किया जायगा।

हम इस बात के विचार में थे कि, अस्पताल में रहनें से ...
साधुओंके कल्प से विरुद्ध पड़ेगी। उसका बन्दोबस्त डाक्टर
...हिब से करना चाहिये जैसा कि, १ अस्पताल में नर्स वगैरह
...जाति सब काम करती है। और श्री महाराज साहिब ...
...ते नहीं इसलिये स्त्री मात्र महाराज साहिब से स्पर्श न करे।

(२) पानी वगैरह कोई भी चीज अस्पताल के काम में
आना चाहिये।

(३) अस्पताल के सब कमरों में रोशनी जलती है ...
...राज साहिब के कमरे में रोशनी नहीं होनी चाहिये।

(४) दूसरे कोई रोगी महाराज साहिब के कमरे में ...

धर्म के प्रणेता जैन धर्म का ही प्रभाव है। (प्रो० आनंदशंकर बापु भाई ध्रुव के लेख का कुछ अनुवाद)। आप के चातुर्मास जहां २ हुए वहां २ अत्यन्त उपकार हुए। उदयपुर के चातुर्मास में तपस्या के पूर पर किसना नाम के खटीक ने यावज्जीवन पर्यंत अपना क्रूरधन्धा बंद किया और उसने दूसरे नौ जनों को सुधारा, तेराहपंथी साधु फौजमलजी के साथ जेतारण में एक माह तक आपने लिखित चर्चा की, उस समय मंदिरमार्गी व वैष्णव मध्यस्थ थे। इस के फल स्वरूप सद्गत मंदिरमार्गी महाराज श्री सीवजीरामजी का लेख मौजूद है।

आपने कई ठाकुरों का मांसाहार छुड़ाया तथा शिकार के त्याग कराया। कई मुसलमान श्रावक बनाये। कई जगहों के संघ के दो भाग दूर कराये व कुव्यवहार बंद कराये हैं। प्रोफेसर राममूर्ति ने शांतता से आपका व्याख्यान सुनकर फरमाया था कि, अगर ऐसे भारतवर्ष में दस व्याख्याता भी हो जाँय तो संसार का बड़ा भारी कल्याण हो जाय।

आपका शिष्य समुदाय विद्वान् और श्रद्धालु है। पूज्य पदवी प्राप्त हुए बाद आप श्री संघ एवम् साधु समाज में सिंह समान गर्ज रहे हैं। विशाल भाल, दिव्य चक्षु, उज्वल कांति, देदीप्यमान शरीर रचना इत्यादि इतने आकर्षक हैं और व्याख्यान शैली इतनी उत्कृष्ट शास्त्रीय, एवम् सरल है कि, श्रोता वंशीपर नागके सदृश डोलते रहते हैं

है, मैं भी जैनतत्वों को सुनना समझना चाहता हूं। उस समय महाराज साहिब के पास ऐसी हेन्डबुक मौजूद थी जिसमें ऊपर संस्कृत श्लोक और नीचे अंग्रेजी तरजुमा भी था। वह किताब साहिब को दी साहिब ने बहुत खुशी से ले ली। उस वक्तमें कोल्हापुर के राजा साहिब ने डाक्टर साहब से खास तौर पर इन शब्दों में शिफारस की कि, "ये हमारे गुरु महाराज हैं आप कल इनका अप्रेशन बहुत तवज्जह और मेहेरबानी से करें" इस बात का असर डाक्टर साहिब पर ऐसा हुआ कि, जो चारों बातें ऊपर लिख आये हैं उन सबका इन्तजाम महाराज साहिब के कल्प के अनुसार हुआ और अप्रेशन करते समय भी बहुत तवज्जह से काम किया और सातारा वाले सेठ मोतीलालजी को भी अप्रेशन के समय में मौजूद रहने दिया। और खुद डाक्टर साहिब भी और अस्पताल के कुल कर्मचारी हिन्दू अंग्रेज वगैरह श्री महाराज साहिब को गुरु महाराज के नाम से बोलते हैं दोनों साधु महाराज और हम लोग महाराज साहिब के पास रात दिन हाजिर रहकर कल्प के अनुसार सेवा करने पाते हैं। और आहार पानी आदि का भी साधु नियमानुसार ही काम चलता है।

साथ वाले साधु महाराजके बिना नहीं रहने चाहिये। इसी विचार में थे कि, इतने में ही श्री गुरु देवों के प्रतापसे कोल्हापुर के सेठ फतहचंदजी श्रीमालजी जिन्होंने सातारा में श्री १००८ घासीरामजी से सम्यक्त्व ली थी आन मिले। और फतहचंदजी डाक्टर साहिब के पहिले से मुलाकाती होने के सिवा कोल्हापु के महाराज साहिब के मर्जीदानों में हैं। इस वास् फतहचंदजी ने कहा कि, मैं कोल्हापुर से महाराज साहिब की शिफारस डाक्टर साहिब के नाम लिखा लाऊंगा। जिसमें महारा साहिब का कल्प के मुजब सब बन्दोबस्त हो जायगा। यह बा मार्गशीर्ष वद बुद्धवार की है।

उसके दूसरे दिन ७ गुरुवार को महाराज साहिब कोल्हापु गुरुदेवों के प्रताप से अकस्मात् उनके किसी हजूरी का अप्रेश कराने के लिये अस्पताल मिरिजम में आगये उसी दिन श्री १००८ घासीलालजी महाराज साहिब भी डाक्टर साहिब के कथनानुसा अस्पताल में पहुंचे। सो सेठ फतहचंदजी ने महाराज साहिब इन्ट्रोड्यूस (Introduse) श्री महाराज साहबको कराया और पीछे डाक्टर साहिबके रूबरूही कोल्हापुरके महाराजने श्री महाराज साहिबसे धर्म सम्बन्धी वार्तालाप किया। उस समय श्रीमहाराज साहिबने संस्कृत के अनेक गीता आदि ग्रंथों के श्लोकों से जैनधर्म का महत्व सिद्ध कर सुनाया जिन पर डाक्टर साहिब ने भी बहुत प्रसन्न होकर कहा

, मैं भी जैनतत्वों को सुनना समझना चाहता हूं। उस समय महाराज साहिब के पास ऐसी हेन्डबुक मौजूद थी जिसमें ऊपर संस्कृत श्लोक और नीचे अंग्रेजी तरजुमा भी था। वह किताब साहिब को दी साहिब ने बहुत खुशी से ले ली। उस वक्त में कोल्हापुर के राजा साहिब डाक्टर साहब से खास तौर पर इन शब्दों में शिफारस की कि, ये हमारे गुरु महाराज हैं आप कल इनका अप्रेशन बहुत तवज्जह और महरबानी से करें" इस बात का असर डाक्टर साहिब पर ऐसा हुआ कि, जो चारों बातें ऊपर लिख आये हैं उन सबका इन्तजाम महाराज साहिब के कल्प के अनुसार हुआ और अप्रेशन करते समय भी बहुत तवज्जह से काम किया और सातारा वाले सेठ मोतीलालजी को भी अप्रेशन के समय में मौजूद रहने दिया। और डाक्टर साहिब भी और अस्पताल के कुल कर्मचारी हिन्दू अंग्रेज वगैरह श्री महाराज साहिब को गुरु महाराज के नाम से बोलते दोनों साधु महाराज और हम लोग महाराज साहिब के पास रात दिन हाजिर रहकर कल्प के अनुसार सेवा करने पाते हैं। और आहार पानी आदि का भी साधु नियमानुसार ही काम चलता है।

अप्रेशन के पूर्व दिन कोल्हापुर राजा साहिब कोल्हापुर से खास श्री १००८ श्री घासीलालजी महाराज के दर्शनार्थ सेठ फतहचंदजी तथा कोल्हापुर संस्कृत के पंडित दिगम्बरी जैन को साथ लेकर मिरज अस्पताल में आये और श्री महाराज के सामने कुर्सी पर

बैठकर मूर्तिपूजन चातुर्वण्र्य जैन सिद्धांत आदि विषयों पर डेढ़ घंटा तक चर्चा की। और आते ही हाथ जोड़कर नम[illegible]या, और खड़े रहे। कहने से कुर्सी पर बैठे और पांव को [illegible]वा कर कमरे से बाहिर भिजवा दी और अतिनम्रता से करते थे तथा महत्व की बात नोट करते जाते थे। पहिली [illegible] [illegible] इस वक्त भी महाराज से कोल्हापुर जरूर पधार ने की [illegible] की और कहा कि, आपके जैन धर्म सिद्धांत मैं सुनूंगा और [illegible] और लोगों को भी सुनाऊंगा।

डेरे पर जाकर सेठ फतहचंद जी से कहा महाराज की बातें मुझे बहुत पसंद आई, महाराज को कोल[illegible] जरूर लाना। जिस समय राजा साहिब कोल्हापुर महाराज के आये थे. उस वक्त पं० दुःखमोचनजी भी मौजूद थे अतएव पहचान होजाने से २ वक्त डेरा पर पंडितजी को बुलाया [illegible] खूब मान देकर वार्तालाप करते रहे रात के ११ बजे [illegible]। समय में भी श्री १००८ श्री घासीलालजी महाराज साहिब के [illegible] महाराज पद से हर बात में प्रशंसा करते थे। फक्त

श्री कोल्हापुर राजा साहिब के वास्ते मशहूर है कि, ये कि[illegible] देवी, देवता, पण्डित, संन्यासी आदि को मान नहीं देते हैं [illegible] न हाथ जोड़कर किसी को नमस्कार करते हैं। परन्तु श्री १००[illegible]